हू अनाथ आये बन में । पुनि प्रभु पूछौ तुम्ह कौन कौन की कुंवरि कौन धाम कौन काम बिहरौ बिपिन में ॥ बोली मुनि बाम सुपनपा मेरो नाम धाम लंक पुरी धाम दसबदन बहिनि में । धाम धाम धाई निज कारन सगाई कहूं पाई न सुन्दरताई तोसी त्रिभुवन में ॥ १५ ॥

तातें तोपै आई तेरे रूप की लुभाई तुहूं पाई महानिधि मोहि मानि मुद मानि ले । सुनि हंसि राम कह्यो हूं तो हौं सबाम बिन बाम मेरो भाई बाम ताहि तूं प्रमानि ले ॥ सुनि सियवर हास गई सु लषन पास तिन्ह कह्यो मोहि दास पास तासु आनि लें । तब तो रिसाई रघुराई ओर आई कह्यो हौं तो बड़काई तातें सिय को तूं हानि ले ॥ १६ ॥

ऐसे कहि धाई रूप राच्छसो बनाई देषि सिय डर पाई पिय ओट है दुराई है । रोषे रघुराई ललकार कैं हटाई टेरि धनुजैं जनाई याकी काटो कुटिलाई है ॥ सुनि स्वामि सुयन लगायो न लषन बिन कीन्हो नाक कान बिन भागी भभराई है । धारतो पुकारतो द्रिगन नीर ढारतो उपारतो कचन पर टूषन पै धाई है ॥ १७ ॥

देषि षर दूषन बहिन पर टूषन जो बूष पर भूषन सैं रूष बरसाने है । पूछ्यो सुपनषा सों नकट कान काट षन कारन कुजन कौन मुनि सो बषाने हैं ॥ राम लछमन कौसलेस के कुमार कल जनक कुमारि सिय सहित सुहाने हैं । पंचबटी मोष बास बिसद बनाइ बैठे बन बन बिचरत हैं ॥ १८ ॥

ऐसी सूपनखा के सु श्रवन कान काटि कोसल नटक
पति कटु कटु कोपे हैं। कठिन कठिन कारमुक कर करि
करि मिल सूल सक्ति आदि आयुध आरोपे हैं। जहँ रघुराज
पर घेरो घन गाज पर बिबिध बाजे बजाइ धुनि जग लोपे हैं।
तापि रघुबीर धीर धरि बीर भीर आई भीम सिय संग लघु
बीर गिरि ओपे हैं ॥ १९ ॥

आप धनु धरि धनु धर बर रघुबर पहिरि सनाह सुगारि
सनमुख ह्वै। ठाढ़ो गाढ़ पाइ पाइ गाढ़े अरि गह आये झट
पट पटकत समर सरूप ह्वै॥ सगुन के सम्हार संचारि सित
सरन सों पुनि पुग परन को प्रबरे परुष ह्वै। केते भट मारे केते
काटि काटि डारे केते गय भटकि कैं भागि गे बिमुख ह्वै ॥२०॥

देखि दल बिचल चपल पल भक्ष खरदूषन कुरक्ष रघु
रक्षक पै धाये हैं। धनो पर बान बर पट्टिस प्रखर असि च-
सल असनि घने घोर घोर धाये हैं॥ रघुबर निज पर सरन
सों काटि काटि करि टूक टूक ते अदूकहीं उड़ाये हैं। ब-
हुरि सुबान बेधि दूषन दुखंड कीन्हे त्रिसिर त्रिसिर हरि
स घर खपाये हैं॥ २१ ॥

खंडन खरादिक को राम सर खंडन सों देखि दुखमुखा
सुपनखा सु सुखानी है। गई लंक राइ निज भाइ पै रिसाइ
कही हाइ हाइ तैं न मेरी पीर पहिचानी है॥ चौदह सहस
भट दूषन त्रिसिर आदि मनुजाद बरबाद भये तैं न जानी है।
सों रावन रिसावन ह्वै पूछी तब नाक कान काटी कही
कहानी है ॥ २२ ॥

कोसल कुंवर को कुरूप करनी करन करि कौनप नृपति की कुमति उरधाई है। जनक कुमारी रतिहू तें रूपवारी रघुपति की परम प्यारी हरनी सुहाई है॥ ताही हित लाइ धाइ मारीच के पर्यो पाइ कंचन कुरंग करि कर्यो सुसहाई है। आयो राम आस्रम को हरन महाखम हरिन हेम हेरि रामरमनी रिझाई है॥ २३॥

हाटक हरिन हेरि ही हरन लीन्हे टेरि कह्यो याको ल्यावो घेरि बेरि न लगावनो। मच्यो जो न जाई या की छाला छबि छाई सोक मेरे मन भाई ऐसो कहो कहां पावनो॥ सिया को परम प्रेम परखि प्रहर्यो नेग पगपानि कीनो मायामृग संग धावनो। भयो स्रम भूरि तब हन्यो सर पूरि मर्यो क्रूर यों हुंकारि हा लषन बेगि आवनो॥ २४॥

सोई कटु कान पर्यो जानकी के कान जाके पगे पी में प्रान सुनि दुप पानि ह्वै गई। कही "हे लषन तोहिं लषन परस तास भ्रात तेरो आरत पुकारत है हा दई॥ लाहु झट पट पट पट कों पटकि भट भ्रात को मयद भंज गलि गलि में गई। सुनि प्रभु भ्रात भनो मामी मूं न भीति भज सब भ्रात को न कोऊ भवन में भै दई॥ २५॥

सुनि सिय सुमति सुमित्रा सुव सु वचन गहे कहे कुवच कुलिस तें कठोर अति। सुनत सु लषन के प्रान कलकात भये कानन को मूंदि गये कानन की देवगति॥ सौंपि वन देवन को सीता सती सेवन को धारि धरि दिवन

कों परम बिकल मति । अवसर पाइ लंकराइ इत आइ धाइ लै गयो चुराइ सिय कों बनाइ बेष जति ॥ २५ ॥

राच्छस ने हरी अरबरी भय भार भरी धरी नाहीं धीर परी पीर उर पागी है । आरति पुकारति है नैन नीर ढारति है हाइ लछमन हाइ राम रट लागी है ॥ सीय सुर हाइ सुनि धाइ गीधराइ आइ रच्छराइ सों रिसाइ लर्‌यो राम रागी है । नयन सों फारि तनु चोंचन बिदारि धनु सारथि सबाह रथ कार्‌यो मृत भागी है ॥ २७ ॥

तब बिसिखाइ रच्छराइ दुख पाइ पर पाइ पगराइ पग सों चपाइ कैं । महि में गिराइ महिजाइ गहिधाइ चल्यो हिय हरषाइ हाय माइ कों लिवाइ कैं ॥ नांघि बहु देसन कों गिरिवर वेसन कों सरि सरितेसन कों धस्यो लंक धाइ कैं । तहां साम दामन कों भेद दंड दामन कों करि थक्यो सीस ~~~~~ न सक्यो अपनाइ कैं ॥ २८ ॥

इत रघुनंदन निकंदन कपट मृग करि सुभ स्यंदन सु आस्रम कों आये हैं । राच्छस कुसब्द सुनि अवगुन अति गुनि पुनि अपसगुन विषाद प्रद पाये हैं । चिंता सों चकित चित चितवत इत उत दूरि तें सुलषन सुभायन लषाये हैं । देषि दुख पाइ मिले धाइ लघु भाइ जूसों सिज सब दुषित दुषित दरसाये हैं ॥ २९ ॥

बोले रघुराय लघु भाइ सों रिसाइ तुम्ह जानकी बिहाइ आये क्यों बिपिन में । सुनि लछमन भन मेरो तो गुनाह

नाहिं कुजागे कुवच-बान वेध्यो मन गन में ॥ मुनि रघुमनि सहागम में मगन भये गये। निज आखम समित भति तन में। ताहि पाइ पाई प्यारी जनक कुमारी नाहिं हेरि हेरि हारे हर हर हरितन में ॥ २० ॥

तब अति तपत तपत, श्री विगत मति बिरह बिथित थिति कहूं न करत हैं। बावरेसे बोलत बचन बन बन बीच बसुधा सुता की सुधि बूझत फिरत हैं॥ रैन दिन चैन है न नैन नीरे ऐन ऐन बैनहूं बिकल काल पल न परत हैं। जानकी बिहीन प्रान जान की सी गति भई जानकी के ध्यान थिति जान को धरत हैं॥ २१ ॥

खग मृग जीवन सों जानकी के जान की जों जान की जीवन पूछि पूछि पछितात हैं। लषन लषन भांति भनि समुझाव हैं सुनि सुनि समुझि समुझि न सिरात हैं॥ कहूं मग मांहि में निसानी सिया लूकी छोड़े बिथुरे बेनी के फूल फूले न समात हैं। पुनि पियो सबु की सराहि सामा सफल सकल भई भूमें दरसात हैं॥ २२ ॥

प्रिया जू के पावन के पैंडन कि पीछे पीछे मग बर पाइन के पैंड पुनि पाये हैं। ब्रनज की बूंदें बहु बसुमती बीच लषि रच्छ भच्छी जानकी की जानि बिलखाये हैं॥ आगे गीधराइ गिरि राइ सो गिरो विलोकि छूं अतोक सोक ओक ताको ओर आये हैं। तानें सी हरन निज जरन मरन रन सबै रघुबरन कों बरनि सुनाये हैं॥ २३ ॥

सो सब सुनाइ रघुराइकों निवाइ सिर काइ कों बिहाइ

बाली बलवान जब लैन लग्यो प्रान राम मीत की महान तब लग्यो राम बान है। गयो बाकी प्रान लखि लोक दुख पागि भये बैठि सो बिमान गयो जहाँ मघवान है॥ अंगद के अंग दहे बाप बिरहागनितें तारा भई तारा जैसे भये भान भानु है। बाली कों जराइ सोक सब को सिराइ रघुराइ कपिराइ कियो, सुगल सुजान हैं॥ ३८॥

बरषा बिताई लखि सरद सुहाई रघुराइ हरिराईसों जनाई निज काज की। तब तो पठाई, कपिराई, कपि कटकाई सिय सुधि हेत दै दुहाई महाराज की॥ देस देस धाई गिरिराई बनराई हेरीं डगर बगर पुरराई राज राज की। कहूँ दुख दाई भूख प्यास में सताई बिलपाइ बिल पाई तब नीर नाज की॥ ३९॥

तहाँ एक पाई तिय तापसी सुहाई ताकी आयस जो पाई प्यास भूख सु भगाई है। बिल में बिलसि न निकसिबे की पैंड़ पाई, तापसी सुतप तेज मैंधि पै पठाई है॥ तहाँ दुचिताई पाई अवधि बिहाई जानि आनि गीधराई, रानी जानकी जनाई है। मुनि सिर सोच परे ठगे से रहे हैं सब नीर निधि नांघिबे को काहू न सुनाई है॥ ४०॥

तब जामवान हनुमान को बखानि बल बारिधि बिलंघन की बिनती बखानी है। सुनतहीं भानु के समान हनुमान भये बलवान बेगवान बढ़ो बर बानी है॥ कहो तो उखारि लंक पारि बारि धार बोरौं कहो बांधि ल्याऊं जो लंकप अभिमानी है। कहो ताको नारिन हुआरन समेत ल्याऊं सुख सेतु रघुकुल केतुकी जो रानी है॥ ४१॥

कही जामवंत हनुमंत मतिमंत सुनी हौं जु कहौं मंत ताको मंत जानि लीजियो। सिय सुधि ल्याय हरषाइ हरि राइ दीजो रघुराइ धाम में न धूम धाम कीजियो॥ ऐयो झट पट घट पट को पटकि पटु मरकट गट कों अघट सुख दीजियो। चलि सुष लेत हरि हारन समेत कपि केतु रघुकेतु सुष सेतु करि लीजियो॥ ४२॥

सुनि जामवान के वचन हनुमान सु महान सुभ जानि सनमान मन धरे हैं। करि राम राम कपि धाम कों गमन कह्यो राम राम रामा कों प्रनाम दाम करे हैं॥ उड़ि चासमान चढ़े वायु तेज बेग बढ़े रोधि सु विरोधिन पयोधि पार परे हैं। लषी लंक सारी पाछें पाई प्रभु प्यारी ताकि भंजि भय भारी सुष भारी भूरि भरे हैं॥ ४३॥

वहुरि विचारि वर वाटिका विहारि करि झारिनकी झारि सिर झारि झारि हरषे। जेई आये भट गट तेई घाये झट पर मारे मारि भटन के भटपन करषे॥ रच्छ पति पूत अच्छ वड़ो धूत पतासच्छ कह्यो सो अलच्छ तब जेठ पूत परषे। जोर सब चल्यो न करोरहूँ जतन करि सब विधि बंधन सों बांधि कपि करषे॥ ४४॥

लंक में फिराइ माइ लंकराइ आयस कों तेल पट लाइ लाइ लूम कों लगाई है। लागी लषि लाइ कपिराइ कूदि चढ़े जाइ अटिराइ अटापै जु छटा छवि छाई है॥ दौये हैं लराइ धाम धाम धाइ धाइ जाइ जाइ जाइ पुर सुर धामन लों धाई है। लंक अंक जारि जारि जारयो छवि छार छार ोय यो विभीषन को चोविधा मचाई है॥ ४५॥

लंक कों जराइ कैं सुनाइ रघुराइनाम औरखाम बारिधि में बालधी बुझाई कैं । सीया सूकी पाइ पारि आये इह पार टारि करे कपि सकल सकाम किलकाई कैं ॥ मिलि हरषाये सिय सुधि सीं सिरायें तब आये हरिराइ रघुराइ ओर धाइ कैं । मधुबन मधुफल पूब पिलि पाये सियराये सियराइ सिय सुबच सुनाइ कैं ॥ ४६ ॥

सिया सु संदेस सुनि सु सुनि सुदेस देपि दुप सुप दोउ दसा दिपीं दासरथि उर । तब सिय पति साथा मृग पति साजिसेन सर सबु साम्ह है जो सासक असुर सुर ॥ थंटक पटकि कपि कटक कटन करि तटनोस तट टुटे सुभट सुघट धुर । सुनि सु विभीषण यि भीषन सु भ्रात तजि लीन्हो भरि भीषन को सरनि हरनि जुर ॥ ४७ ॥

सिंधु सेतु साजि स समाज सिय काज रघुराज हरिराज रिच्छराज परे पार हैं । रावन को नीति संभावनाकों रघुलाल पठ्यो बालि लाल याने कहे बैन सार हैं ॥ जानकी न दैहै जो तूं जान की हीं हानि लैहै प्रान की करेंगे त्यारी तेरे जु मुरारि हैं । बालि सुत बानी अभिमानी ने न मानी जब तब कपि कपि कटकन रोके लंक द्वार हैं ॥ ४८ ॥

रोके चवांद्वार लंक अंकावंक कपिन न्ने लंकपुर लोकन धलक भये भारी हैं । पवनचर भयहूं प्रचारि चहुं चक्रन तें मचे जुद्ध उभै ओर घोर क्रांति कारी हैं ॥ मरकट गट कट कट कट कट कटकन करि काटें कटुकीन मन निकपट क्यारी हैं । चारी ओर आवे चरि बोर घोर रव करि कपि वर बीर ताके ताकी प्रान हारी हैं ॥ ४९ ॥

पूरब की द्वार तें प्रचारि आयो धूम्राच्छ नाम को सु धूम राच्छस राच्छस सिरोमनी। बड़े बड़े बीर, धूर धीर और सुर भीर करन अभीरन की सङ्ग साजि सुधनी॥ आयत ही झटपट मरकट भटगट डारि कटि कटि कै अघट भटता धनी। हेरि हनुमान हरि हारन को हानि मानि हरे अरि प्रान सह अनी जो अनी ठनी॥ ५०॥

दच्छिन की द्वार एक रच्छन के मार आयो रच्छप पठायो वज्रदाढ़ जाको नाम है। सङ्ग लिये रच्छन कुलच्छन के लच्छ लच्छ भच्छन अभच्छ जिनके प्रतच्छ काम है॥ हेरि हरि हारन को हनत हजारन कों तिन्ह हूं हजारन कों दीन्हे जम धाम हैं। कोऊ जुवराज गयो गाजि जिमि गाजि तिन्ह बध्यो बाजि राजि गजराजि हत धाम है॥ ५१॥

सुरासुर कम्पन अकम्पन अरातिपति आयो तिन्ह कम्पन अकम्प कपि कीन्हे हैं। कठिन कोदण्ड तानि चण्ड चण्ड बान सानि वीर बलवण्ड अपि खण्ड खण्ड दीन्हे हैं॥ कपि कुल कष्ट अति दुष्ट पुष्ट देत देखि दौरे हनुमान सु मसान रिर भीन्हे हैं। अचल उतङ्ग सों अराति अङ्ग भङ्ग कीन्हो सङ्ग के हजारन हरिन हनि लीन्हे हैं॥ ५२॥

मरन अकम्पन कों सुनि उर कम्पन भो लङ्कप को तब तो प्रहस्त को पठायो है। परम प्रसस्त सो समस्त सैनापति तिन्ह हू के रनमत्त मृध मझ को मचायो है॥ मारि मारि झारि झारि बीरन बिडारि डारि मंदर लों मंदर महोदधि मथायो है। ताहि तकि नील गहि पील लों मगार सील ढोल बन खंडि दृप दंड लों गिरायो है॥ ५३॥

नील हरि हस्त सों प्रहस्त भयो अस्त सुनि रावन समस्त सचिवन सों विचार करि। चल्यो चढ़ि आपही अनाप सूर सेन संग परम प्रताप दाप ताप उर उत धरि॥ राम लछमन कपि मनि गन गनि गनि हनि हनि ऐहों हर हर कों हरष हरि। ऐसे कहि धायो आनि अवनी में गाजि गाजि जैसे जमराज सु समाज सजि आवै अरि॥ ५४॥

राम अरि भीषन निहारि अति भीषन को बूझत विभीषन को कौन से सुरारि भारि। सुनत विभीषन अंबुज ईषन बैन बीसनैन आदि के सुनाये सब समाचार॥ सुनि रघुराई बोलि हिय हरषाई मेरे बड़ो हैं बधाई जु दियाई दई दगादार॥ आज याकों आनि में समाज के समेत हनि हनि हौं हरिनि नैनी सिया को संताप भार॥ ५५॥

आयो रच्छराइ बाजे विविध बजाइ घहराइ कैं घनन तौं घनेई हरि धाये हैं। बान बुंद बरषि कैं बीसो बली बाहनि सों बलीमुख बाहनि के चरन चलाये हैं। हरिन को हानि हेरि बैरि कों निबेरि कपिराइ आइ अरि पर तरु बरषाये हैं। अरिज विडारि तरु भारि सार सार मारि पुनि सर हनि हरि मनि मुरछाये हैं॥ ५६॥

हरि मनि मूरछित पस्यो भस्यो धूरि छिति हेरि जित तित तें कपीस कुल कोपे हैं। पादप पहार भारि भारि भारे रावन पै तेज सर मारन सों लंकप ने लोपे हैं। पुनि धरि ध्यान धनु तानि तानि कानन लों कानन चरन के सरन तनु लोपे हैं। तबे अरि सरन तें रन तें सरन कारि, रघुकुल सरन सरन सिर रोपे हैं॥ ५७॥

हरिन को हारि कौं निहारि यौं बयारिज प्रचारि कैं सु-
रारि सु सुरारि पाटु पीन्हो हैं। परि पी पचार कौं प्रहार सो
सहारि कैं हंकारि पुट मुष्टि रुष्ट टुष्ट उर दीन्हो है ॥ जागत
चौं मूरछित ह्वै यौं रघुराइ छितिपति लगि मातनात, कौं य-
ड़ाई कीन्ही पीमो है। याह्यो हनुमान धिग पौरुष प्रमान म-
घवम पवान जीम जान सैरी कीन्ही हैं॥ ५८ ॥

सुनि रघुपति हनुमत करे मूरछित हेरि हरिछितिप
नील नाम धाये हैं। कीन्हो जुद्ध रावन सों सुर त्रिसनाय
सों धावन बचावन न धावन पधाये हैं॥ पुनि करि बाध
कौं राघव को ध्यान परि चढ़ि परि सिर पर नयरन धाये हैं
करि थक्यो कोटिक उपाइ रघुराइ नील नाम हरिनाथ
परि हाथ में न आये हैं॥ ५९ ॥

हारि कैं सुरारि सुर पावक प्रहारि बलसार मापि धा
मनि मूरछित कर्यो है। नील बल सील बल कीन्हो लपि ख
पन लषन वलि बैरि बल मग पग धर्यो है॥ देषत दसान
सु कानन लौं तानि धनु बानि ससि आनन लषन सन लाग्यो
है। ताकि सर सालि सुफ सरन लषन लाल याग्यो मूरछित
छिति पर्यो मानो मर्यो है॥ ६० ॥

लग्यो जब मूरछाते रघुरस पनचक्र मति लघुमन वचह
विधिवरक प्रहारी है। जागत हीं मूरछित भये गिरे सूर छिति
लग्यो आइ आइ कौं उठावन पनारी है। पति अदभुत भयो
लषि सो लषन लयो भयो हर गिरि तें लषन तनु भारी है।
सुषन सुमन ज्यों उठाइ ल्याये पति पवन उस्यौ
सुरारी है॥ ६१ ॥

प्रभु कर फेरि कैं निबेरिकैं कथन दुप हेरि कैं सुरारि कौं सुरारि कौं सिधारे हैं। अरि ने ज आयुध अनेकही अघट प्रेरे ते ते रघुभट भट काटि काटि डारे हैं ॥ पुनि सित सरन सौं सारथी सरथ साजि सपति सरासन स सैन सु संहारे हैं। काटि कैं किरीट करि कीट सौं निबल पल पठ्यो पुर कीन्हे सुक सुजस उज्यारे है ॥ ६२ ॥

जाइ कैं पिसाइ कैं दुगुनं दुप पाइ कैं अघाइ पछिताइ कैं बिसेष बिपदाइ कैं। मंचिन बुलाइ कैं बिहइ बिलपाइ कैं सुहारि कौं सुनाइ कै तिन्हैं हूं प्रतपाइ कैं ॥ कोप कैं कुराक्षस कुलन हंकराइ कैं कह्यो है क्यौं न लेहु कुंभकरने जगाइ कैं। सुनि गये धाइ कैं जतन जूथ ल्याइ कैं लियो है सो जगाइ कैं पवाइ कैं पिवाइ कैं ॥ ६३ ॥

तब सौ रिसाइ कैं सो बोल्यो दुप पाइ कैं, रे कौन काज आइ कैं हौं लियो हौं जगाइ कैं। सुनि तिन्ह कही सब भेद समुझाइ कैं ज्यौं लंक कौं कलंक भौ अतंक लागे आइ कैं ॥ सुनि अकुलाइ कैं लंकेस ढिग जाइ कैं सिराइ कैं सु ताहि चल्यौ जुद्ध धर धाइ कैं। ताकि तनु ताको कपि भगे भभराइ घबराइ हहराइ डंटे प्रभु पाइ पाइ कैं ॥६४॥

तब रघुराइ, प्रिय आइस कौं पाइ कपिराइ जुवराइ नील प्रमुष प्रधाये हैं। गुरु गुरु गिरिन गगन नघ परन प्रपरन हरिन अरि अंग अंग घाये हैं। तब घनघर प्रलै काल ज्यौं कराल ह्वै कैं कोटि कोटि गहि षाये हैं। कोपि कपि कुल कूदि कूदि चढ़े सतु सिर मानो गिरि गुरु गज गन छबि छाये हैं ॥ ६५ ॥

सिर पै, परम पलचर कपि पुगन को पाइ गहि पाइ पृथ्वी पै पटकाये हैं। केति फारी, पाये कपि निकर निसाचर ने, केते, नाक, कान सग निकरि पराये हैं॥ करि कोप पल पुनि पिल्यो रन मंडल में कोटि कोटि कपिन के कूट निपटाये हैं। अंगद तें आदि करि करि कपि मूरछित पेषि छितिपति रघुपति राय धाये हैं॥ ६६ ॥

आइ रघुराइ कह्यो क्यों रे सठ धाइ धाइ मारत है मरकट-गटन निपट नीच। मेरो चोर आइ दिपराइ बल मोहि पल-मेरे सित-सायकन पाइ किन'तोहि मीच॥ सुनि रघुनंद के वचन-वृन्द मन्दमति गिरि गुरुमुदगर करि गुरु कर बीच प्रभु पै प्रहार्यो प्रभु काटि सहि पार्यो पुनि-धायो धरि कुधर कों कमलज कुल कीच॥ ६७॥

आवत निहारि कर धारि कें पहारकों मुरारिकों परारि पर धार सर मार्यो है। गिरि के समेत गिरी भुजा महिपित में अचेत पुनि- वाम कर धराधर धार्यो है॥ सोऊ रघुभट भट काटिकें पटकि दयो तब सुति घट सो अघट हिय हार्यो है। तऊ बड़ बदन बियारि विवुधारि धायो सोऊ धनुधारि सरधारि भरि डार्यो है॥ ६८॥

तऊ रघुराइ ओर धाइ पल राइ आयो तब सर धाइ प्रभु पाइ बिन कीन्हो हैं। तऊ महि लोटि मति पोंट कपि कोटि कोटि कीन्हे महि कोट यों चटोट टुप दीन्हो हैं॥ तब रघुबर सर प्रवि सों प्रहरि पलचर को कुधर कीन्हो सिर सिंग दीन्हों हैं। ऐसे सो दयाल रघुलाल अघजाल परिहू… करि ख्याल दीन्हो निज पद पीन्हो हैं॥ ६९ ॥

सखो कुंभ कान गरोवाने सुपर्वाने गये पुहुप प्रधान प्रभु ऊपर प्रबरषे। नारदादि मुनि मनि सारदादि गुनिगन जच्छ किन्नरादि कविपादि हू के हरषे॥ सोक सर सावन मे धामन में रावन की भामिनि समूह दाहा रावन विधरषे। रघुमनि लछमन हरिमनि हरिगन सबन के मनन आनन्द उतकरषे॥ ७०॥

बंधु सोक संधि दसकंध भयो अंध सम कारन अनंध सम बोलयो तात तासु को। त्रिसिर है नाम जाको बड़ो बीर बाम सरग्राम में विलई मरग्राम जस जासको॥ ऐसों हरि राम हरिदास के समेत तुम्ह पावो बिसराम सब जाम तजि पास कों। सुनि सुत बैन चैन ऐन लह्यो लंकपति बंकसैन संग दै पठायो करि आस कों॥ ७१॥

ताके रन चलत चले हैं तीन भ्रात ताके संग बांके औरन को बाहनी बनाइ कैं। एक नर अंतक दुतीय देव अंतक तृतीय अतिकाय अति चाइ चलयो धाइकैं॥ आयेरन भूमि भूमि भूमि कैं मचाई धूम कपि अपि मद घूमि घूमि घाइकैं॥ भयो जुद्ध भारी उभै ओर परी मारी काहू टेक नाहि टारी घरि भारी घाइ घाइ कैं॥ ७२॥

पलचर फलचर पिसत परसपर गिरि तरु नख पर प्रहरन प्रहरत। भट गट जुटत कटत काटकन अति हटत हठि घन घट जिमि घहरत॥ लरत भिरत बहु गिरत मरत बहु बहु लहि दुप झलाझल अति कंहरत॥ परम प्रबल हरि रतन हरिन बल लपि अरि मल भय भय हिय हहरत॥७३॥

जोइ जरी लंका कोपजुर जरि लंकपति कुंभ औ निकुंभ कुंभ कानन बुलाये हैं। कम्पन प्रजंघ जुग जंघ जंघ जोधा और संग संग सूरन के संग दै पठाए हैं॥ कम्पन प्रजंघ जुग जुरे आइ अङ्गद सों अङ्गद ने अङ्ग दलि दोऊ भूरआये हैं। कुंभ औ निकुंभ कपिपति हनुमन्त हने निकर निसाचर न नीके निपटाये हैं॥ ८२॥

कुंभ आदि मनुजाद भए बरबाद सुनि लङ्कप पलाद हू विषाद को प्रसाद अति। हुतो मकराच्छ नाम राच्छस अनच्छ अति पन पर सुत पर क्रिति कर पर मति॥ दियो सो पठाय तिन्ह आइ कै निकाइ कपि दीन्हे बिकलाइ देखि धाइ आये रघुपति। जग्यो है जबर जुद्ध दोऊ दिस रिस रुद्ध वधि रघुवृद्ध ने विरुद्ध हू को दई गति॥ ८३॥

मकराच्छ राच्छस को कथन सुनत रच्छमनि सोक सनि पुनि पूत को पठायो है। नाम मेघनाद करि बाम मेघनाद धाइ स्याम मेघनाद रघुनाथ ढिग आयो है॥ करि सर बरसन प्रभु को प्रघरषन करन चहत प्रभु सरन सों घायो है। राम सर परन को वेद न सहारि सक्यो अन्तर हित ह्वै कटु कपट कमायो है॥ ८४॥

माया मई मैथिली बनाय ल्याय तासु सीस काटि दिखराइ आपि गगन को गयो है। देखि दुख पाइ हहराइ हरि वारन ने आइ रघुराइ सों सुनाइ सोई दयो है॥ सुनि सोक ... रघुमनि लछमन आइ रच्छमनि सों सुभाइ दुख ... पुनि समुभाइ लघु भ्रात को लिवाइ गयो जहाँ ... ने कुमख ...यो ...॥

सही जाइ जोयो कोटि कौनप को कोटि करि करत कु-मख कलमष की निवेस सो। लखि सु लषन सर लषन सों काट्यो कोटि कपि कटकन कीन्हौं कुमष कु सेतु सो ॥ तब घननाद करि धनै घननाद लख्यो लषन सों लषन हूं राख्यो पन पेत सो। तासु नास अरि सुर रासि वास नाम करि आए प्रभु पास पेखि भए सुख सेतु सो ॥ ८६ ॥

सुनि के कदन मेघनाद को वदन दस प्रलै मेघनाद से रदन नाद कीन्हे हैं। हाय इन्द्रजीत इन्द्रजीति हौं अभीत कीन्हो जैसी इन्द्रजीति वृत सब सुख लीन्हे हैं ॥ विविध विलाप के अलाप होत ठौर ठौर मन्दोदरि आदि तौ कलाप ताप भीने हैं। कहूं नाहि सुख जित तित दीखै दुख देखो राम तें विमुख होत सब सुख हीने हैं ॥ ८७ ॥

करि के विलाप यों अनापही सुराप चल्यो आप करि दाप चाप बीसो कर तानि कै। सेन चतुरङ्ग रङ्ग रङ्ग सङ्ग सजी घनी बनी अङ्ग अङ्ग रन अङ्गन में आनि कै ॥ लख्योई कटन कपि गटन घटन जिमि घहराइ धाइ धाइ कुबच बखानि कै। हेरि हरि गन हानि हनुमान से महान धाये बलवान अरि हानि ठट ठानिकै ॥ ८८ ॥

गिरि तरु प्रकर प्रहारे भारे भारे तिन्ह काटि काटि डारे सर सारन सों सारे हैं। पुनि पर वानन सों मारन बहु पन कौं वेधि वेधि तुल्यन कि तुल्य महि पारे हैं ॥ सूर सब मुरछित परे भरे धूरि छिति हेरि कपि पूर छितिपालक पधारे हैं। सैल से विमाल साल साखिन की जाल कपि पाल महापाल पै प्रहारे तिन्ह टारे हैं ॥ ८९ ॥

स्तोकि बिसमें पगे। समुझि सुरेस सूत सुगति सुभाये प्रभु जापति चस्त्र ही लौं प्रान पल में खगे ॥ सुनि प्रभु प्रजापति सही प्रशस्यो तव प्रान सत्‌ यो समेत सिर भुजहीं भगे। खि दस बदन बिनास बिबुधेसन के बाजे बजे सब जग व जैजै जै जगे ॥ ८४ ॥

सिव सनकादि सुर संघन संतुति सनी सुमनस सुमनस तार बरषाये हैं। गान गुनी गंध्रबन गान गाया गूथि गूथि गुन गन गाथ रघुनाथ गुन गाये हैं ॥ नृत्य नीति नुत निरन्तर नटी निकरन नाचि नाचि नीके मन ननच नचाये हैं। बेद बिद बिप्रन बिबिध बेद बानी बदि बेद बिद बर रामरतन रिझाये हैं ॥ ८५ ॥

रावन मरन रन रावन की रानी सुनि आईं रन अवनि में रवन को रोवतीं। मन्दोदरि आदि आधि बिषम बिषाद धूंधी पति गति परखति मति गति खोवतीं ॥ बिरह बिलापन अलापन अनापन सों आपन अनापन के हूदे पीर पोवतीं। हाय पिय प्यारे सिय प्यारे की जो प्यारी देत तौ न हम प्यारे की ज्वलन ज्वाल जोवतीं ॥ ८६ ॥

सुनि सो पुकारि नारि झारि को खरारि सपद्दार बदि सार सो कहारि समुझाई हैं। पुनि पद्धजीयन बिभीषन सों भाषि भली भांति स्तभीषन की क्रति करवाई हैं ॥ पुनि पौन पूत को पठाय प्रान प्रिया पै पठाई मलवर पतिबध की बधाई हैं। सुनि सद्मूर्ति सु सुवन को सुबानी सुभ सानी सिय रानी सिवरानी सियराई हैं ॥ ८७ ॥

तब एक रच्छ जो बिरूप अच्छ नाम वाम रच्छराइ आयस ले आहव में आयो हैं। लर्यो कपिराइ सों अघाइ सर घाइ घाइ तज हरिराइ घाइ गाइ में गिरायो है ॥ और एक आयो अरि जुद्ध उनमत्त नाम जुद्ध उनमत्त कपिपति सोऊ घायो है। ताके पाछे रच्छ प्रति पच्छिमत्त नाम धायो ताहि जुबराज जमराज पै पठायो है ॥ ९० ॥

बध जो बिरूप अच्छ आदि मनुजादन को आदि मनुजादन को हेरि हहरायो है। ह्वैकै अति क्रुद्ध करि जुद्ध अनिरुद्ध बेंधि बन्दर बिरुद्धन को बल बिचलायो है ॥ बड़े बड़े बीर धीर करिकै अधीर और धरि धुर धीर रघुबीर तीर आयो है। हेरि रघुनन्द धरि धनु बान द्वन्द-अरि मन्द सों अमन्द द्वन्द मङ्गर रचायो है ॥ ९१ ॥

रावन सरथ बिन रथ दसरथ सुत पेषि पुरमघ अथ सुरथ पठायो है। तापै असवार ह्वैके कोसल कुमार धनुमार सर धारि निदमारि समुहायो है ॥ सावन के घन सम सर बरसावन सों रावन को तनु घन घावन सों छायो है ॥ रावन हू राघव को करिकर लाघव कों बानन के सन्दन अरिन्दन सों घायो है ॥ ९२ ॥

लरत परस्पर टरत न पग भर अरत न डरत करत काम-दाम है। मत्तन सों मत्तनकों अस्त्रन सों अस्त्रन कों टारत हूं मारत हैं वारत न दाम हैं। तब रघुवर पलचर पर पर सर प्रहर प्रहरि हरें भुज सिर धाम हैं। कटत हीं अंध नव पुनि रचें पुनि उठें पुनि पुनि निकरत निकर निकाम हैं ॥ ९३ ॥

[illegible]

बिलोकि बिसमैं परी । समुझि सुरेस सूत सुगति सुभाये प्रभु प्रजापति अस्त्र ही लौं प्रान पल में खगे ॥ सुनि प्रभु प्रजापति अस्त्रही प्रहारो तब प्रान सतु के समेत सिर भुजहीं भगे । देखि दस बदन बिनास बिबुधेसन के बाजे बजे सब जग रव जैजै जै जगे ॥ ६४ ॥

सिव सनकादि सुर संघन संतुति सजी सुमनस सुमनस सार बरषाये हैं । गान गुनी गंध्रबन गान गाथा गूथि गूथि गुन गन गाथ रघुनाथ गुन गाये हैं ॥ नृत्य नीति नुत निरजर नटी निकरन नाचि नाचि नीके मन ननच नचाये हैं । बेद बिद बिप्रन बिबिध बेद बानी बदि बेद बिद बर रामरतन रिझाये हैं ॥ ६५ ॥

रावन मरन रन रावन की रानी सुनि आईं रन अवनि में रवन को रोवतीं । मन्दोदरि आदि आधि बिषम बिषाद मूँधी पति गति परखति मति गति खोवतीं ॥ बिरह बिलापन अलापन अनापन सों आपन अनापन के छूटे धीर धोवतीं । हाय पिय प्यारे सिय प्यारे की जो प्यारी देत तौ न हम प्यारे की ज्वलन ज्वाल जोवतीं ॥ ६६ ॥

सुनि सो पुकारि नारि भारि को खरारि सबहार बदि सार सो कहारि समुझाई हैं। पुनि पङ्कजीपन बिभीषन सों भाषि भली भांति मृतभीषन की क्रिति करवाई हैं ॥ पुनि पौन पूत को पठाय प्रान प्रिया पै पठाई पलचर पतिबध की बधाई हैं। सुनि सद्मूर्ति सु सुवन की सुबानी सुभ सानी सिय रानी सियरानी सियराई हैं ॥ ६७ ॥

तब एक रच्छ जो बिरूप अच्छ नाम बाम रच्छराइ आयस ले आहव में आयो हैं। लर्‌यो कपिराइ सों अघाइ सर घाइ धाइ तक हरिराइ घाइ गाइ में गिरायो है॥ और एक आयो अरि जुद्ध उनमत्त नाम जुद्ध उनमत्त कपिपति सोऊ घायो है। ताके पाछे रच्छ प्रति पच्छिमत्त नाम धायो ताहि जुवराज जमराज पै पठायो है ॥ ८० ॥

बध जो बिरूप अच्छ आदि मनुजादन को आदि मनुजादन को हेरि हहरायो है। ह्वैके अति क्रुद्ध करि जुद्ध अनिरुद्ध बँधि बन्दर बिरुद्धन कों बल बिचलायो है॥ बड़े बड़े बीर धीर करिकै अधीर भीर धरि धुर धीर रघुबीर तीर आयो हैं। हेरि रघुनन्द धरि धनु बान द्वन्द-अरि मन्द सों अमन्द द्वन्द सङ्गर रचायो है ॥ ८१ ॥

रावन सरथ बिन रथ दसरथ सुत पेखि पुरमथ अथ सुरथ पठायो है। तापै असवार ह्वैके कोसल कुमार धनुमार सर धारि निरुमारि समुहायो है॥ सावन के घन सम सर बरसावन सों रावन को तनु घन घावन सों छायो है॥ रावन हूं राघव को करिकर लाघव कों वानन के हन्दन अरिन्दन सों घायो है ॥ ८२ ॥

लरत परस्पर टरत न पग भर अरत न डरत करत काम-दाम है। मस्त्रन सों मस्त्रनकों अस्त्रन सो अस्त्रन कों टारत हैं मारत हैं हारत न दाम हैं। तब रघुबर पगधर पर पर सर प्रहर प्रहरि हरि भुज सिर बाम हैं। कटत हीं भये नए पुनि हये पुनि भये पुनि पुनि निकरत निकर निकाम हैं ॥ ८३ ॥

बिलोकि बिससैं परी। समुझि सुरेस सूत सुमति सुभाये प्रभु प्रजापति भस्त्र छी लौं प्रान पल में खगी ॥ सुनि प्रभु प्रजापति अस्त्रही प्रहाखो तब प्रान सलु की समेत सिर भुलहीं भगी। देखि दस बदन बिनास बिबुधेसन की बाजे बजे सब जग रस जैजै जै जगी ॥ ८४ ॥

सिव सनकादि सुर संघन संतुति सजो सुमनस सुमनस सार बरषाये हैं। गान गुनी गंध्रबन गान गाथा गूथि गूथि गुन गन गाथ रघुनाथ गुन गाये हैं ॥ नृत्य नीति नुत निरजर नटी निकरन नाचि नाचि नीको मन नगच नचाये हैं। बेद बिद बिप्रन बिबिध बेद बानी बदि बेद बिद बर रामरतन रिझाये हैं ॥ ८५ ॥

रावन मरन रन रावन की रानी सुनि आईं रन अवनि में रवन को रोवतीं। मन्दोदरि आदि आधि बिषम बिषाद् पूंधो परि गति परखति मति गति खोवतीं ॥ बिरह बिलापन अलापन अनापन सों आपन अनापन के छूटे धीर धोवतीं। हाय पिय प्यारे सिय प्यारे की जौ प्यारी देत तौ न हम प्यारे की ज्वलन ज्वाल जोवतीं ॥ ८६ ॥

सुनि सो पुकारि नारि झारि को खरारि सपदार बदि सार सों कषारि समुझाई हैं। पुनि पङ्कजीपन बिभीषन सों भाषि भली भांति मृतभीषन की क्रृति करवाई हैं ॥ पुनि पौन पूत को पठाय प्रान प्रिया पै पठाई पलचर प्रतिपथ की बधाई हैं। सुनि सदामूरति सु सुवन की सुबानी मुग सानी सिय रानी सियरानी सियराई हैं ॥ ८७ ॥

बहुरि बिभीषन कौं राज की तिलक रघुराज नै तिलक रघुराज जू ने दीन्हीं है । पुनि प्रभु पावक प्रथम के प्रवेश तें प्रकट कीन्हीं प्यारी कौं परम पन पीनो है ॥ बहुरि बनच-रन बहु विधि बसु बांटि बिबुध बिमान बैठि बगद न कीन्हो है । सिय सु सनेह सनि सब,न के सनमानदि सु बन बसन सुभाइ सुख लीन्हों है ॥ ९८ ॥

भेटि भरद्वाज सों भरत भात भाय भरे भेटे भरी भाय भवि भजे भय भारे ले । गुरु गुरुजन गुरुजननि जननि गन जनन की सुध जथाजोग जजे प्यारे ले ॥ पुनि प्रिय पुर में प्रवेश सुभ भेस सजि पूजे परमेस के पदम पद प्यारे ले । सब सुभ मंजुल सु समै साधि सज्जन न सजे स,भ अभिषेक सब सु सारे ले ॥ ९९ ॥

विविध बधाये वाजे बसु मति व्योम बीच विबुध बहु बहु बन्य बरसत हैं । भांति भांति भेंट भूमिभूप दिवभूप दे रूप रघुभूप की अनूप दरसत हैं ॥ उच्छव अमित हौं अवनि उदित भये नर नारि निकर सनेह सरसत हैं । नाना विधि दान दीन्हे दासरथि देवद्रुम जिन्हैं पाइ दीनता न पुनि परसत हैं ॥ १०० ॥

राम राज मांभ कोऊ वाम न बिलोकी बांभ विधवा न विधि बस कहूं कोऊ कामिनी । रोगी न वियोगी सोगी दुख जग जोगी कोऊ सबै सु,ख लोगी भूरि भोगी दिन जामिनी ॥ कोऊ कहूं चोर न वृकादि जन्तु घोर न,न कोऊ बरजोर जो संतावे नर भामिनी । सभी सुभ धाम गुन ग्राम जन ग्राम । राम घनस्याम स्वामि सीय की सुस्वामिनी ॥ १०१ ॥

जब रघुराज भये राज में विराजमान तब रिषिराज सम-माज सब आये हैं। पूजि पधराये प्रभु परम प्रमोद पगि तेज प्रिय पेषत परम पुलकाये हैं ।। पूछि मुनि प्रभु सु का सब न को समाचार सकल सु कर्मममं सु मुनि सुनाये हैं। पौनपूत की पु-नीत पौरुष परम पुनि प्रभु प्रिय परस परषि रिषि गाये हैं ॥१०२॥

रिपिन को विदा करि सखन को विदा करि लषन को हूदा करि रम्य गुन रूप सों। प्रजा को पालन करि ललना लालन करि सबन माल्लन करि धनु अनुरूप सों ॥ साधुन को सङ्ग करि भूम भय भङ्ग करि रागिन को रंग करि सुन्दर सुरूप सों। कोटि यज्ञ क्रतु करि द्विजन दरिद्र दूरि अनुगन अभै करि काढ़ि क्रिति कूप सों ॥ १०३ ॥

ऐसो रम्य राज कीन्हो सुखी सुसमाज कीन्हो सत्रुहन हाथ लीन सच्छनि दीन्हो है। वधुधन मधि मधुपुरी सु प्रकासि रसरासि रिपु नामतहां वास करि लीन्हो है ।। उत रघुलाल विप्रबाल वसि काल लषि कीन्हो सो अकाल काल कुगति को कीन्हो है । पुनि मुनि कुम्भज पै कुम्भसुत सबु गये भये नत लषि रिषि भूरि भाव भीन्हो है ॥ १०४ ॥

राम रूप अमित अनूप मुनि भूप पेषि मानहु पियूष कूप पाइ परितोषे हैं। सब सुग मेव सजि सादर सनेह सनि स-ब्जन समूहन समेत मुख पेषे हैं ॥ बार बार बिनता छूवै बिनति वि नुति बांद बदन विलोकि विरहावधि विसेषे हैं । मुनि पय चाहत चकोरन लौं चहूं चक चौक चने चन्द जिमि रामचन्द चोषे हैं ॥ १०५ ॥

राम मुनि घटज अघट सुख संघ मानि सिय सरनादि सु वचन सुनाये हैं। करुना कटाच्छ करि करै छाराकल्प इस श्रीपद सरोजन सौं मदन सुहाये हैं ॥ सुमुनि सुयश सुनि सत्र-ञ जलज नैन भये पुनि मुनि मानि गुन गन गाये हैं। रैन सुख सैन करि मुनि सिरा चैन करि आयस लै ऐन गुन ऐन निज आये हैं ॥ १०६ ॥

कोसलेस कुंवर कुमार वर कुस लव कोसल जुगल के सो जुवराज कीन्हे हैं। भरत सुवन कल पुष्कल तच्छ उभै उभै तट सिंधु के सु तिन्हे राज दीन्हे हैं ॥ अङ्गद औ चित्रकेतु लखन ललाके लाल कीन्हे कारुपथ के नृपाल तेजधीने हैं। सत्रुहन सुअन सुबाहु अरिमार दोऊ देस सूरसेनप समाज सुख लीने हैं ॥ १०७ ॥

नमो रघुनन्द सुखचन्द दुख दंद हर आनंद के कन्द जे अमन्द गुन वृन्द हैं। अधम उधार सार स्रुति हूं को सार मुनि-गौतम कुमारि तार चरनारविन्द हैं ॥ दीनन के दानी औ अमानिन के मानी श्री अवध राजधानी सुनो मानी के नरि-न्द हैं। सिय हिय रतन जे रतन के रतन ते रतन हरी के सिर रतन अनिन्द हैं ॥ १०८॥

दोहा। कोसलेस कवितावली कवित कुसुम कृत माल।
अरपी रघुकुल रतन हरि पदहरि रतन रसाल॥ १०९ ॥
संवत वसुविधु व्याकरन ससि सित सित सित वार।
फागुन सप्तमि सुभ भयो कवितावलि अवतार॥ ११० ॥

इतिश्री रत्नहरि दास विरचिता कोशलेश कवितावली समाप्ता ॥

कविहृदय सुधाकर।

कविवर सन्तोष सिंह शर्म्म रचित।

भारत भूषण भारतेन्दु श्री हरिश्चन्द्र संग्रहीत.

जिस को हिन्दीभाषा के प्रेमी तथा रसिकजनों के मनोविलास

के लिये क्षत्रियपत्रिका सम्पादक

म० कु० बाबू रामदीन सिंह ने

प्रकाशित किया।

पटना—"खड्गविलास" प्रेस—बांकीपुर.

साहबप्रसाद सिंह ने मुद्रित किया।

१८८८

हरिश्चन्द्राब्द ५

प्रथम बार]

कविहृदयसुधाकर ।

कवित्त—सोभा को सदन मदा मङ्गल बदन मति मोहका मदन नन्द नन्दन मुरारी है। गावै पाकशासन औ पूषन हुतासन त्यों उर पङ्कजासन मे ध्यावै त्रिपुरारी है ॥ कहै तोष हरि सो अनंग के उमंग युत राधिका के संग रंग बरसत भारी है। भक्त मोदकारी त्यों मयूरपुच्छधारी आरी औट सो हमारो धन्य रसिकविहारी है ॥ १ ॥

सवैया—विधि शङ्कर औ गरुडासन से गृहदासन से किये सेवक वाम है। जिहं मोहनी फांसन मे परि कै तपी रासन को भयो रोज तमाम है ॥ हरितोष कहै न बखानी परै जिह सेष महानी-सो देव औ काम है। रति सी रस धाम सिराजी ललाम जो ताको निकाम हमारो प्रनाम है ॥ २ ॥

मन मे इकबात है यात फुरी रचना पविदात कछू करिये। जहं प्रेम सुधा सरसात रहै छविजात विभात सों यों भरिये ॥ हरितोष कहै जुग जोर कै हाथ सुनो कविनाथ सदा टरिये। परिये तब पांय मयूषन कै भरभूषन दूषन को हरिये ॥ ३ ॥

दोहा—ऐसे चित विचार अब, निज प्रज्ञा अनुसार।
कछु उदार शृंगार मय, कहौ शांत रस सार ॥ ४ ॥
पदतपदता मति बढ़त है, पद पद मे अति स्वादु।
ऐसो रसिक प्रमाद बिन, यति वेश्या, सम्वाद ॥ ५ ॥
इन सब से आनन्द है, पर ... चिदानंद ।

ब्रह्मानन्द द्वितीय है, भारत सदा सुख कंद ॥ ६ ॥
द्वैत पटल जाते टर्‌यो, भग्यो प्रेम तम नास ।
सो सब ठौर प्रकास मय, पेखैं ब्रह्म विलास ॥ ७ ॥
जाकी या मन मगन मे, उपजी लगन न प्रीति ।
पाहन हृदय अनीति सो, कीजै तिहं न प्रतीति ॥ ८ ॥
जाके मन मे छ्वै गयो, कहूं प्रेम को बिन्दु ।
जानो ताहि अनिंद तुम, रसिक हृदय नभ इन्दु ॥ ९ ॥
प्रेम शास्त्र को सार है, प्रेम मुक्ति को द्वार ।
इन द्वय सुबरनचारु को, नमस्कार बहु बार ॥ १० ॥
एक दिवस रस लीन इक, वेश्या बयस नवीन ।
उपवन के रस भीन ह्वै, विहरन चली प्रवीन ॥ ११ ॥
सोहत समय बसंत को, कौतुक होत अनंत ।
जोहत फाग मद मस्त है, सौरभवंत दिगंत ॥ १२ ॥

कवित्त—फूले हैं विपिन कुञ्ज मंजु भौंर भूले फिरैं झूले द्रुम पुञ्ज पौन डोलित नए नए । कलित अनंग की उमंगनी मे की अंग रंगरंग के बिहंग बोलत नए नए ॥ कहै तोषहरि या बसन्त कि समागम ते अंतु उलगंत प्रीति [illegible] नए नए । दंपति सुहासे मिल चाय चहूंघाते मज केलि रति राते माते डोलत नए नए ॥ १३ ॥

आई है बहार या बसंत की अपार जो की फूली त्यौं इजार गुलजार सोइ तत है । फूले कचनार त्यौं अनार की [illegible] डार [illegible] पुष्प भार जो सो नत है ॥ तोष हरि किंशुक कि वृन्द या [illegible] बाल वृन्द की

रसाल सोभासत् है। काम युतराज ऋतु राज मानो संगम
ते आज बनराजि मे बिराजे नप छत है ॥ १४ ॥

दोहा—चातक कोकिल मोर की, जहां कुलाहल घोर।
सानौ मैन मरोर से, तहां चलौचित चोर ॥१५॥

अथ उपवन वर्णन।

कवित्त—चातक चकोर जहां नाचैं मंजु मोर कैसे घोरकार
शोर ये बिहंग घन घूम रहे। रंभा औ रसाल त्यों अशोक औ
हिंताल ताल जाल श्री कदंब के बिशाल लग भूमि रहे॥
कहै तोपहरि तहां मोद रंग बरसत सरसत चंग वे बिहंग
मुख चूम रहे। नंदन समान मंजु मोहत महान द्रुम नायक
सुजान लतिकान लग झूम रहे॥ १६ ॥

सवैया—फूली लतान के मंजुल मौरयै भौंर जहां मडराने
रहैं। फूले बिलोक ये फूल महा रसिया रस मूल मे साने रहैं॥
त्यों हरितोष जू नायक वृक्ष पै सायक मैन के ताने रहैं।
माने रहैं हरषाने रहैं तिय बेलिन सों लपटाने रहैं॥ १७ ॥

दोहा—देखत बंजुल बाग मे, भर मंजुल अनुराग।
लगे लगन की लाग से, मगन जन्तु जन लाग ॥ १८ ॥

कवित्त—सोहत सुरंग चंग चंग से अनंग छवि नयन उमंग
त्यों कुरंगते चपल है। मोहत सानन्द मुख चंद मोद कंद महा
देत मन्द हास ते प्रकास परिमल है॥ कहै तोप हरि आदि
लोहत सफल मान भागन को फल हूँ विचित्र जल थल है।
कोमल कमल पायदल सो नकल जाके मंजु मखमल चुग-
लात जुही दल है॥ १८ ॥

सवैया—स्वेत सुरंग सजे दुपटा जिहँते सुकटा कढ़ि चन्द्र की छूटो। तंग तनी अंगिया कुच पै हरे रङ्ग की चुम्प इजारलों जूटी ॥ यौं हरि तोष शृंगार किये सुविहार करै वह वारवधूटी। गायन तारसों पायन को धरै प्रेम रसायन की सनोवूटी * ॥ २० ॥

चंद ते चौगुने आनन मे रुचि आवत है सुचि पानन बीरी। चूम लियो चहिये मुख यौं मति प्रेम मे घूम रहै अति धीरी ॥ त्यौं हरि तोष तू स्वास की पौन प्रकास रही है सुवास सों सीरी। सो सुकुमारता आय न यौं लसै आयन सों फिरती है अमीरी + ॥ २१ ॥

कवित्त—मंजुल विराजैं वार जैसी मखतूल तार सौरभ अपार चारु महका महक उठै। महित अटा के महा पांय परै जाकै मनमत मदिरा के छाके वंहक वंहका उठै ॥ कहै तोष हरि चै चलो है यौं लुनाइ वैंक सांटे लौं लचत लंक लहका लहका उठै। चाहत चकोर चित्त मेरो वर जोर इन्दु आनन की ओर कोर चहंक चहंक उठै ॥ २२ ॥

कवित्त—सोने को नतासो लसै काम को फगासो खासो भासो रूपरासो कै सुमाधुरी को कंद सो। किंचित मन्दहास ओठ प्यारी के चमत भास स्याम को सुबास को प्रकास त्यौं मचंद है ॥ कहै तोष हरि त्यौं तिरीछि नैन मैनही से मैन सुन मोठे मन मैन भयो दंद है। येस्या मजेदारन मे प्यारा सुकुमारिन मे रब ज्यौं हजारन मे तारन मे चंद है ॥ २३ ॥

---

* बूटिति संज्ञापि वाचिकैरपायः।

+ रसमपि पूर्वोक्तकारण भवति।

सवैया—यौं छवि देय सुवारुनीसेय अजेय सी ह्वै मद्‌ ज्यों भिरती है। ज्यों अलबेलिन केलन में करै, केलिन बेलिन में निरती है॥ त्यों हरितोष विलास न खास न प्रीति प्रकासन को फिरती है। फैलत अंग अनंग तरंग उमंग कुरंग दृगी फिरती है॥ २४॥

दोहा—देख्यो विहरत बाग में, एक यतीन्द्र सुबाग।
जग्यो लगन को लाग में, मनो रूप वैराग॥ २५॥

यतीन्द्र उवाच।

कवित्त—एरी कौन तूं है इहां आई क्यों कभूं है तेरे संग में न जूहै जाहु बासर बितै बितै। संतन को धाम इहां कामिनी को काम नाहि ध्यावैं राम धाम घन श्याम सो हितै हितै॥ कहै तोष हरि यौं यतीन्द्र सुख त्यागन में लोयन की लागन में सुख है कितै कितै। बुद्धि बंट जात औ विवेक घटजात देखो नारी के प्रगट कुच तट को चितै चितै॥ २६॥

सवैया—हम कौन सों नेह को नातो करैं न सुहातो कछू जग में अपना है। यह देखतही है युवा भयो बाल तें नारि रसाल में त्यों तपना है॥ हरितोष कहै न भयो सुख पूरन तूरन अंतक सों चपना है। अपना नहीं कोऊ विचार लयो थपना सब सृष्टि की ज्यों सपना है॥ २७॥

दोहा—या प्रपञ्च को सोध पद, होत सुधी अविरोध।
काम क्रोध को दहत त्यों, लहत ब्रह्मपद बोध॥ २८॥

वेश्योवाच।

कवित्त—वेश्या हौं प्रवीन अंचि वारुनी नवीन देखौं द्रुम अवलिन माहिं काम लीन भारी हौं। आई कई बार फल

यतीन्द्रउवाच ।

कैती करो घातैं औ सुनावो बहु बातैं पर रूप पांच सातैं दिन बीत ढर जायगो। छावगी जरा तो सुख आवैगो न वातो कौन देखै दुजरा तो जग तो तें डर जायगो ॥ पाय खुशबोई दुरगंध ले न कोई याते मुक्ति लहै जोई जग सोई तर जायगो ॥ ३४ ॥

दोहा—छूटै चित जड़ सो ग्रन्थि यह, पाय तत्वमसि पंथ ।
मुक्ति सु आतम ग्रन्थ मे, यौं बरनी मति मन्थ ॥ ३५ ॥
तोकों आतम भाव को, होवै क्योंन दुराव ॥
निकट यांव जानै नहीं, यह वासनी प्रभाव ॥ ३६ ॥

वेश्योवाच ।

कवित्त—जैसे ह्वै पषान सुख दुःख को न ज्ञान ऐसो निर्गुन महान मान वस्तु लहियत है । वाही को बखान कोऊ भाखै निरवान मूढ ऐसे बयावान से न ध्यान रहियत है ॥ कहै तोष हरि लीजै अच्छि के प्रतच्छ सुख कामिनी को स्वच्छ सो समच्छ चहियत है । वासों रस उक्ति ठान नीवी को सुजुक्ति करै नीवी ग्रन्थ मुक्ति यह मुक्ति कहियत है ॥ ३७ ॥

दोहा—छूटे नीवी ग्रन्थि जब, जूट कामिनि संग ।
लुटे रस तब मुक्ति को, टूटे दुख ह्वै दंग ॥ ३८ ॥

सवैया—हां यह ठीक विचार है रावरो वित्त न चाहु रहै यह काया । जैसे नदी को प्रवाह वहै जग संपत औ उत्साह की माया ॥ याते है हरितोष सुनो तजि रोष त्यों दीन पै कीजिये दाया । धाया वृथा नहि पाया कछू रस जीन भजो कोक [illegible] माया ॥ ३९ ॥

ताधि जिये को कहा फल है किये जाने सुकाज ये तोनो नहीं। ज्यों क्यों कभुं जगदीश हरिचन्द्र को जाने प्रभुता है कोनो नहीं। जो हरिगोप नरेश ते ल्याय के द्रव्य सुदेश मे दीनों नहीं ॥ त्यों भर अंक मयंक मुखो जा निशंक महारस लीनो नहीं ॥ ४० ॥

कैसे कहै न अच्छि तिहं, होय जु वस्तु प्रतच्छ।
मूरख मदिरा लच्छ की, अपनो राखत पिपच्छ ॥ ४१ ॥
मदिरा में नहि दोष है, जान पावसे दोष।
छीर सिंधु को सोख गिर, नहीं छुद्रको तोष * ॥४२॥
दोहा— खान पान जग तत्व है, सो मत यही प्रमान।
कै भामिनी भुजान से, सोवै लपट सुजान ॥ ४३ ॥

कवित्त—सुन्दरि सुबैनी कंजनैनी कहँ जाहि पुन बेनी की त्रिबेनी मान डूबैं सुखरासी में। ताके कुच पीन ससि हीन होत आनन ते मान यों मलीन देखो लीन होत हासी में॥ कहै तोपहरि या अपावन को स्वादु ले लै मूढ़ उनमाद सो प्रमाद करै कासी मे। देखो मोह माया है न आपहु पै दाया यों बिगारै नर काया परजाया रूप फांसी में ॥ ४४ ॥

दोहा—सुनत तापकारी महा, मद भारी जिहिं जोय।
परसतहारी सृष्टि सब, सो क्यों प्यारी होय ॥ ४५ ॥

---

* तथा श्री ग्वाल राय को

कवित्त—प्यारी जगदंब की जहान बीच जाहिर है जाहि पीकै महिपासुर मर्यो शिताब है। चंड मुंड मुंडन चबाय डारे चीर कर रुंडन के झुंड दिये रन मे दाब है॥ ग्वाल कवि कारन आनन्द ही के सिंधु में ते अमृत के संग रत्न इलकाव है। शिव ते शकार लैके राम ते रकार लैके ब्रह्मा ते बकार विरची शराब है ॥ १ ॥

कवित्त—धीरज को धारी श्राज ऐसो श्रविकारी कौन ना
सुख देखि जाहि सुमति धरै रही । खाते पौन पत्र जे पराश
श्रो विश्वामित्र कामी ह्वै विचित्र चाहैं नारि सौं भरै मही
कहै तोषहरि पयघृत सौं रसाल शालि भोजी नरजाल मि
वान क्यौं हरै नहीं । मोह मति श्रंध करै इंद्रिय निबंध कैं
होय यौं प्रबंध सिन्धु सिन्धु तौ तरै सही ॥ ५२ ॥

जानै वेद बानी क्यौं न पूजै चक्र पानी सबरीति
जग जानी भयो मानी सृष्टि सारी को । लला को नि
केत करै नम्रता सौं हेत त्यौं विवेक के समेत बहु देत है
दुखारी को ॥ कहै तोषहरि हैं विचित्र बहु मित्र जाकि करत
पवित्र है चरित्र सुख कारी को । ऐसेऊ प्रवीन गुनचीन श्री
कुलीन जग देख्यो छवि छीन जन दीन होत नारी को ॥५३॥

दोहा—याते प्यारी संग मिल, पूजै देव अनंग ।
मन मे मान उमंग अति, देखै षट्रितु रंग ॥ ५४ ॥

अथ वसंत वर्ण ।

कवित्त—सोहत श्रवास पास प्यारी को प्रकास जहां कैसी
छवि रास है विलास उमगंत को । बागन मे बल्लरी वितान
न मे कोकिला को काकली प्रतानिनि सौं दीपित दिगंत को ॥
कहै तोषहरि कवि काव्य को कलानि लहो ठान मधु पान
बहु गान तान तंत को । चांदनी को रात साथ सोभा सर
सात प्यारी संग होय बात लखै रंगत बसंत को ॥ ५५ ॥

सवैया—फूलो द्रुमो द्रुम भौ गुनजार विहंग हजार लसे
... मे । कूजतो कोकिला औ द्रुत पंच पै पूजतो हो छवि
दिगंत मे । बारी सबै हरितोष मे संग कुरंग दृगी को

उमंग दुकंत में रहै मधुमंत अनंत करैं रति कंत जुहै रसि-
यां या बसंत मे ॥ ५६ ॥

अथ ग्रीषम वर्णन।

कबित्त—सुन्दर सुधा की सौध सोहै चित्र वांकी जहं
चार चंद्रिका की बिसतार है घरी घरी ॥ ह्वां पै सेत चीर
सों बिछौ है सम छौर मैन चंदन उशीर की समीर है भरी
भरी ॥ कहै तोषहरि तहां बीन ले प्रवीन प्यारी गावै तीन
ग्राम लौन मद मे परी परी । यार सर शार ऐसी नार अंक
धार लेत ग्रीषम बहार रहैं अंखियां लरी लरी ॥ ५७ ॥

सोभित अपार खस रावटी प्रकार चारु छूटत
फुहार त्यौं बयार मन भाती हैं। चंदन उशीर घनसार घोर
नीर लेप लेपित शरीर छबि छौर शरमाती हैं ॥ कहै तोष-
हरी पास बल्लरी हरी हैं धरी धरी घरी पौन परि चारिका
झुलाती है। ग्रीषम की ताती सब लूवैं उड़जाती जब सीरे
मधुमाती तिय छाती लपटाती है ॥ ५८ ॥

अथ वर्षा वर्णन।

कबित्त—केकिनि की केकावलि छाय रही कुंजन मे भाय
रही मेघन की धार त्यौं अपार है। दामिनि दमंकन दिखा-
य रही दस दिस धाय रही कैसी बगुलान की कतार है ॥ कहै
तोषहरि प्यारी प्यारे मिल पावस मे पीयपीय प्याले मन कीनो
सरशार है ॥ मेघराग गावन की मोद उपजावन की सावन
की कैसी मन भावन बहार है ॥ ५९ ॥

मोर लगे कूकन औ भूकन पवन लागी याजत भभूकन मों काम को नगारा है। व्योम में महान बगुलान के उड़त वृन्द इन्द्र धनुशाग प्रभान दिग द्वारा है॥ कहै तो- यहरि देखो दंपति हैं सरसत तरसत हैं न तिय दीन की विथारा है। दामिनी की प्यारा जल भारही सो भारा मेघ भूमि में अपारा बरसाय देत धारा हैं॥ ६० ॥

अथ शरदऋतु वर्णन।

दोहा—कुश। कास फूले फये, विमल लसै आकास।
फैलो पवन सुवास है, दस दिस परम प्रकास॥ ६१॥

कवित्त—बीत गए पावस विलास मही मंडल ते कंजन को खास लसै उज्वल विकास है। भौंरन के सुख हास पाय के सुवास फूले गूंजन की ध्वनि रास होत आस पास है॥ कहै तोयहरि त्यों प्रवास गह्यो पंथिन ने भयो पंक नास नयो हंस न हुलास है। विमल आकास तारकान को प्रकास खास इन्द्, भयो उत्तम उजास को निवास है॥ ६२॥

सवैया—शारद चंद के चांदनी सों यह भूमि अमंद ज्यों ध्वै रही है। हंसन ने उड़ गौन कियो तन सीतल पौन त्यों छ्वै रही है॥ जोहत है हरि तोय पिया तिय सोहत यों द्युति चुवै रही है। प्यारी के आनन चन्द की ज्योति सि चन्द या चन्द तें ह्वै रही है॥ ६३॥

अथ हेमत वर्णन।

कवित्त—आवन लागी है अंशु पावन प्रभाकर की छावन है गति शीत की दिगन्त से। रात अधिकानी दिन हानी

त्यों प्रतच्छ भई मूर्ति सियरानी है गरम सनतंत मे ॥ कहै तोष हरि सब सूहे रंग अंग पट चाहत उमंग कंत कामिनि दुकंतमे । सेवैं भाग्यवंत मदमादक छकंत सुख स्यामा को अनंत छबिवंत या हिमंत मे ॥ ६४ ॥

सवैया—सेज सजाई रजाई समेत जहाँ तहँ आई प्रिया जो अनंत की । काढ़ सुरा है तुरंत अंची तब कीनी गुरु फाकु मारदकन्त की ॥ त्यों हरितोष जू मों हंसके रसकै बसकै सिसकै छबिवंत की । झूलै हिये भुक झूलै सुमूरति भूलै नहीं इमें केलि हिमन्त की ॥ ६५ ॥

अथ शिशिर वर्णन ।

कवित्त।—लेप मृगमद सों बनाई चित्रशाला जहँ छाई ध्वनि दीपक मृदंग बेनु ताला है । चंद हैं दरीचे वीको सेज है पसन्द वांकी तैसी सुख कन्द लगी कोरिन की ज्वाला है ॥ कहै तोषहरि ये मसाला हैं विचित्र सब शिशिरको पाला तजती लगी विशाला है । प्याला भरि जौलों छकि मधुना रसाला संग सोई मैन माला बाला ओढ़ के दुशाला है ॥ ६६ ॥

आनन सुगोल मे विलोल हैं अलक कीनी चूमत कपोल ध्वनि मीसी सरसत है । आछ कुच पीन रोम अंचित प्रवीन कीगे कंचुकि विहीन रसलीन हरसत है ॥ कहै तोषहरि नारि कामिनी शरीर पीर शिशिर समीर बिट नाहि तरसत है । अंशुक न वाको उर लज्जा को उतारे करे कम्प हियरा को सब वांको परसत है ॥ ६७ ॥

अथ शैशिरो दीपिकोत्सव वर्णन ।

कवित्त—आयो मास फागुन बिलास को निवास देखो

हाग धौ गुलाल को गगन छवि गोरी है। बाजत मृदंग
वेनु बीना मुहचङ्ग रङ्ग चङ्ग राग रागनी तरंग मति बोरी है।
कहै तोषहरि त्यों गुलाल की बिसाल धुंध सिखर को लाल
कहुं रङ्ग जाल घोरी है। गोरी मुख चूमि बरजोरी छिव थोरी
पिट मार्गे तुम मोरी घात होरी होरी होरी है॥ ६८॥

सवैया—होरी मची सुं उराम कहां जहँ फाग को ख्याल
रच्यो घोरीगोरी। गोरी सज नन्दलाल पकड़ो पर लाल गुला-
ल सौं गाल रँगोरी॥ गोरी नचायँ यहां हरितोष जू छाय की
गारी सुनायँ करोरी। रोरी को झोरी चलाय के भोरी कहैं
फिर स्याम जू खेलिये होरी॥ ६९॥

दोहा—केसरि कछु लागत, निज प्यारी रङ्ग पाग।
यों पट चक अनुराग सौं, भोगैं रसिक सभाग॥ ७०॥

सवैया—है यह आसव आग महो तन लागत जोतो समूह
बढ़ावै। सेवै जु प्रीति सौं देखो सुरा तिहं अंतक आग की
भीति बुझावै॥ या सौं लपेट प्रतच्छ जो आंगुरी त्यों हरितोष
जू आग छुवावै। तावै नहीं सरसावै सदा तिहं को जमदार
की आग जरावै॥ ७१॥

दोहा—है प्रसिद्ध अनुराग यह, जाकौं जा संग लाग।
जल सौं जल ज्यों पाग रस, मिलै आग सौं आग॥ ७२

यतीन्द्रउवाच।

कवित्त—श्रीगुरुपदारविन्द पूजन परायन जो चायन
सौं चारु चंचरीक ज्यों चहा करै। रामनाम अमृत प्रवाह
मगनि लगि नित्त उतसाह सौं जो मगन रहा करै॥
तोषहरि शील सत्य को सम्बन्ध जाके पुण्य को प्रबन्ध

मोह बन्ध को दहा करै । माता कुलटा को शपि लित नागुमा-
यों मन शांतभयो वाको ताको यवला बाह। करै ॥ ७३ ॥

दोहा—यह षटऋतु वरनन मृषा, कीन्यो जात अशेष ।
नेक होय मन शांत रे, निजही में सब देख ॥ ७४ ॥

अथ पारमार्थिक ऋतु समुच्चय वर्णन ।

कवित्त—विरत कली के है विकास तें वसंत यहां ग्रीषम पंचागिन के ताप सों अमित है । ब्रह्मानंद बृन्द को सुविन्द, झरें पावस यों भाख्यो बोध इंदु यातें सरद सहित है ॥ कहै तोप हरि ये विषय दिन छीन होंहि विद्यानिशि पीन यों हिमंत यहां नित है । शिशिर विचार तें विकार पतझार यार निजमें निहार यों बहार षटऋतु है ॥ ७५ ॥

अथ पारमार्थिक वसंत वर्णन ।

कवित्त—प्रेम तरु नूत पै लसी है वुद्धिपूत पिक कूकै म-धूत रामनाम छबिवंत है । देह उपवन में सुमन गुन श्रेष्ट फूले सोभा की पवन कीने मनमोद मंत है ॥ कहे तोपहरि वोधइंदु को प्रकास खास हरष हुलास को निवास त्यों अनंत है। ऐसें हूँ इकंत स्वच्छ विद्यातिय कंत देखो नित संतजन के लसंते यों बसंत है ॥ ७६ ॥

अथ पारमार्थिक ग्रीषम वर्णन ।

तोयू होत जात है प्रभाकर प्रबोध देखो सोध प्रेमवारि को अंवत यार वार है । तापमंच पावक को पुंज है प्रताप छायो बल्लरी कुवासना का ताप छार छार है ॥ कहै तोपहरि सोप तृष्णा की तरंगिनी त्यों वृत्ति बहिरंगिनी की लूवें धार हैं । देख्यों में विचार कछू बाहर ... धारू में धार ऐसे ग्रीषम वहार है ॥

हास की हुलास को नखास छबि थोरी है। बाजत मृदंग बेनु बीना मुहचङ्ग रङ्ग चङ्ग राग तानके तरंग मति बोरी है॥ कहै तोषहरि त्यों गुलाल की बिशाल धुंध केसर की लाल कहुं रङ्ग जाल रोरी है। गोरी मुख चूमै बरजोरी छिप चोरी बिट भाखें सुख सोरो आज होरी होरी होरी है॥ ६८॥

सवैया—होरी चली तूं उताल कहां जहं फाग को ख्याल रच्यो श्रोश्रीगोरी। गोरी जहां नन्दलाल बड़ो पर लाल गुलाल सों गाल रंगोरी॥ गोरी नचावैं वहां हरितोष जू कृपा की गारी सुनावैं करोरी। रोरी की झोरी चलाय कै भोरी कहैं फिर श्याम जू खेलिये होरी॥ ६९॥

दोहा—जेजानैं कछु लागते, निज प्यारी रङ्ग पाग।
यों पट चह अनुराग सों, भीगैं रसिक सभाग॥ ७०॥

सवैया—है यह आसव आग महो तन लागती जोती समूह बढ़ावै। सेवै जु प्रीति सों देवो सुरा तिहं अंतक आग को भीति बुझावै॥ या सों लपेट प्रतच्छ जो आंगुरी त्यो हरितोष जू आग छुआवै। तावै नहीं मरमावै सदा तिहं को जमदार को आग जरावै॥ ७१॥

दोहा—है प्रसिद्ध अनुराग यह, जाकी जा संग लाग।
जल सों जल ज्यों पाग रस, मिलै आग सों आग॥ ७२॥

यतीन्द्रस्याच।

कवित्त—श्रीगुरुपदारविन्द पूजन परायन जो आयन सों आरु चंचरीक ज्यों चहा करै। रामनाम अमृत प्रवाह कै मगनि लगि नित्त उतमाह सों जो मगन रहा करै॥ कहै तोषहरि गील मल्य को समन्ध जाकै पुष्प यो प्रबन्ध

गोइ बन्ध को दृढ़ा करे । माता कुलटा को त्यागि लित नागुसा-
को मन शांतभयो लाको ताको चवला काह करे ॥ ७३ ॥

दोहा—यह षटऋतु वरनन मृषा, बौल्यो जात अभीय ।
नेक होय मन शांतरे, निजही मे सब देख ॥ ७४ ॥

अथ पारमार्थिक ऋतु समुच्चय वर्णन ।

कवित्त—विरत कली के है बिकास ते बसंत यहां ग्रीषम पंचागिन की ताप सों अमित है । ब्रह्मानंद बृन्द को सुबिन्दु, झरें पावस यों भाख्यो बोध इंदु याते सरद सहित है ॥ कहै तोष हरि ये बिषय दिन छीन होंहि बिद्यानिशि पीन यों हिमंत यहां नित है । शिशिर बिचार ते बिकार पतझार यार निजमें निहार यों वहार षटऋतु है ॥ ७५ ॥

अथ पारमार्थिक वसंत वर्णन ।

कवित्त—प्रेम तरु नूत पै लसी है बुद्धिपूत पिक कूकै मधूत रामनाम छबिवंत है । देह उपवन मे सुमन गुन श्रेष्ट फूले सोभा की पवन कीने मनमोद मंत है ॥ कहै तोषहरि बोधइंदु को प्रकास खास हरष हुलास को निवास त्यों अनंत है । ऐसें हैं इकंत स्वच्छ बिद्यातिय कंत देखो नित संतजन के लसंते यों बसंत है ॥ ७६ ॥

अथ पारमार्थिक ग्रीषम वर्णन ।

सीघ्र होत जात है प्रभाकर प्रबोध देखो सोध प्रेमवारि को अंबत बार बार है । तापपंच पावक को पुंज है प्रताप छायो बहुरी कुबासना कलाप छार छार है ॥ कहै तोषहरि सोष तृष्णा की तरंगिनी त्यो बृजि वहिरंगिनी को लूयें कभूं धार हैं । देख्यों मैं बिचार कछू बाहर न यार चारु सज्जन मे धार ऐसे ग्रीषम बहार है ॥ ७७ ॥

बांधि व्योम मण्डल समाधि मे जु ब्रह्मानन्द कन्द मे अमन्द बूंद बिंदु बरसत है । माया को बिलास आसपास लसत जैसे दामिनि प्रकास छबिरास सरसत है ॥ कहै तो परि तन बन मे मयूर मन छन छन छन मे मगन हरसत है । शांत भई चाल देखो सज्जन समाज बीच पावस को साज सिर ताज दरसत है ॥ ७८ ॥

अथ पारमार्थिक शरद ।

तमोवृत्ति प्रावृट को प्रकट प्रनास भयो व्योम उरमे उजास छाई छबिरास है । सोहत सुधाकर प्रबोध को प्रकास स्वच्छ मोहत सुबासना की धावरा सुनास है ॥ कहै तोपहरि कुशकास से जु सदगुन फूल उठे खास तपि हंसन हुलास है । सोभा को निवास मन कंज को बिकास देखो संत आस पास ऐसे सरद बिलास है ॥ ७९ ॥

अथ पारमार्थिक हेमंत वर्णन ।

प्रीतम प्रभू की प्रीति शीत है सवाई होत ह्वै गई वितीत ताप भीति जो अनंत है । मोह को मलीन दिन छीन होत छिन छिन दिन दिन विद्या निशी पीन ह्वै महंत है ॥ कहै तोपहरि चारु सुजस तुषारही सो सुमति बयार ते अपार सरसंत है । कीने खल जन्तु पाप पंकज को अन्त देखो कैसी छबिवन्त सन्त शीतल हिमन्त है ॥ ८० ॥

अथ पारमर्थिक शिशिर वर्णन ।

... प्रबोध को है मन्दिर बिराज मान भान ब्रह्म त की महान दीपमाला है ॥ चाहत चित्त सुन धुनि त्यों

अनाहत की सुकवि सराहत मृदङ्ग वेनु ताला है ॥ कहै तोष हरि त्यों सुवाला है सुमति संग रचि प्रीति बारुनी प्रतीति रचि प्याला। टाकादैत शिशिर कसाला पति आतमा ने ओढ़े छवि लाला यों विराग को दुशाला है ॥ ८१ ॥

अथ पारमार्थिक होरी ।

वृन्दावन देह में है श्रीहरि सनेह फाग कायो सुख गेह ना अछेह छवि थोरी है। ग्वालवाल इन्द्रिय औ आतमा है नन्दलाल वृत्ति जाल गोपी बुद्धि राधिका किशोरी है ॥ कहै तोष हरि है प्रवोध को गुलाल मच्यो विरति विशाल की रसाल रंग बोरी है। छूटी लोकलाज छकें प्रेम सुरा साज देखो आपने मैं आज यों समाज सब होरी है ॥ ८२ ॥

दोहा—यों ज्ञानी निज रूप थित, मुदित तुच्छ लखि भूप ।
परमारथ छवि कूप यों, षट ऋतु लषत अनूप ॥ ८३ ॥

सवैया—कौतुक ये जग के नर चाहि वृथा उतसाह मे हो झटिती है। आगम मोह गंभीर पै जात न जानि ये भीर कितै घटती है। त्यों हरितोष न चेतत मूढ़ औ माया सुगूढ़ जनै जटती है। ह्वै घटती प्रति बासर काल की चक्र सों आयुषा यों कटती है ॥ ८४ ॥

जो कछु खावत पीवत प्रीत सों तापै अभीति प्रतीति सो धारै। औगुन औगुन लाभ औ हानि सुजान सुचित्त मे ठानि विचारै। जाके पिये हरितोष हिये न प्रकास औ कीरति रास बिगारै। टारै सदा इनको धर्म धर्मी को बारुनी क्यों परलोक संवारै ॥ ८५ ॥

दोहा—प्रेत ग्रसित कपि प्रथम पुन, वृश्चिक मार्यो डंक ।

तापर पीवत है सुरा, का कहिये तिह रंक ॥ ८६ ॥

कवित्त—देख्यो मैं विचार महा चंचल अपार मन यान सो निरधार धावे बेहिसाब है। देखो दैवयोग काम प्रेरा सें संयोग भयो भोगत है भोग तऊ तृष्णा सौं बेताब हैं। कहै तोषहरि तापै धन को प्रमाद यह विष्णु को सो उनमाद बाढ़त गिताब है। चाहे माहताब क्यों न होवे आफताब अंत होयगो खराब तौन पीवे जो शराब है ॥ ८७ ॥

सवैया—नेक न चित्त में मानिये रोष प्रतच्छ ये दोष सुरा के कहैं। ताहि न बुद्धि ठिकाने कभूं जो विमुख ह्वै याहूनो छाकि रहैं ॥ त्यों हरितोष मनो धसे मीच के लोटत कीच मे वांकि ढहैं। ताकेगहैं कर सज्जन ना यह विश्व मे ये सुजसा को लहैं ॥ ८८ ॥

दोहा—याते मिथ्या युक्ति सौं, काहे करत सराह।
भूलन मदिरा चाह कर, यामे दोष अथाह ॥ ८९ ॥
मिलन समय तो अमृत द्रव, बिछुरत विष सो जान।
ऐसी नारी हानि ते, बचत सदा मति मान ॥ ९० ॥

कवित्त—काहू सौं हैं बात पुन नैनघात काहू ओर ध्यावे त्यों सुहात हिये काहू ओर नर को। जानो यह नीको मित्र कौन युवति को जग बंधन है जीको ज्ञान ध्यान बुद्धि वर को॥ कहै तोषहरि है मधुरताई बैनही से देखो दुख दैन हिय ऐन विष भर को। याही ते प्रवीन कुच मरदत पीन जऊ कीने काम दीन लौन पीवैं पै अधर को ॥ ९१ ॥

सवैया—ह्वै मकरध्वज धीवर सौं मन धीवर है जु लग्यो

निज लाग मे । नारी मयी बनसी है उजागर डारी महा भव सागर भाग मे ॥ त्यों हरितोष कहै अधरामिष ताहि जो चाहि फंस्यो रति राग मे । ताहि प्रवीन पचावत दीन को मीन ज्यों अनुराग की आग मे ॥ ८२ ॥

दोहा—यह संसार जु महानस भस्यो दुःख अंगार।
मार जार मन याहि मत बिषयामिष रतिधार ॥८३॥

कवित्त—एरी मृग नैनी तुम पैनी भौंह धनु तान तीखो जो महान शंभु धनु सों अहत है। तकतक मारती हो वा मे ये कटाच्छ बान लाग वृथा श्रम अभिमान क्यों गहत है॥ कहै तोष हरि अब चित्त उपराम भयो बयस तमाम बीतीवन मे ब्रहत है। जानत अधीन किये मोह को प्रवीन मन तृष्णा तन छीन ब्रह्मण लीन ह्वै रहत है ॥ ८४ ॥

कवित्त—काहे हे अनंग अब इतनो उमंग धार कसत निषंग धनु दायक व्यथा के है। रेरे कल कोकिल तू कोमल कुलाहल सों कानन मे कलकल करत न थाके हैं॥ कहै तोष हरि हे मनोहरे मधुर बैनि तेरे ये कटाच्छ ते अचैन होत बांके हैं। पुञ्ज सुखमा के हूं चकोर दृग ताके प्रिय मेरे ये सुधा के चंद्र चूड़ चंद्रिका के हैं ॥ ८५ ॥

कवित्त—बीत गयो अखिल जु अविवेक अंधकार याते अब नारी को बिकार मोहि भावै ना। माया की बिलास मोह फांसही प्रतीत होय सांची सुनो मेरी प्यास तो लगि बुझावै ना॥ कहै तोष हरि जौलों नारायन को सराहि कीरति प्रवाह मे सुमन सरसावै ना। मोको अब भावै यह जो तो दरसावै जग बृह्म उलझावै कछु और दृष्ट आवै ना ॥ ८६ ॥

दोहा—ऐसे ब्रह्मानंद को, नारी भारी फंद ।
याते कह्यौ मुनिंद गन, तजहु दूर लखि मंद ॥ ९७ ॥
वैश्या को पुन अधर मधु, को सेवै बुध माव ।
चार चोर चेटक सुभट, नट विट जुठन पात्र ॥ ९८ ॥

कवित्त—चाहै होय जन्म अंध आवै मुख दुरगंध जरा सों सिथिल तनु वस्त्र दरसत है ॥ मूरख ग्रामीन अज्ञ वंसहू तें हीन दीन छीन भयो कुष्ट तें शरीर भुरसत है ॥ कहै तोष हरि ताहि धन कन लोभही तें चाहि मन तन तें उमाह परसत है । पाय लतिका में ज्यों अनेक पतिका में क्यों हूं सज्जन न यामें गनिका में दरसत है ॥ ९९ ॥

दोहा—वेश्या ज्वाला मदन की, ईंधन जहां सुरूप ।
कामी हवन करै वहां, धन जोवन जु अनूप । १०० ॥

कवित्त—सुंदर शृंगार द्रुम पोषक ज्यों चारु मेघ कौतुक अपार रस धार विसतारी है ॥ प्रेम तें पवित्र है विचित्र कामिनि कैधौं चातुरी चरित्र मुक्ताही को सिंधु भारी है ॥ कहै तोष हरि तिय नैननि चकोरन को चंद सो अमंद जो आनन्द वृन्द धारी है ॥ धन्य सो विचारी महा पुण्य को प्रचारी ऐसे जोवन में नारी लखि होत ना विकारी है ॥ १०१ ॥

दोहा—अब तो चारों ओर सुहिं, दरसत नंद किसोर ॥
होत कुलाहर शोर है अनहद की धुनि घोर ॥ १०२ ॥

वैश्योवाच ।

कवित्त—देखि गृहमाहिं ले उमाहिं ठाहिं सिंधुर को आहिं मृगराज चाहिं पल में पछारते । देखे वे प्रधान महाबल निधान ज्ञान शिप्र अप्रमान हिमवान को उखारते ॥ कहै तोष

हरिहैं निहारे भारे बनवारे नभ सों उतारे तारे महि मांझ डारती। ऐसेऊ उतंग जे उमंग रंग रंजित पे ढंग होहिं जंग में अनंग जू सों हारती ॥ १०३ ॥

देस तज बन मे बनाई है परन शाला चाहत न क्योंहू मन चारु चित्र शाला को। देह ते दुशाला कार दीने दुत दूर देखो रंजित भभूत पूत ओढ़े मृग छाला को ॥ कहै तोष हरि हैं न भोजन रसाला रुचि सहत कसाला है बिसाला धाम पाला को। आंगुरी पै छाला परे फेर फेर माला तऊ मन मतवाला नाहि भूलै सुख बाला को ॥ १०४ ॥

श्रंगन ते छीन क्रस एक दृग हीन पुन खंज है मलीन दीन जानिये महानिरे। बिद्र सों निबिद्र जो है बधिर प्र-सिद्ध पुन जाके घाव सद्ध हते पूय बिंदु चू गिरे ॥ कहै तोष हरि क्रमि सद सों भरि है तनु जर जर भूख सों बिचर प्यास सों घिरै। काम अकुलावत न पावत कलेस पाछें भा-मरागुनीकि पहान धावत सदा फिरै ॥ १०५ ॥

चारु मकरध्वज शृंगार को जननि नार संपद को सार जीन धार सिरते रहैं। वेई पछतात मूढ़ सोचैं दिन रात देखो जात बात बात मे सिहात गिरते रहैं ॥ कहै तोष हरि तिनै कामहू कठोर कर मुंडित मगन छोर दीने निरते रहैं। पंच शर जालो क्रत व्याधि जटा माली पुन कोऊ ज्यों उ-दासो है कपालो फिरते रहैं ॥ १०६ ॥

दोहा—रीके बिघन अनेक तुम्ह, कियो सघन बन बास।
कोमल तिय के जघन को, तऊ चहत मन पास ॥ १०७॥

याते नारी लगत है, मन सुखकारी अति
आश्रय भारी नरन को, गावहु सुरारी गति ॥ १०८॥

सवैया—यौं वतरात दुहून के सुंदर एक युवा नर है तहँ आयो। सोभित रूप अनङ्ग किधौं मघवास उमङ्ग गही मन सुहायो ॥ त्यौं हरि तोष जू धाम बिनै जिहँ देख तमा हिये हरषायो। गायो कछु गुन ईश्वर को रसिया सुकवी प्रवर है प्रकटायो ॥ १०९ ॥

दोहा—सुनै विचारी विप्र के, अधिकारी मृदु बैन
बहु पति नारी पुन कहै, जो सुखकारो मैन ॥ ११०॥
यौं बरनत मुसक्यात तब, सुकवि बचन अघिट्टात।
मेरो सुनिये बात अब, नहीं पच्छ की घात ॥ १११॥
कहै यतीन्द्र निवृत्ति पथ, वेश्या कहै प्रवृत्ति।
याते तुम मम चित्त मे, सांचे दोनो निज्ञ ॥ ११२॥
जो नहिं होय प्रवृत्ति पथ, तौ न बढ़ै संतान।
जो निवृत्त नहिं चित्त तो, मिलैन मुक्ति महान ॥ ११३॥
यातें यही बिचार है, यथा समय अधिकार।
भुक्ति मुक्ति पथ चारु जो, भजैन तिहधिक्कार ॥ ११४॥

सवैया—ढूंढ लही है सही सब शास्त्र ते है ही कही गति है जन की। रूप की रोहिनी सोहिनी लै संग मोहिनी जो रसिया गन की ॥ त्यौं हरितोष सकैल के केलि करैं हरी बेल सु जोवन की। कौफिर प्रेम प्रवाह सौं श्रीपति चाहि कै छांह भजो मन की। ११५।

दोहा—इस विचार को [illegible] ॥

के तकनो की सुवन मे, मनो हारि गई हारि ॥११६॥

कवित्त—सोभित वेदांत पथ पंडित कहाय कोऊ गुन कहिबायले सुहाय सृष्टि सारी ते। मंयुत विलास कविदास रसिक में तो मेरी खास बात है प्रकास अधिकारी ते॥ कहै तोष हरि मैं विचार कै निहार लीनो सुकृत अपार है न पर उपकारी ते। सीतल ज्यौं चंद वृन्द दायक अनंद नाहि कोऊ मन फंद मुख कंद जग नारी ते॥ ११७॥

ऐसी है सुमन रीति माने विन प्रीति नाहि याते एक चाहिये प्रतीति अवलंब को। द्वै ही अविरोध मत भाषैं बुद्धि बोध युत संग्रह कै योग सोध साधन कदंब को॥ कहै तोष हरि साधुमन है समाधि लीन बाधकै उपाधि भजै भूधर नितंब को। कैधौं अविलंब लै उद्दीपक कदंब चूम बिंवसे अधर भजै भामिनि नितंब को॥ ११८॥

मोहत संसार जो असार सो बिचार यार छिन में बिकार सों बिरस बिरमाइये। पुंज सुखपीन जग तंडित प्रवीन गति द्वै ही बीन लोन बैस बीते तो बिताइये॥ कहै तोष हरि तत्व अमृत प्रवाह बीच चाह उतमाह सों सुमन पुलकाइये। बिस्व गोह लै नीकै कुरंग शावनै नीरस दैनी पिकवैनी के हिय सों लपटाइये॥ ११९॥

जौन अनुरक्त ह्वै प्रसक्त प्रेमही मे नर भक्त होय सांचो सुन्यौ हरि कथा नयो। जानी जौन राज नीति कीनो नाहि मीत कोई रीति धन ल्याइबे की सीखन तथा लयो॥ कहै तोष हरि त्यों न बाला गोद बाला संग सेवत रसाला

रति नागत व्यग्र भयो। फाटि छारत्राय पाय मानुष कहाय सों सो पाइन है प्राय छाय जनमहीं हथा गयो ॥१२०॥

दोहा—भही परम सो वीर जो, पाय मनुष्य शरीर।
घोर गोर गुन अगुन को, लघत हंस सम धीर ॥१२१॥
जाके मन सत संग को, चढ्यो नैक हूं रंग।
तिहं अनङ्ग दाहै नहीं, सो पावन मम गंग ॥१२२॥

सवैया—पायो महा फल दागन को पुन तीर्थ मनाननि सों छवि अंग की। होय निरंतर दुःख निहत्ति प्रवृत्ति रहै पुन हत्ति उमंग की॥ त्यों हरितोष जु प्रेम प्रवाह सों सुख रहैं परवाह न गंग की। ताहि अनंग को दाह नहीं चित चाह पनाह जिन्हें सत संग की ॥ १२३ ॥

दोहा—जग सतसंग सुहात को, महिमा कहि न जात।
महा अधम दुर बात जो, जिहंवज्ञ ब्रह्म समात ॥१२४॥

कवित्त—सोभित गम्भीर एक हद महा धीर लिये कीर हार तीर आये वार वनिता के हैं। कूके राग नाम सुन धाई अभिराम देख मोहित निकाम प्रान वाम भये वाके हैं। कहैं तोप हरि वर हद को प्रसाद पाय वाको रच्छ राय गुन गाय कहे वांके हैं। अंत प्रान जाके भये ब्रह्मलीन जाके ऐसी भाग गनिका के जैसे भाग गनिका के हैं ॥ २५ ॥

बासी जो विदेह पुर वर की विलासी एक वेश्या नर रासी जिन भोगे बड़े बांके हैं। बैठी एक रात धनी कंतको सिहात जोहै पूछी न वि बात काहू आय पिंगला के हैं॥ कहै तोप हरि है निराम सांचो राचो हरि वांची प्रेम पगी

पति आए द्वारिका के हैं। पुंज चारुता के वस कृपा भये ताकि येसे भाग गनिका के जैसे भाग गनिका के हैं ॥१२६॥

दोहा—चहो सुकवि अब द्वात तुम, हो गुनज्ञ विख्यात।
धन्य तुम्हारे मातु पितु, भाषत हो शुचि बात ॥१२७॥

कवित्त—धन्य कविता के हैं करैया कवि बांके जग कृपा राधिका के चोंट टांके शक्तिपवि की। माधुरी में लीन कहँ युक्ति बीत बीन जऊ होवत प्राचीन पै नवीन मानो अब की। कहैं तोष हरि वह सूक्ष्मसुदेश जहां नेकन प्रवेश गति लेश लहै रवि की। सूझै ना समात है पिपीलिका को बात कहा बेध बंहा जात है सुहात मति कवि की ॥ १२८ ॥

वेश्योवाच।

दोहा—चहो रसिक तुम धन्य हो, तुम सम जग नहिं अन्य।
सब अनुचरी अनन्य मैं, देख भई लावन्य ॥ १२९ ॥

कवित्त—चास चतुराई की लताती सूक जाति पुन बुद्धि चंवराई कोप तासों नहि पावतै। जानतो न रस कोऊ वसिया जगत बीच रसिया निपट कैसे नायक कहावतै ॥ कहै तोष हरि गुन औगुन को ज्ञाता कौन दाता और सूम को बिभाग दरसावतै। कौन जगदीश्वर अनीश्वर पै दाया कर रसिक कवीश्वर महीश्वर बनावतै ॥ १३० ॥

कविरुवाच।

ताकि गेह माहे उत्साह तो अथाह देखो रसके प्रवाह भरे चाह लसते रहैं। दारिद्र कमानि के हवाले सो न होत क्योंहू नाहि अघवाने विष मले डसते रहैं ॥ कहै तोष हरि

त्यों न व्यापत संताप तिन्हैं मोह को कलाप याप नित्त हंसते रहैं। जाके छवि छायो उर पुंज करुना को सदा संग राधिका की कृपा वांकी बसते रहैं ॥ १३१ ॥

दोहा—सोभित यों संवाद कर, रखि दृढ़ मर्य्याद।
भये सबै अहिलाद युत, बाढ्यो अधिक सवाद ॥ १३२।
कानन सुनी बनाय जों, ये सुयुक्ति सुख पाय।
चाय चढ्यो तब चित्त में, कीनो ग्रन्थ सुहाय ॥ १३३ ॥
छवि आकर कवि हृदय में, उदित सुधाकर ग्रंथ।
याते नाम रख्यो सुकवि, हृदय सुधाकर ग्रन्थ ॥ १३४ ॥
राज नीति जाने महा, बाढै पुन्य प्रतीति।
मीत तपत उर मीत हो, पढै जो ग्रन्थ सप्रीति ॥१३५॥
चित्त विलासी ह्वै गयो, देह बिनासी जान।
सुख रासी यह ग्रन्थ जग, भासी रहै निशान ॥ १३६ ॥
रात दिवस जान्यो नहीं, परी प्रेम की बात।
नव मुक्ता अविदातये, रचे कवित्त सुहात ॥ १३७ ॥
मैं भाषा कवि मन्द मति, कवि आशय जु बुलंद।
बंद रसिक जन के चरन, रच्यो ग्रन्थ सम चंद ॥१३८॥
श्री युत महिमा धाम है, नगर अमृतसर नाम।
मन तन को आराम जहं, कीनो ग्रन्थ तमाम ॥ १३९ ॥

श्री अमृतसर को वर्णन।

कवित्त—सोभित पंजाब में प्रतच्छ आफ़ताब सी है जाकी देख दाब स्वर्ग ताब कौ न धरि है। बाला रति रानी जहां मित ... ... मुदा दानी इन्द नर है ॥

कहै तोष हरि सत संग रंग बरसत परम उमंग की तरंग रह्यो भर है। देत अवदर है न देत जम डर है सुहोवत अमर है जुदे देखै सुधासर है॥ १४० ॥

हौं द्विज बिलासी बासी अमृत सरोवर को कासी की निकट तट गंग जन्म पाया है। शास्त्रहौ पढ़ायाकर प्रीति पिता पंडित ने पाया कवि पंथ राम कौनी बड़ी दाया है॥ कहै तोष हरि नाम काव्य मै है ठहिराया जैसा कुछ आया सो प्रबंध मैं बनाया॥ प्रेम को बढ़ाया अब सीस को नवाया देखो मेरे मन भाया कृपा पांय पै चढ़ाया है॥ १४१ ॥

जौ लौं जीव देह को सनेह रहै जग बीच अरुज अछेह सुख गेह रहैं लहते। सज्जन हौं मित्र औ पवित्र श्री-धनागम हो प्रकट अमित्र के हिया औं रहैं दहते॥ कहै तोषहरि और मोको है न ठौर हरि स्वामि सिर मौर तूं है तो सौं रह चहते। भूले और काम रहै याद तेरो नाम मेरे स्वास हो तमाम तब राम राम कहते॥ १४२ ॥

दोहा—संवत नव हय निधि ससी, त्रयोदसी बुधवार।
चारु चैत्र तम पच्छ मे, पूरन ग्रन्थ विचार॥ १४३ ॥

इति श्री सारस्वत वंशजन्मना पंडित संतोष सिंह शर्मणा द्विज-मना रचितं यतीन्द्र वैश्या सम्वादात्मकं कवि हृदय सुधा कराख्यं काव्यं संपूर्णता समाप्त्।

विज्ञापन।

श्री राधासुधाशतक ।

श्री राधाचरण सरोज राजहंस गोस्वामि
श्री हरिवंशहित जी के द्वादश मुख्य शिष्यों के अन्तर्गत
श्री स्वामिनी जी के अनन्य उपासक हठी रचित ।

भारतभूषणभारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र द्वारा

संशोधित और संगृहीत ।

हिन्दीभाषा के प्रेमी तथा रसिकजनों के मनोविलास के लिये
क्षत्रिय-पत्रिका सम्पादक श्री मे० कु० बा० रामदीन सिंह द्वारा
प्रकाशित ।

पटना—"खड्गविलास" प्रेस–बांकीपुर ।
साहबप्रसाद सिंह द्वारा मुद्रित ।

१८८७

हरिश्चन्द्राब्द १२

मधवार]

श्री

राधासुधाशतक।

—०※०—

दोहा—श्री वृषभानुकुमारि के · पग बन्दौं कर जोर ।
जे निसि बासर उर धरैं · ब्रज बसि नन्दकिसोर ॥ १ ॥
कीरति कीरतिकुंवरि की · कहि कहि थके गनेस ।
दससतमुख बरनन करत पार न पावत सेस ॥ २ ॥
ब्रज सिव सिद्ध सुरेस मुख · जपत रहत निसि जाम ।
बाधा जन की हरत है · राधा राधा नाम ॥ ३ ॥
राधा राधा जे कहैं · ते न परैं भव फंद ।
जासु कन्ध पर कमल कर · धरे रहत ब्रजचन्द ॥ ४ ॥
राधा राधा कहत हैं · जे नर आठौं जाम ।
ते भव सिन्धु उलंघि कै · बसत सदा ब्रज धाम ॥ ५ ॥
बन्दौं पग पङ्कज सदा · नंदनन्दन ब्रजचन्द ।
राधागुन बरनन करत · फिर न परौं भव फन्द ॥ ६ ॥
नित्य किसोर निकुंज बन · सह गोकुल गोथोक ।
छिन बिछुरत नाहिन दुहो · बिहरत श्री गोलोक ॥ ७ ॥
सेवत ललितादिक सखी · जे प्रिय परम प्रवीन ।
कोटि कोटि छवि आगरी · सुर मुनि बरनन कीन ॥ ८ ॥
गुरुपद हिय में धारि कै · सुमत वेद परमान ।
हठी कछू बरनन करत · राधा रूप निधान ॥ ९ ॥
रिषि सुदेव बसु*ससि सहित निरमल मधु कौ पाय ।
माधव छतिया भृगु निरखि · रच्यौ ग्रन्थ सुखदाय ॥ १० ॥
सत कवित्त मोदक सहित · सुधा सार इन माहिं ।
रसिक भ्रमर ते लहत हैं · ब्रज पादप की छाहिं ॥ ११ ॥

कवित्त—काहू कौं सरन संभु गिरजा गनेस सेस काहू को सरन है कुबेर ऐसे धौरो को । काहू को सरन मच्छ कच्छ बलिराम राम काहू को सरन गोरो सांवरो औ छोरो को । काहू कों सरन सीध साधन सराध ब्याम मेरो

---

* संवत १८३७।

नैम नग अंग दाहियतु है ॥ ऐसो चित चाहै चरचाहै दुनिया की छठी चाहै छूटै एक तौन ठीक ठाहियतु है । जन रखवारी की सु प्रभु प्रानप्यारी की सु कीरतिदुलारी की नजर चाहियतु है ॥ ७ ॥

अतर पुतायो मढ़ो महल सुगन्धन सों द्वारे गज मोतिन की तोरनै तनी रहै । चन्दन चहल चारु चांदनी चँदोवा लाल ए गोपमाल मनी कनी कोरनै घनी रहै ॥ उमा चौर ढारे रमा आरती उतारै ठाढ़ी रंभा रति मैनका सी कोटिन जनी रहै । छठी देवतान की दिमाकदार रानी तेऊ राधे महरानी जू के हाजिर बनी रहै ॥ ८ ॥

मोतिन की तोरनै तमासेदार द्वारै वारै अमित तरैयन को सोभा बड़ सान की । मखमली गिलम गलीचा सखतूलन के अतर अतूलन की भौंव छठी मान की ॥ जरकसी जरद जलूसन की गद्दी कर रवि छवि रही झुकी झालर बितान की । कंचन की बेली रमा रति सै नवेली अलबेली रंग रावटी अकेली वृषभान की ॥ ९ ॥

अतर पुतायो चौक चन्दन लिपायो बिछी गिलम † गलीचन की पंगति प्रमान की । कारी हरी पीरी लाल झालरै झलक रही जैसी छवि छाई चारु चांदिनी बितान की ॥ झीनो सेत सारी लड़ी मोतिन किनारीदार फैली सुख आभा छठी राधे सुखदान की । माह नेह नद्दी कर रमा रूप रही कर बैठो भाम गद्दी पर बैठी वृषभान की ॥ १० ॥

कंचन फरस फैलो मनिन मयूखैं तन्यो जरी को बितान तेज तरनि तरा परै । पांवड़े बिछौना परै मोतिन के कोरवारे चारौ ओर लोर की प्रभा भरी भरा परै ॥ डोरन तखत बैठी राधे महारानी छठी रंभा रति रूप गिरि धमक धरा परै । छूटी सुखचन्द चारु किरन कतार सांध छ्वै छ्वै चन्द्रमण्डल सो छवि के छरा परै ॥ ११ ॥

कंचन महल चांदै चांदनी बिछौना छठी गावतीं प्रवीनै बीनै झीनै मृदु पान में । रमा छत्र तोरै उमा ठाढ़ी कर जोरै सची सीस चौर ढोरै राधे सोवै सुखसान में ॥ मनिन की मालन की पवन प्रवालन की मञ्जुल मयूखै भूखै कोटिन प्रमान में । जरकसी सारी अङ्ग भूषन जराऊ बैठी जरकसी सेज जरकस के बितान में ॥ १२ ॥

ए गोलमणि ।

† नरम रुई की पतली पतली गद्दी ।

चांदनो में चांदे लग्यो चांदनो चँदोवा चारु चांदनी बिछौनन अधिक छवि छाई है। बड़े बड़े मोतिन की लरैं करैं चारयो ओर बीच बीच जरी कोर सोहत सुहाई है॥ गोरे गात सेत सारी हीरन किनारी घनी इन्दु से बदन राधे इन्दिरा लजाई है। भाल दिये चन्दन सुनेह नन्दनन्दन सों मदन सु म्धन सों सेज पर आई॥ १३॥

मखमली गिलम गलीचन की पांति चारु जरकसी सेज तैसी रही छा छाइ कै। हीरन के मनिन के मोती मालती के हार लालन प्रवालन के ल वती बनाइ कै॥ एकै लिये सारी जरतारी कनीकोरवारी एकै हठी बीन रिझावै गीत गाइ कै। चन्दन चढ़ाय भाल बन्दन लगाइ राधे बैठी चन्द मन के मन्दिर पर आइ कै॥ १४॥

कञ्चन महल चौक चांदनी बिछौना तामैं जरी को बितान तान भा जोति मन्द की। लालन की मालैं लाल सारी कोरदार अङ्ग ओठन की लाली जिमि लाली जोवबन्द * की॥ रम्भा सो रमा सो खासी दासी मैनका सी हठी ठाढ़ी कर जोरे तेज छीनैं जोति चन्द की। गावै वेदबानो औ रटत भवानी राधे बैठी सुखदानी महारानी नँदनन्द की॥ १५॥

सारी जरतारी लगी मनिन किनारी दुति दामिनी कहारी गात जातरूप कन्द है। हार हियैं भूषन जराऊ भाल बेंदी लाल अधर प्रवाल बिम्ब बंधु जोवबन्द है॥ उमा की रमा की सुखमा की देवमा की हठी रम्भा इन्दुमा सी उपमा सो गति मन्द है। तारापति कैसो मुख लाजत गुबिन्द बारी मखतूल पै बैठी राधे धवल विलन्द पै॥ १६॥

चन्दन लिपायो चौक चांदनो चंदोवै तामें चांदनी बिछौना फैली लहर सुगंद की। चांदनी की माल मोती चंद मग चमकत चारयो ओर चंदमुखी चंद जोति मंद की॥ चांदनी सी चार चारु चांदनी सी फैली हठी चांदनी सी चांदी के सिंहासन सुधा कंद की। चंदन की चौकी बैठी चंदन लगाए भाल चंद से बदन राधे रानी नँदनंद की॥ १७॥

बैठी रङ्ग भरी है रँगीली रंग रावटी में कहाली बखानी सुंदराई सिरताज की। चांदनी की चंपक की चपला चमीकर की इंदरा तिलोत्तमा की [illegible] कौन काज की॥ मोतिन के हार गले मोतिन सों मांग भरें मोतिन

दुपहरिया का फूल। एक सीना और साफ।

सौं बैन गुही छठी सुखसाज को ॥ चाल गजराज मृगराज को सी लङ्क दुज राज सो बदन राजै रानी ब्रजराज की ॥ १८ ॥

जातरूप तखत पै बखत बिलंद बैठीजाके काज ब्रजराज भावरै भरत हैं। जरीदार द्वार में बितान तान राख्यौ छठी छरीदार ठाढ़े इतमाम बगरत हैं॥ झरीदार झालरैं झलकदार झूमैं मोती झुमकन झूमें कूं कूं उपमा धरत हैं। राधे को बदन दुजराजमहाराज जान मखत समान कोरनिस सो करत हैं॥१९॥

विज्जु की छटा सी छाती कञ्चन लटा † सी करी रूप की घटा सी सखी सेवन मैं धावतीं। सुरन की रानी लै सुगन्धन लगावैं रुचि चौरन चलाइ औंर भौरन भगावतीं॥ फूल ऐसी राजै मखतूल सेज राधे छठी फूल फूल किन्नरी सुहाये गीत गावतीं। मण्ड नवखण्ड सुखमण्डल मरीचैं दाब मण्ड कै प्रचंड चन्द्रमण्डल दबावतीं॥ २० ॥

चामीकर चौकी पर चंपक बरन छठी चङ्ग की चमंकै चारु चंचलै चमा-वतीं। तारा सी सरङ्गना सो अतर लगावै रति मुकर दिखावै चिजै बीजन डुलावतीं॥ कमला फरन जोरै विमला सुहन गोरै नवला लै मरजी की अरजी सुनावतीं। सुरन की रानी सुरपालन की रानी दिगपालन की रानी द्वार मुजरा न पावतीं॥ २१ ॥

जरीदार थान वारे छरीदार ठाढ़े द्वार बंदीजन जसभरी बोलैं बेद बानी है। चारौ ओर चंदमा सी जगमग होत बाल देखौ नंदलाल रति छबि की निसानी है। रम्भा गुन गावै सची चंदन लगावै रमा भौरन उड़ावै चौर ढारत भवानी है। छठी ब्रजमण्डल मैं रूप बगराय आज बैठी जातरूप के महल महारानी है॥ २२ ॥

कोऊ छत्र लीनै कोऊ छाहगीर कीनै कोऊ बीनै लै प्रबीनै ये नवीनै सुर गावतीं। कोऊ जरी जोरै कर अतर गुलाब बीरे लै लै अलबेली छठी धा-वन तैं आवतीं॥ कोऊ चौर ढारै कोऊ आरती उतारै कोऊ करती सलामैं कोऊ मुजरा न पावती। बैठी आन तखत पै बखत बिलंद राधे बाला दि-गपालन की माला पहिरावतीं॥ २३ ॥

फटिक सिलान के महल महारानी बैठी सुरन की रानी जुरि आई मन भावतीं। कोऊ जलदानी पानदानी पीकदानी लिये कोऊ कर बीनै लै सुहाये गीत गावतीं॥ कोऊ चीर चीनै चारु चांदनी से चौज वारे छठी लै

† लट वा लता

फैल रही दीपति मदन की ॥ हेम को छरी सों मानो मुखन जराव जरी सब गुन भरी परी छबि के कदन को। चांदनी बिछौना भाल चन्दन लगावें बाल चांदनी में बैठी लाल चंद से बदन को ॥ १० ॥

मनिमय राजें साजें मंजु सुरवान बीच मानो दिनकर कर लपटी प्रभा करें। चौमजुड़ी माली सी बिसालै बिज्जुरी सी जुरी दमकी की ध्यान निस बासर रमा करें। मुनिन के मन मनोरथ को सुदैन वारी हेर हेर हठी पाय पाइ तें बिदा करें। साकरें परे ते राधे साकरें सहाइ होत साकरें सहाय ऐसो जन को निसा करें ॥ ११ ॥

पांइजेब जेहर जराऊ जरी जोरी हठी मनि मुकतान हीरा हार उर धारे हैं। सप्तन समुद्र काढ़ी रमा रमनीय ऐसो अंगन सुगन्ध पाइ भूमें भौर भारे हैं ॥ बैठी हैं तखत फोस बखत पियारे जु को मानो काम बाम पै सुहाग चौर ढारे हैं। देखे मृगबिंद कीन्हों जौन्ह जोति मंद राधे तेरे मुखचंद पै अनेक चंद वारे हैं ॥ १२ ॥

तोरि तोरि सुमन सुहाये सुख हेरा हिये हार मालती के प्रहिराये हैं परस में। चंद्रकला प्रेमकला बिमल बिसाखा के बिमल गुन गाय गाय गयो हूं परस में ॥ केसर अतर चंप अगर लगाय हठी ऐसी भांति सेवा करो में। ललिता सखी के लोने पाय सहराये सब पाए बर पाइ पाइ में ॥ १३ ॥

[illegible]ोरी तें लखे प्राजु के ख्याल बखान कहां लौं करै मति मोरो। [illegible] पै मोर पखा मुरली लकुटी कटी में पट छोरी ॥ बेंदो बिरा[illegible]ो भाल में चूनरी रंग कुसुंभ में बोरी। मान के मोहन बैठ रहे सो [illegible]भानुकिसोरी ॥ १४ ॥

[illegible] कृष्ण को साज करै नव बेष बड़ो छबि छाई। पीत पटी लकुटी हठी सी सग धाई ॥ छूटी लटें दुलैं कुण्डल [illegible] । कोटिन काम गुलाम भये जब कान्ह ॥ १५ ॥

[illegible]ने भूलें भूमें झालरें झलकदार चांदनी बिछौना । अतर गुलाब लसलसन बिसाल छोरें महकत सुगन्ध में ॥ सुंदर सुजान है सुधर सुकुमार राधा सग मनमोहन

फैल रही दीपति मदन की ॥ हेम को छरी सो मानो सुखन जराव जरी सब गुन भरी परी छबि के फदन की। चांदनी बिछौना भाल चन्दन लगावै बाल चांदनी में बैठी लाल चंद से बदन की ॥ ३० ॥

मनिमय राजे साजे मंजु मुरवान बीच मानो दिनकर कर लपटी प्रभा करे। सौमजुही माले सी बिसाखे बिजुरी सी जुरी दगधो को ध्यान निस बासर रमा करे। मुनिन के मन मनोरथ को सुदैन वारी हेर हेर ठाढ़ी पाय पाइ तें बिदा करे। साकरै परे ते राधे साकरै सहाइ होत साकरै सहाय ऐसो जन की निसा करै ॥ ३१ ॥

पाइजेब जेहर जराऊ जरी जोरी ठाढ़ी मनि मुकतान हीरा हार उर धारे हैं। सजन समुद्र काढ़ी रमा रमनीय ऐसो अंगन सुगन्ध पाइ झूमे भौर भारे हैं ॥ बैठो है तखत खोल मखत पियारे जू को मानो काम बाम पै सुहाग चोर ढारे हैं। देके मृगबिंद कोन्हो औन्द जोति मंद राधे तेरे मुखचंद पै अनेक चंद वारे हैं ॥ ३२ ॥

तोरि तोरि सुमन सुहाये सुख हेत हिये हार मालती के पहिराये हैं सरस में। चंद्रकला प्रेमकला बिमल बिसाखा के बिमल गुन गाय गाय भयो हूं परस में ॥ केसर अतर अंग अगर लगाय ठाढ़ी ऐसी भांति सेवा करो कैयक सरस में। ललिता लली के लोनै पाय सहराये सब पाए फल पाइ पाइ राधिका दरस में ॥ ३३ ॥

सवैया—हेलीरी तैं लखे आजु के स्याम बखान कहां लौं करै गति मोरी। राधे को सीस पै मोर पखा मुरली लकुटी कटी में पट डोरी ॥ बेंदी बिराजत लाल के भाल में चूनरी रंग कुसुंभ में बोरी। मान के मोहन बैठ रहे सो मनावत श्रीवृषभानकिसोरी ॥ ३४ ॥

मोर पखा गरे कुन्द की माल करें नव वेष बड़ो छबि छाई। पीत पटी दुपटी, कटि में लपटी लकुटी, ठाढ़ी सो मन भाई ॥ छूटी लटें, डुलै कुण्डल कान बजै मुरली धुनि मंद सुहाई। कोटिन काम गुनाम भये जब कान्ह है भानुलली बनिआई ॥ ३५ ॥

कवित्त—मोतिन की झूलें झूमें झालरै झमकदार चांदनी बिछौना बिछे चंदन कदोवा में। अतर गुलाब खसखसन बिसाल भोरे मकल सुगन्ध ठाढ़ी चंदन सदोवा में ॥ सुंदर सुजान हैं सुघर सुकमार राधा सग मनमोहन

जू रहतु यदापि ...

चारु चांदनी चंदोवा में ॥ ३६ ॥

बजत बधाए गाए मंगल सुहाए सग पावड़े पराए है चवाई मुख वान की। बैठीं सुखपाल सुखपालन की रानी साथ ब्रज महारानी के प्रगट लग जान को ॥ बोल के पठाई चाई नगर लुगाई सब देखि छवि छाई जिन्हें सू झत न चान को । महरस भाई हठी कुलह सुहाई ऐसो गोकुलहि पाई राधे बेटी वृषभान की ॥ ३७ ॥

केसर सी केतकी सी चम्पक चमीकर सी चपला चमक चारु गात की गुराई है। जाको सुखचंद देख चंद मंद जोति होत जाके लखि नैन चरविंद दुति पाई है ॥ नीलमनि मोतिन की माल उर डोलत मयूर सी मरालन की पंगति सुहाई है । देखवे कौं दौर चाई गोरो ब्रजबाला सबै भानु की किसोरी चाजु नंदग्रह चाई है ॥ ३८ ॥

गाय उठीं किंनरी नरीन ये सुरन सबै द्वार द्वार नगर नगारा धुनि छाई है। सुर हरखाने दरसाने बरसाने प्रेम सरसाने फूल बरखा ले बरसाई है॥ बन्दीजनविरद बखानें भांत भांत हठी लीन्हों चवतार राधे वेदनहूं गाई है। धन्य ब्रजमण्डल सुधन्य कूख कीरति की धन्य वृषभान जू के भाग की भलाई है ॥ ३९।

देखी भटू भावती प्रकास भोर भान कैसो कोकिला से बैन नैन ऐनन लुरे गई । मैनका सी नारी हठी मैनका कहारी पयारी रम्भा रमा उमा वारी गन कौं भुरे गई ॥ कमल कली सो लली राजत चवीन बीच गोकुल गलीन में गुलाब सी कुरे गई । विज्जुल के आनन की कोटिन ससाजन की आनन को साजन की दीपति दुरे गई ॥ ४० ॥

जाके चङ्ग चङ्ग की बनक पै कनक वारें मोहे लेत मैन मन मोतिन ले वारिए। ऐसी मन भावनी सी मोहन जू कोगो मान जाको ये बड़ाई विधि गावे वेद चारिए ॥ राधे जू को बदन विलोको ब्रजचंद हठी चंद जोति मंद मंदमंद पाइ धारिए। सची मंजुघोषा सी सुमैनका तिलोतमा सी रंभा सिवा रति सी रमा सी वारि डारिए ॥ ४१ ॥

चतर पुतायो बने चासे चमखाने तामें छीटें चहूं चोरन उसीरन के चाब के। चंगन बिछौना जामें गुंजे चलिछौना हठी चौनन के तौना मोहैं सुरन रवाब के ॥ छूटत फुहारें कासमीर रंगवारे भारे बंधे हैं कतारें सघा मेघ भरदाब के । देखो ब्रजचंद जगचंद चंद मंद होत चंदन चहल राधे महल गुलाब के ॥ ४२ ॥

" मनिन मढ़न मईं महके सुगंधे मैंमो फटिक सिलानहूं को फरस ममारो है। जेवदार जर्वदार जरी को जलूमदार चौबदार बिसद बिछौनन पसारो है॥ चन्द्रमन चौकी पर चम्पक बरन उठी रंभा रमा उमा रूप गरव उतारो है। देखो नँदनंद मुखकंद ब्रजचंद आजु राधे मुखचंद चंद मंद कर डारो है॥ ४३॥

बैठी कुञ्जभौन गोरी कीरतिकिसोरी राधे छूटत फुहारे छिमधारे एक पाती है। चतर गुलाब घिस चंदन चहल मची चारों ओर सुमन सुगंध मर माती है॥ कैधों रंगवारी उठी उठतीं तरंगें त्यों अनन्त अंगना सी अंग आभ उफनाती है। बांधि बांधि परा सरासरी सुख किरनें यों छोर को धरा छूट छरा खाय जाती है॥ ४४॥

काम सरसीसी रमा उमा दरसीसी पट फूल बरसीसी घन दामिन उसीसी है। प्रेम झरसीसी मोद बसन कसीसी नीक लज्जा उकसीसी काम रूप में रसीसी है॥ लसी सरसीसी कटि राजै दरिसीसी उठी उर में बसीसी दुति जग में जसीसी है। सिंहिकार सीसी हिये अंगन ससीसी करै रति कौं इसीसी दीसी उर में बसीसी है॥ ४५॥

प्रेम की झरीसी देखो लालन लरीसी अब बाग में करी सी राजे कटि दरीसी है। बाग में परीसी वा सुहाग अगरीसी राम रूप की धरीसी रमा उस किन्नरीसी है॥ नीति अगरीसी ब्रज गोपिन बगरीसी उठी चलिये गुपालजान मोहै सुघरीसी है। दिपति परीसी है बसत सुरसरीसी है प्रेम की छरीसी मदन की बरीसी है॥ ४६॥

सवैया—भौन तें भौन कें आतुरसी कढ़ि देखन आवें सबै ब्रज नारें। पीरो दुकूल सिंगार सजै मनो फूलि रहीं बन चम्पक डारें॥ पाइन तें अंगुरी नख लौं उठी लाली की लोयें कढ़ी पसरारें। मैली भई उपमा सिगरी मनो फैली भई में महावर धारें॥ ४७॥

कवित्त—चन्द की कलासी नवलासी सखी संग बारीं रंभा रमा उमा उपमा कों को रही। कीरतिकिसोरी वृषभान की दुलारी राधा आली बर मालों को मढ़क चित चोरही॥ भौन तें निकसि प्यारी पाय धारे बाहिर लाली तरवान की उमडि इक ओरही। डगर डगर अरु डगर डगर घर नगर चारों ओर दुति हो रही॥ ४८॥

सवैया—नवनीत गुलाब तें कोमल है उठी कंज की मंजुलता इन में। गुल लाला गुलाल प्रवाल जपा छवि ऐसी न देखी ललाइन में॥ सुनि मान

छठी पानी के। जोग जग्य जप तप कछूवै न साधे ऐसे पद पवराधे छम राधे महरानी के ॥ ५५ ॥

जाकों नेति नेति कहि वेदन बखाने भेद नारद न जानें मखीं काहू ठीक पारो है। संभु सुर सुरपति सुक मुनि आदि दै कै हारि जोग जग्य जप तप तन गारो है॥ छठो की सधार वृषभान की कुमारि ऐसी तीन लोक जाको कृपा कोर को पसारो है। चार मुख वारो विधि कहै का बिचारो दससतमुख वारो राधा गुन कहि हारो है ॥ ५६ ॥

कंचन अटा पै बैठी जोवत घटा हैं प्यारी बिज्जु की छटा सी सखी सेवत सिहाती हैं। कोऊ कर बीनै एकै गावती प्रवीनै छठी राग रागनीन के प्रमान दिखराती हैं॥ राधा मुख चंद की मरीचैं ब्रजचंद ए उमंड कै प्रचंड छ्वै मै ऐसो सरसाती हैं। मंड खंड मंडल कों दाबि कै अखंडल कों फोर चंदमंडल कों कोर कढ़ि जाती हैं॥ ५७ ॥

अमर लिपायी चौक अगर सुगन्ध धुन्ध नगर नगर फैल चारों ओर हो रही। पांवरीन पांवड़े पराये पौर बाहिर लौं दीपक धराये मन भाये मग जो रही॥ सकल सिंगार साज रावरेई पास छठी ऐसी भांति भावती की भयी भौन भोरही। आलम उनीदी दृग मूदो चटकाइ बार सुन्दर सुघर सुकुमार सेज सो रही ॥५८॥

बैठी कुंज भौन महरानी सुखदानी सदै किंनरी नरी नए सुरीन सुर गावती। कौरें कौरें कौंलसी सुवासें इन्दु आननसी प्रमुदित भूमि भूमि पग सहरावती॥ लै लै री सुगंधें गुंजैं धीरैं धीरे प्यारी पर भौरन की भीर छठी ऐसी छबि छावती। गोरें गोरें गातन पै नवल किसोरी जू के स्याम रंग वोरे, मनो चौरन चलावती ॥ ५९ ॥

सवैया—हीरन के छठो हार गरें गजरा गज मोतिन के सुखदानी। जोरै जरी भरी मांग सिंदूरसुरेखा रमा रति रूप नसानी॥ प्रभा प्रभाकर लाजन को पसरी किरनै सुषमा सरसानी। को है त्रिलोक मैं मोहै नहीं लखि सोहै सुहागिनि राधिका रानी॥ ६०॥

सोनै सखी ललितादिक सङ्ग उमङ्ग सों श्रीवृषभानुदुलारी। मालती कुंद निवारी गुलाब सुफूल रही चहुंघां फुलवारी॥ हिम के छूटै फुहारे छठी मघवा मघ मेघ महा सरकारी। चौक पै चौक सों मौज भरी बन्दि बैठी बिलोकत राधिका प्यारी॥ ६१॥

कवित्त—मान करि बैठो वृषभान की कुंवर कुंज आनिये कहाधौं सखि

वृषभान की ॥ ७४ ॥

फिरत कहा है बीर बावरी भई सो तोहि कौतुक दिखाऊं चलि पै कुञ्ज हारी के। निमिष निहारे छोठ कितहुं न टारे मार नंद के कुमार मैं सेन सुकुमारी के ॥ करन पसार कर दृगन लगावे हठी वस परे गरबीली ग्वा सुकुमारी के। चाई देखि हौं हूं भी दिखाऊं तोहि चलि लाल चरन पलो वृषभान की कुमारी के ॥ ७५ ॥

झूमि झूमि चाये घूमि घने घनश्याम चाली कूकै काकपाली कामपाले बरसात है। ऐसे समे कुञ्जभौन कीरतिकिसोरी तोन मखिन समूह साथ सुर सरसात है ॥ कहा कहौं तोहि ताहि देखि चाई तैसे भटू कौतुक बिलोकि हठी हिय हरषात है। जमुना के तीर बहै सीतल समीर तहां मीर सलबीर जू को बनि बनि जात है ॥ ७६ ॥

राजै सुभ सीस छतै मुकुट मटक वारो हन मोस चाली भांत चन्द्रिका निहारी में। छती बनमाल छतै मोतिन की मान वर बानिक बिमाल हठी काम रति वारी में ॥ चाव निज नीरे नैकु सुमन सुंघाऊं ताहि सुखद सुहागभरी बात हितकारी में। निज चंधियारी में निकुञ्ज की गली में जात चाजु घन चंद मुखचंद की उजारी में ॥ ७७ ॥

चाजु हौं गई तो बीर सघन निकुञ्जन में कौतुक विलोको तहां सब सुख-दानी के। कहत बने न सौंपि चपरज बात हठी कहि कहि हारे सुख चाग बेद बानी के ॥ भ्रवन सुने न मानें चांखिन दिखाऊं तोहि चलि दुर मेरे साथ चरित गुमानी के। चूटे मुख मोटैं करें मनुहार कोटैं बैठे पायन पलोटै लाल राधा महरानी के ॥ ७८ ॥

सवैया—माखन तें मखतूलहु तें सुकमार सिरोमन कंज कली के। लाल गुलाब प्रवाल के भूषन दूषन है घनश्याम छली के ॥ चाली गुलाब की चावहि वारिये वारिये ये ब्रजकुञ्ज थली के। भानु प्रताप को निंदत है पद बंदत हौं वृषभानलली के ॥ ७९ ॥

ब्रज की बनि चाजु निकुञ्जन में सुमपुञ्जन सों बरसावत है। तिय को ... चानन सों मुखचंद निहार घनो सुख पावत है ॥ रस बात सनेह की ... सुन मंजु सुने हिय में हंसी चावत है। करि केलि थकी ललि प्रान ... दा पद चांपत प्यारी सुनावत है ॥ ८० ॥

कवित्त—चांदनी के आंगन बिछौना मीके चांदनी के चांदनी सी देखि अंखियान सुख लह्यौ है। चांदनी सी चीर चारु चांदनी के आभूषन चम्पक के गातन बखानो जाते कह्यौ है॥ हठी आस पास बैठी सुघर सुजान सखी जिन्हैं देखि रति को गुमान जात बह्यौ है। राधे मुखचंद की निकाई ब्रजचंद आज अवनी अकास लौं प्रकास फैल रह्यौ है॥ ८१॥

सवैया—चंद सो आनन कंचन से तन हौं लखि कै बिन मोल बिकानी। औ अरविंद सी आंखिन कौं हठी देखत मेरि ये आंखि सिरानी॥ राजत है मनमोहन के संग वारौं मैं कोटि रमा रति वानी। जीवन मूर सबै ब्रज की ठकुरानी हमारी है राधिका रानी॥ ८२॥

रम्भा रमा सी उमा सी हठी बिमला नवला रति रूप छली सी। चांदनी चम्पा चमीकर सी चपला चमकाहत जात चली सी। आगन आजु लखी भरि नैनन बावरी आवत देखि भली सी। जात चली गली भानुलली अली मंजुल कोमल कंज कली सी॥ ८३॥

जाकी कृपा सुक ग्यानी भये अति दानी औ ध्यानी भये त्रिपुरारी। जाकी कृपा विधि वेद रचै भये व्यास पुरानन के अधिकारी॥ जाकी कृपा तैं त्रिलोक धनी सु कहावत श्री ब्रजचंद बिहारी। लोक घटी सैं हठी को बचाउ कृपा करि श्रीवृषभानदुलारी॥ ८४॥

कवित्त—कौल तें सुभामै कौन छवि कमला मैं तुलै फूलन तुला में चढ़ी प्रेम के पला मैं है। सेवै बसु जामै छोड़ छोड़ निज धामैं सुरपालन की बामैं करै पौन अचला मैं है॥ रूप के भला मैं देखी नन्द के लला मैं हठी रति अबला मैं कहा सोभा नवला मैं है। चन्द की कला मैं न चमङ्क चपला मैं ऐसी लखित ललामै राधे कारती भलामैं है॥ ८५॥

सोहै सुररानी ब्रजरानी के समीप हठी सुन्दर सुघर सुकुमार तन छोटे री। एकै चौंर कीनै एकै पानदान लीनै एकै आवत की भोरै करै अखल की चोटे री॥ एकै कर जोरै एकै करती निहोरै एकै गाय कै प्रवीनै मन प्यारी को पगोटे री। लूटै मुख मोटे एकै सेवती निखोटे एकै बांधि बांधि जोटे कोटे अरुन पलोटे री॥ ८६॥

रम्भा को रमा को इन्दुमा को औ तिलोतमा को उमा को रमा को कौन-मा कौं हठी भावरे। कमला को विमला को नवला को चपला को सुखमा को उपमा.को भलो चित चावरो॥ मैनका को मोहनी को मुखी सत्यभामाहूं

सदा करुनानिधान की ॥ दीनन की प्रान लोकपाल दयासिन्धु तीकों ध्यावत गुपाल जिन दावानल पान की । सोचै नहीं मन मेरो दोचै नहीं काम राखे तेरेई भरोसे यह बेटी वृषभान की ॥ ८३ ॥

रुक्मिनी सी रति सी सची सी सत्यभामा सी सु भीषम की भासी जमनासी गौतमासी है। रम्भा सी रमा सी घो सुकेसी मंजुघोषा कैसी नवला सी उमा सी प्रभासी कौसमा सी है ॥ तारा सी तरंगना सी मेनका तिलोतमा सी राधा महरानी छठी छवि की प्रभासी है । कमला सी कमल सी नवला नवीन जामें छाजत छमा पै इन्दुमा सी चन्द्रमा सी है ॥ ८४ ॥

रमा को कहा है रति रम्भा को कहा है ए बखाने बिधि धारी सुखधारी देव सौगुनो । सची को कहा है सत्यभामा को कहा है चरु चंद को कहा है जामें राजत है सौगुनो ॥ चम्पा को कहा है चामीकर को कहा है चारु करके बिचार निरधार छठी सौ गुनो । राधे महरानी जू को रूप सब रूपन ते दुगुनो है तिगुनो है चौगुनो है सौ गुनो ॥ ८५ ॥

गिरिपति लागी मेरु मेरुपति लागी भूमि भूमिपति सेस कोन कच्छ कोरधारी सो । दिगपति लागी दिगपालन के हाथ छठी सुरपति लागी सुरपाल छत्रधारी सो ॥ दानपति करन बारन पति लागी बलि बलि पत लागि कइलास के बिहारी सो। तीनों लोकपति ब्रजपति सों लगो है ब्रजपति पति लागी वृषभान की दुलारी सो ॥ ८६ ॥

चांदनी के चौक बैठी चांदनी के आभरन चम्पक बरन छठी ऐसी दुति फीकी है । मोतिन के हार गरे मोतिन सों मांग भरे मोतिन सिंगार करे प्यारी प्रान पी की है ॥ ऐसी सुकुमार वृषभान की कुमारि घोर सबै रूप मोहिनी की लागत रती की हैं। रमा ते उमा ते कौलमा ते कोलमा ते इन्दुमा ते वरमा ते चन्द्रमा ते चारु नीकी है ॥ ८७ ॥

गति पै गयन्द वारौं पग अरविन्द वारौं छठी अलि वृन्द वारौं अलकन फन्द पै। गुलफ गुलिन्द वारौं सीलता पै सिन्धु वारौं सकल सुगन्ध वारौं मुख की सुगन्ध पै ॥ कटि पै मृगेन्द्र वारौं तन छवि वृन्द वारौं बेनी पै फनिन्द वारौं लाल नदनन्द पै। पीठ कौरबंधु वारौं हांसी सुधाकन्द वारौं कोटि कोटि चन्द वारौं राधे मुखचन्द पै ॥ ८८ ॥

कीरति किसोरी वृषभान की दुलारी राधा सहज सलोन से निकुंजन की डगरी । चरन की चोकी को चमक चारु चंदन की सैयो रंग रंगन की कोनि

ब्रज मगरी ॥ देखे पर हारे वारे तन मन प्रान छठी रूप चकचौंधा रही चौंध चष नगरी। कैधौं सुखमा है की दमा * है की तमा † है के उमा है इन्दुमा ‡ है की रमा है रूप अगरी ॥ ९९ ॥

मनिन अटा पै ठाढ़ी पुरट पटा पै प्यारी रूप की घटासी देखि रीझ गुपाल है। चरन करन की यों चमक आभरन की तन अंभरन की सु फैलै प्रभा लाल है ॥ जकि रहे थकि रहे देखि चकचक रहे छटी नर नारिन की ऐसो भयो हाल है। कैधौं कछू ख्याल है के मोहिनी को जाल है कै बालक की माल है की मदन मसाल है ॥ १०० ॥

गिरि कीजे गोधन मयूर नव कुंजन को पसु कीजे महाराज नन्द के नगर को। नर कीजे तौन जौन राधे राधे नाम रटै तट कीजे बर कूल कालिंदी कगर को ॥ इतने पै जोई कछु कीजिये कुंवर कान्ह राखिये न आन फेर छठीके झगर को। गोपी पद पंकज पराग कीजे महाराज तृन कीजे रावरेई गोकुल नगर को ॥ १०१ ॥

चौक परी सुखन समोई लेत सासन को आमू ढार कहै सुन सखी अभिराम री। उतरी विसासी ब्रजबासी कान्ह भेंटो भटू सारिका सुवा के सोर कीनै काक काम री ॥ एक यों निहारी हेम पूतरी स्वपन मांह आयो ओर सिन्धु सोभा ललित ललाम री। कित वह ठाम कित मनिन के धाम धार किते सुखग्राम किते गये घनस्याम री ॥ १०२ ॥

सवैया—परी रहै वैर परोसनै पै ननदी उर साल सी सालहि री। वह धाम बुरो ब्रज को सजनी छठी क्यों लखिये मुख लालहि री ॥ बड़ी पांखिन मोर की पांखिन को तू सिंगार वहै प्रति पालहि री। अब मेटौ वियोग विथा तन की भरि कै भुज भेंटौ गुपालहि री ॥ १०३ ॥

इति राधासुधाशतक समाप्तं शुभमस्तु।

---

* दमा—बिजली। † तमा—संध्या। ‡ इन्दुमा—पूर्णिमा।

अथ कलाम मुल्क का मेवाड़ आसामानी
चूड़ियां (ऊर्दू)

चूड़ी जाना-चूड़ी जाना यहाँ में पहरने का
यह मेरी औरत जानती और पुरानी चूड़ी

श्री राधारमण का शृङ्गार।

यमक संग्रह और प्रेम पद्धति।

मनोहारिणी कवितामय छोटे छोटे लेख।

भा० भू० भा० श्री हरिश्चन्द्र कृत।

जिसको हिन्दीभाषा के प्रेमी तथा रसिकजनों के मनोविलास के लिये
क्षत्रिय पत्रिका सम्पादक श्री म० कु० बा० रामदीन सिंह ने
प्रकाशित किया।

पटना—"खड्गविलास" प्रेस—बांकीपुर।
साहिबप्रसाद सिंह ने मुद्रित किया।

१८८० ई.] [ह. म. ६

प्रथम बार].

श्रीराधारमण का शृङ्गार।

—※—

सोरठा—है ससि दीय चकोर, है बपु एकै तन धर्यौ।
जै जै जुगल किसोर, बिदित नाम राधारमन॥

कवित्त।

सुन्दर सचिक्कन सुढार स्याम सोहै महा लावन्य धाम लटक निज अङ्ग की।
कोमल चरन कौंल नटवर ठौर मोर पोर पोर छोरे छबि कोटिन अनङ्ग की॥
अङ्ग गति लङ्गतें सुअङ्ग सों तिरीछे ठाढ़े मृदु कर कीन्हे मुद्रा वेनु के प्रसङ्ग की।
कुण्डल स्रमन सीस चन्द्रिका नमन जैजै राधिकारमनलाल ललितत्रिभङ्ग की॥
किङ्किनियां कनियां पैंजनियां पगनियांकी चमोलाई बिरियांमें भूपनउतारिकें।
छबि छलकनियां माखनियां मृदुल अङ्गललित त्रिभङ्ग लटकनियां सुढारि कें॥
नीलमनियां सी गात लालमनियां से होठमन्द मुसकनियां पें बेसर संवारि कें।
सैनसमयकेसोवनि ठाढ़ोहैचिकनियां सी छयल छिकनियांसोतनियां सिंगारकें॥
झलक कनक रङ्ग बगड़ी धों बसन यामो बादलबस्तयादि बाजू गहे गह गह पै।
छिये बीच हीरनके हारनपे हारतापे मोतिनकी मालकों सिंगारी तहतहपे॥
कलगीको जमग जलूम मोर सिखाहूको निजजू धुजाज्यों रूपसागरके दह पै।
कुण्डल मढोडपे जवाहर दुछोरछोगा जटित जड़ाऊ जोड़ झुक्यौ है कुलहपै॥
नटवर दर ढारो पग अरुनारो तापैं नख उंजियारो निज कवि पुज तारो है॥
एक डारो हीराही को टोडल वजन धारो कटिपट कंचनपे पटुका ढरारो है॥
सङ्कलदकारो ठारो ललितत्रिभङ्ग प्यारोधारो हिय हारोनासा बेसर संवारो है।
दृगअनियारो भोरीसुख मुसिक्यारोकानकुण्डलनिहारोसीससोहतटिपारो है॥
फैलछबि मलितपैं छलित मनोजकोटि कुसुमकलितचोटी पड़ोलौं खलित है।
पलकें डुलित कंजनैन प्रफुलित बांकीभौंहकोटलितनासा सरोंगी फलित है॥
तुकलित बिम्बाधर वेसर हलितनिज बांसुरी नलित बाहु बलया बलित है।
हारन रलितकान कुण्डल चलितहीरामुकट ललितकोटि चन्द्रमा स्वलित है॥
हीरन के हार को अपार दुति अंग अंग ललितत्रिभङ्ग निज कोमल अगार है।
ता॰ को हजार तापे काछनो काछो है धारू बांसुरी अधर धार नटवर टार है॥
भौंहें छतनार नेना खंजनसे पहदार छूट्यो लटवार है कपोलन के पार है।

कुण्डल सिंगार कामकुण्डल मयूराकार जटित जराऊसीस कुंडकी बहार है।
जटित जराऊ जगमगत टिपारो सीस जाहर अनूप निज कलगी मयूर की।
सोहत जवाहर के कुण्डल जरवदार जालम जुलफ और जोबन गरूर की।
फबदार भौंहें जेर जहरी जुलम आंख जलजजुनाक जेब होठन के नूर की।
पटुका जरद जरतारी अद्‌भ जाविचापें जोत बिजली की होतहालतकपूर की॥
बांकीभालचंदीभौंहेंभृकुटी जड़ाऊजाकीबांकीसिरपेंचपाग मोरपिच्छटांकी है
बांकी श्रौनकुण्डल श्रीकुन्तलअलकबांकीदृगकीचलाकीभरीऐनसुखमा की है
निजकविनामियाकीजलजजुलावाबांकीअधरसुधाकीछाकी बांसुरीपदाकी है
पीताम्बरपटुकाकीललितत्रिभङ्गताकीराधारौन प्यारेबांकीझांकीअतिबांकी है

दोहा—जै जै जै राधारमन, जुगल बेष बपु एक ।
देहु लडैतो स्याम घन, चित चातिक लों टेक ॥ १ ॥
जै जै श्रीराधा रमन, द्विविध तन एकै देहु ।
चारु चरन नख चन्द्रको, निज चकोर करि लेहु ॥ २ ॥
सोरठा—निजकवि निज शृङ्गार, निज करि जो गावै सुनै ।
राधा रमन उदार, ततछन हिय में झलमलैं ॥ ३ ॥

पूरन सुकृत फल श्रीभट गुपाल जूके भक्त महिपाल जूके मुकुट मगन जू।
दौरे गजराजकाज लाजराखी द्रौपदीकीधाके गिरिराजदेव मदके दमन जू।
निज दासी दीन दुख हरनचरन चारु सुखके करन सदा संपदा भवन जू।
मुरली लकुटधारे चन्द्रिका मुकुट धारे दुरित हमारे दरो राधिका रमन जू।
दिनदिन दूनोदूनो समय यौं दुसहजातदाताहुखी दारिद दमामेंदुरंमाखिये।
दुष्ट दनुजन माहिं दौलत दगाज दीखे दरदनदारी दगादारी दम लाखिये।
दिसिविदिसिदौरि दौरिकलिहू दमामोदितदामोदरदेव निजदास अभिलाखिये।
दीनबंधु दीनानाथ दीनके दयाल दानीद्रुपददुलारीलौं हमारीलाज राखिये।
हम अति घोर पापीलंपटकुटिल बुद्धिमति सुभावरचिछाया मतिछीजियें।
आप ही हौं कारन प्रकृति निरधारनके एही सरवज्ञ जगदीसमुनि लीजियें।
निजतो मनुजकीटदुस्वज बिहारीमाया निग्रह अनुग्रहरचैसोन्याव कीजियें।
सरन तिहारी प्रन तारत दरन नाथ राधिकारमन जू चरन रति दीजियें।

दोहा—श्रीगुरु भट्ट गुपाल के, परम लड़ैते लाल ।

दोहा—निबरी नवरी सौंचकहुं, कबरी कबरी रात ।
कहा बनखनखचै चिते, कुच कपोल दरसात ॥ १ ॥
दीठ दुरावन के लिये, दिये दिठौना बाल ।
दीठ दीठ हग सी लसी, पीठन देत बिशाल ॥ २ ॥
मनैन नैन विलोपि कपि, निरतत भौंह तनैन ।
सैनन बीर दिने न करि, याछिन बात बनैन ॥ ३ ॥
सौ सौ सौहैं करी कगि, भौंहैं नोक नचाय ।
हम जानत गौं हैं लला, पिचकारी धरि धाय ॥ ४ ॥
थिरकत फिरकीमेंफिरकी, फिरकी फिरकी धाय ।
कहत कबीरन मौज मुख, चीर अबीर लगाय ॥ ५ ॥
मागैमिलतनमुक्त सखि, सगुन श्याम मुखभाय ।
निरगुन ह्वै मुक्तावली, मुक्त भई पग जाय ॥ ६ ॥
तेरी बहुतेरी सुनी, मेरी सुनि अब श्याम ।
तोहि नागरी करैंगी, गुनन आगरी बाम ॥ ७ ॥
हारबार सुरझात नहि, बार बार उरझाय ।
रोरी झोरी में भरे, छोरी में उकताय ॥ ८ ॥
पिचकारी कारी लगी, सिसकारी सुकुमार ।
अवांगरी धारी लंगर, लपकि लेत बलिहारी ॥ ९ ॥
यारी प्यारी सफल करि, प्यारी प्यारी रैन ।
अन्धियारी उजियारियां, कदम कुंज सुख दैन ॥ १० ॥
रसकेली खेली लली, आज अकेली कुंज ।
सुकुरबिलोकिकपोलछवि, इन्द्र बधूटिन पुंज ॥ ११ ॥
अधिक अधिक के बांन तें, बंक बिलोकन लाल ।
वह परसत प्रानन हरै, यहचितवततत्काल ॥ १२ ॥
रसन कसन कल कंचुकी, कस न निकासै जीय ।
विकसतपटनिकमनकुचन, चितवत दरकै हीय ॥ १३ ॥
ओढ़े राती चूनरी, बतराती घनश्याम ।
इतराती राती लसी, हिये सिराती बाम ॥ १४ ॥

काननमें कानन सुनी, मैं इक की घनघोर ।
टेरत आई सघन कों, कर श्यामहि सरबोर ॥ ३० ॥
दौरी बौरी जात कित, पौरी दुबक्यो श्याम ।
रंग कमोरी द्वार धंस, लेहि न छोरी नाम ॥ ३१ ॥
कहा ठठोवत रात भव, रात भई घट बीर ।
चोरी चोरी चांत छत, भरी बघोरी बीर ॥ ३२ ॥
गोरी भोरी सतलरी, मोरी मोरी बांह ।
भौरि भरी झकझोरियां, करत कदमकी छांह ॥ ३३ ॥
कोरी कोरी गई छत, कोरी मोहि बताय ।
बिन सरबोरी या डगर, गोरी निकर न जाय ॥ ३४ ॥
बरजोरी मोरी करत, बरजोरी नन्दलाल ।
थोरी थोरी बात कों, मतो मथोरी बाल ॥ ३५ ॥
चोरी चोरी आय मुख, मसलत गालगुलाल ।
लकुट मुटुका पट छोर दां, गुल चोरी या गाल ॥ ३६ ॥
सोती सोती उठि गई, सोती अबही लाल ।
धोती धोती कूप पै, मसलो जाय गुलाल ॥ ३७ ॥
पिचकारी मारी मसकि, नूतन बसन निहार ।
सारी सारी श्याम रंग, श्याम करी गुलनार ॥ ३८ ॥
तानी सुलतानी भवें, मारी तकि पिचकार ।
बेधी चूनरि कंचुकी, हियरे बारंबार ॥ ३९ ॥
पत्ती पत्ती बारतें, भंक न लंक लखाय ।
कहां गई चितवत चकित, लाल बाल मुसकाय ॥ ४० ॥
गोरी सुख ममली भली, बांह मरोरी मोर ।
करी करोरी गहि लपटि, लंपटि को सर बोर ॥ ४१ ॥
कहा बिगारी मैं भला, गारी गावत आप ।
बकत उधारी बात नैं, मेरे हैं है बाप ॥ ४२ ॥
मोतियां झरिबे लगीं, चुकीन बतियां लाल ।
आवत मिलिमिलिकोकनद, चितवत भरी उताल ॥ ४३ ॥
पीत पिछोरी छैल की, छोरी छल बल बाल ।
छोरी को सिंगार करि, नचवत दै दै ताल ॥ ४४ ॥

धीर समीर के तीर सखि, अति अधीर ब्रज वास ।
छोना बाबा नन्द को, कै टोना घनश्याम ॥ ४५ ॥
चलो चलो सूधी लली, करहु निकुञ्ज विहार ।
मचली मचली बात क्यों, मोही सों सुकुमार ॥ ४६ ॥
लुकि बैठो तुम चैनसे, पिचकिन श्याम बचैन ।
पचै न याको आय सखि, जौं लौं ढूंढ मचैन ॥ ४७ ॥
मैना मानौंगी बुरो, मैं ना साँच बताय ।
मो पीतम तन टुक चितै, का सुख चन्द लजाय ॥ ४८ ॥
लसी ससी सी श्याम उर, कीनी सीसी छाय ।
मनौ सुधा सीसी भरी, दई दई ढरकाय ॥ ४९ ॥
हरी हरी नव कंचुकी, हरी हरी इत आय ।
धरी करील कि डार ने, देखो फेंट खुलाय ॥ ५० ॥
जमुना कूल दुकूल धरि, गई सखी संग न्हान ।
कदम लता लै चढ़ि गयो, करत मंद मुसिकान ॥ ५१ ॥
अलीन ऐसे या गली, श्याम अली मड़राय ।
कनक कंज काची कली, मगधा राखि दबाय ॥ ५२ ॥
फूली फूली फिरत है, कनक कलीन सम्हार ।
श्याम अली अमली गली, अली न लेइ निहार ॥ ५३ ॥
तैं पहिरी चंपाकली, अली श्याम के त्रास ।
पै कपोल लोचन अधर, कंज पुंज तो पास ॥ ५४ ॥

प्रेम पद्धति ।

दोहा—प्रगट प्रेम पद्धति कही, लही कृपा अनुसार ।
आनंद घन उनयो सदा, अद्भुत रस आसार ॥ १ ॥
सुरति श्याम सों मिलि रही, करति धाम के काम ।
यह गति वृज अबलान की, परस प्रेम नकुराम ॥ २ ॥
बंधि बांधे मोहन गुनो, सुनी न ऐसी प्रीति ।
याही ते सब ते अमिल, या ब्रज की रस रीति ॥ ३ ॥
प्रेम अवधि आनन्द घन, लिये महारस पागि ।
सर्बस माधो बिसरि सुधि, मोह सदा उर लागि ॥ ४ ॥
कहि न परतिकछु अगम गति, जग मोहन बस जाहि ।

बृज को प्रेम अगाध है, को अब गावै ताहि ॥ ५ ॥
सदा मगन मुरली धरे, गावत बृज को प्रेम ।
बृजनायक नेही निपुन, गहै प्रेम को नेम ॥ ६ ॥
जो रस है सो रस लियो, जो रस लहै न कोइ ।
लेनि देनि अति रस भसी, गति दुति रही समोइ ॥ ७ ॥
घर बैठीं बन मो फिरै, गोपिन को यह गैल ।
गोहन क्यों न लग्यो रहै, रसिया मोहन छैल ॥ ८ ॥
गांव गांव पाखरि बगर, बृज मोहन मंडराय ।
कहौ ताहि काल क्यों परै, जित के चैन चुराय ॥ ९ ॥
एकहि लगि दुहुधा लगी, लगी पुरातन प्रीति ।
गोपी और गोपाल की, निपट नवेली रीति ॥ १० ॥
परम प्रेम गति अगम मति, अमल अपूरब रूप ।
सब तै न्यारी तुटि मुमिलि, ब्रज रस रीति अनूप ॥ ११ ॥
मधुर मुरलि का नाद सों, यति गति लई बिलोय ।
निगम तान बेधे परम, बिषम बिषामृत मोय ॥ १२ ॥
प्रेम परावधि बृजबधू, सुनि बंसी धुनि मंद ।
तजति भई सब सकुच तब, भजत भई ब्रजचंद ॥ १३ ॥
आरज पथ भूली भले, बिबस परी तेहि फन्द ।
बृज मोहन मनमोहनो, पूरन प्रेम अमन्द ॥ १४ ॥
थकित चलो मुनि मुरलिका, सुधुनि अपूरब गैल ।
बिबस भई अपबस कियो, मदन मनोहर छैल ॥ १५ ॥
अतुल अनूप सरूप गुन, गोपी परम पुनीत ।
जिन के बस रस निधि सदा, स्याम सजीवन मीत ॥ १६
बृज वृन्दाबन देखिये, पूरन प्रेम समाज ।
गोपराज नन्दन नवल, नित बरसत रसराज ॥ १७ ।
गोप बाल बृजचन्द की, अद्भुत केलि अभङ्ग ।
छाके हैं पाके रहत, अछके छाक उमङ्ग ॥ १८ ।
गिरिवर घन जमुना पुलिन, जलथल अमल बिहार ।
सदा कुलाहल मेचि रह्यो, लीला ललित अपार ॥ १९
परम अमिल अतिही अमिल, हरि बृज बधू बिलास ।

संगीतसार।

अर्थात्

संगीत का इतिहास और उस के भेद आदि का वर्णन

भारतभूषण भारतेन्दु

श्री बाबू हरिश्चन्द्र कृत.

पटना—" खड्गविलास " प्रेस–बांकीपुर.
साहबप्रसाद सिंह द्वारा मुद्रित और प्रकाशित.
विक्रमाब्द १९४५, खृष्टाब्द, १८८८, हरिश्चन्द्राब्द १९.

प्रथम बार १००० पुस्तकें]   [दाम ७) आना ।

संगीत सार।

भारतवर्ष की सब विद्याओं के साथ यथाक्रम सङ्गीत का भी लोप होगया यह गानशास्त्र हमारे यहां इतना आदरणीय है कि साम वेद के मन्त्र मात्र गाए जाते हैं। हमारे यहां वरंच यह कहावत प्रसिद्ध है 'प्रथम नाद तब वेद' अब भारतवर्ष का संपूर्ण सङ्गीत केवल कजली ठुमरी पर आ रहा है। तथापि प्राचीन काल में यह शास्त्र कितना गम्भीर था यह हम इस लेख में दिखलावेंगे।

गाना बजाना बताना और नाचना इन के समुच्चय को सङ्गीत कहते हैं, प्राचीन काल में भरत, हनुमत्, कल्लनाथ, और सोमेश्वर यह चार मत सङ्गीत के थे। कोई कोई शारदा, शिव, हनुमत और भरत यह चार मत कहते हैं। सात अध्यायों में यह शास्त्र बंटा है। जैसे स्वर, राग, ताल, नृत्य, भाव, कोक और हस्त। सम्यक् प्रकार से जो गाया जाय उसे सङ्गीत कहते हैं, धातु और मातु संयुक्त सब गीत होते हैं। नादात्मक धातु और अक्षरात्मक मातु कहलाते हैं। यह गीत यन्त्र और गात्र विभाग से दो तरह के हैं। बीना बेनु इत्यादि से जो गाया जाय वह यन्त्र और कण्ठ से जो गाया जाय वह गात्र गीत है। गीत निबद्ध और अनिबद्ध दो प्रकार के होते हैं, अक्षरों के नियम और यमक के नियम बिना अनिबद्ध और ताल मान यमक अक्षर रसादि के नियम सहित निबद्ध। शुद्ध, शालग और सङ्कीर्ण के भेद से यह गीत तीन प्रकार के हैं परन्तु यह भेद प्रबन्ध होके होते हैं। शुद्ध के एलादिक बीस भेद हैं। यथा एला, मोध्यभवा, पाट करण, पद्ध, तालेश्वर, वैरात, स्वर, चक्रपाल, विजया, गद्य, त्रिभङ्गी, टेंकी, वर्णपुट, सर्गपुट, द्विपदिका, मुक्तावली, माहका, लम्ब, दंडक और वर्त्तनी। इन गीतों के छ अङ्ग हैं यथा पद, तान, विरुद, तान, पाट और स्वर। ध्रुवक, मण्ठक, प्रतिमण्ठक, निसारक, वासक, प्रतिकाल, एकतालिका, यति और भूमरी ये शालग के भेद हैं। चैत, मंगलक, मगमिका, चर्चा, चलिगाट, उत्तरी, दोहा, बहुला, गुरुबला, गीता, गोवि, ईश्वा, कोपी, कारिका, त्रिपदिका और अधा ये सङ्कीर्ण के भेद हैं। गीत प्रबन्ध में अक्षरों के मात्राशुद्धि पुनरुक्ति इत्यादि दोष नहीं होते। गाना बजाना सब दो प्रकार का होता है। एक ध्वन्यात्मक दूसरा रागात्मक

रागालाप चार प्रकार के होते हैं, यथा स्वर प्रधान अर्थात् स्वर के आग्रह से जिसमें ताल की मुख्यता न रहे, दूसरा उभय प्रधान जिस में ताल बराबर रहे और स्वर भी सुन्दर हों, तीसरा शुद्धता प्रधान जिस में राग के शुद्ध रूप रहने का आग्रह हो चाहे माधुर्य्य हो चाहे न हो, चौथा माधुर्य्य प्रधान जिस में राग का शुद्ध रूप कुछ बिगड़े तो बिगड़े पर माधुर्य्य रहे॥

स्वर—षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, धैवत, पञ्चम और निषाद ये सात हैं। मयूर, गऊ, बकरी, क्रौंच, कोकिल, अश्व और हाथी इनके शब्द में क्रम से पूर्वोक्त स्वर निकलते हैं। नासा, कण्ठ, उर, तालु, जिह्वा और दन्त छ स्थान से जो उत्पन्न हो वह षड्ज,(ऋषिगतौ) स्वर की गति नाभि से सिर तक पहुंचे इससे ऋषभ, गन्धवाही वायु की नलिकाओं में वह स्वर पूर्ण हो इस से गान्धार, फिर वह स्वर मध्य अर्थात् नाभि तक प्राप्त हो इस से मध्यम, (धयतिप्रारान् इति धैवत) मध्यम के आगे भी जो स्वरों को खींचे वह धैवत, पूर्व्वोक्त पांचो सुरों को पूर्ण करे वा पञ्चम स्थान मूर्द्धा तक पहुंचे वह पञ्चम, और (निषीदन्तिस्वरा अस्मिन् इति निषादः) स्वरों का जिस में विश्राम हो अर्थात् जिस से ऊंचा और कोई स्वर न हो वह निषाद। इन्हीं सातों सुरों के प्रथमाक्षर* से स रि ग म प ध नि ये सात स्वर वर्ण नियत हुए। षड्ज पञ्चम और मध्यम में चार, ऋषभ धैवत में तीन और गान्धार निषाद में दो श्रुति हैं। सम्पूर्ण स्वर सरिगमपधनि। खाड़व निषाद बिना अर्थात् सरिगमपध चार उड़व ऋषभ और पञ्चम बिना अर्थात् सगमधनि। नाटयनन्तादि संपूर्ण राग सातों सुर से, खाड़व राग छ सुर से और उड़व पांचसुर से गाए जाते हैं। नाम के क्रम से रखने से इनका प्रस्तार होता है और नष्ट उद्दिष्ट मेरु मर्कटी पताका सूची खण्डमेरु इत्यादिकों से इसका विस्तार होता है।

राग—जैसे राम में बंसी के सात रंध्रों से सात सुरों की उत्पत्ति मानते हैं वैसेही रास में १६०८ गोपियों के गाने से सोलह सौ आठ तरह के राग हैं जो एक एक मुख्य से दो सौ चहत्तर तरह के होकर बने हैं। भरत और हनुमान् मत में छ राग भैरव, कौशिक (मालकोस), हिन्दोल, दीपक, श्री और मेघराग, और कल्लिनाथ के मत से छ राग श्री, बसंत, पंचम, भैरव, मेघ, और नटनारायण। पूर्व्व मत में प्रत्येक राग की पांच रागिनी, पर मत में छ रागिनी आठ पुत्र और एक एक पुत्र भार्य्या। अन्य मत से मालव मल्लार श्री

* 'ष', 'ऋ' के उच्चारण की सुगमता के हेतु 'स' 'रि' माना है।

बसन्त, हिंडोल और कर्णाट ये छ राग हैं। मालव की रागिनी धानसी माल सी रामकोरी सिन्धुड़ा भैरवी और आसावरी। मल्लार की बेलावली पूर्वी कानड़ा माधवी कोडा और केदारिका। श्री की गान्धारी शुभगा गौरी कौमारिका बेलवारी और वैरागी। बसन्त की टोड़ी पञ्चमी ललिता पटमञ्जरी गुर्जरी और विभाषा। हिंडोल की मायूरी दीपिका देशकारी पाहिड़ा बराडी और मोरहाटी। कर्णाट की नाटिका भूपाली रामकली गड़ा कामोदा और कल्यानी। इन में बराड़ी मायुरी कोडा वैरागी धानुषी बेलावली और मोरहाटी मध्यान्ह को, गान्धारी दीपिका कल्यानी पूरबी कान्हड़ा आसो गौरी केदारा पाहड़ी मालसी नाटी मायूरी भूपाली और सिन्धुड़ा सांझ को और बाकी सबेरे गाना। राग छओ तीसरे पहर से आधीरात तक। वर्षा में मल्लार और बसन्तपञ्चमी से रामनवमी तक बसन्त और वामन द्वादशी से विजयदशमी तक मालसी यह समय नियत है। बेलावली गान्धारी ललिता पटमञ्जरी वैरागी मोरहाटी और पाहिड़ी (पहाड़ी) यह करुणा में, पूर्वी कान्हडा गौरी रामकीरी दीपिका आसावरी विभाषा बड़ारी और गड़ा यह वीर में, शेष शृङ्गाररस में गाना। वैसेही मालव श्री हिंडोल और मल्लार शृङ्गार में, और बसन्त और कर्णाट वीररस में गाना। यह पूर्वोक्त अन्य मत दक्षिण में प्रचलित है इधर नहीं। कहते हैं कि शिव शारद नारद और गन्धर्व यह चार मत पृथक हैं। इधर हनुमत् और भरत मत मिल के प्रचलित है। हनुमत् मत में प्रथम राग भैरव, उसका ध्यान महादेवजी की भांति, उत्पत्ति शिवजी के मुख से, जाति उड़व अर्थात् धनिसगम यह पञ्चस्वर, ग्रहधैवत, गाने का समय शरद्ऋतु में प्रातः काल, भैरवी बंगाली, बरारी मधुमाधवी और सिन्धवी यह पांच रागनी, हर्ष, तिलकगूड़ा, पूरिया, माधव, बल्लनेह, मधु और पंचम ये आठ पुत्र। कल्लानाथ मत में यह चतुर्थराग, इस की भैरवी, गुर्जरी, आसा, बिलावली, कर्णाटी और बड़हंसा यह छ रागिनी, देवशाख ललित मालकोस बिलावल हर्ष माधव बल्लनेह और मधु ये आठ पुत्र, सोमेश्वर मत से भैरवी गुनकली देवा गूजरि बंगाली और बहुली ये छ रागिनी और गाने का समय ग्रीष्म। भरत मत से ललिता मधुमाधवी बरारी बाड़ाकली और भैरवी यह पांच रागिनी, देवशाख ललित बिलावल हर्ष माधव बंगाल बिभास और पञ्चम ये आठ पुत्र मूहा बिलावली सोरठी कुम्भारी मन्दारी बहुलगूजरी पटमञ्जरी सिरवी यह

राकेश्वर खट वड्हंस और देसकार, [मतान्तर मे हमीर और कल्याण भी] पुत्र भार्या कुम्भा सोहनी शारदा धराया शशिरेखा सरस्वति समा और बैदा। मेघ दोनों मत मे छठां राग, ध्यान श्यामरङ्ग, शोनित खड्ग हस्त, कांति उडम, पञ्चस्वर यथा ध नि स रि ग, ग्रह धैवत, गानसमय वर्षा की रात्रि, रागिनी टङ्क मद्धारी गूजरी भूपाली और देशी, पुत्र जालन्धर मार नटनारायन शंकराभरण कल्याण गजधर गान्धार और सहान, भरत मत से पांच रागिनी मल्लारी मुलतानी देसी रतिवल्लभा और कावेरी, पुत्र यथा कल्नायर बागेश्वरी महाना पूरिया तिलक कान्हरा स्तम्भ शंकराभरण, पुत्र बधू यथा कारनाटी यादवी कलाहनाट पहाड़ी मांझ परज मटभंगी शुद्ध नट । यह छ रागों का वर्णन हुआ। अब और बातों का भी वर्णन करते हैं।

मूर्च्छना वह वस्तु है जो खरज से ऋषभ तक पहुंचनेमें जहां स्वर बदलेगा वहां लगे। यह तो हनुमत् मत मे है। भरत मत से स्वरों के गान में गले का कंपाना मूर्च्छना है। और मतों से ग्राम का सातवें भाग का नाम मूर्च्छना है। षड्ज ग्राम की मूर्च्छना, यथा ललिता मधरमा चित्रा रोहिनी मतङ्गजा सोवीरा। मध्यम ग्राम की मूर्च्छना, यथा पञ्चमी मत्सरी मधु मध्या शुद्धा अन्ता कलावती और तीव्रा। गान्धार ग्राम की मूर्च्छना ७ यथा रौद्री ब्राह्मी वैष्णवी खेदरी सुरा नादावती और विशाला। इन्हीं मूर्च्छनाओं का जहां गीत में विस्तार होता है उन को तान कहते हैं वे ४९ हैं इन्हीं में स्वरों के भेद से कूटतान होती हैं इन मूर्च्छना आ के अनक तीन ग्राम हैं षड्ज मध्यम गन्धार इन तीन ग्रामों में पूर्व दो पृथ्वी पर और अन्त का स्वर्ग में गाया जाता है।

श्रुति वह वस्तु है जो स्वरों का आरम्भ करती हैं और सूक्ष्मरूप से स्वरों में व्याप्त रहती हैं वे ४ षड्ज में ३ ऋषभ में २ गान्धार में ४ मध्यम में ४ पंचम में ३ धैवत में २ निषाद में यही २२ श्रुति हैं। कोमल अति कोमल मसाग तीव्र तीव्रतर से रोति रागों में यथा रीति सुर बरते जाते हैं और जहां सूक्ष्म और स्फुट स्वर लगते हैं वह काकली कहलाती है। लोगों का चित्त रंजन करते हैं इससे इन को राग संज्ञा है और जहां राग रागिनियों के ध्यान रूप क्रिया आदि लिखे हैं उनका आशय यह है कि वैसे अवसर पर वे राग योग्य होते हैं जैसा भैरवी का ध्यान है कि स्नेत बस्त्रा सबेरे शिव पूजन करती है तो जानो कि ऐसे ही सबेरे शिव पूजन के अवसर में इसका गाना उत्तम है।

हमारे प्रबन्ध के पढ़ने वालोंको एकही रागनी का नाम बारंबार कई

रागोंमें देखऔर आश्चर्य होगा । इस में हमारा दोष नहीं यह संगीत शास्
के प्रचार की न्यूनता से ग्रंथों में गड़बड़ होगई है कोई अन्वेषण करने वाला
हुआ नहीं जो ग्रंथकारों को मिला था उन्होंने सुना लिख दिया यह तो
जब अपने गले या हाथ से करता हो और ग्रंथों को भी जानता हो वह ए-
वैर निर्णय कर के लिखे तब यह सब ठीक हो जाय ।

ताल । समय का सूक्ष्म से सूक्ष्म और बड़ा से बड़ा समान विभाग ताल है
विचार करके देखो तो छन्दों की प्रवृत्ति भी ताल ही में होगी । एक
गिरह की लकीर खींचो तो इस बिन्दु से लकीर के उस बिन्दु तक उड़ती हुई
जाने में जो काल लगेगा वह ताल ठहरा और उसी गिरह भर के काल बरा-
बर मोटे जितने सूक्ष्म भाग हैं उन के प्रति भाग पर जो काल लगा वह भी
ताल है। पर ऐसे सूक्ष्म और ऐसे गुरु जिन के बरताव में काल का स्मरण न
रहे वह कुछ काम नहीं आते । सिद्धान्त यह कि गाने के अनुकूल समय का
विभाग ही ताल है नृत्य गान या वाद्य को नियमित काल से उठाना निय-
मित काल पर समाप्त करना उसी नियमित काल को अनेक समान भागों
पर बांट देने की जो क्रिया है वह ताल है । महादेव जी के नृत्य तांडव और
पार्व्वती जी के नृत्य लास्य का प्रथमाक्षर लेकर ताल शब्द बना है, या तल
नाम हाथ की हथेली या पद तल इस का भाव ताल है; क्योंकि प्रायः ताल
विन्यास हाथ या पैरही से होती है, तालों के बनाने को चार मात्रा की क-
ल्पना है, एक नियमित काल की मात्रा होती है । अर्द्ध मात्रा को द्रुत एक
मात्रा को लघु दो मात्रा को गुरु और तीन मात्रा को प्लुत संज्ञा है, चंचत्-
पुट चाचपुट इत्यादि आठ ताल के मुख्य और एक सौ एक गौण भेद सङ्गीत
दामोदर वाले शुभङ्कर ने किये हैं । इन चार मात्राओं पर अंगुल्यादि से संकेत
करके ये ताल बनते हैं और इन्हीं मात्राओं को जहां बीच बीच में छोड़ देते
हैं और काल के समाप्त का चिन्ह बीच में नहीं करते फिर दूसरे तीसरे इत्या-
दि पर चिन्ह करते हैं तो उस बीच में छूटे हुए काल में जहां नियमित मात्रा
समाप्त होती है पर प्रगट नहीं की जाती उसे ख़ा या खाली कहते हैं, एक
नियत काल अन्तिम मात्रा के ताल समाप्त होने पर फिर से वही ताल
प्रारम्भ करने को इन दोनों को मिलता सूक्ष्म जो बीच का एक नियमित
समान काल है वह भी ग अर्थात् ग्राही कहलाता है, चंचत्पुट ताल में

दो गुरु एक लघु और एक प्लुत है, एक एक गुरु लघु और प्लुत चाचपुट में हैं, ऐसे ही सब तालों का प्रस्तार है। जहां मात्रा के काल अनुसार ताल की समाप्ति होती है उस को सम कहते हैं, इन चौंसठ तालों के अतिरिक्त आठ अष्टताल ग्यारह रुद्रताल दश ब्रह्मताल और चौदह इन्द्रताल हैं। रुद्रताल का प्रथम भेद वीरविक्रम। यथा एक मात्रा एक शून्य ऐसी तीन आवृत्ति फिर दो ताल यह वीर विक्रम हुआ। ऐसे ही सब ताल यथा मात्रानुसार जानो। आज कल प्रसिद्ध ताल चौताला तिताला एकताला आड़ा रूपक झपताल इत्यादि हैं।

संगीत के पूर्वोक्त तीन भेद अर्थात् स्वर राग और ताल गले के अतिरिक्त वाद्यों से भी सम्पादित होते हैं; अतएव अब वाद्यों का वर्णन करते हैं। बाजों के चार भेद हैं, यथा तत सुषिर आनद्ध और घन। नए मत से अर्थात् कालानुसार दो भेद और कर सकते हैं, यथा समष्टि और स्वयंवह। तार से जो बजें वह तत यथा वीणादिक। फूंकने से बजे वह सुषिर यथा वंशी इत्यादिक। चमड़े से मढ़े हों वह आनद्ध यथा मृदङ्गादिक। कांसादिक से जो ताल सूचक हों वह घन यथा झांझ आदिक। ये चारों वा तीन वा दो जिस में मिले हों वह समष्टि यथा—हारमोनियम आदि। और जो ताली इत्यादि से बजें वह स्वयंवह यथा अरगन आदि। ये सब वाद्य तीन भेद में विभक्त हैं, यथा स्वर वाही ताल वाही और उभय वाही। तम्बूरादिक स्वर वाही, झांझइत्यादि ताल वाही, वीणादिक उभय वाही। इन चारों में तत में वीणा, सुषिर में वंशी, आनद्ध में मृदङ्ग, और घन में ताल (झांझ) मुख्य हैं, तत यथा अलाबुनी ब्रह्मवीणा किन्नरी लघुकिन्नरी विपञ्ची वल्लकी ज्येष्ठा चित्रा घोषवती जया हस्तिका कुब्जिका कूर्मी शारङ्गी परिवादिनी त्रिशरी शतचन्द्री नकुलौष्ठी ढंसरी उडम्बरी पिनाकी निबन्ध तानपूर सरोद स्वरमण्डल स्वरसमुद्र शुष्कल रुद्र गदावारण हस्तक विलास्य मधुस्यन्दी और घोष इत्यादि। वीणा के तीन भेद हैं यथा वल्लकी पञ्चतन्त्री (विपञ्ची) और परिवादिनी। ध्वनिमाला रञ्जनी घोषवती कण्ठकूजिका और विद्युत् ये वीणाओं के नामान्तर हैं। वीणा के सात भेद और हैं यथा नारद की महती, रौवकी, रुद्री, सरस्वती की कच्छपी; तुम्बरु की कलावती, विश्वावसु की बृहती और चाण्डालों की कण्डोल वीणा अथवा चांडालि (इसका प्रयोजन शवक्रिया के समय पड़ता था)। वीणा के अंग को कोलम्बक, तुम्बा को उपनाह, दण्ड को प्रवाल, मगज के काठ

को ककुभ और प्रसिक और अंगगाम्ना काकलिका कृलिका भेद इत्यादि और वस्तुओं को कहते हैं. सुषिर यथा, वंशी मुरली वेणु (तीनों वंशी के भेद) पारो मधुरी तित्तरी शंख काहला तोमड़ी निपेड़ बुक्का शृङ्गिका सुपटह स्वरनाभि,पावशी शृङ्ग कापालिका चर्मवंश स्वरमाढी (मैनाई) बकगला चर्मदेहा और गलहारा इत्यादि। वेणु रक्तचन्दन श्वेत चन्दन स्वर्ण चांदी तामा लोहा और कठिन पाषाण का होता है परन्तु बांस का सब से उत्तम है.मतङ्ग मुनि के मत से बांसही का वेणु होता है. दस अंगुल का वेणु महानन्द इस का ब्रह्मा देवता, ग्यारह अंगुल का नंद इसके रुद्र देवता, बारह अंगुल का विजय इसके सूर्य देवता और चौदह अंगुल का जय इसके विष्णु देवता. वंशी की फूंक में निविड़ता प्रौढ़ता सुस्वरता शीघ्रता और मधुरता ये पांच गुण हैं और सीत्कार बाहुल्य, स्तब्ध, विस्वर, खण्डित, लघु और असधुर ये छ दोष हैं, तेरह और सतरह अंगुल की वंशी नहीं बनाना इसमें आचार्यों ने दोष माना है, कानी उंगली जा सके इतना बीचका छेद (पोलापन) रहै, यह छेद आरपार रहै पर सिर की ओर किसी वस्तु से पथकद वा वस्त्रनान्तर संयुक्त रहै, सिरे से एक अंगुल वा दो अंगुल छोड कर स्वर का छेद करना फिर पांच अंगुल छोड़ कर सात सुर के सात छेद आधे आधे अंगुल पर बेर के बीज के बराबर करे, दोनों ओर तार वा चर्मतार से वंशी को बाधे और बीच में सिक्क [छींके] स्वर को मधुर और श्रुति उत्पन्न करने को लगावै, अयुक्ति वद्धयुक्ति और युक्ति [अर्थात् छिद्रों को बंद करना खोलना और उससे श्रुति लय तान इत्यादि किञ्चित् बंद करके निकालना] ये तीन अंगुलि क्रिया हैं और अकम्पत्व और सुस्वरत्व ये दो अंगुली के गुण हैं गाने वालों को सहायता देना स्थान देना उन के दोष छिपाना और जिन स्वरों पर गला न पहुंचे वे स्वर निकालने ये चार इस में लाभ हैं, भगवान की तीन वंशी हैं यथा घर में बजाने की १२ अंगुल की मुरली संज्ञक, श्री गोपीजन को बुलाने को १८ अंगुल की वंशी संज्ञक और गऊ बुलाने की एक हाथ की वेणु संज्ञक, इस से ज्ञात होता है वेणु का प्रमाण एक हाथ तक है। आनद्ध में मर्दल अर्द्ध मर्दल मर्दल खण्ड ढलक सुरज ढक्का पटह विंवक दर्पवाद्य घन घन वस्त्र कलाम विकलाम टाकली घण्टाकली झिलाट कलिका गो सुद्री अलावुक्ष आवज विदल्य कठ कमठ भेरी हुडुक कुडुवा भानस् सुरल झली दुक्कली दोंडिगान डमरु तुंबुर टमुकिड्ड कुण्डली स्तक्कु.मणिघट रञ्ज दुन्दुभी

टूटुकी दर्दुर उपाङ्ग खञ्जरीट और दारचह्न ये सब हैं। इन में मर्दल (मृदङ्ग) श्रेष्ठ है. मर्दल खैर के काठ का अच्छा होता है· चमड़े की डोरी से मेढ़ संयुक्त कर के दोनों मुंह मढ़ा कर कसना मढ़ने के पीछे छ महीने तक न बजाना. काठ का दल आध अंगुल मोटा हो· और बाईं पूरी दस या बारह अंगुल चौड़ी हो तथा दहिनी उस से एक या आधी अंगुल छोटी हो· बाईं ओर लौ पिसान को पूरी चिपकाना और दहिनी ओर खरली (खल्ली) की पूरी लगा के सुखा देना, वह खरली—राख गेरू भात और केन्दुक (गोलव, शायद भाषा में केंदुआ कहते हैं) की हो वा चिपीटक (चूड़ा ?) में लौवभौसख (?) मिला कर लगाना। मट्टी का हो तो मृदङ्ग कहलाता है. इस में पाट बिधि पाट कूटपाट और खण्ड पाट ये चार प्रकार के वर्ण हैं और यति उड़ुव अवच्छेद गजर रूपक ध्रुव गलप मारिगोनी नाद कथित प्रहरन और हन्दन ये बारह प्रबन्ध हैं। घन में करताल कांस्यताल कम्बिका जयघण्टा शुक्तिका पटवाद्य पट्टातोघ घर्घर दंदा झांझा मञ्जीर कर्तरी उड्डुर काष्टताल प्रस्तरताल दन्तताल जलतरङ्ग तालतरङ्ग पात्रतरंग त्रिकोणघण्टा ढोलक इत्यादि हैं। घन के दो भेद हैं· अनुरक्त वह जिन में गीतों का अनुगमन हो और विरक्त वह जो केवल ताल दें. लड़ाई में बीरों की गरजन और ये चार वाद्य बजते हैं इससे लड़ाई को पञ्चवाद्य संज्ञा है· यह वाद्यों का साधारण वर्णन हुआ। ऐसेही अनगिनत वाद्य हैं जो अब नाम मात्रावशेष हैं उन के रंग रूप की किसी को खबर नहीं।

सङ्गीत का चौथा अङ्ग नृत्य है,ताल मान रस भाव हास विलास वाद्यादि संयुक्त अंग विक्षेप का नाम नृत्य, इस के दो भेद तालायित नृत्य और भावायित नृत्त, नृत्य मधुर हो तो लास्य और उत्कट हो तो तांडव कहलाता है। तांडव के पेरनी और बहुरूप ये दो भेद हैं जिस में अङ्ग बहुत चलें पर अभिनय थोड़ा हो वह पेरनी इसी को देशी भी संज्ञा है, जहां अभिनय बहुत हो और रूपान्तर धारण इत्यादि किया हो वह बहुरूप [लास्य] के छुरित और यौवत दो भेद हैं, जहां नायिका नायक रस पूर्ब्बक भाव परस्पर दिखाते चुम्बन इत्यादि करते नृत्य करें वह छुरित और जहां नटी वा नटी वेषधारी सुन्दर पुरुष नाचें वह यौवत, हाथ पैर सिर नेत्र का चलाना, मुड़ना, फिरना, भाव, कमर लचकाना, घुंघरू बजाना, गाना, बस्त्र उठाना और घुमना इन सब नृत्य के अङ्गों में जिस को अभ्यास न हो और जो

अनुसार भी ये बातें यहां लिखी गई हैं। इसको लिखकर प्रकाश करने में हमारा कुछ प्रयोजन है। शास्त्र दो प्रकार के होते हैं एक अदृष्टवाद दूसरे दृष्टवाद अदृष्टवाद परलोक इत्यादि के ज्ञान में मनुष्य को तर्क छोड़ कर केवल शास्त्र अवलम्बन करना चाहिए, दृष्टवाद में शास्त्रों के और बुद्धि के तथा अपने और दूसरों के अनुभव के अविरुद्ध जो बात हो वह माननी चाहिये, सङ्गीत शास्त्र दृष्टवाद है, इस में शास्त्र के और अपने मत के अविरुद्ध मनुष्य को बरतना उचित है। अब देखिए कि सङ्गीत की क्या दशा हो रही है। कितनी रागिनियों का गाना कौन कहे किसी ने नाम भी नहीं सुना है, जिनको मत भेद से दो दो चार चार रागों की रागिनी हैं, यह क्या ? केवल अन्ध परम्परा, हम यह पूछते हैं कि प्रथम गाने में चार मत होनेही का क्या प्रयोजन है ? एक भैरव राग सारा संसार एक सार क्रम और रीति से गावैं, यदि कहो मतों के भेद से सारी भैरव में भेद है तो उस में एक को भैरव लिख रक्खो बाकी या तो किसी दूसरे राग में आप ही मिलें निकलेंगे यदि न मिलें निकलें उसका दूसरा नाम रक्खो ऐसे ही हजारों बातें हैं, कोई व्यवस्था वा नियम नहीं। जितने इस विद्या के जानने वाले हैं अपने अभिमान में मस्त हैं। कोई ऐसा नियम नहीं कि जिस के अनुसार सब चलें। यही कारण है कि रागों के अक्षर पिघलने इत्यादि प्रभाव लोप होगए। हा ! किसी काल में इस शास्त्र का ऐसा कठिन नियम था कि पुराणों में बराबर लिखा है कि ब्रह्मा ने अमुक गन्धर्व्व को ताल से वा स्वर से चूकने से यह शाप दिया शिवजी ने यह शाप दिया इन्द्र ने यह शाप दिया यहां सङ्गीत शास्त्र अब है कि कोई नियम नहीं। शास्त्र असल सब डूब गए। कुछ जैनों ने नाश किये कुछ मुसलमानों ने। मुसल्मानों में अकबर और मुहम्मदशाह को इस का ध्यान भी हुआ तो बड़े २ गवैये मुसल्मान बनाए गए जिस से हिन्दुओं का जो और भी रहा सहा टूट गया। इसलिये सब विद्या मिट्टी में मिली। इस में मुख्य कारण यही हुआ कि केवल गुरुमुख श्रुति पर यह विद्या रही किसी ने कभी इस को ऐसी सुगम रीति पर न लिखा कि उसे देख कर यही काम दूसरे कर सकें। धन्य ! राजा यतीन्द्रमोहन ठाकुर और शौरीन्द्रमोहन ठाकुर जिन्हों ने इस काल में इस विद्या की बड़ी ही वृद्धि की। श्रीक्षेत्रमोहन गोस्वामी ने इस विषय में नियम भी बनाए हैं और बाबू कृष्णधन बानुर्जी ने एक सितार शिक्षा भी छपवाई है। इधर के लोगों ने इस विषय में बहुत

शुरू किया है पर इधर अभी कुछ नहीं हुआ। हमारे काशी के बाबू महेश-चन्द्र देव ने सितार बीन और तानपूरा बनाने में जैसे परिश्रम करके खूंटी तुमा इत्यादि में नई उपयोगी बात निकाली हैं वैसेही और सब जानकार लोग मिलकर एक बेर इस लुप्त हुए शास्त्र का भली भांति मथन करके इस-को एक सनियम उज्ज्वल परिपाटी बना डालें। नहीं तो यह शास्त्र कुछ दिन में लोप हो जायगा। और हमारे हिन्दुस्तानी अमीरों को चाहिए कि वाजिद-अली के सुखचन्द्र के सुन्दरताही पर इस विद्या को इति श्री न करें कुछ आगे भी बढ़ें। हमने इसमें जो बातें लिखी हैं उनको सबके खंडन मंडन पूर्वक निर्णय करने के वास्ते यहां प्रकाश करते हैं। जो लोग जानकार हैं वे आनन्द से जो इसमें अयोग्य हों उसका खण्डन करें, जो बात हमारे समझ में न आई हो उसे समझावें, और जो योग्य हो उसका अनुमोदन करें। इस विषय में जो कोई पत्र भेजैगा उसे हम बड़े आनन्द पूर्वक प्रकाश करेंगे। आशा है कि हमारापरिश्रम व्यर्थ न जायगा और इस विद्या के रसिक लोग हमारी बिनती के अनुसार इसके उद्धार का उपाय शीघ्र ही करेंगे॥

Registered under Act XX of 1847.

हिन्दी भाषा।

—:०:—

हिन्दी भाषा के विभाग, देश देशान्तर की भाषा की कविता आदि का उदाहरण, मिश्रित और शुद्ध हिन्दीका वर्णन।

भारत भूषण भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र लिखित

जिस को हिन्दी भाषा के प्रेमी तथा रसिकजनों के मनो-विलास के लिये, क्षत्रियपत्रिका सम्पादक श्री

म॰ कु॰ बाबू रामदीन सिंह ने

प्रकाशित किया।

पटना—खड्गविलास प्रेस—बांकीपुर.

बाबू साहिबप्रसाद सिंह ने मुद्रित किया.

१८८०

दाम ।) आना

हिन्दी भाषा।

भाषाओं के तीन विभाग होते हैं यथा घर में बोलने की भाषा, कविता की भाषा और लिखने की भाषा। अब पश्चिमोत्तरदेश में घर में बोलने की भाषा कौन है यह निश्चय नहीं होता क्योंकि दिल्ली प्रान्त के वा अन्य नगरों में भी खत्रियों वा पछांहीं अगरवालों वा और पछांहीं जातियों के अतिरिक्त घर में हिन्दी कोई नहीं बोलते बरंच यहां तो कोस कोस पर भाषा बदलती है। इसी बनारस में जो बनारस के पुराने रहवासी हैं उनके घर में विचित्र विचित्र बोलियां बोली जाती हैं जैसा पुरबियों की बोली तो आईला जाईला प्रसिद्ध ही है परन्तु यहां के पुराने निवासी कसेरे लोग 'बाटः' शब्द का बहुत प्रयोग करते हैं जैसा 'आवत हई' के स्थान पर 'आवत बाटी' 'का करत होवः' वा 'का करलः' के स्थान "का करत बाट्यः वा बाटी वा बाटः"। इस दशा में बनारस की मुख्य बोली यह और वह बोली है जिसका उदाहरण में नं० ७ कलकत्ते की शोभा में मिलेगा। अर्थात् वह पुरबिये बनियों की बोली है० बरंच यह बोली यहां के कई परम प्रसिद्ध धनिकों के घर में बोली जाती है। परन्तु इन दोनों बोलियों को छोड़ कर बनारस में 'बदमाशों' की भाषा अलग ही है जिसमें कितने ऐसे व्यर्थ शब्द हैं जिनका न सिर है न पैर है जैसा 'झांझू गोजर' इत्यादि० बरन ये जिस ईकारान्त (वा कभी कभी ओकारान्त वा कदाचित् आकारान्त) शब्द के पीछे 'क' लगा देंगे उसका अर्थ गाली होगा। इसका विशेष वर्णन हम काशी की दशा वर्णन में लिखेंगे पर यहां इतना ही समझ लेना चाहिए कि इन की भाषा भी अब काशी की भाषा में स्वतन्त्र भाषा हो गई। कोई कहते हैं कि काशी की सब से प्राचीन भाषा वह है जो डोम लोग बोलते हैं क्योंकि येही यहां के प्राचीन वासी हैं और उन की भाषा में प्रायः दीर्घमात्रा होती हैं। जो हो यह तो [illegible] है कि जो यहां के शिष्ट लोग बोलते हैं वह परदेशी भाषा है और [illegible] से आई है। काशी के उस पार ही राम नगर में यहां की बोली से कुछ विलक्षण बोली बोली जाती है और वह मिर्जापुर की भाषा से बहुत मिलती है। ऐसे ही पश्चिमोत्तर देश में अनेक भाषा हैं पर उन में ऐसे नगर थोड़े हैं जिन में आबालवृद्ध वनिता सब खड़ी भाषा बोलते हों अतएव यद्यपि काशी ऐसे पूर्व्व प्रदेशों की मातृ भाषा वा घर में बोलचाल की भाषा हिन्दी

नाग भाषा की कविता।

चकलिय परिरम्भ विब्रम माइं, चउलि चचुंबण दम्बराइं दूरम् ।
चघडिय घण ताडणाइं णिचं, पमह चणंग रइंन मोहनाइं ॥ १ ॥

चन्द की कविता में ऐसे शब्द बहुत हैं। अब तक जोधपुर उदयपुर के कवि 'नचिय' 'वढ़िय' इत्यादि शब्द का बहुत प्रयोग करते हैं और इसी में बड़ा पाण्डित्य समझते हैं।

चन्द के रायसे का मंगलाचरण "चादौ नम्य प्रनम्य नम्य गुरयं वानीय वन्दे पदं सिष्टं धारन धारय वसुमती लच्छीस संचारयं" इस में संस्कृत की वाणी बहुत है। किन्तु कहीं कहीं चन्द भाषा ही बहुत रक्खी है। जैसा—

'मचि कीच उगालन इद मंझे, दिसि देव कैलासन दावदरे।'

पंजाबी भाषा की प्राचीन कविता।

मांडायारहै वह फुलगुलावदा। और वी गुलनार्रांड़ी ऐहे कोई नहीं उस ज्वावदा॥ मरदी लीता घायल करदा यह दिल सुझ बेताबदा। कोई मिलावे रसिक बिहारी नूं है यह कम्म सवाबदा॥ इत्यादि रसिक बिहारी रसिकप्रीतम चानन्दघन नागरीदासादिकों की कविता प्रसिद्ध है॥

पंजाबी नई कविता।

मैंडे सुखड़े पर घोल घुमाइयां। सांवलिये साजन छलबलिये तुझ पर बनबन जाइयां॥ हुई दिवाणी मोहन दा जो इश्क जाल गल पाइयां। हरीचन्द दिल हंस हंस लीता चब यह बेपरवाइयां॥

परन्तु पंजाब की देश कविता से यह कुछ विलक्षण है यही परिपाटी है।

माड़वारी प्राचीन कविता।

चूड़ा म्हारो रंग री राज चूड़ा म्हारो रंग। इत्यादि चनेक प्रसिद्ध हैं।

माड़वारी नई कविता।

म्हामाजू देखो चाजे है यारो रसियो। हिंडोरना कौन झूलेयारे लार। इत्यादि

उर्दू भाषा मिली प्राचीन कविता।

'नन्द के फरजन्द भया बेटीभई भानकै वाह वाह'

'फरजन्द नन्द जी का दिल मेरे भावता है' इत्यादि कीर्त्तिन मिलते हैं

श्रीरामभक्त तुलसीदासजी की कविता।

'फिरि चावब एहि विरियां काली
बर बौराह बरट चमभारा'

नई कजली।

गुंडवा झूमत आवै दिहले महावीरिया ना। इत्यादि।

इस नष्ट कजली को प्रायः स्त्रियां आपही बना लेती हैं परन्तु पुरुषों में भी इस के कवि होते हैं सांप्रत एक तंबाखावाला है उसने अनेक कजली बनाई हैं परन्तु इन सबों में पंडित बेणीराम नामक एक ब्राह्मण थे उनने अच्छी कजली बनाई है*।

बेणीराम की कजली

काहे मोरी सुधि बिसराये रे बिदेसिया। तड़पि तड़पि दिन रैना गंवायो रे काहे मोसे नेहिया लगाये रे बिदेसिया अपने तो कुबरी के प्रेम भुलाने रे। मोहे लिख जोग पठाये रे बिदेसिया जिन मुख अधर अमी रस पाये रे तिन विष पान कराये रे बिदेसिया। कहैं बेनीराम लगी प्रेम कटारी रे उधो जी यो ज्ञान भुलाये रे बिदेसिया।

बैसवारे की कविता।

कटाओ बालम बांसवा रे। छवाओ बालम बांगला रे। इत्यादि।

बलिया भोजपुर की ठेंठ बोली में अनूठी कविता।

जैसन हमनी के जिला के कलकटर, राबरट साहिब के कदम देखाइलहा। ऐसन हाकिम दुआवा देस दिस केहू, हमनी का होस में तो आजुले न आइलहा॥ केवारा बखरा खानापुरी कै मोकदिमा में ऐसने सरब सुख सबका भेंटाइलहा। कब सोनबर्सा में जलसा के साथ भला ऐसे दवाखाना खोलि औषधी बटाइलहा॥ १॥

सुनिला जे हमनी से अतना परेम कइ सकले इहां का अब एजनी से जाइबि। इहे सगो हमनी के बड़ दुख लागता जे, इहां का सरीखे अंगरेज कहां पाइबि॥ इहां का तो अपना मुलुक अब जाइ भले, अपने विलाइती में मिलि जुलि जाइबि। हमनी का हाय जोरि २ के मनाइले जे बलिया दुआवा के बिसरि जनि जाइबि॥२॥

(मिस्टर रोज़ साहिब नये कलेकटर के प्रति)

हमनीका बलिया दुआवा के रहनिहार रैयत हजूर के कदम तर बानीजा। हमनी का सोझे २ बात बतिआई, न तो हिन्दुई न फारसी न

* सबसे अच्छी कजली महाराजाधिराज कुमार लालखड्ग बहादुर मल्ल की है "सुधानुन्द" नामक पुस्तक देखो।

इसी चाल की अन्य कवियों की कविता।

'संग न उड़ाई भंवर अस घटपट।' इत्यादि प्रसिद्ध हैं।

अकबर के काल से पहिले की मुहम्मद मलिक जाइसी की कविता।

सखिन रच्य पिउ संग हिंडोला, हरियर भुंम कुसुंभी चोला।
जिउ हिंडोल अस डोलै मोरा, विरह डोलाइ देत झकझोरा॥
भुआ काल छोड़ सैगा पीऊ, पीऊ न जात जात वर जीऊ॥

इन की पीछे के काल की कबीर की कविता।

जिन ढूंढा तिन पाइयां, गहरे पानी पैठ।
मैं बौरी डूबन डरी, रही किनारे बैठ॥

कजली की कविता।

कजली की कविता बड़ी विचित्र होती है इसके उदाहरण के पूर्व हम इस नष्ट वस्तु की कुछ उत्पत्ति भी लिखते हैं। कन्तित देश में गहरवार छत्री दादूराय नामक एक राजा हुए और माड़ा विजैपूर इत्यादि देश में उनका राज था विन्ध्याचल देवी के मन्दिर के नाले के पास उनके टूटे गढ़ का चिन्ह अब तक मिलता है उन्होंने चार भैरवों के बीच में अपना गढ़ बनाया था और वह अपने राज में मुसल्मानों को गंगा जी नहीं छूने देते थे, उसके देश में अनावृष्टि हुई और उसने उसके निवारणार्थ बड़ा धर्म किया और फिर वृष्टि हुई इसी में उसकी कीर्ति को कन्तित की स्त्रियों ने उसके मरने और उसकी रानी नागमती के सती होने पर एक मनमाने राग और धुन में बांध कर गाया इसी से उसका नाम कजली हुआ। कजली नाम के दो कारण हैं एक तो उस राजा का एक बन था उसका नाम कजली बन था दूसरे उस तृतीया का नाम पुराणों में कज्जली तीज लिखा है जिसमें यह कजली बहुत गाई जाती है।

उसकी कीर्ति में ग्रामीणों ने उसी काल में ये छन्द बनाए थे।

कहां गए दादुरैया बिनु जगमून। तुरकन गांग नुहाता पिनु अरजून॥

पुरानी कजलियों का उदाहरण।

'पिय बिनु पीयर भइल्यूं रे जस पनार की पानी॥
अटरिया के दरवजवां हो नथिया ऐसी दिखाए लोय।
र कहो मोरे आरे सैनी से गथिया टूटे जाय॥

नई कजली।

गुंइया झूमत आवै दिखले महावीरिया ना। इत्यादि।

इस नष्ट कजली को प्रायः स्त्रियां आपही बना लेती हैं परन्तु पुरु में भी इस के कवि होते हैं सांप्रत एक पंखावाला है उसने अनेक कजली बनाई हैं परन्तु इन सबों में पंडित बेणीराम नामक एक ब्राह्मण थे उन अच्छी कजली बनाई है*।

बेणीराम की कजली

काहे मोरी सुधि बिसराये रे बिदेसिया। तड़पि तड़पि दिन रैना गं यो रे काहे मोहि नेहिया लगाये रे बिदेसिया अपने तो कुबरी के प्रेम भुल ने रे। मोहि लिख जोग पठाये रे बिदेसिया जिन मुख अधर अमो पाये रे तिन विष पान कराये रे बिदेसिया। कहैं बेनीराम लगी प्रेम कटा रे ऊधो जी को ज्ञान भुलाये रे बिदेसिया।

बैसवारे की कविता।

कटाओ बालम बांसवा रे। छवाओ बालम बांगला रे। इत्यादि

बलिया भोजपुर को ठेंठ बोली में अनूठी कविता।

हैमन हमनी के जिला के कलकटर, रावरट साहिब के कदम देखाइलह हिमन हाकिम दुआवा देम हित केहू, हमनी का होस में तो आजुले आइलहा॥ केवारा सख्त खानापुरी के मोकादिमा में हेमने सरव स मबका भेंटाइलहा। कब सोनबर्सा में ललमा के साथ भला ऐसे दयाखा खोलि औषधी बटाइलहा॥ १॥

सुनिला जे हमनी से अतना परेम कइ लगले इहां का अब एजनी जाइबि। इहे एगो हमनी के बड़ दुख लागता जे, इहां का सरीखे अंग कहां पाइबि॥ इहां का तो अपना मुलुक अब जाइ भले, अपने बिलाइ में मिलि जुलि जाइबि। हमनी का हाथ जोरि २ के मनाइले जे अमि दुआवा के बिसरि जनि जाइबि॥२॥

(मिसटर रोज़ साहिब नये कलेकटर के प्रति)

हमनीका बलिया दुआवा के रहनिहार रैयत हजूर के कदम वागीला। हमनी का मोसे २ बात बतिआई, न तो हिन्दुई न फारसी

* सबसे अच्छी कजली महाराजाधिराज कुमार मानसिंह बहा मह की है " शृंगारकुन्द " नामक पुस्तक देखो।

अंगरेजी जानीजा । जैसे सरकार उपकार करे हमनी का, तैसने हजूर के हाकिमो का मानीजा । हमनी के मलिका के ऐसन निमाफ होवे जौना से साहबो के नेकिये सराहीजा ॥ ३ ॥

देखि देखि चालु चालि हाकिम के हालि चालि, हमनी का सुख होके मन में समाइले । राम करे ऐसने नियार बदमास रहें, जेकरा भरोसे सभे सुख से बिताइले ॥ जेकरा से बड़ बड़ बदमास हारि गइलें, हमरा मुलुक रहि रैयति कहाइले । धनि महारानी विकटोरिया के राज बाढ़े, बुझि बुझि बुधि बल बलि बलि जाइले ॥ ४ ॥

जेकरा मुलुक में कानून का निमाफ से, समान दीलें हमनी का हक पद पाइले । जेकरा परसाद से सवारी रेल गाड़ी चढ़ि, थोरे थोरे दाम बड़ी दूरि देखि धाइले ॥ जेकरा परतापे अब तार में खबर भेजि, सगरे कहाँ कहाँ के हालि जानि जाइले । सेकरा के राम करे रोजरोज राज बाढ़े, बुझि बुझि बुधि बल बलि बलि जाइले ॥ ५ ॥

हमनी के जे हवे से सभे सरकार हवे, साहेबे का किरिया से हमनी का रहीले । साहेबे का छोह से सकल सुखतन्त हवे, हमनी का दुख सुख साहेबे से कहीले ॥ हमनी के जब कौनो सुख में संकेत होखे, तब सरकार के सरन सभे गहीले । साहेबे का दया से जे होखे से त होखे नात, हमनी का केकरा से कहीं सभे सहीले ॥ ६ ॥

हमनी का भागे सरकार एने आइलुहा जे, अब तें हमनियें के निमन मनावता । हमनी का हित से सुसील सरकार उपकार कइ, केतनान मसिला बनावता ॥ हमनी का कारने सरब उपदेस देइ, रैअति के रहनी के रहता बतावता । हमनी के देस के कुदसा दुख देखि देखि, हमनी का देसे देवनागरी चलावता ॥ ७ ॥

जब सरकार सब उपकार करते बा, तब अब हमनी के कवन हरज बा । हमनी का साहेब से उतिरिन ना होइबि, हमनी का माथे सरकार के करज बा ॥ आगां अब अबरू कहां ले कहीं मलिके से, अइसे त साहेबे से सगर गरज बा । उरदू बदलि देवनागरी अछर चले, इहे एगो साहेब से ए घरी अरज बा ॥ ८ ॥

हमार ॥ गैया छोड़ सबै कोई खेवै उमिरिया कोई न खेवनहार ॥

तुमरी की नई कविता। *

बादर पिया आए न सेजिया मोर । कौने सौतिनिया को घोर । सगरी रैन मोहि तड़पत बीती इतने में हो गई भोर ।

बंगभाषा की कविता।

बंग भाषा अब हिन्दी से बिलकुल बिलक्षण है यह प्रत्यक्ष है। पूर्व काल के बंगभाषा के कविगण की जो भाषा है यह बिलकुल ब्रजभाषा ही है। बंगाली विद्वानों में इस विषय में अनेक वादानुवाद है किन्तु हम को ऐसा निश्चय होता है कि उन कवियों ने ब्रजभाषा ही में कविता करने की चेष्टा की हो तो क्या आश्चर्य है। कविकङ्कण, चण्डी, विद्यापति, गोविन्ददास इत्यादि इन के प्राचीन कविगण की भाषा वर्तमान ब्रजभाषा और मैथिली से बिकुल मिली हुई है। यह कोई कविता पांच सौ वर्ष के ऊपर की नहीं किन्तु अन्य काल जिसने भाषा का अब इतना रूपान्तर कर दिया। इन्हीं प्राचीन कवियों में से गोविन्ददास की कविता कौतुकार्थ यहां प्रकाश की जाती है। इस कविता में एक अपूर्व और सहज माधुर्य ऐसा है कि अनुभव में बड़ा आनन्द होता है।

विहागड़ा—ए धनि आंचर बदन छिपाउ। लुबधल मधुप चकोर विधुन्तुद चमत चमत चलि जाउ॥ सुख मण्डल किय शरद सरोरुह भालहि अटमिक चन्द। मधुरिपु भरम भरम याहा ऐछन ताहे कि गनिय मतिमन्द॥ जनि फड़ गरबे पानी यज्ञे वारब चो यल कमल चंजोर। नहिं नख चांद भरम भरे ऐछन ततहि पड़ल जनि भोर॥ भौं धनुया किय सुतनु धुनायसि यहु सर गिरिधर कांप। सो किय अतनुपतग सिरडारेसि गोविन्ददासहिय ताप॥१॥

श्रीमतीर आप्तदूती।

धनाश्री सूहइ।

कांचन गोरि भोरि हृदावन खेलइ सहचरि मेलि। सुख दिठि अमिय गरल तनु लारल तेइ खने श्यामरि भेलि॥ माधव सो अविचल कुल रामा। सरमइ भोई रोइ दिन यामिनि सुनि सुनि तुय गुन गामा॥ ध्रु०॥ गुरुजन अवुध सुगुध मति परिजन अलखित विषम वियाधी। कि करब धनि मनि

---

* महाराजाधिराज कुमार लालखड्ग बहादुर मल्ल कृत "पियूषधारा" में अनेक प्रकार की तुमरी है।

रंगरेजी भागीजा । जैसे सरकार उपकार करे हमनी का, तैसने हजूर के हमनियों का मानीजा । हमनी के ममिमा में ऐसन निसाफ होखे जौना में साहबो के भेकिये मन्नानीजा ॥ ३ ॥

देखि देखि चारु चालि हाकिम के चालि चालि, हमनी का दूस होके मन में मनाइले । राम करें ऐसने नियाई बदमाह रहें, जेकरा भरोसे सभे सुख से बिताइले ॥ जेकरा से बड़ बड़ बदमाह हारि गइलें, हमरा मुलुक रहि रैयति कहाइले । धनि महारानी विकटोरिया के राज बाढ़े, बुझि बुझि बुधि बल बलि बलि जाइले ॥ ४ ॥

जेकरा मुलुक में कानून का निसाफ से, सवान दीले हमनी का हक पद पाइले । जेकरा परसाद से सवारी रेल गाड़ी चढ़ि, थोरे थोरे दामे बड़ी दूरि देखि आइले ॥ जेकरा परतापे अब तार में खबर भेजि, लगले कहां कहां के हालि जानि जाइले । सेकरा के राम करें रोजरोज राजबाढ़े, बुझि बुझि बुधि बल बलि बलि जाइले ॥ ५ ॥

हमनी के जे हवे से सभे सरकार हवे, साहेबै का किरिया से हमनी का रहीले । साहेबे का कोह से सकल सभ्रान्त हये, हमनी का दुख सुख साहेबै से कहीले ॥ हमनो के अब कौनो सुख में संकेत होखे, तब सरकार के सरन सभे गहीले । साहेबै का दया से जे होखे से त होखे नात, हमनी का केकरा से कहीं सभे सहीले ॥ ६ ॥

हमनी का भागे सरकार एने आइलुहा जे, अब तें हमनियें के निमन मनावता । हमनी का हित से सुसील सरकार उपकार कइ, केतनान समिता बनावता ॥ हमनी का कारने सरब उपदेस देइ, रैअति के - रहहो के रहता बतावता । हमनी के देस के कुदसा दुख देखि देखि, हमनी का देसे देवनागरी चलावता ॥ ७ ॥

जब सरकार सब उपकार करते बा, तब अब हमनी के कवन हरज बा । हमनी का साहेब से छतिरिन ना होइबि, हमनी का माथे सरकार के करज बा ॥ आगां अब अबहू कहां ले कहीं मलिके रे, अइसे त साहेबै से सगर गरज बा । उरदू बदलि देवनागरी अछर चले, इहे एगो साहेब से ए घरी अरज बा ॥ ८ ॥

हमनी की पुरानी कविता ।

हमार ॥ मैया छोड़ सबै कोई खेवै उमिरिया कोई न खेवनहार ॥

ठुमरी की नई कविता । *

कादर पिया आए न सेजिया मोर । कौने सौतिनिया की ओर ।
सगरी रैन मोहि तड़पत बीती इतने में हो गई भोर ।

वंगभाषा की कविता ।

वंग भाषा अब हिन्दी से बिलकुल विलक्षण है यह प्रत्यक्ष है। पूर्व काल के वंगभाषा के कविगण की जो भाषा है यह बिलकुल व्रजभाषा ही है । वंगाली विद्वानों में इस विषय में अनेक वादानुवाद है किन्तु हम को ऐसा निश्चय होता है कि उन कवियों ने व्रजभाषा ही में कविता करने की चेष्टा की हो तो क्या आश्चर्य है । कविकङ्कण, चण्डी, विद्यापति, गोबिन्ददास इत्यादि इन के प्राचीन कविगण की भाषा वर्तमान व्रजभाषा और मैथिली से विकुल मिली हुई है । यह कोई कविता पांच सौ वर्ष के ऊपर की नहीं किन्तु धन्य काल जिसने भाषा या अब इतना रूपान्तर कर दिया । इन्हीं प्राचीन कवियों में से गोबिन्ददास की कविता कौतुकार्थ यहां प्रकाश की जाती है । इस कविता में एक अपूर्व और सहज माधुर्य्य ऐसा है कि अनुभव में बड़ा आनन्द होता है ।

विहागड़ा—ए धनि आंचर बदन छिपाउ । सुबधल मधुप चकोर विधुन्तुद धनत धनत चलि जाउ ॥ मुख मण्डल किय शरद सरोरुह भालहि अटमिक चन्द । मधुरिपु भरम भरम याहा ऐक्षन ताहे कि गनिय मतिमन्द ॥ जनि कह गरवे पानी थले सारब भो थल कमल अंजोर । नहिं नख चांद भरम भरे ऐक्षन ततहि पड़त जनि भोर ॥ भौं धनुया किय सुतनु धुनायसि यहु सर गिरिधर कांप । सो किय अतनुपतग सिरडारेसि गोबिन्ददास हिय ताप ॥१॥

श्रीमतीर आप्तदूती ।

धनाश्री सूहइ ।

कांचन गोरि भोरि वृन्दावन खेलइ सहचरि मेलि । तुय दिठि अमिय गरल तनु जारल सेइ धने स्यामरि भेलि ॥ माधव सो अविचल कुल रामा । मरमइ भोई रोइ दिन जामिनि सुनि सुनि तुय गुन गामा ॥ ध्रु० ॥ गुरुजन अधुध सुगुथ मति परिजन अलखित विपम वियाधी । कि कारव धनि मान

* ११२१।   २१५९ मन्न कृत " पियूषधारा "

टप्पा ।

अब क्या सोचत मूढ़ मदाना ।

हित सुत नारि ठामहिं रहिहैं, धन सम्पति के कौन ठिका
माया मोहक जाल पसाओ, फेरि पयानक क्या पछता
वास आपनो इतहि बंधायो, नात लगायो बिबिधि बिधा
दूत बुलावन आए द्वारा, भीड़ बिपत मैं साथ ठठा
कहा करौं कछु बस नहिं मेरा, सुध बुध यहि अवसर बिसरा
जान अधम ... छोरे टेरत, नाथ दिखावहु प्रेम अपा

श्रीमान "क्षत्रियपत्रिका" के प्रतिष्ठित म्यानेजर बाबू रा
सिंह जी समीपेषु !

यथायोग्यानन्तर प्रार्थी हूं कि मैंने भानु सिंह से आप की
समाचार सुना है, और यह भी सुना है कि दो तीन महीने गत हु
ने कोई मनोहर और उत्तम हिन्दी पत्र निकाला है, मैं ग्राहकत
करता हूं उचित है कि इस के मूल्य का व्योरा मुझे लिखिये कि
द्वारा इसको भेज दूं। इन दिनों मिश्र देश से जो सेना आई है उस
ईद मैं ने जहां तक अपनी आंखों से देखी है वा लोगों से हाल सु
का ठीक समाचार बिना न्यूनाधिक किये पाठकों के अवलोकना
हूं, यदि आप उचित जाने पत्रिका में इसे स्थान दान कीजिये, औ
यह भी आशा रखता हूं कि इसे भली भांति देख कर जहां कहीं
हो क्षमा कीजिये और सुधार दीजिये। यदि इसे कृपापूर्वक इसे स्था
दे तो मैं बाधित हूंगा, नहीं तो दूसरे पत्र के सम्पादक के पास भेज
मैं संस्कृत और बंगाली भाषा पढ़ाता हूं अतएव हिन्दी भाषा देखने
काम नहीं मिलता, यद्यपि इस को लालित्य का प्रेमी हूं पर अभ्य
क्या हो सका है ? मेरा लेख जिस पत्र में छपै उस की दो कापियां
मुझ को भेज दीजिये।

२० नवम्बर १८८२ ई०
बेलियल कौलिज, औक्सफोर्ड

आप का मित्र
जी० एफ० निकल० एम

G. F. NICHOLL, M. A.
Balliol College Oxford,
Professor of Arabic etc.
Professor of Sanskrit and Persic
King's College London.

मिश्र-देशीय युद्ध के महावीरों की परीक्षा।

आज दो पहर के समय श्रीमती महारानी ने उस अङ्गरेजी सैन्य दल
ो परीक्षा की, जो अभी मिश्रदेश हो आये हैं। बड़े तड़के आकाश में कु-
ासा ऐसा ठोस और गाढ़ा बंध रहा था कि दृष्टि कैसी ही तीक्ष्ण हो किसी
प्रकार वा जान पहचान की चिन्हानी नहीं पहचानी जाती। दिन चढ़ते २
रज भी किरणरूपी सेना ले कर उस अन्धकार रूपी दैत्य का साम्हना करने
ागा। दो पहर के समय दृष्टि की शक्ति बढ़ने लगी और कुहरे की फौज ल-
ने से हाथ धो बैठी, पर ठंढ बहुत पड़ने लगी। राजधानी में महाराणी के
ा पहुंचने से पहर भर पहले स्त्री पुरुषों की बड़ी भीड़ सेंट जेमयार्क में और
ुच के कूचों में के पहरूओं पर टूट पड़ती थीं। केवल लण्डनीय पुलिस और
लंटीय दलों का कवायद देख देख जी बहलाती रही। वुलंटीय दलों ने
ाके सिपाहियों की भांति चौकी दे कर ऐसी शोभा दिखाई कि उन की सु-
ाबि पर सभी प्रशंसा कर रहे। राजधानी के आसपास के देखने वाले उत्क-
ण्ठित हो कर तेलेलकबीर और कसामीन के महावीरों की बाट जोहते रहे।
बापस में उन्हीं के बल विक्रम का चर्चा रहा। इस में वे आ निकले। सभों की
आंखें ठण्ढी हुईं। जय जय की ध्वनि आने लगी। योंहीं स्टेशन के भी बड़े २
ाभापति पहुंचते ही प्रेमीगण जय हो जय पुकारते हैं। यहां के देखने वालों
ार तो यह बात गई अब इधर की सुनिये।

कुवेपिकडिलोपेलमेलसेंटजेम्स और पार्लिमेंट में गाड़ियों की कैसी श्रेणी
ी बन्ध रही है। कभी बड़ी बेग से चलती है कभी द्वार द्वार पर रुकती है
जिससे चढ़नेवाले उतर उतर कर तमाशा देखने को कोठों वा बालखानों पर
चढ़ जावें। दो तीन कूचे में घरों की छबि अधिक ही शोभा दे रही है। वहां
के तमाशाई लोगों की बड़ी भीड़ कभी शोभा को देख देख मन बहलाती है
कभी बुरे दिनों का दोष लगा कर यह ठट्ठा मारती है कि रे घर वालों हमें
तो बाहर रहने दो! इस में क्या जानि हमारा जन्म सुफल हुआ। थोड़ी बेर
के पीछे वेलिंटन बहादुर की पीतली मूर्त्ति की ओर से जैजैकार आने लगा
इस से निश्चय है कि महाराणी आप ही पेडिंटन स्टेशन अपनी से राज-
धानी में आ पहुंची है। वहां की ध्वजा को उठते ही सहस्रों स्त्री पुरुष बड़ी
आवेग से बड़ी आवेग से यह चिल्ला चिल्ला कर कान फोड़ने लगी। इतने
में राजकुमार ड्यूक अब कुनौट बहादुर कूरेपेलमेल से हो के गार्ड के सिपा-

स्त्रियों के आगे चले गये। उस समय हुर्रा हुर्रा के शब्द पर शब्द ऐसे होते थे कि मानों प्रलय का मेघ गरजता हो। संक्षेप में न्यूनाधिक सात हज़ार सवार सिपाही जिन की सिपाहगरी की परीक्षा देनी पड़ी पाँती पाँती बांध खड़े हो रहे। निदान सर गार्नेटवुल्सी बहादुर ने अपनी फ़ौज के पहुंचने का समाचार प्रधान सेनापति को सुनाया। यह सुनते ही महाराणी के चचेरा भाई ड्यूक आफकेम्ब्रीज बहादुर अपनी फ़ौज को प्रस्तुत करने लगे और विजय की पताका के पीछे के मंचों पर बैठे हुए दस हज़ार ख़ास रईस और लोग आंख भर के देखने लगीं। नियमित समय पर जब महाराणी अपनी राजधानी से निकलने ही को थीं, कि यहां के मोर्चों की तोपें कड़क भड़कती हडोला सा फिराने लगीं। महाराणी के पीछे अनेक २ बड़े बड़े अमीर और राजवंशीय लोग हो लिये। और और राजकुमारियों में जर्मनी के युवराज की पत्नी विराजती हैं। इस काल ऐसा समां हुआ कि मानों तारों का अखाड़ा उतरा, और चमक दमक का प्रकाश इतना फैला कि जो कोई महाराणी से धूप की याचना करता तो मारे लज्जा के अस्ताचल की कन्दरा में जा छिपता।

रोला छन्द।

भीड़ गर्जित स्यन्दन सुधुनि अश्वहेषित घोर ।
तोपनादन सों भरो नभ भूमि चारो ओर ॥
चढ़े कोठन लखैं पुरजन रचि रह्यो सामान ।
जै जै पुकारहिं कान फोड़ सुभट मोट महान ॥
बजी दुन्दुभि पहल भेरी भयो मंगल गान ।
काढ़ि भौन सों रानी चढ़ी स्यन्दन चली मैदान ॥

आर्ड महेन्द्रनारन बहादुर जो ख़ास चौकी में सवारों के कर्नलों में से हैं इन को महाराणी की रक्षा का काम दिया गया था। जब महाराणी मैदान में आ गईं तब ड्यूक आफकेम्ब्रीज बहादुर प्रधान सेनापति ने उनसे भेंटने को आगे बढ़ कर आज्ञा दी कि हथियारों की सलामी हो। इतने में सलाम का बाजा बजने लगा। जब महाराणी सारी परीक्षा कर चुकीं तब रेजिमेंट एक दूसरे के पीछे इन के सामने हो के चले गये। सबों के आगे सर गार्नेट बहादुर सवार हो कर चले। वे आप भी सलामी कर के विजय की पताका के निकट तब तक खड़े रहे जब तक मैदान से दलों के निकल जाने त

समय न था पहुंचा। देखने वालों का चर्चा यह है कि सिपाही लोग जिन को मिसर देश में सब प्रकार के क्लेश उठाने पड़े थे उन का क्या अच्छा रंग रूप और शोभायमान शरीर है। सहस्रों जो पुरुष जो दशों दिसा से आ कर मैन के मैदान वा कूचों में तमाशा देख रहे थे उन का पूर्ण पूर्ण आकाश मस गया कि हमारे सिपाहियों ने अपना अपना धर्म किया है, और :—

"एक एव सुहृद्धर्मो निधनेऽपि तुयानियः।"

बेलि यलकौलिज, औक्सफोर्ड और किङ्ग्स कौलेज, लण्डन।	जी॰ एफ़॰ निकाल्, एम॰ ए॰ G. F. NICHOLL, M. A.

श्रीमान् चत्रियपत्रिका के प्रशस्त ध्यानेश्वर बाबू साहिब प्रसाद सिंह जी समीपेषु।—

प्रणामानन्तर प्रकाश करता हूं कि पिछले महीने में आप का कृपापत्र जो फ़ारसी भाषा में लिखा हुआ है पहुंचा था। इन दिनों उस ललित पत्रिका की दो कापियों के दर्शनानन्द से मन ठंढा हुआ है। देखते ही मेरे हवास बिगड़ गये सुधि जाती रही बुद्धि बावरी हो गई। उस के पिठीते ऐसे लगते हैं कि मानों क्यारियों के बूटे फूलते हों। अवश्य उस में इस मोहित पाठक का जी लगा है और आप की विज्ञता औ उदारता की प्रशंसा से हाथ धो बैठा हूं। आप ने फ़ारसी पत्र में जो प्रतिज्ञा की थी उस के समान पत्रिका में मेरे लेख को स्थान दिया है। धन्य मेरे भाग्य में हूं अतिशय बाधित इसी से समझ सकता हूं कि प्रसाद जी की प्रसन्नता कैसी होगी। पर शोक का विषय है कि आप ने कहीं कहीं कृपाकांची का अभिप्राय न जाना था। उस कच्ची लिपि का पेचताव देख देख कर आंख चुराते होंगे। नहीं तो इस पुतली को ऐसी भांति न नचाते। निस्सन्देह मेरे लेख में उतने ही छिद्र हैं जितने फ़क़ीर की गुदड़ी में हैं। सत्य है कि—"छिद्रेष्वनर्था बहुलो भवन्ति" किन्तु होनहार बलवान है। दोहा—"जैसी हो होतव्यता तैसी उपजे बुद्धि। होनहार हिरदे बसे, बिसरि जात सब सुद्धि॥" इस लिये कदापि भूल चूक का दाग़ कलेजे में हो जाता है तो इस दोहे से उसको मिटाना चाहिये था। निश्चय है कि ऐसे ऐसे बड़ बड़ रूपी सुहासे के द्वारा भाषा रूपवन्ति की शोभा बिगड़ेगी और उन की झांकाझूकी से उन की घूंघट फूट जायगी। उत्तम यही है बोली ठोली मारते २ उन को धमकाया कीजिये। किन्तु हाय हाय! हम लोग उत्पत्ति से ही दीपक जो सुति अनुराग में उस के चारों ओर पतंग से उड़ रहे

हैं। हमारी डैने भुलस जायंगी सही किन्तु भक्ति की कसौटी से सब कुछ परखना चाहिये।

डाक महसूल सहित पत्रिका की एक कापी का मूल्य अग्रिम वार्षिक प्राय: सात रुपये होंगे। इसी पत्र में इस मुबलग़ की हुंडी लपेट कर देता हूं। इस विलायत में ग्राहक और भी होंगे। किसी ग्राहक का नाम कान पड़ेगा तो लिख दूंगा। अलमतिविस्तरेण॥

मैं विनय पूर्वक प्रार्थी हूं कि पत्रिका के किसी न किसी कोने में इस को स्थान देंगे इस लिये कि प्रेरित रुपयों की रसीद पाकर बिना खटके मासिक अमृतपत्र की बाट देखा करूं भूल चूक सुधार दीजिये॥

बेलिवल कौलेज औक्सफ़ोर्ड। आप का मित्र
५ एप्रिल १८८३ ई० जी० एफ़० निकल।

मिती २० मार्च १८८३।

श्रीयुत भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र का कुशल क्षेम हो।

फ्रेडरिक पिंकोट साहेब परमेश्वर से आप की बड़ाई की प्रार्थना करता रहता है।

यद्यपि मैं हिन्दूस्तान में कभी न रहा तो भी चिरकाल से उस देश की भाषाओं का सीखना मुझे बड़ी मनोहर बात मालूम पड़ी क्योंकि मेरे समझ में धर्म की बात है कि सब लोगों को अपने बल पर्यन्त अङ्गरेज़ी और हिन्दू लोगों के आपस में मिले जुले रहना कराना चाहिये। किसी को किसी का संमान करना असम्भव है जब तक कि दोनों के आपस की विद्या और बुद्धि को समझ न सकें इससे दो जाति के मिले जुले रहने के पहिले उनकी भाषाओं का सिखाना और उनकी पोथियों का विवरण करना आवश्यकता का काम है। यह मनोरथ मन में रख के मैं ने हिन्दूस्तान की चार भाषाओं को (अर्थात् संस्कृत और हिन्दी और फ़ारसी और उरदू) सीख कर बहुत सी पोथियों को पढ़ के उनका तात्पर्य इङ्गलण्डदेश में फैलाया है। उस पर भी मैंने हिन्दी भाषा के सिखलाने के लिये कई एक पोथियां बनाई हैं। उन में से शकुन्तला नाटक हिन्दी भाषा में एक है और दूसरा हिन्दी मानुअल (व्याकरण) है। इन दोनों पोथियों को "सिविल सर्विस कामिशनर्स" ने बहुत प्रशंसा किया है और आज्ञा दी है कि जितने लोग इङ्गलण्डदेश में हिन्दी भाषा सीखने हैं उनमें भी को इन दो पोथियों का

प्रध्ययन करना आवश्यक काम होय। इन दिनों में उन
यह आज्ञा भी दी है कि जितने अङ्गरेज़ी लोगों को हिन्दू
सर्विस " के पैठने की इच्छा हो सब को हिन्दी भाषा का सीखना होगा।

ऊपर लिखे हुए समाचार के पढ़ने के पीछे आप सहज में समझ सकें कि कैसा कुछ हर्ष मेरे हृदय में फैल गया जब कि डाक के द्वारा मैंने आप के अनुग्रह से हिन्दी पोथियों की एक बड़ी गठरी पाई। इन पोथियों में आप के कई एक हिन्दी काव्य हैं जिनको मैं आनन्द से पढ़ूंगा और कई एक नाटक भी हैं जिन से हिन्दी भाषा के सिखलाने के लिये बहुत काम निकलेगा।

अंगरेज़ी विद्यार्थियों की समझ में निपट खेद की बात है कि हिन्दू ग्रन्थकर्त्ता अपने ग्रन्थों के बनाने में ऐसी सामान्य हिन्दी बातें काम में नहीं लाते जैसे कि वे अपने ही घरों में दिन दिन बोला करते हैं। इस के स्थान बहुतेरे ग्रन्थकर्त्ता इतना कुछ संस्कृत हिन्दी से मिला करते हैं कि हिन्दी का भाव संस्कृत ही हो जाता। मैं अत्यन्त सुख से देखता हूं कि आप के ग्रन्थों पर वैसा दोष लगाना असम्भव है।

इन पोथियों के पाने से मैं सब से अधिक आनन्दित हुआ और इस आनंद के दो कारण हैं एक तो इन ग्रन्थों के पढ़ने से मुझे हिन्दी का अधिक ज्ञान होगा और दूसरा इन के पाने से स्पष्ट रूप से मालूम पड़ा कि हिन्दूस्थान के लोगों में कोई कोई स्वदेशानुरागी हैं। किसी न किसी रीति से आपने सुना है कि मैं हिन्दी भाषा का विद्यार्थी हूं तो आपने स्वदेशानुरागता ही [illegible] उपकार उस अच्छी रीति से किया है। बिना शंका मैं आप के अनुग्र[illegible] याद रखूंगा।

[illegible] नाम रूपक और अंधेरनगरी नाम रूपक दोनों से विशेष [illegible] बहुत भी [illegible] जिन से हिन्दी [illegible] नाम नाटक भी [illegible] और मुद्राराक्षस नाम नाटक पण्डित जी का काम भी है। केवल एक विद्वान पण्डित की वैसे अच्छे उलथा करने की शक्ति है। उस का मूल और टीका दोनों अच्छे हैं। यदि मैं उस ग्रन्थ के बनाने वाले का नाम जानूं तो मैं लण्डन नगर के समाचार पत्रों में उसकी प्रशंसा करूं।

हैं। इसमें ऐसे गुनन जायेंगे सही किन्तु भक्ति की कसौटी में सब कुछ पा लगना चाहिये।

डाक महसूल सहित पत्रिका की एक कापी का मूल्य पेशगी वार्षिक प्राय: सात रुपये होंगे। इसी पत्र में इस मुवनग को हुंडी लपेट कर भेज देता हूं। इस विलायत में ग्राहक और भी होंगे। किसी ग्राहक का नाम मेरे कान पड़ेगा तो लिख दूंगा। अलमतिविस्तरेण ॥

मैं विनय पूर्वक प्रार्थी हूं कि पत्रिका के किसी न किसी कोने में इस को स्थान देंगे इस लिये कि प्रेरित रुपयों की रसीद पाकर बिना रुकके मासिक अमृतपत्र की बाट देखा करूं भूल चूक सुधार दीजिये ॥

बैलियल कोलेज औक्सफोर्ड।) आप का मित्र
५ एप्रिल १८८१ ई० } जी० एफ० निकल।

मिती २० मार्च १८८१।

श्रीयुत भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र का कुशल क्षेम हो।

फ्रेडरिक पिंकोट साहेब परमेश्वर से आप की बड़ाई की प्रार्थना करता रहता है।

यद्यपि मैं हिन्दूस्थान में कभी न रहा तो भी चिरकाल से उस देश की भाषाओं का सीखना मुझे बड़ी मनोहर बात मालूम पड़ी क्योंकि मेरे समझ में धर्म की बात है कि सब लोगों को अपने बल पर्यन्त अङ्गरेजी और हिन्दू लोगों के आपस में मिले जुले रहना कराना चाहिये। किसी [illegible] किसी का संमान करना असम्भव है तब तक कि दोनों के आपस की [illegible] और बुद्धि को समझ न सकें इससे दो जाति के मिले जुले रहने के [illegible] उनको भाषाओं का सिखाना और उनकी पोथियों का विवरण करना [illegible] उपकारक का काम है। वह मनोरथ मन में रख के मैं ने हिन्दूस्थान [illegible] [illegible]ार भाषाओं को (अर्थात् संस्कृत और हिन्दी और [illegible]
[illegible]ीख कर बहुत सी पोथियों को पढ़के उनका [illegible]
[illegible]ा है। उस पर भी मैंने हिन्दी भाषा के [illegible]
[illegible]ां बनाई हैं। उन में से शकुन्तला नाटक [illegible]
[illegible] हिन्दी मानुएल (व्याकरण) है। इन [illegible]
[illegible]ामिश्नर्स ने बहुत प्रशंसा किया
[illegible]ङ्गलण्डदेश में हिन्दी [illegible]

ाध्ययन करना आवश्यक काम होय। इन दिनों में हम
ाह आशा भी दी है कि जितने अङ्गरेज़ी लोगों को हिन्दु [illegible]
उर्विस" के पैठने की इच्छा हो सब को हिन्दी भाषा का सीखना होगा।

ऊपर लिखे हुए समाचार के पढ़ने के पीछे आप सहज में समझ सकें कि कैसा कुछ हर्ष मेरे हृदय में फैल गया जब कि डाक के द्वारा मैंने आप के अनुग्रह से हिन्दी पोथियों की एक बड़ी गठरी पाई। इन पोथियों में आप के कई एक हिन्दी काव्य हैं जिनको मैं आनन्द से पढ़ूंगा और कई एक नाटक भी हैं जिन से हिन्दी भाषा के सिखलाने के लिये बहुत काम निकलेगा।

अंगरेज़ी विद्यार्थियों की समझ में निपट खेद की बात है कि हिन्दू ग्रन्थकर्त्ता अपने ग्रन्थों के बनाने में ऐसी सामान्य हिन्दी बातें काम में नहीं लाते जैसे कि ये अपने ही घरों में दिन दिन बोला करते हैं। इस के स्थान बहुतेरे ग्रन्थकर्त्ता इतना कुछ संस्कृत हिन्दी से मिला करते हैं कि हिन्दी का प्राय संस्कृत हो हो जाता। मैं अत्यन्त सुख से देखता हूं कि आप के ग्रन्थों पर वैसा दोष लगाना असम्भव है।

इन पोथियों के पाने से मैं सब से अधिक आनन्दित हुआ और इस आनंद के दो कारण हैं एक तो इन ग्रन्थों के पढ़ने से मुझे हिन्दी का अधिक ज्ञान ेगा और दूसरा इन के पाने से स्पष्ट रूप से मालूम पड़ा कि हिन्दूस्थान के कोई कोई स्वदेशानुरागी हैं। किसी न किसी रीति से आपने हिन्दी भाषा का विद्यार्थी हूं तो आपने स्वदेशानुरागता ही उस अच्छी रीति से किया है। बिना शंका मैं आप के अनुग्र- ूंगा।

ाम रूपक और अंधेरनगरी नाम [illegible]

नाम नाटक [illegible] है। और मुद्राराक्ष नाम का काम भी है। केवल एक विद्वान पण्डित की [illegible] की शक्ति है। उस का मूल और टीका दोनों अच्छे हैं। के बनाने वाले का नाम जानूं तो मैं लण्डन नगर के स प्रशंसा करूं।

भेजा था कि जिस का पहुंचना या न पहुंचना इसी समय तक मालूम हुआ। इसी विषय में कहता हूं कि आप के अनुग्रह से तारीख़ १० जून दुःखिनी वाला ग्रन्थ पाया तारीख़ २० जून गर्ग संहिता भाषा ग्रन्थ तारीख़ १ जुलाई अवतार कथाऽमृत और भारती भूषण ग्रन्थों को तारीख़ १ सितम्बर संगीतसार और भाषा ऋजुपाठ और रस-सिन्धु आदि ग्रन्थों को पाया तारीख़ २० नोवेम्बर ताशकौतुक और हरिश्चन्द्र का पत्रिका और रामायण के दो काण्ड पाये हैं। पिछले छ महीनों में और कुछ नहीं पाया। ऊपर लिखे हुए नामावली के पढ़ने से आप को लूम होगा कि कोई पुलिन्दा खो गया कि नहीं। इन सब ग्रन्थों के हेतु थक पृथक पत्रों में मैंने आप को धन्यवाद दिया है और अब फिर भी धन्यवाद देता हूं।

इस डाक के पत्र में आप कहते हैं कि "आठ दरजन तस्वीर भेजता उस भांति की मित्रता के कारण मैं सदैव आप का गुण मानूंगा। वैसी स्वीरें मुझ को निपट उपकारक होंगी क्योंकि उन से हिन्दुस्तान की मेरी आंखों के सामने दिखाई देंगी। जो चाहता हूं कि थोड़े दिनों तस्वीरें आ पहुंचेंगी। पिछले डाक के पुलिन्दे भी की राह ताक रहा हूं कि आप ने कहा है कि उस में आप की प्यारी स्त्री के नोट पेपर का नमू है। इस के पहुंचते ही मैं बड़े चाव से उस के विषय में आप की इच्छा निबाहूंगा।

यह भी कहना चाहिये कि तारीख़ १ जुलाई मैंने आप को महारा विक्टोरिया और युवराज दोनों के सौर पट (फ़ोटोग्राफ़) भेजे थे। इस मय तक मैं नहीं जानता कि आप को ये मिले थे कि नहीं। यदि न मि तो उन के और फ़ोटोग्राफ़ भेजूंगा।

सिर के बाल के गिरने के विरुद्ध इस देश में रौलण्ड्स मेकेसर आ (Rowland's Macasser oil) सब से प्रसिद्ध है। बहुतेरे लोग कहते हैं उस से बहुत कुछ काम निकलता है। मैया क्षमा कीजिये मुझे यह भय कि सिर के बा ... आप ने कुछ न कुछ औषध किय है। यदि यह ... की बात नहीं कि आप नें दर्द है ... करते हैं। उस औषधों ... देगा अग

है तब स्वच्छ पानी से फिर [illegible] भांति धोके थोड़ा थोड़ा गौलण्डम्
मिक्सेमर आईल दिन दिन मला [illegible] कीजिये। उस औषध का मोल इस देश में
यह है अर्थात् एक छोटा बोटल [illegible] (एक रुपया बारह आने)। एक मध्यम
बोटल [illegible] (तीन रुपये [illegible]) एक बड़ा बोटल १०।) (दस रुपए
चार आने)। [illegible]

यदि अज्ञानता से या तो मुहावरे में या और किसी बात में कुछ भूल चूक हो तो उन को क्षमा कीजिये।

आप का परम मित्र।
FREDERIC PINCOTT.

---

१६ जेनुवरी १८८४

प्रिय मित्र

इसी समय आप को केवल एक ही बात लिख सकता हूं कि मिस्टर ग्रूम साहेब के यहां से इसी दिन मुझ को बालकाण्ड और अयोध्याकाण्ड काशी के महाराज के तुलसी दास रामायण के मिले हैं इस कारण उन का मोल लेना आवश्यक नहीं है। मैंने उस साहेब से लिखा था कि मेरे पास आरण्य काण्ड और किष्किन्धा काण्ड हैं तब बिना मांगे उस ने उन दो और काण्ड भेजे। अब तो केवल सुंदर काण्ड और लंका काण्ड और उत्तर काण्ड शेष रहे हैं।

आप का परम मित्र फ्रेडरिक पिंकाट

---

२२ जेनुवरी १८८५

प्रिय [illegible]

आप [illegible] सुख [illegible] गी पण्डित के साथ मित्र बनकर लिखने पाया परन्तु उस से भी यह भला है कि आप भी इतनी सुशीलता से मेरे चित को चेटा किया करते हैं। हिन्दूस्ता-नी [illegible] यह प्रमाण है कि हम दोनों ने नए बरस के दिन ही पर एक एक पत्र पर-स्पर लिख कर भेजा था।

इसी प्रसाद में आप से मैं ने दो पुस्तकें पाए हैं। एक तो जो तसवीरें बता-ता है कि जिस के हेतु बहुत धन्यवाद हूं। उन

वसूट बनाने के विषय फिर लिखूंगा। उस ने कहा कि प्रत्येक वसट का मोल १५० (एक सौ पचास) रुपए है।

आपको नए सम्वत की बधाई के हेतु मैं फिर धन्यवाद देता हूं और मन से आशीर्वाद चाहता हूं कि नए सम्वत में हम को अवसर मिले कि आप मुझे फिर कर बधाई देवें।

आप का परम स्नेही
FREDERIC PINCOTT

१५ फिबरुरी १८८४

प्रिय मित्र

विगत सप्ताह पत्र के लिखने में मैं रुपयों का यूरोप देश में आनेका बट्टा (Rate of exchange) संपूर्ण रूप भूल गया था। इस से उन फोटोग्राफ के बड़ा करने के लिये इतना कुछ नगद मूल्य भेजना चाहिये जो इङ्गलण्ड में या तो ४२ रुपयों या ६२ रुपयों के बराबर होगा।

वसूट बनाने का मोल अब तक नहीं ठहराया परन्तु दूकान को जाकर छोटा सा मोल ढूंढ़ता हूं।

कल को आप का पूजनीय पिता कृत रामायण सटीक हाथ आया। इस के हेतु आप को बहुत धन्यवाद देता हूं। उस पोथी में के संख्या ग्रंथों से बहुत कुछ काम आवेगा। उस की टीका मुहावरे में अच्छी ही मालूम पड़ती है और उसके सहाय से श्री रामायण का अर्थ प्रगट होजावेगा।

सप्ताह पर सप्ताह मैं इस पोथी की राह देख रहा था उस के पहुंचने के कारण मुझे यह आशा है कि किसी दीन आप को चिट्ठी के लिखने के कागद के नमूने और हिन्दूस्थानी स्त्रियों की टिकुलियें भी आवेंगी।

आप का दूसरा National Author का अनुवाद पहुंचा है। पहिले अनुवाद के सदृश यह भी उत्तम ही काव्य है किन्तु अङ्गरेजी राग में उस का गाना मुझे असाध्य मालूम पड़ता है। यह बड़े खेद की बात है क्योंकि आपने इतना कुछ कष्ट उस के विषय में किया है। हमारे २२ जून के पत्र में बङ्गाली अनुवाद का एक श्लोक लिखा था। उस का गाना अनायास हो सकता है। मेरा बनाया हुआ एक हिन्दी श्लोक नीचे लिखा है।

ईश कैसर पालिये।
... या कौ चिरायु दे।

लोगों के व्यवहार मेरी आंखों के सामने प्रकाश हो जाते हैं। उन के देख
से आनन्दित हो गया और बरसों तक वे मेरे काम आवेंगे। यदि संभव हो
कई एक छोटो आइनोया गाने की पुतलियाँ को (महेश्वर गणेश
आदि देवताओं की) चाहताहूं परन्तु जो उन देवताओं का भेजना आप के
विरुद्ध है तो मेरी चाह तुरन्त माफ़ी कीजिये उस पर भी मेरी अज्ञानता
कारण उस अधार्मिक याचना को क्षमा करिये।

तसवीरों के साथ दूसरे पुलिंदे में बनारस के महाराजा के रामायण
अयोध्या कांड के अनुवाद से आया है। उस के पहुंचने से इसी गोप्ता
साथ बहुत ही मित्रता दिखाई देती है। केवल एक प्रिय मित्र किसी बा
के निबाहने में ऐसी जल्दी करता है। उस के हेतु बहुत धन्यवाद देता हूं

समाचार पत्र भी मुझे बहुत उपकारक हैं क्योंकि इसी समय हण्ट
साहिब की कमीशन के विषय कई आर्टिकल लिखता हूं। उन हिंदी समा
चार पत्रों को पढ़कर जान सकता हूं कि उस कमीशन ने हिन्दुस्तानी लोगों
की आशा तोड़ी है। स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है कि शिक्षा कमीशन का
कर्तव्य समदृष्टि से नहीं हुआ। थोड़े दिनों में मैं एक आर्टिकल पहिली
शिक्षा के विषय में आप को भेजूंगा। उससे आप भली भांति देखेंगे कि
है समझ में एड्युकेशन डीपार्टमेंट कुछ भी काम नहीं है।

निश्चय अचरज की बात है कि अब तक की वह गठरी नहीं पहुंची कि जिस
आप के पूजनीय पिता की रामायण टीका और आप की सुशील स्त्री के
गिट पेपर के नमूने और हिन्दूस्तानी स्त्रियों की टिकलियां होती हैं। मुझे
ह भय है कि वह खो गया। किन्तु पार्सेल पोस्ट के द्वारा मैं आप के पास
इसी दिन चार सब से नई भांति का नोट पेपर भेजता हूं। नमूनों के पहुं
चते ही और कुछ नोट पेपर इस से अधिक उपयोगी भेजूंगा। इसी डाक के
द्वारा ताश की एक गड्डी भेजता हूं। ये ताश इस देश में के सब से अच्छे
ताश हैं किन्तु मैं खोजकर उन से और कुछ सुंदर प्रतिमाओं को भेजूंगा।

एक चित्रकारी ने कहा कि फोटोग्राफ के बढ़ाने का मोल २०० [दो सौ
रुपए] के लग भग है परन्तु मैं दूसरा ।५- [illegible] को आकार उससे बड़ी सवाल
पूछूंगा। कहिये तो अब फोटो [illegible] रंग
लगाया जावे कि नहीं।
आदि रङ्ग लगते हैं। [illegible]

बस्ट बनाने के विषय फिर [illegible] ने कहा कि प्रत्येक बस्ट का मोल १५० (एक सौ पचास [illegible])

आपको नए सम्वत की बधाई [illegible] मैं फिर धन्यवाद देता हूं और [illegible] में इस को अवसर मिले [illegible]

आप का परम स्नेही
FREDERIC PINCOTT

---

१५ फिब्रवरी १८८४

प्रिय मित्र

बिगत सप्ताह पत्र के लिखने में मैं रुपयों का यूरोप देश में आनेका बट्टा (Rate of exchange) संपूर्ण रूप भूल गया था। इस से उन फोटोग्राफ के बड़ा करने के लिये इतना कुछ नगद मूल्य भेजना चाहिये जो इङ्गलण्ड में या तो ४२ रुपयों या ४२ रुपयों के बराबर होगा।

बस्ट बनाने का मोल अब तक नहीं ठहराया परन्तु दूकान की जाकर छोटा सा मोल ढूंढ़ता हूं।

मुझ को आप का पूजनीय पिता कृत रामायण सटीक हाथ आया। इस के हेतु आप को बहुत धन्यवाद देता हूं। उस पोथी में के संख्या यंत्रों में बहुत कुछ काम आवेगा। इस की टीका मुहावरे में अच्छी ही मालूम पड़ती है और इसके सहाय से भी रामायण का अर्थ प्रगट होजावेगा।

सप्ताह पर सप्ताह मैं इस पोथी की राह देख रहा था इस के पहुंचने के कारण मुझे यह आशा है कि किसी दीन आप की दी के लिखने से कागद के नमूने और हिन्दुस्थानी स्त्रियों की टिकुलियें भी आवेंगी।

आप का दूसरा National Anthor का अनुवाद पहुंचा है। पहिले अनुवाद के सदृश यह भी उत्तम ही मान्य है किन्तु अङ्गरेजी राग में उस का गाना मुझे असाध्य मालूम पड़ता है। यह बड़े खेद की बात है क्यों कि आपने इतना कुछ कष्ट उस के विषय में किया है। हमारे २२ जून के पत्र में मङ्गल्ली अनुवाद का एक श्लोक लिखा था। इस का गाना बनाया हो सकता है। मेरा बनाया हुआ एक हिन्दी श्लोक नीचे लिखा है।

ईश कैसर पालियें।
बा. को चिराय है।

ईश कैसर पाल।
भेज दै विश कंहं जै।
भाग औ प्रताप दै।
चीरं बाढ़य राजनै।
ईश कैसर पाल॥

अङ्गरेजी अक्षरों में यह श्लोक यों लिखते हैं (— दीर्घ मात्र का चिन्ह है ˘ ह्रस मात्र का चिन्ह)

Is kaisar pâliyai
Wâ kaun chirâyu dai
Is kaisar pâl.
Bhej dai wis kanhau jai
Bhâg au pratâp dai
Chiram bârhay rajanai
Is kaisar pâl.

इस श्लोक के मात्रा अङ्गरेजी श्लोक के मात्रों के अनुसार हैं जैसा कि

God save our Empress Queen
Long live our graciouss Queen
God save the Queen.

इत्यादि। चाहिये कि इस गीत में महारानी का कैसर नाम हो क्योंकि यह कैसर-इ-हिन्द है उस से भी मुसलमान लोगों को रानी या महारानी का नाम अच्छा नहीं लगता। अङ्गरेजी गीत का ताल ऊपर लिखा गया है। जो इसी भांति के गीत की रचना हिन्दी में सम्भव है कि नहीं सो मैं नहीं जानता। किन्तु यह सच बात है कि यदि गीत के चरण आठ मात्र से अधिक हो तो अङ्गरेजी राग ताल के विरुद्ध हो के उन का गाना इसी राग में असम्भव होगा।

आप का कुशल क्षेम हो। अब इस सप्ताह का डाक पाने जानेको है बाकी फिर।

आप का परम स्नेही मित्र FREDERIC PINCOTT.

Extract from the—

SEVEN GRAMMARS OF THE DIALECTS & SUBDIALECTS OF THE BIHARI LANGUAGE. PART I—INTRODUCTORY.

[illegible]

बाघ, हुँड़ार, आओर चित्ता।
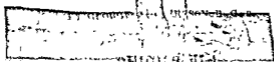
एक बेरि बाघ, हुँड़ार सभ, ओर चित्ता सभ अपना मेँ ई ठहरौलक कि सभ मीलि कै शिकार मारी। फिरि अपना मेँ बाँटि ली। ई ठानि कै जंगल मेँ कूद फान करै लागल। आओर जखन एक बड़का टा कारी हरीन केँ मारि लेलक, तखन बाघ बाजल कि, आवह, एकरा बाँटू, आओर झटद ओकर तीन खंड कै देलक, आओर गरजी कै बाजल कि,

---

* श्री युक्त महामान्यवर जी० ए० ग्रियर्सन साहिब बहादुर भारत हितैषी ने जो हिन्दी के लिये परिश्रम किया है उस की प्रशंसा नहीं की जा सकती। यह कुछ साधारण बात नहीं है कि सब कोई ऐसा कर लेगा। प्रथमतः भाषा के यह बड़े भारी पण्डित का काम है कि उस के भेद और तत्व को समझे और गद्य पद्य समझ बूझ कर व्याकरण लिखे (तिस पर भी ऐसी भाषा का जिस में पहले पहल किसी ने न लिखा हो, बिहार के प्रत्येक प्रांतों के व्याकरण बनाये हैं) इसके सिवाय वर्णमाला के उच्चारण में जो कुछ कल्पना आपने की है वह भी प्रशंसनीय है।

ये साहिब संस्कृत, हिन्दी, बङ्गला, पारसी, अरबी, महाराष्टी, पंजाबी, और पाली भाषा के बड़े मर्मज्ञेता है। इन्होंने बहुत सी पुस्तकें हिन्दी भाषा में बनायी हैं। ये एक बड़ा भारी कोष हिन्दी भाषा का लिख रहे हैं। आपने एक प्रकार की कैथी [सब बिहारी अक्षरों को देख भाल कर] की टाइप भी बनायी है। जिसमें "बिहारगज़ट" और प्राइमर कोर्स की पुस्तकें छपती हैं। इस कैथी में सैकड़ों पुस्तकें छप गईं और छपती ही जाती

[illegible]

अक्षर काइथी नागर महीन।

है। इस शैली में देवनागरी बहुत सहज में अभ्यासकर्त्ता को आवेगी तथा शुद्ध शुद्ध लिखना पढ़ना भी आ जायगा और इस शैली प्रचार से दूसरे दाने में साधारण लोगों को भी रुचि पढ़ने पढ़ाने की और बढ़ती जाती है इससे जिस बात को सोच के यह बनाई गई है वह प्रशंसनीय है॥

आज कल श्री बिहार प्रांत में कैथी अक्षर में कचहरी का काम चलता है यह भी आपही की कृपा है नहीं तो उरदू से विद्यार्थियों का गला छूटना कठिन था। आज इन हिन्दी के बढ़ने में जो लाभ विद्यार्थियों को हुआ उन का वर्णन क्या किया जाय। "पावा परम तत्व जनु योगी। अमृत लहेउ जनु सन्तत रोगी॥ जन्म रंक जनु पारस पावा। अन्धहि लोचन लाभ सुहावा। मूक बदन जनु सारद छाई। मानहुं समर सूर जय पाई॥ यही सुखतें सत कोटि गुन, पावहिं सबहि अनन्द॥" पश्चिमोत्तर प्रांत में वह दिन कब आवेगा कि आप सरिखे सर्व गुणवान का चरणारविन्द पड़ेगा और उरदू से हम लोगों का गला छूटेगा कचहरी में हिन्दी प्रचार का दर्शन होगा।

एक दिन इस अभाव की पूर्णता भी आपही से होगी कि संस्कृत तथा हिन्दी के प्राचीन पुस्तकें जो कहीं २ भस्मावशेष रही हैं वे सब भी प्रकाशित हो जायंगी और भारतवासी इस के लिये सर्वदा आप के ऋणी रहेंगे। एशियाटीक सोसाइटी की शाखा भी बिहार प्रांत में आप स्थापन किया चाहते हैं आशा है कि आप का उद्योग सफल होगा क्योंकि आप ऐसे शक्तिवान हैं कि

सतरहम कथा—तीसो कुकुर।

कोनो कुकुर नदीक तीर एक हाड़ पौलक, ओकोर मुँह में लेलक। जेइ ओकर परिछाँही पानि में देखलक, बुझल-थिक दोसर [illegible] ओकरहु मांसु [illegible] तेहो गमौलक। सत्य थिक

लालची देखलि दूध पर, पाँखि गेल लपटाए।
हाथ, माँथ तोड़े, पिटे, लिप्सा मंद बलाए॥

Extract from the—

SEVEN GRAMMARS OF THE DIALECTS & SUBDIALECTS OF THE BIHARI LANGUAGE. PART II—BHOJPURI DIALECT
of Shahabad, Sarun, Champaran, North Muzaffarpur, and the eastern portion of the N. W. P.

BY GEORGE A. GRIERSON, B. C. S.

सोरहो बात।

केहू धनी के दुगो लरिका रहलि। जब उन कर बाप मर गइलि, त दूनू भाई धन आपुस में बाँट लिहलि। बड़ भाई आपन रुपैया पइसा सुख चैन आउर खेल तमासा में उड़ावे लगलि, आउर छोट भाई जतन से बनिआई बैपार करे लगलि। एक दीन [illegible] छोटा भाई में थोरइना दे के कहलस कि, ए भाई [illegible] दीन भर बनाक तउजात रहेल; हमरा साथ रह, [illegible], चैन कर। बहुत दीन का बाद, जब छोट भाई [illegible] बहुत रुपया बिटोरलि, त उन

पार यड़ आई, जे राग रङ्ग रामामा में आपन मग उड़ा के भिखार हो गइनी, उनका दुआर पर आ के लगली के, ए भाई, एग तोहरा के इन्नी में उड़ावत नीं। जो' एगह ... बनियाई बेपार करती, उर अनाज रउअती, त आज पाव भर अनाज एनी चोगे माँग के ना खड़ती। साँच ह, आसकत अइसने काँड़ा के धन के धुर यार देला।

सतरहों बात—लालची कुत्ता।

एक कुत्ता नद्दी का तीर पर हाड़ पउलस, आउर मुँ में ले लेलस। नइसैंहों परिछाहीं घोकर पानी में देख लस तइसैंहीं समुझलस के दोसर हाड़ बाटे। मारे लाल के मुँह खोललस के ओकरो के पानी से निकासलों। त हाड़ जे मुँह में रहे सेहू गिर गइल। साँच ह मोंछी बइ नल दूध पर, पाँख गइल लपटाए, हाथ मोंसे आउर माँ पीटे, लालच बड़ि बलाए।

२१ जतसार।

बेरि बेरि जाले सैंयाँ पुरुबि बनिजियाँ। कैसे कटे दिन रात हो॥ गाड़ी जे चटकीला चइल पइला में। बैला चटकी गुँजरात हो ॥ १ ॥ ई टुनु नैन बनारस चटके। सैंयाँ जहानाबाद हो ॥२॥ तलवा में चमकेला चलुइवा मछरिया रनवा चमके तलवार हो ॥ ३ ॥ सभवा में चमकेला सैंयाँ के पगरिया। सेजिया पै टिकुली हमार हो ॥ ४ ॥

।न्याय गेत्यादि छान्दोग्य दहर विद्या या मित्यादि

. का एक अंश भी दार्ष्टान्त में नहीं मिलने से वह आप का
... है सो मैंने कह दिया पश्चिमे उसमें आन लेना यह किसने
... पुरुष को उपासना का अधिकार नहीं है सो यह आप का
... है क्योंकि ब्रह्म विद्या का और पाषाणादिक मूर्त्ति पूजन का
... भी नहीं इस से यह भी अर्थान्तर है अर्थान्तर के होने से
... पराजय स्थान आपका है सो आप यथावत् विचार करें

...स्त:—प्रथत: अस्माभि: यत् भवत्पच इत्यादि तव
...मापि वर्त्तते इत्येवेति।

आप जान लेवें कि साधर्म्य हेतु प्रमाण से जो बोलते हैं इसमें आप के कहे जितने दूषण हैं वे सब आप के ऊपर ही आ गये क्योंकि आप अपनी प्रतिज्ञा अर्थात् वादही हम करेंगे ऐसी प्रथमत: कह चुके हैं फिर जल्प और वितण्डाही बारंबार करते हैं इस से अपना पराजय आपही कर चुके, क्योंकि आप को जो विद्या और बुद्धि होती तो कभी ऐसी भ्रष्ट बात न कर्त्ते और निग्रह स्थान में बारं बार न आते आप को संस्कृत भाषण करने का भी यथावत् ज्ञान नहीं है क्योंकि प्रथमत: अस्माभि: यत् ऐसा भ्रष्ट असंबद्ध भाषण कभी न कर्त्ते किन्तु प्रथमतोस्माभिर्यत् ऐसा श्रेष्ट और सम्बद्ध संस्कृतही कहते दृष्टान्ते सर्व-विषयाणां साम्य प्रयोजनं नास्तीति यह भी आप का कहना भ्रष्टही है क्योंकि मैंने कब ऐसा कहा था कि सब प्रकार से दृष्टान्त मिलता है, वह श्रुति एक अंश से आप के अभिप्राय में मिलती नहीं इस से मैंने कहा कि इस श्रुति का पढ़ना आप का मिथ्याही है ऐसाही आप का कहना सब भ्रष्ट है।

स्वामी—तच्चे त्यादि तव प्रतिमापिवर्त्तते।

यह आप का जो कहना है सो प्रतिज्ञान्तरही है क्योंकि स्थूलत्व तुल्य जो प्रतिमा में और गर्दभादि को में है इस हेतु से ही प्रतिमा पूजन का स्थापन करा चाहते हो सो फिर भी जल्प और वितण्डाही आती है बाद नहीं इस से बारंबार आप का पराजय होता गया फिर भी आप को बुद्धि वा लज्जा न

भाई यह बड़ा आश्चर्य जानना चाहिये कि अभिमान तो पंडितता का करै और काम करै अपंडित का।

तर्करत्नः—प्रतिमापिवत्तते इत्यादि पर्यं तुप्रकृत विषयस्य साधकः नतु प्रतिज्ञान्तरम् इत्यादि।

प्रकृत विषय यही है कि प्रतिमा पूजन का स्थापन सो स्थापन वाद से और वेदादिक सत्य शास्त्रों के प्रमाण से ही करना फिर उस प्रतिज्ञा को छोड़ के जल्प तथा वितण्डा और मिथ्या कल्पित वचन से वाचसत्यादिकों के उन से स्थापन करने में लग गये अहो इत्याश्चर्य कि ताराचरण जी की बुद्धि विद्या के बिना बहुत छोटी है जो प्रतिज्ञा कर के शीघ्रही भूल जाती है यह आप का दोष नहीं किन्तु आप की बुद्धि का दोष है और आप के काम क्रोध अविद्या लोभ मोह भय विषयासक्तादिक दोषों का दोष है तर्करत्न जी यह आप देख लीजिये कि कितने बड़े २ दोष आप में हैं प्रथम तो प्रतिमा पूजन का स्थापन पक्ष लेके फिर जब कुछ भी स्थापन न हो सका तब उपासना मात्र मेव भ्रममूलम् अपने आपही खंडन प्रतिमा पूजन का करने लगे कि भ्रम मूल अर्थात् प्रतिमा पूजन मिथ्याही है इस से आप के पक्ष का आपनेही खंडन कर दिया फिर मिथ्या ग्रन्थ जो पञ्चदशी उस के प्रमाण देने लग गये और जो प्रथम वेदादिक जे २० बीस सनातन ऋषि मुनियों के किये मूल और व्याख्यान तथा परमेश्वर के किये ४ चार वेद इन के प्रमाण से बोलेंगे सो आप की प्रतिज्ञा मिथ्या हो गई प्रतिज्ञा के मिथ्या होने से आप का पराजय भी हो गया फिर भ्रान्ति रस्याकं न दूषणोया यह भी हो गया फिर भ्रान्ति रस्याकं न दूषणोया यह भी पहिले आप का कहना है सो कोई भी पंडित न कहेगा कि भ्रान्ति भूषण होता है यह तो आप की भ्रांत बुद्धि का ही वैभव है और जे सज्जन लोग हैं वे तो भ्रांति को दूषण ही जानते हैं तथा भ्रम; खलुद्विविधः इत्यादि यह पञ्चदशी का वचन है यह भी प्रतिज्ञा से विरुद्ध ही है क्योंकि वेदादिक शास्त्रों में इस की गणना नहीं है पाषाणादिक की रचित मूर्ति में देव बुद्धि का जो करना है सो दोष एसा मैं आप भ्रम को नाहे ही है क्योंकि दोष तो कभी मणी न होगा और मणी तो सदा मणी ही रहेगा सो आप ने सुख से तो कहा परन्तु हृदय में शून्यता के होने से कुछ भी नहीं जाना ऐसा ही आप का सब कथन भ्रष्ट है आप को जो कुछ भी ज्ञान

होय तब तो आप सच्चे अन्यथा नहीं तर्करत्न जी ने आगे २ जो २ कुछ क-
हा है सो २ सब भ्रष्ट ही है बुद्धिमान् लोग विचार लेवें ताराचरण जी इस
प्रकार के मनुष्य हैं कि कोई बुद्धिमान् सामने जैसा बालक-और भाषण वा
श्रवण करने के योग्य भी नहीं क्योंकि जिस को बुद्धि और विद्या होती
है सोई कहने वा श्रवण में समर्थ होता है सो तर्करत्न जी में न बुद्धि है और न
कुछ विद्या है इस से न कहने और सुनने में समर्थ हो सक्ते हैं इन का नाम
जो तर्करत्न कोई ने रक्खा है सो अयोग्य ही रक्खा है क्योंकि।

अविज्ञाते तत्त्वेऽर्थे कारणोपपत्तितस्तत्त्वज्ञानार्थमूहस्तर्कः

यह गौतम मुनि जी का सूत्र है इस का यह अभिप्राय है कि जिस पदा-
र्थ का तत्त्वज्ञान अर्थात् जिस का यथावत् स्वरूप ज्ञान न होवे उस के ज्ञान
के वास्ते कारण अर्थात् हेतु और प्रत्यक्षादि प्रमाणों की उपपत्ति अर्थात् य-
थावत् युक्ति से ऊहनाम वितर्क अर्थात् विविध विचार और युक्ति पूर्वक वि-
विध वाक्य कहना विनय पूर्वक श्रेष्ठों से उस को कहते हैं तर्क सो इस का
लेश मात्र सम्बन्ध भी ताराचरण जी में नहीं होने से तर्करत्न तो नाम अन-
र्थ कहै किन्तु इन के कथन में थोड़े से दोष मैं ने देखाये हैं जैसा कि समु-
द्र के आगे एक बिन्दु किन्तु इन के भाषण में केवल दोष ही हैं गुण एक भी
नहीं सो विद्वान् लोग विचार कर लेवें ।

और ये ताराचरण जी हैं कि जब काशी नगर के पण्डितों से आनन्द बाग
में सभा भई थी उस में बहुत विशुद्धानन्द स्वामी तथा बाल शास्त्री इत्यादिक
पण्डित आये थे उन के साम्हने डेढ़ पहर तक एक बात में मौन करके बैठे
रहे थे दूसरी बात भी मुख से नहीं निकली थी और जो इन का कुछ भी
सामर्थ्य होता तो अन्य पण्डित लोग क्यों शास्त्रार्थ करते जब उन ने उपास-
नामामिति अत्र सूत्रम् उसी वक्त श्री शुद्धेन मुख्याख्या आदिक श्रेष्ठ लोग उठ
गये कि पण्डित आये तो प्रतिमा पूजन का स्थापन करने को किन्तु यह
अपना आप खण्डन कर चुके ये पंडित कुछ भी नहीं जानते हैं ऐसा कह के
उठ के चले गये फिर अन्य पुरुषों से उन्हों ने कहा कि पंडित हार गया।

और—श्री तत्त्वदर्शनेव प्रतिमा पूजन विद्यातो ज्ञातव्येति
इत्यारदम् ।

ताराचरण जी से मैं ने कहा कि आप के कहने से ही प्रतिमा पूजन का विघात अर्थात् खण्डन हो गया और मैं तो खण्डन कर्त्ता ही हूं फिर पण्डित जी चुप होके ऊपर के स्थान में चले गये उनके पीछे मैं भी ऊपर जाने को चला तब पण्डित सीढ़ी में मिले मैं ने उन का हाथ पकड़ लिया और कहा कि ऊपर आओ फिर ऊपर जाके सब वृन्दावन चन्द्रादिकों के सामने उन पण्डित ताराचरण से मैं ने कहा कि आप ऐसा बखेड़ा क्यों करते फिरते हैं तब वे बोले कि मैं तो काक भाषा का खण्डन करता हूं और सत्यशास्त्र पढ़-ने तथा पढ़ाने का उपदेश भी करता हूं और पाषाणादिक मूर्ति पूजन भी मिथ्या ही जानता हूं परन्तु मैं जो सत्य सत्य कहूं तो मेरी आजीविका नष्ट हो जाय तथा काशिराज महाराज जी सुनें तो मुझको निकाल बाहर कर देवें इस से मैं सत्य सत्य नहीं कह सक्ता हूं जैसे कि आप सत्य सत्य कहते हैं देखना चाहिये कि इस प्रकार के मनुष्यों से जगत् का उपकार तो कुछ नहीं बनता किन्तु अनुपकार ही सदा बनता है बिना सत्य सत्य उपदेश के उप-कार कभी नहीं हो सक्ता इतना मेरे को अवकाश नहीं है कि मिथ्यावादि पुरुषों के साथ सम्भाषण किया करें जो जो मैं ने लिखा है इसमें इतनों से सज्ज-न लोग जान लेवें।

इसके आगे जिन शब्दों के अर्थ के नहीं जानने से टीकाकारों को भ्रम होगया है तथा नवीन ग्रन्थ बनाने वाले और कहने वाले तथा सुनने वाले को भी भ्रम होता है उन शब्दों का शास्त्र रीति तथा प्रमाण और युक्ति से जो ठीक ठीक अर्थ हैं उन्हीं का प्रकाश संक्षेप से लिखा जाता है।

प्रथम तो एक प्रतिमा शब्द है—प्रतिमीयते यया सा प्रतिमा अर्थात् प्रति-मानम् जिससे प्रमाण अर्थात् परिमाण किया जाय उसको कहते प्रतिमा जैसे कि छटांक आधपाव पावसेर सेर पसेरी इत्यादिक और यज्ञ के चमस-आदिक पात्र क्योंकि इनसे पदार्थों के परिमाण किये जाते हैं इससे इन्हों का ही नाम है प्रतिमा यही अर्थ मनु भगवान् ने मनुस्मृति में लिखा है।

तुलामानं प्रतीमानं सर्वं च स्यात्सुलक्षितम्।
षट्सु षट्सु च मासेषु पुनरेव परीक्षयेत्॥

पक्ष पक्ष में वा मास मास में अथवा छठवें मास तुला को राजा परीक्षा करे क्योंकि तराजू की डंडी में भीतर छिद्र करके पारा इसमें डाल देते

हैं जब कोई पदार्थ को तोल के लेने लगते हैं तब डंडी को नीचे नमा दे-
ते हैं फिर पारा तोल के जाने से तोल अधिक आती है और जब देने के समय
में डंडी आगे नमा देते हैं उससे तोल थोड़ी जाती है इससे तुला की परीक्षा
अवश्य करनी चाहिये तथा प्रतिमान अर्थात् प्रतिमा की भी परीक्षा अवश्य
करे राजा जिससे कि अधिक न्यून प्रतिमा अर्थात् दुकान के बांट जितने हैं
उन्हीं का ही नाम है प्रतिमा इसी वास्ते प्रतिमाओं के भेद अर्थात् घाट बाढ़
तोलने वाले के ऊपर दण्ड लिखा है ।

संक्रमध्वजयष्टीनां प्रतिमानाञ्च भेदकः ।
प्रतिकुर्याच्च तत्सर्वं पंचदद्याच्छतानि च ॥

यह मनुजी का श्लोक है इस का यह अभिप्राय है कि संक्रम अर्थात् रथ
उस रथ की ध्वजा की यष्टि जिस के ऊपर ध्वजा बांधी जाती है और प्रतिमा
छटांक आदिक बटखरे इन तीनों को तोड़ डाले वा अधिक न्यून कर देवे
उस को उस से राजा बनवा लेवे और जैसा जिस का ऐश्वर्य उस के योग्य दंड
करे जो दरिद्र होवे तो उस से ५०० पांच से पैसा राजा दंड लेवे जो कुछ
धनाढ्य होवे तो ५०० पांच से रुपैया उस से दंड लेवे और जो बहुत धनाढ्य
होवे उस से ५०० पांच से अशर्फी दंड लेवे रथादिकों को उसी के हाथ से
बनवा ले । वे इस से सज्जन लोग बटखरा तथा अश्मादिक यज्ञ के पात्र इन्हीं
को जो प्रतिमा शब्द से निश्चित जानें ।

दूसरा पुराण शब्द है पुराभवं पुराभवा वा पुराभवश्च इति पुराणं पुराणी
पुराणः जो पुराणा पदार्थ होवे उस को कहते हैं पुराण सो सदा विशेषण वा-
ची ही रहता है तथा पुरातन प्राचीन और प्राक्तन आदिक शब्द सब हैं तथा
इनों के विरोधी विशेषण वाची नूतन नवीन अद्यतन अर्वाचीन आदिक शब्द
हैं जो विशेषणवाची शब्द होते हैं वे सब परस्पर व्यावर्तक होते हैं जैसे कि
यह चीज पुरानी है तथा यह चीज नवीन है पुरान शब्द जो है सो नवीन
शब्द की व्यावृत्ति कर देता है यह पदार्थ पुराना है अर्थात् नया नहीं और
यह पदार्थ नया है अर्थात् पुराना नहीं जहां जहां वेदादिकों में पुराणादिक
शब्द आते हैं वहां वहां इन अर्थों के वाचक ही आते हैं अन्यथा नहीं ऐसा
अर्थ गौतम मुनी जी के किये सूत्रों के ऊपर जो वात्स्यायन मुनि का किया
उस में लिखा है वहां ब्राह्मण पुस्तक जो शत पथादिक उनों का ही

नाम पुराण है तथा शंकराचार्य जी ने भी शारीरक भाष्य में और उपनिषद् भाष्य में ब्राह्मण और ब्रह्म विद्या का ही पुराण शब्द से ग्रहण किया है जो देखा चाहे सो उन शास्त्रों में देख लेवे वह इस प्रकार से कहा है कि जहां जहां प्रश्न और उत्तर पूर्वक कथा होवे उस का नाम इतिहास है और जहां जहां वंश कथा होवे ब्राह्मण पुस्तकों में उस का नाम पुराण है और ऐसे जो कहते हैं कि १८ अठारह ग्रन्थों का नाम पुराण है यह बात तो अत्यन्त अयुक्त है क्योंकि इस बात का वेदादिक सत्य शास्त्रों में प्रमाण कहीं नहीं है और कथा भी इनों में अयुक्त ही है इनों का नाम कोई पुराण रक्खे तो इनों से पूछना चाहिये कि वेद क्या नवीन ही सकते हैं सब ग्रन्थों से वेद ही पुराने हैं और यह बात कहते हैं कि अश्वमेध की जो पूर्त्ति हो जाय उस के १० में दिन पुराण की कथा यजमान सुने सो तो ठीक ठीक है कि ब्राह्मण पुस्तक की कथा सुने और जो ऐसा कहे कि ब्रह्म वैवर्त्तादिकों की क्यों नहीं सुने इस से पूछना चाहिये कि सत्ययुग त्रेता और द्वापर में जब जब अश्वमेध भये थे तब तब किसकी कथा सुनी थी क्योंकि उस वक्त व्यास जी का जन्म भी नहीं भया था तब पुराण कहां थे और जो ऐसा कहे कि व्यास जी युग २ में थे यह बात भी उसकी मिथ्या है क्योंकि अब तक युधिष्ठिरादिकों का निशान दिल्ली आदिकों में देख पड़ता है उसी वक्त व्यास जी और व्यासजी की माता आदिक वर्त्तमान थे इस से यह भी उसका कहना मिथ्याही है पुराण जितने हैं ब्रह्म वैवर्त्तादिक वे सब सम्प्रदायी लोगों ने अपने २ मतलब के वास्ते बना लिये हैं व्यास जी का वा अन्य ऋषि मुनियों का किया एक भी पुराण नहीं है क्योंकि वे बड़े विद्वान् थे और धर्मात्मा उनका वचन सत्यही है तथा छः दर्शनों में उन्हीं के सत्य वचन देखने में आते हैं मिथ्या एक भी नहीं और पुराणों में मिथ्या कथा तथा परस्पर विरोधही है और जैसे वे सम्प्रदायीलोग हैं वैसेही उनके बनाये पुराण भी सब नष्ट हैं सो सज्जनों को ऐसाही जानना उचित है अन्यथा नहीं ।

तीसरा देवालय और चौथा देवपूजा शब्द है देवालय देवायतन देवागार तथा देवमन्दिर इत्यादिक सब नाम यज्ञ शालाओं के ही हैं क्योंकि जिस स्थान में देवपूजा होवै उसके नाम हैं देवालयादिक और देव संज्ञा है परमेश्वर को तथा परमेश्वर की आज्ञा जो वेद उसके मन्त्रों को भी देव संज्ञा है देव भी होता है कोई देवता है यह बात पूर्व मीमांसा शास्त्र में विस्तार से

लिखी है जिसको देखने की इच्छा हो वह उस शास्त्र में देख ले विस्तार से लिखी है जो कि शास्त्र कर्मकांड के ऊपर है वे जैमिनि मुनि के किये हुए हैं यहां तक उस में लिखा है कि ब्रह्मा विष्णु महादेवादिक देव जो देवलोक में रहते हैं उनका भी पूजन कभी न करना चाहिये एक परमेश्वर के बिना सो उसमें इस प्रकार से निषेध किया है कि।

(यज्ञेनयज्ञमयजन्तदेवास्तानि धर्म्माणिप्रथमान्यासन्)

यह यजुर्वेद की श्रुति है ब्रह्मादिक जो देव वे सब यज्ञ करते हैं तब उन से अन्य कौन देव है जो कि उनके यज्ञों में आके भाग लेवे सो उनों से भी कोई देव नहीं है और जो कोई मानेगा तो उसके मत में अनवस्था दोष आवेगा इस से परमेश्वर और वेदों के मन्त्र उनों को ही देव और देवता मानना उचित है अन्य कोई को नहीं अग्निर्देवता इत्यादिक जो यजुर्वेद में लिखा है सो अग्नि आदिक सब नाम परमेश्वर के ही हैं क्योंकि देवता शब्द के विशेषण देने से इस में मनुस्मृति का प्रमाण है।

आत्मैवदेवताःसर्वाः सर्वमात्मन्यवस्थितम्

आत्माहिजनयत्येषां कर्मयोगंशरीरिणाम् ॥ १ ॥

प्रशासितारं सर्वेषा मणोयांसमणोरपि ।

रुक्माभंस्वप्नधीगम्यं विद्यात्तंपुरुषम्परम् ॥ २ ॥

एतमग्निं वदन्त्येके मनुमेकेप्रजापतिम् ।

इन्द्र मेकेऽपरेप्राण मपरे ब्रह्म शाश्वतम् ॥ ३ ॥

इन श्लोकों से आत्मा जो परमेश्वर उसी का देवता नाम है और अन्यादिक जितने नाम हैं वे भी परमेश्वर के ही हैं परन्तु जहां २ ऐसा प्रकरण हो कि उपासना स्तुति प्रार्थना तथा इस प्रकार के विशेषण जहां वहां परमेश्वर का ही ग्रहण होता है अन्यत्र नहीं किन्तु सर्व मात्मन्य वस्थितम् सिवाय परमेश्वर के कोई में सब जगत् नहीं ठहर सक्ता और प्रशासितारं सर्वेषामित्यादिक विशेषणों से परमेश्वर का ही ग्रहण होता है अन्य का नहीं क्योंकि सब का शासन करने वाला बिना परमेश्वर के कोई नहीं तथा सूक्ष्म से भी अत्यन्त सूक्ष्म और पर पुरुष परमेश्वर से भिन्न ऐसा कोई नहीं हो सकता है निरुक्त में भी यह लिखा है कि—

(अथ देवतौ चार्थितत्वलक्षणोऽध्याय:)

जहां जहां देवता शब्द आवे तहां तहां उस नाम वाले मन्त्र को ही लेना जैसे की अग्निर्देवता इस में अग्नि शब्द आया हो जिस मन्त्र में अग्नि शब्द होवे उस मन्त्र का ही ग्रहण करना। अग्नि मीळेपुरोहित मिति यह मन्त्र ही देवता है अन्य कोई नहीं इस से क्या आया कि परमेश्वर और वेदों के मन्त्र तो देव और देवता हैं जिस स्थान में होम परमेश्वर का विचार ध्यान और समाधि करें उस के नाम हैं देवालयादिक इस में मनुस्मृति का प्रमाण भी है।

अध्यापनंब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञस्तुतर्पणम् ।
होमोदैवोबलिर्भौतो न्रयज्ञोऽतिथिपूजनम् ॥ १ ॥
स्वाध्यायेनार्चयेत्तर्षीन् होमैर्देवान्यथाविधि ।
पितृन्श्राद्धै र्नृनन्नै र्भूतानिबलिकर्मणा ॥ २ ॥

इन श्लोकों से क्या आया कि होम जो है सोई देवपूजा है अन्य कोई नहीं और होमस्थान जितने हैं वेही देवालयादिक शब्दों से लिये जाते हैं पूजा नाम सत्कार क्योंकि अतिथिपूजनम् होमैर्देवानर्चयेत् अतिथियों का पूजन नाम सत्कार करना तथा देव परमेश्वर और मन्त्र इन्हीं का सत्कार इस का नाम है पूजा अन्य का नहीं और पाषाणादि मूर्तिस्थान देवालयादिक शब्दों से कभी नहीं लेना तथा घंटा नादादि पूजा शब्द से कभी नहीं लेना देवस्व और देवलक शब्द का यह अर्थ है कि।

यद्वित्तंयज्ञशीलानां देवस्वंतद्विदुर्बुधाः ।
अयज्वनांतुयद्वित्तं मासुरस्वंप्रचक्षते ॥ १ ॥

यह मनु का श्लोक है इस का यह अभिप्राय है कि जिन्हों को यज्ञ करने का शील अर्थात् स्वभाव होवे उन को सब धन यज्ञ के वास्ते ही होता है अर्थात् देवार्थ धन है (येद्वत्तंदेवदेवस्वम्) अर्थात् होम के लिये जो धन होवे उस का नाम देवस्व है सो भिक्षा अथवा प्रतिग्रह करके यज्ञ के नाम से धन लेके यज्ञ तो करे नहीं और उस धन से अपना व्यवहार करे इस का नाम है देवल सो इस की मनु में निन्दा लिखी है देव पितृ कार्य में उस को निमन्त्रण कभी न करना चाहिये ऐसा उस का निषेध लिखा है और जो यज्ञ के धन की चोरी करता है वह होता है देवलक।

कुत्सितो देवो देवकः कुत्सिते इत्यनेन कन् प्रत्ययः ॥१॥

देवलक भी पाषाण निन्दित है एक यह चमत्कार लोगों का देखना चाहिये कि विद्वान् भोजनीयः, सत्करणीयश्च इति विद्वान् को भोजन कराना चाहिये और उस का सत्कार भी करना चाहिये इससे कोई को ऐसी बुद्धि न होगी कि पाषाणादिक मूर्त्ति को भोजन कराना वा उस का सत्कार करना चाहिये यह भी बात ऐसी ही है एक बात ये लोग कहते हैं कि पाषाणादिक तो देव नहीं हैं परन्तु भाव से ये देव हो जाते हैं उनसे पूछना चाहिये कि भाव सत्य होता है वा मिथ्या जो ये कहें कि भाव सत्य होता है फिर उनसे पूछना चाहिये कि कोई भी मनुष्य दुःख का भाव नहीं करता फिर उस को क्यों दुःख होता है और सुख का भाव सब मनुष्य सदा चाहते हैं फिर उन को सुख सदा क्यों नहीं होता फिर ये कहते हैं कि यह बात तो कर्म से होती है अच्छा तो आप का भाव कुछ भी नहीं ठहरा अर्थात् मिथ्या ही हुआ सत्य नहीं हुआ आप से मैं पूछता हूं कि अग्नि में जल का भाव कर के हाथ डाले तो क्या वह न जल जायगा किन्तु जल ही जायगा इस से क्या आया कि पाषाण को पाषाण ही मानना और देव को देव मानना चाहिये अन्यथा नहीं इस से जो जैसा पदार्थ है वैसा ही उस को सज्जन लोग मानें काश्यादिक स्थान, गंगादिक तीर्थ, एकादशी आदिक व्रत राम शिव कृष्णादिक नाम स्मरण तथा तोबा शब्द वा यीसू के विश्वास से पापों का छूटना और मुक्ति का होना तिलक छाप माला धारण तथा शैव शाक्त गाणपत्य वैष्णव क्रिश्चन और महम्मदी और नानक कबीर आदिक संप्रदाय इन्हीं से पाप सब छूट जाते हैं और मुक्ति भी होती है यह अन्यथा बुद्धि ही है क्योंकि इस प्रकार के सुनने और मिथ्या निश्चय के होने से सब लोग पापों में प्रवृत्त हो जाते हैं कोई न भी होगा कभी कोई मनुष्य पाप करने में भय नहीं करते हैं जैसे।

अन्यक्षेत्रेकृतंपापं काशीक्षेत्रेविनश्यति ।
काशीक्षेत्रेकृतंपापं पंचक्रोश्यांविनश्यति ॥ १ ॥
पंचक्रोश्यांकृतंपापं अन्तर्गृह्यांविनश्यति ।
अन्तर्गृह्यांकृतंपापं अविमुक्तेविनश्यति ॥ २ ॥
अविमुक्तेकृतंपापं स्मरणादेवनश्यति ।

काश्यांतुमरणान्मुक्ति नविकार्यविचारणा ॥ ३ ॥

इत्यादिक श्लोक काशीखंडादिकों में लिखे हैं काश्यांमरणान्मुक्तिः कोई पुरुष इस को श्रुति कहता है सो यह वचन उस का मिथ्या ही है क्योंकि चारों वेदों के बीच में कहीं नहीं है कोई ने मिथ्या जाबालोपनिषद रच लिया है किन्तु अथर्व वेद के संहिता में तथा कोई वेद के ब्राह्मण में इस प्रकार की श्रुति है नहीं इससे यह श्रुति तो कभी नहीं हो सकती किन्तु कोई ने मिथ्या कल्पना कर ली है जैसे कि अन्यक्षेत्रेकृतंपापं इत्यादि श्लोक मिथ्या बना लिये हैं इस प्रकार के श्लोकों को सुनने से मनुष्यों को बुद्धि भ्रष्ट होने से सदा पाप में प्रवृत्त होजाते हैं इस से सब सज्जन लोगों को निश्चित जानना चाहिये कि जितने २ इस प्रकार के माहात्म्य लिखे हैं वे सब मिथ्याही हैं इनों से मनुष्यों का बड़ा अनुपकार होता है जो कोई धर्मात्मा बुद्धिमान् राजा होवे तो इन पुस्तकों का पठन पाठन सुनना सुनाना बन्द कर दे और वेदादि सत्य शास्त्रों की यथावत् प्रवृत्ति करा देवे तब इस उपद्रवकी यथावत् शांति होनेसे सब मनुष्य श्रेष्ठ हो जायें अन्यथा नहीं विषयवती प्रवृत्ति रुत्पन्नामनसः स्थितिनिबन्धिनी इस सूत्र के भाष्यमें लिखा है कि एतेनचन्द्रादित्य ग्रहमणि प्रदीप रत्नादिषु प्रवृत्तिरुत्पन्ना विषयवत्येव वेदितव्येति इस से प्रतिमा पूजन कभी नहीं आसकता क्योंकि इनों में देवबुद्धि करना नहीं लिखा किन्तु जैसे वे जड़ हैं वैसे ही योगी लोग उन को जानते हैं और बाह्य सुख जो इन्द्रिय उस को भीतर सुख करने के वास्ते योगशास्त्र की प्रवृत्ति है बाहर के पदार्थ का ध्यान करना योगी लोग को नहीं लिखा क्योंकि जितने सावयव पदार्थ हैं उन में कभी चित्त की स्थिरता नहीं होती और जो होवै तो मूर्त्तिमान धन पुत्र दारादिक के ध्यान में सब संसार लगा ही है परन्तु चित्त की स्थिरता कोई की भी नहीं होती इस वास्ते यह सूत्र लिखा। विशोकावाज्योतिष्मती १ इस का यह भाष्य है।

प्रवृत्तिरुत्पन्नामनसः स्थितिनिबन्धिनीत्यनुवर्त्तते हृदयपुण्डरीके धारयतो या बुद्धिसंवित् बुद्धिसत्त्वं हि भास्वरमाकाशकल्पं तत्र स्थितिवैशारद्यात् प्रवृत्तिः सूर्येन्दुग्रहमणिप्रभारूपाकारेण विकल्पते तथास्मितायां समापन्नं चित्तं निस्तरंगमहोदधिकल्पं

शान्तमनन्तमस्मितामात्रं भवति तत्रेदमुक्तम् तमणुमात्रमात्मान-
मनुविद्यास्मीति एवं तावत् संप्रजानीते इत्येषा द्वयी विशोका ज्यो-
तिष्मती विषयवती अस्मितामात्रा च प्रवृत्तिर्ज्योतिष्मतीत्युच्य-
ते यया योगिनश्चित्तं स्थितिपदं लभत इति ।

इस में देखना चाहिये कि हृदय में धारणा चित्त की निश्चो इस से नि-
र्मल प्रकाश स्वरूप चित्त होता है जैसा सूक्ष्म विभु आकाश है वैसी ही योगि
की बुद्धि होती है सब नाम अपने हृदय में विशाल स्थिति के होनेसे बुद्धि के
जो शुद्ध प्रवृत्ति सोई बुद्धि सूर्य चन्द्र ग्रहमणि इनों की जैसी प्रभा वैसी ही
योगि की बुद्धि समाधि में होती है तथा अस्मिता मात्रा अर्थात् यही मेरा
स्वरूप है ऐसा साक्षात्कार स्वरूप का ज्ञान बुद्धि को जब तब होता है वि
निस्तरंग अर्थात् निष्कम्प समुद्र की नाईं एक रस व्यापक होता है तथा
शान्त निरुपद्रव अनन्त अर्थात् जिस की सीमा न होवे यही मेरा स्वरूप है
अर्थात् मेरा आत्मा है सो विगत अर्थात् शोक रहित जो प्रवृत्ति वही विषय-
वती प्रवृत्ति कहाती है इसी को अस्मिता मात्र प्रवृत्ति कहते हैं तथा ज्योति-
ष्मती भी इसी को कहते हैं योगी का जो चित्त है सोई चन्द्रादित्य आदि
स्वरूप हो जाता है।

सू॰ स्वप्ननिद्राज्ञानालम्बनं वा ।

भाष्य॰ स्वप्नज्ञानालम्बनं निद्राज्ञानालम्बनं वा तदाकारं योगिनश्चित्तं स्थि-
तिपदं लभत इति । जैसे स्वप्नावस्था में चित्तज्ञान स्वरूप हो के पूर्वानुभूत सं-
स्कारों को यथावत् देखता है तथा निद्रा अर्थात् सुषुप्ति में आनन्दस्वरूप शा-
न्तम् चित्त होता है, ऐसा ही जाग्रतावस्था में जब योगी ध्यान करता है
इस प्रकार आनन्द में तब योगी का चित्त स्थिर हो जाता है।

सू॰ यथाभिमतध्यानाद्वा ।

भाष्य॰ यदेवाभिमतं तदेव ध्यायेत् तत्र लब्धस्थितिकमन्यत्रापि स्थितिपदं
लभत इति नासिकाग्रे धारयतो ध्यानस्थमर्पितम् । इस में जैसे निद्राज्ञानालम्बन
वा यहां तक शरीर में जितने चित्त के स्थिर करने के वास्ते स्थान लिखे हैं
इनों में से कोई स्थान में योगी चित्त को धारण करे जिस स्थान में अपनी
अभिरुचि हो उसी में चित्त को ठहरावे।

सू॰ देशबन्धश्चित्तस्य धारणा॥

भाष्य॰ नाभिचक्रे हृदय पुंडरीके मूर्द्धि ज्योतिषि नासिकाग्रे जिह्वाग्र इत्येवमादिषु देशेषु बाह्येवाविषये चित्तस्य वृत्तिमात्रेणबन्ध इति। अस्योधारणा॥ नाभि हृदय मूर्द्धा ज्योति अर्थात् नेत्रनासिकाग्र जिह्वाग्र इत्यादिक देशों के बीच में चित्त को योगी धारण करे तथा बाह्य विषय जैसा कि ओङ्कार वा गायत्री मन्त्र इन में चित्त लगावे हृदय से क्योंकि। तज्जपस्तदर्थभावनम्। यह सूत्र है योग का इसका योगी जप अर्थात् चित्त से पुनः पुनः आवृत्ति करे और इस का अर्थ जो ईश्वर उस को हृद में विचारे।

सू॰ तस्यवाचकःप्रणवः।

ओङ्कार का वाच्य ईश्वर है और उसका वाचक ओङ्कार है बाह्य विषय से इन को ही लेना और कोई को नहीं क्योंकि अन्य का प्रमाण कहीं नहीं।

सू॰ तत्रप्रत्ययैकतानताध्यानम्।

भाष्य॰ तस्मिन्देशेध्येयालम्बनस्य प्रत्ययस्यैक तानतासदृशःप्रवाहःप्रत्ययान्तरेणापरामृष्टोध्यानम्। तिन देशों में अर्थात् नाभि आदिकों में ध्येय जो आत्मा उस आलम्बन को और चित्त की एकतानता अर्थात् परस्पर दोनों की एकता चित्त आत्मा से भिन्न न रहे तथा आत्मा चित्त से पृथक् न रहे उस का नाम है सदृश प्रवाह जब चित्त प्रतिक्षण चेतन से ही युक्त रहे अन्य प्रतीय कोई पदार्थान्तर का स्मरण न रहे तब जानना कि ध्यान ठीक हुवा।

सू॰ तदेवार्थमात्रनिर्भासंस्वरूपशून्यमिवसमाधिः।

जब ध्याता ध्यान और ध्येय इन तीनों का पृथक् भाव न रहे तब जानना कि समाधि सिद्ध हो गई।

सू॰ त्रयमन्तरङ्गपूर्वेभ्यः।

यमादिक पांच अङ्गों से धारणा ध्यान और समाधि ये तीन अन्तरङ्ग हैं और यमादिक बहिरङ्ग हैं।

सू॰ भुवनज्ञानंसूर्य्येसंयमात्। चन्द्रेताराव्यूहज्ञानम्। ध्रुवेतद्गतिज्ञानम्। नाभिचक्रेकायव्यूहज्ञानम्। मूर्द्धज्योतिषिसिद्धदर्शनम्। प्रतिभाद्वासर्वम्।

इत्यादिक सूत्रों से यह प्रसिद्ध जाना जाता है कि धारणादिक तीन पर आभ्यन्तर के हैं सो हृदय में ही योगी परमाणु पर्य्यन्त पदार्थ हैं उन को योग ज्ञान से योगी जानता है बाहर के पदार्थों से किञ्चिन्मात्र भी ध्यान में सम्बन्ध योगी नहीं रखता किन्तु आत्मा से ही ध्यान का सम्बन्ध है और मैं नहीं इस विषय में जो कोई अन्यथा कहे सो उस का कहना सब अज्ञान और मि- ही जानो क्योंकि।

सू॰ योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः। तदाद्रष्टुःस्वरूपेऽवस्थानम्।

जब योगी चित्त वृत्तियों को निरोध करता है बाहर और भीतर से त- पश्च द्रष्टा जो आत्मा उस चेतन स्वरूप में ही स्थित हो जाती है अन्यथ नहीं

सू॰ विपर्ययोमिथ्याज्ञानमतद्रूपप्रतिष्ठम्।

विपरीत ज्ञान जो होता है उसी को मिथ्या ज्ञान कहते हैं उस को योगी छोड़ देही होता है अन्यथा कभी नहीं इस से क्या आया कि जो योगशास्त्र से पाषाणादिक मूर्त्ति का पूजन कहै सो मिथ्या ही कहता है इस में कुछ सन्देह नहीं।

श्लोकः दयायाआनन्दोविलसतिपरःस्वात्मविदित सरस- त्यस्यान्तेनिवसतिमुदासत्यवचना। तदाख्यातिर्यस्य प्रकटितगु- णाराष्ट्रिशरणासकोदान्तःशान्तो विदितविदितोवेद्यविदितः॥१॥
श्री दयानन्द सरस्वतीस्वामिना विरचितमिदमतिविज्ञेयम्।

मूर्त्तिपूजन का निषेध करनेवाले दयानन्द प्रभृत
लोगों के गले की

दूषणमालिका।

भारतभूषण भारतेंदु बाबू हरिश्चन्द्र कृत

कृष्णरसिकजनों के आनन्दार्थ

श्री मन्महाराजकुमार श्री बाबू रामदीन सिंह
"क्षत्रियपत्रिका" तथा "हरिश्चन्द्रकला" संपादक
द्वारा प्रकाशित।

पटना—"खड्गविलास" प्रेस—बांकीपुर।

साहबप्रसाद सिंह द्वारा मुद्रित।

१८९०.

पहली बार] [दाम) आना।

श्रीश्रीवल्लभोविजयते ।

भूमिका ।

अब दयानन्दस्वामी भला जाने कौन जाति वा किस आश्रम के कोई मनुष्य सब देशों में भ्रमण करते हुए सनातन सधर्मरूपी सूर्य को राहु की भांति ग्रास करते हुए मूर्खों और आलस्य से भरे हुए जीवों के हृदय वस्त्र को अपने रंग में रंगते हुए इसी बहाने अपना नाम लोगों में विदित करते हुए और अपने वाक्य मान के आडम्बर से साधु लोगों का हृदय दहन करते हुए काशी में आये और दुर्गाकुण्ड के निवासियों के सहवासी हुए और उनने जो स्वयं उपद्रव किये वह सब पर विदित हैं अब उनने एक छोटी सी पुस्तक छपवाकर लोगों पर यह विदित करना चाहा है कि मैं हारा नहीं इस से मैंने ऐसा विचार किया कि ऐसे मनुष्य से सम्भाषण करना उचित नहीं और पत्रद्वारा शास्त्रार्थ करना जिस में सब लोगों पर सदसत् का प्रकाश और हारने जीतने का निश्चय होजाय इस हेतु यह दूषणमालिका उनके गले में पहिनाई जाती है उनको उचित है कि इन सब प्रश्नों का प्रति पद उत्तर दें और इसी प्रकार से बराबर पत्रद्वारा शास्त्रार्थ होय और इनने प्रश्नों का एक जीतने के इश्तिहार की भांति उत्तर न दिया जाय क्योंकि इन शब्दों के प्रति शब्द का उत्तर न देने से परास्त समझे जांयगे और प्रश्नोत्तर करते२ जो थक जाय और जिसकी बुद्धि में उत्तर की युक्ति न आवैं वह हारा समझा जायगा ।

१८७० ई०
काशी } हरिश्चन्द्र

१ आपने जो पुस्तक छपवाई है उसमें वेद के मन्त्र हैं जो वेद के मन्त्र शूद्रों तथा म्लेच्छादिकों के हाथ में देने से आप को दोष हुवा कि नहीं ।

२ आप कौन आश्रम और किस जाति के हैं और किस धर्म को मानते हैं जो कहिये कि हम वेदधर्म को मानते हैं तो वेदधर्म ही को मानना इस में क्या प्रमाण और ख्रीष्ट और मुहम्मदी मत को न मानना इसमें क्या प्रमाण जो कहिये कि हम उभो कुल में उत्पन्न हैं इससे यही धर्म मानना योग्य है तो आप मूर्त्ति पूजक के वंश में हो कि नहीं ।

३ जो आप कहैं कि हम अमुक जाति के थे अब योगी हुए हैं तो आप के पिता पुरुषा सब उसी जाति में उत्पन्न हुए इसको किसने देखा है और इस में क्या प्रमाण है ।

४ जो कहिये कि शिष्टाचार प्रमाण है और हम सुनते आते हैं कि हम अमुक वंशीय हैं तो इसी भांति मूर्त्ति पूजनादि शिष्टाचार क्यों नहीं मानते ।

५ जो कहो कि वेद में नहीं है तो दयानन्द स्वामी अमुक वंश में भये यह वेद में कहां है ।

६ आपने सम्पूर्ण वेद देखा है ।

७ जो कहिये कि वेद बहुत है और लुप्त प्राय है इस से सब नहीं देखा है तो वेद में अमुक वस्तु नहीं यह कहना व्यर्थ हो जाता है ।

८ जो आप वेद जानते हैं तो उन के भेद कहिये ।

९ आप के उपनिषत् किन किन ब्राह्मणों वा संहिता के अन्त भाग हैं ।

१० जो कहिये कि अमुक के हैं तो वे सब वेद के भीतर हैं या बाहर जो भीतर हैं तो अश्वमेध प्रकर्ण में जब एकबेर सब वेदों को गिनाय गये तो फिर वेद के बाहरवाली कौन ब्रह्मविद्या थी जिसे पुराण के नाम से चर्चित अन्वर्थ किया ।

११ अश्वमेध प्रकर्ण में पुराण शब्द का अर्थ ब्रह्मविद्या है इस में कौन सा प्रमाण है और बसुरुद्रादि शब्द का अर्थ परमेश्वर ही है लिंगधारी देवता नहीं इस में क्या प्रमाण और वेद में जहां सहस्त्रनयन बज्रपाणि इत्यादि विशेषण दिये वहां क्या व्यवस्था और जो व्यवस्था आप करें वही ठीक इस में क्या प्रमाण ।

१२ और भी कई स्थान पर पुराण का अर्थ प्राचीन और इतिहासही है इस में क्या प्रमाण ।

३० सामवेद का उपवेद गान है इस में श्रुति प्रमाण दीजिये।

३१ गान-विद्या के कौन ग्रन्थ आर्ष इस में भी श्रुति पूर्व्वक कहो।

३२ अथर्व्ववेद का उपवेद शिल्प है इस में श्रुति प्रमाण दीजिये।

३३ शिल्प विद्या में कौन कौन ग्रन्थ मिलते हैं और वे श्रुति सम्मत भी हैं इस में प्रमाण कहिये।

३४ चारो उपवेद जो आप न जानते होंगे तो उस विषय के अज्ञ होने से [illegible] दोषापत्ति है।

३५ शिक्षा का कौन ग्रन्थ है और उसके आर्ष होने में श्रुति प्रमाण दीजिये।

३६ कल्प जो प्रचलित है सो आर्ष है इस में श्रुति प्रमाण दीजिये और कल्प के कौन ग्रन्थ मिलते हैं कहिये।

३७ अष्टाध्यायी आर्ष है इस में श्रुति प्रमाण कहिये।

३८ महाभाष्य प्रमाण है इस में श्रुति प्रमाण कहिये।

३९ निरुक्त कौन ग्रन्थ प्रचलित है और वही आर्ष भी इस में युक्ति और प्रमाण दीजिये।

४० छन्द के कौन ग्रन्थ आर्ष हैं और उनके आर्ष होने में क्या प्रमाण और उनके स्वरूप वेद में कहां हैं इस में श्रुति प्रमाण दीजिये।

४१ भृगुसंहिता आर्ष है इस में श्रुति प्रमाण दीजिये और प्रचलित भृगुसंहिता वही प्राचीन भृगुसंहिता है इस में युक्ति कहिये।

४२ ये ग्यारह उपनिषत् वेदान्त शास्त्र हैं यह बात कहां लिखी है इस में श्रुति प्रमाण दीजिये।

४३ शारीरक सूत्र आर्ष है इस में प्रमाण दीजिये और यह वही सूत्र है जो व्यास ने कहा इस में युक्ति कहिये।

४४ कात्यायन श्राद्ध-सूत्र आर्ष है इस में प्रमाण कहिये और आदिपद से आप और किसे लेते हैं।

४५ योगभाष्य आर्ष है इस में श्रुति प्रमाण दीजिये।

४६ मनुस्मृति यह वही है जो मनु ने कहा है [illegible] से बदली नहीं इस में युक्ति और श्रुति प्रमाण दीजिये।

४७ मनुस्मृति में जिन वाक्यों को आप नहीं मानते वे क्षिप्त हैं इस में प्रबल युक्ति और श्रुति प्रमाण दीजिये।

४८ यही महाभारत महाभारत है इसमें क्या प्रमाण और कौनसी युक्ति है।

४९ महाभारत में जिन श्लोकों को आप कल्पित मानते हैं उनके कल्पित और बाकी आर्ष होने में कौन प्रमाण और कौनसी युक्ति है।

५० श्रीमद्भगवद्गीता में श्रीभगवानने जो "मे" मत् "मां" इन शब्दों से अपनी भक्ति यही परम धर्म है यह कहा है यह प्रमाण या नहीं।

५१ जो कहो कि "मे" इत्यादि शब्दों का अर्थ आत्मा है तो और स्थान पर जहां ये शब्द आये हैं वहां इनका आत्मा अर्थ क्यों नहीं होता और दूसरे स्थान पर इन शब्दों का अर्थ अपना सुझे होय श्रीमद्भगवद्गीता में आत्मा अर्थ होय इसमें प्रमाण और प्रबल युक्ति दीजिये।

५२ इन ऊपर के लिखे हुए ग्रन्थों को आप सब भांति से जानते हैं नहीं जो सब को न जानियेगा तो सर्व्वज्ञ न ठहरियेगा और जो सर्व्वज्ञता बिना कोई बात कहियेगा तो ७ प्रश्न का दोष पड़ेगा।

(इन ऊपर लिखे ग्रन्थों को दयानन्द प्रमाण मानते हैं)

५३ शिष्टाचार प्रमाण है कि नहीं।

५४ जो कहिये कि जो अविरुद्ध अर्थात् वेद में लिखा है वह प्रमाण बाकी अप्रमाण तो आप नित्य उठ के सब वेद में लिखी हुई बातें करते हैं तो सब बातों को वेद से सिद्ध कीजिये कि आप मट्टी लगाते हैं सो वेद में कहां लिखा है आप कौपीन धारण करते हैं यह कहां लिखा है मैं एक दिन आपके दर्शन को गया था उस दिन आप बजार के लड्डू और गुलाबजामुन खाते थे यह कहां लिखा है और उस दिन आप पीतल की लोटिया में जल पीते थे यह वेद में कहां लिखा है आप मूर्ति पूजन और पुराणों का निषेध करते हैं यह कहां लिखा है।

५५ जो कहिये यह मनुष्य की परम्परा प्राप्त है तो मूर्तिपूजन भी परम्परा प्राप्त है और शिष्टाचार अवश्य माननीय है और भी इस में यह बात है कि मूर्ति पूजन का यद्यपि इस लोक में कुछ फल न हो तथापि यदि परलोक में इसका फल सत्य हुआ तो आप फिर महापाप के भागी हुए और जो न सत्य हुआ तो इन लोगों को कुछ हानि नहीं बल्कि शिष्टाचार मानने से इनको धर्मात्मा होंगे।

५६ ये यथा मां प्रपद्यन्ते तां स्तथैव भजाम्यहं। इस भगवत् प्रतिज्ञा का क्या आशय है और यथा शब्द के अनुसार दैवतादिक और मूर्ति आदिक नहीं है इस में प्रमाण अर्थ के नियत कहिये।

५७ कालाग्निरुद्रोपनिषत् और तापनीयादिक श्रुति को आप क्यों नहीं मानते इस में श्रुति प्रमाण दीजिये।

५८ सब ब्रैवर्ण के ग वेदी हैं इस में क्या वेदप्रमाण युक्ति पूर्वक कहिये।

५९ सब वेद की पुस्तकें और उनके सब मन्त्र वेही हैं जो ईश्वर से निकले और इतने काल तक उनका स्वरूप कुछ नहीं बदला और ये सब वेही अर्थ अक्षर हैं इस में किसी ने कपोल कल्पित मन्त्र नहीं मिलाये इस में क्या प्रमाण और कौनसी युक्ति है कहिये।

६० जो कहिये कि परम्परा प्राप्त है तो परम्परा प्राप्तता से वेद का तो निश्चय होय और परम्परा प्राप्त मूर्त्तिपूजन न माना जाय इसमें क्या प्रमाण और जो आप कहिये कि हम अपनी बुद्धि से समझते हैं कि ये वेद वेही हैं तो आप की बुद्धि ठीक है इसमें क्या प्रमाण और कौन सी युक्ति है।

६१ लाख सौ पण्डित लोगों को मानें की एक आप की।

६२ जो कहिये कि ऐसा लिखा है कि एक पण्डित सौ मूर्ख इतना होता है तो यह सब अन्य हैं हम पण्डित हैं हमारी बात मानो तो इस में क्या प्रमाण है और क्या युक्ति है कि आपही पण्डित हैं और ये सब अन्य हैं।

६३ वेद की पुस्तक पर जो कोई लात रखदे तो आप उसको दोष भागी कहेंगे तो वह दोष भागी कैसे होगा क्योंकि मूर्त्तियों में तो आप कहते हैं वहां क्या है पत्थर है तो उस वेद की पुस्तक में क्या है कागज़ और सियाही है जो हमारे हाथ की बनाई है और हमारे हाथ का लिखा है और अक्षर है सो एक प्रकार का संकेत है तो ऐसी जड़ वस्तु के अनादर से क्या दोष है जो कहिये उन से वेही मन्त्र समझे जाते हैं जो हमारे धर्म स्वरूप हैं इस से आदर के योग्य हैं तो ये मूर्त्तियां जिन से हमारे [illegible]वता के आकार का स्मरण होता है क्यों नहीं मानने के योग्य है।

६४ आप के पिता या किसी पुरुषा का मृत देह या उन की चित्र जिससे उन के स्वरूप का ज्ञान हो या कागज पर उन का नाम लिख के इन सब का अनादर करें और इन पर बुरी वस्तु डालें तो आप को बुरा लगेगा की नहीं क्योंकि ये सब तो पृथ्वी तत्त्व के अंश और जड़ वस्तु हैं।

दयानन्द जीने ४ प्रश्न किये थे इस हेतु उन के चार को चार बेर चौगुन करके चौसठ प्रश्न किये हैं इन का उत्तर उन को यथाशः देना उचित है।

पावसकवितासंग्रह।

अर्थात्

अनेक कवियों की उत्तम उत्तम चुनीहुई
पावस की अपूर्व कविता।

भारतभूषणभारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र द्वारा संगृहीत।

जिस को हिन्दीभाषा के प्रेमी तथा रसिकजनों के मनोविलास केलिये
क्षत्रिय-पत्रिका सम्पादक श्री मं० कु० बा० रामदीन सिंह ने
प्रकाशित किया।

पटना—"खड्गविलास" प्रेस—बांकीपुर।
साहबप्रसाद सिंह ने मुद्रित किया।
१८८७.
हरिश्चन्द्राब्द १३.

प्रथमवार] [दाम /)

पावससंग्रह।

सवैया—भादौं की कारी अंध्यारी निसा झुकि बादर मन्द फुही बरसावत। ...खिका आपने ऊंची अटा पैं छकी रसरंग मल्हारहि गावत॥ ता समें नागरी ...दृगदूरतें आतुर रूप को भीख यों पावत। पौन सया करि घूंघट टारै दया-...रि दामिनी दीप दिखावत॥ १॥

कवित्त—जोग को न कहियो वियोग कहियो न कछु जोग कौन कहियो ...भोग सरसाइयो। हित को न कहियो परहित को न भाखियौ जू चित को न ...हियो नहीं चेत को चिताइयो॥ पूछै जो प्रवीनवेनी रसिक गुपाल लाल ...विन को हाल तौ विहाल हमि गाइयो। ऊधौ मन भावन सौं सहज ...भावन सौं सावन सुहावन को आवन सुनाइयो॥ २॥

सवैया—जाय न कान्ह मधूपुरी जौं प्रियप्यारी सबै प्रिय बात सिखावन। ...सम बादर है बरखा गिरिधारन सार की फांस बंधावन॥ धावन इन्द्र के ...र अबै लगि हैं चहुंघौरे जलै बरसावन। सावन मैं तब आयु बिना सिमि ...रिहिंगी तिय काम लजावन॥ ३॥

...मत घुमड मतवारे से महान घन घूमत नगारे ज्यौं धुकार धुनि सौं मढ़े। ...रवा धमक अदभुत से तमक उठो दामिनी दमक चारुधीर पत्र से कढ़े॥ ...सी सुधि पावस प्रबलदल दयाराम आयो विरहीन पै अतंक अतिही बढ़े। ...रखा लगोरें बागबान बरखा सी छौन आरखा से पढ़त मयूर गिरि पै चढ़े॥४॥

सवैया—पावस मैं परदेस पिया सुखदी बनितान सौं प्रेम पगी। घन घूमि-...हे छवि सौं छिति पैं सरसाद मनोरथ जाग भगी॥ पति सारत मार सुबानन ...सौं पुन नैन समो सब आस जगी। केहि भांति पतिव्रत पाकहुंरी सुरवा गिरी ...कहरान लगी॥ ५॥

हरीभई भुंमिउठ्यो घन घुंमि बरसत भुंमि, हरखत मोरैं। तड़पत भेक ...ड़कत सांप खड़कत पात पहार के कोरैं॥ चमकत विज्जु लखा लड-...लात झमकत झिंगुर झांझसी झोरैं। पछी पछतात तपी बिलखात डरपत ...कामिनि कंत के कोरैं॥ ६॥

सबैरात बैहर प्रचंड घंड मंडल पै दबैरात दामिनि की दुतिदी अफैरात।

बिथा उमड़ी घरी घरी ॥ अजहूं न आये हरी भरी जलभरी भूमि चहूंओर देखो बन हो रहो हरो हरो । छूटन लगेरी धीर धुरवा निहारी प्रान लूटन लगेरी बोन सुरवा घरी घरी ॥ १४ ॥

आईरितु पावस न आये प्रान प्यारे यातें मेघन बरज आलो गरजन पावैं ना । दादुर हटकि बकि बकि कै न फोरैं कान पिक न फटकि मोहि सबद सुनावैं ना ॥ बिरह बिथा तें हौं तौ व्याकुल भई हौं देव जुगनू चमकि चित चिनगी उठावैं ना । चातक न गावैं मोर सोर ना मचावैं घन घुमरि न छावैं जौलौं लाल घर आवैं ना ॥ १५ ॥

जल भरे झूमैं मनो भूमैं परसत आय दसहू दिसान घूमैं दामिनी लयें लयें । धूरि धार धूमरो से धूम से धुधारे कारे धुरवान धारैं आवैं छवि सौं छए छये ॥ श्रीपति सुजान कहैं घेरि घेरि घहराहिं तकत अतन तन तावत तये तये । लाल बिन कैसे लाज चादर रहैगी मोहि कादर करत आय बादर नये नये ॥ १६ ॥

सोरन के सुरतें न सुरतें रही है चीर उरतें निकासे चेत सुरतें कन्हाई को । पीव पीव कहै बिन पीव जीव अकुलावै घातें चहु घातें लागी चातक कसाई की ॥ तोरैं धर धीरज ही मोरैं मन मोह मदा दौरें संभु दुसह दमार दुख दाई की । कोरैं उठो घन को अवावै कहूं कोरैं प्रान कोरैं छैली हिये में झकोरैं पुरवाई की ॥ १७ ॥

दूरि जदुराई सेनापति सुखदाई रितु पावस की आई नहीं पाई प्रेम पतियां । धीर जलधर की सो सुनि धुनि धरकी सो दरकी सुहागिन की छोह भरी छतियां ॥ आई सुधि बरकी सो हिये आनि बारको कहो जू प्रान प्यारे बिह पीत भरी बतियां । बीती औध आवन की लाल मन भावन की डगभई बावन की सावन की रतियां ॥ १८ ॥

सरद सखी तें पधसलो हूं बचौ हौं कवि चिंतामनि तिम हिम सिसिर फिसकतें । मारत मदकै बचो अधिक बसंतहु तें पावक प्रजार बाँची ग्रीषम सिसक तें ॥ आयो पापी पावस ये प्रान छकतान लागी भागीरी मसान घोर दामिन के चमकतें । तापतें नचोंगी जीपे मलिय मचोंगी आली अब न बचौंगी पपीहा की चमकतें ॥ १९ ॥

गाजे रसभीनी तेसो बरसा समीरो चढ़ि चंचला नचैरो चकचौंधा कौंधा बारें री । सो मन हारें हिये परत फुहारें कछु छोरें कछु धारें जलधर जल धारें री ॥

...वथा उमड़ी घरी घरी ॥ घन हूं न आये हरी झरी जलधारी भूमि चहूंओर
...की बन हो रही हरी हरी । छूटन लगीरी घोर पुरवा निहारी प्रान लूटन
लगीरी बोल सुरवा घरी घरी ॥ १४ ॥

आईरितु पावस न आये प्रान प्यारे यातें मेघन गरज लागी गरजन
लागें ना । दादुर हटकि बकि बकि कें न फोरें कान पिक न फटकि मोहि
सबद सुनावें ना ॥ विरह विथा तें हौं तौ व्याकुल भई हौं देव जुगुनू चमकि
चित चिनगी उठावें ना । चातक न गावें मोर सोर ना मचावें घन घुमरि न
छावें जौलौं लाल घर आवें ना ॥ १५ ॥

जल भरे झूमें मानो भूमें परसत आय दसहू दिसान घूमें दामिनी लयें
लयें । धूरि धार धूसरो से धूम से धुधारे कारे धुरवान धारें धावें छवि सों
छए छये ॥ श्रीपति सुजान कहें घेरि घेरि घहराहिं तकत अतन तन तावतें
तये तये । लाल बिन कैसे लाज चादर रहैगी मोहि कादर करत आय
बादर नये नये ॥ १६ ॥

मोरन के सुरतें न सुरसें रही है चोर उरतें निकासे चेत सुरसें कन्हाई
को । पीव पीव कहै बिन पीव जीव अकुलावैं धावें चहू घातें लागी चातक
कसाई को ॥ तोरें धर धीरज ही मोरें मन मोह सदा दोरें मंजु दुसह दमार
...आई को । कोरें उठो घन को घटाये चाहूं कोरें प्रान कोरें सेतो हिये मे
...रैं पुरवाई को ॥ १७ ॥

दूरि जदुराई सेनापति सुखदाई रितु पावस की आई नहीं पाई प्रेम
...नि धुनि धरकी मो दरकी सुहागिन की छोह
...हिये आनि बारकी कही जू प्रान प्यारे
...की लाल मन भावन की डगरें

...तिन हिम सिसिर
...मलार गायो ग्रीषम
...आगीरे असाम घोर
...पवन बधौगी

...धा मारें री ।
...धारें री ॥

घर्घरात घनन के मेघ घाएं झर्झरात पर्परात पानिप के बुंदन ते फर्फरात ।
भर्भरात भामिनि भवन मांझ सेनापति हर्हरात हाय हीय पीय पीय बर्बरात
घुर्घुरात खिंनखिंन धीरन धरत बीर नीर हीन मीन ऐसी सेजपर फर्फरात ॥७॥
कंतबिन भावति मदन ना सजनि गोपैं विरह प्रबल मैन मंत कोप्यो भाद्र के ।
श्रीपति झलोलैं बोलैं कोकिल चकोलैं बोलैं गौन गांठ गोपैं गौन राखे भादभादके ॥
छहरि छहरि हिय काहरि कहरि करि थहरि थहरि दिन बीते जिय भाद्र के ।
लहरि लहरि बीज फहरि फहरि आवे घहरि घहरि उठैं बादर भभाद्र के ॥८॥
मल्लिकन मंजुल मलिंद मतवारे मिले मंद मंद मारुत मुहीम मनसा की है ।
कहै पदमाकर त्यौं निनद नदीन नित नगर नवेलिन की नजर निसा की है ॥
दौरत दरेरा देत दादुर सुदूंदैं दीह दामिनि दमंकति दिसान मैं दसा की है ।
बद्दलन बुंदन बिलोकौ बगुलान बाग बंगलन बेलिन बहार बरसा की है ॥९॥
चंचला चलाकैं चहुंघोरन तें चाय भरी चरज गईती फेर चरजन लागीरी ।
कहै पदमाकर लवंगन की लोनी लता लरज गईती फिर लरजन लागीरी ॥
कैसे धरौं धीर बीर त्रिविधि समीरैं तनै तरज गईती फेर तरजन लागीरी ।
उमडि घुमडि घन घेरिके घनेरो घटा गरज गईती फेर गरजन लागीरी ॥१०॥
कारे जलधर चहुंघाते झुकरत आवैं दामिनी सुहाये सो जनावे दुख भाद्र के ।
झींगुर पपीहा भेक सुक पिक मोर बोलैं डोलत समीर सो करत घादघादके ॥
कहै कविराम पीरो अंकुर मही तें कढ़ो बढ़ो पीर बनिता के देखे जल भादके ।
काम के उमाहक बिरहीजन दाहक ये आये मानगाहक कमलाहक भभाद्र के ॥११॥

सवैया—आवती भाद भभाद के बादर सीतम मैं अति आग लगावती । गावती चाहचढ़े पविहा लगि मोरौं अनंग की धैर बंधावती ॥ धावती बारि भरे बदरा कवि श्रीपति जू हियरा डरपावती । पावती मोहि न जीवतीं प्रीतम जो नहिं पावस मैं घर आवती ॥ १२ ॥

कवित्त—घन दरसावन है बीज उपजावन है चहुं ओर धावन है बेदरद भाद्र को । मानमो भयावन है मोर हरखावन है दादुर बोलावन है पति भाद भाद्र को ॥ श्रीपति सुहावन है झिल्ली झनकावन है बिरही सतावन है चिंता चित बाद को । जगन जगावन है मदन जगावन है चातिक को गावन है आवन भभाद्र को ॥ १३ ॥

कवित्त—आली रितु ग्रीषम बितायें दिन पीय बिन कठिन कठिन करि सखी हों मरी मरी । अबतो इलाज की रहो न कछु काज सखि उठोहे घटान

येघा उमडो घरी घरी ॥ अजहूं न आये हरी झरी जलभरी भूमि चहूंओर देखो बन हो रही हरी हरी । कूटन लगैरी घोर धुरवा निहारी प्रान लूटन लगैरो बोल सुरवा घरी घरी ॥ १४ ॥

आईरितु पावस न आये प्रान प्यारे यातें मेघन बरज आली गरजन लावें ना । दादुर हटकि बकि बकि कै न फोरें कान पिक न फटकि मोहि सबद सुनावें ना ॥ बिरह बिथा तें हौं तो व्याकुल भई हौं देव जुगुनू चमकि चित चिनगी उठावें ना । चातक न गावें मोर सोर ना मचावें घन घुमरि न छावें जौलौं लाल घर आवें ना ॥ १५ ॥

जल भरे झूमें मनो भूमैं परसत आप दसहू दिसान घूमैं दामिनी लयें लयें । धूरि धार धूमरो से धूम से धुधारे कारे धुरवान धारें आयें छवि सौं छए छये ॥ श्रीपति सुजान कहैं घेरि घेरि घहराहिं तकत अतन तन तावते तये तये । लाल बिन कैसे लाज चादर रहैगी मोहि कादर करत आय बादर नये नये ॥ १६ ॥

मोरन के सुरतें न सुरतें रही है और उरतें निकासे चेत सुरतें कन्हाई की । पीव पीव कहै बिन पीव जीव अकुलावै घातें चहु घातें लागी चातक कसाई की ॥ तोरें भर घोरजहो मोरें मन मोह महा दोरें संभु दुसह दसार दुख दाई की । कोरें उठो घन को मचावे कहुं कोरें प्रान कोरें लैसो हिये ये झकोरें पुरवाई की ॥ १७ ॥

दूरि जदुराई सेनापति सुखदाई रितु पावस की आई नहीं पाई प्रेम पतियां । धोर जलधर को सो सुनि धुनि धरको सो दरको सुहागिन की छोह भरो छतियां ॥ आई सुधि बरको मो हिये आनि खरको कहां जू प्रान प्यारे वह प्रीत भरी बतियां । बीती औध आवन की लाल मन भावन को डगभई बावन की सावन की रतियां ॥ १८ ॥

सरद ससी तें अधसमो ह्वै बधोहौं कवि चिंतामनि तिस दिस सिसिर झमकतें । मारुत सरके मयो अधिक संसतहू तें पावक प्रभार बांधी ग्रीषम गमक तें ॥ आयो पापी पावस ये प्रान उकतान लागी भागिरो पमान घोर घन के घमकतें । तापसें लचोंगी लोवे पमीव पचोंगी आली अब न बचोंगी चपलानको चमकतें ॥ १९ ॥

गाजे रसभीने तैसो बरसा समैरो चढ़ि चंचला नचैरी चकचौंधा कौंधा बारें रो । मनो मत हारें हिये परत फुहारें कछु चौरें कछु धारें जलधर जल धारें रो ॥

धुरवान की धावन मानो मनंग की तुंग ध्वजा फहराने लगीं। नभ मंडल तें छिति मंडलहूँ छिन जोति छटा छहराने लगीं॥ मतिराम समीर लगी लतिका बिरही बनिता थहराने लगीं। परदेस मैं पीय संदेस नहीं चहुँ ओर घटा घहराने लगीं॥ २७॥

उमडे नभमंडल मंडित मेघ अखंडित धारन तें मचिहै। चमकैगी चहुँ दिसितें चपला चपला कहु कौन बला बचिहै॥ चहुंनाद मरैगी बलाय मवारक प्रान उपाय यहै रचिहै। पहिहौ अचवैगी हलाहल वौं तब कैकी कुलाहल तें बचिहै॥ २८॥

छबि सोहै दुकूलन चूनरी की अप आपनी तें घटा ओवतीं हैं। रंगराती सुनैं धुनि मोरन की मदमाती संजोग संजोवतीं हैं॥ कहि ठाकुर वे पिय दूरि बसे हम आंसुन तें तन धोवतीं हैं। धनि वै धनि पावस की रतियां पति की छतियां लगि सोवतीं हैं॥ २९॥

घनस्याम घटा उनई इत तें घनस्याम नहीं घन घात करै। चमकै चपला दमकै छतिया छिनही छिन आंसन आंसू ढरै॥ पलही पलही पिय पीय रटै कल नाहीं परै दुख देह जरै। पलसों न लगै पल पीय बिना पलका को परै पलकाको परै॥ ३०॥

घोरैं घटा झुकि आई चहूँदिसि दामिनि तें दुति होत अंजोरें। जोरैं मे बोलत हैं पिक दादुर कांपि उठे जब कूकत मोरैं॥ मोरैं मरोर उठै जिय मैं कबिराम गडी तिरछी द्रिग कोरैं। कोरैं मिलावैं पिया वह सांवरो आय घटा चहुँ ओर ते घोरैं॥ ३१॥

सावन तें मन के बिछुरे जब तैं तब तें तनकाम सतावन। तावन देह समीर करे बदरा लखि मोर लगे कलगावन॥ गावन घेरि घटा बरखे जिय को सगरे बिधि है तरसावन। सावन कौन उपाय सखी हियलाय मिलौं अपने मन भावन॥ ३२॥

आय हौ कार मैं संभुनमा घर बाहरही बरखा को बिताय हौ। ताय हौ तापन तें अंग अंग अनंग को रार सौं कैसे बचाय हौ॥ पाय हौ जौ ती कहा बहु को फिर गोतन की कुसलात न पाय हौ। पाय हौ यामें कहा जब कौन को सावन मैं मनभावन आय हौ॥ ३३॥

पीव कहां कहि देव तो सावन पावस मैं रस बीच कहां है। जीवननाथ के साथ बिना गुरदत्त कहैं तम जीवकहां है॥ बांनी दुनी जबतें तबतें यह

चोखो चुनरी की चारितरफ तरंग तैसी तंग अंगिया है तनी उरज उतंग। सौतिन के वदन विलोके वदरंग अब रंग है री रंगतेरो मेंहदी सुरंगपर ॥४८॥

चुंदरी की चहक चमंक चारु चोयनकी चुरियों की चुहर चितौर चषोरेको । कहैं पदमाकर मनोज मदमातो मजा मेंहदी की महक सजै सुख मोरेको ॥ गोला गजगंजन गुलाई गोल गालन की गहगही गाढ़ गोराई गात गोरेको । हरित हरा की होरहार की हमेलहू को हलन हियें हरै हलन हिंडोरे को ॥ ४९ ॥

फूलन के खंभा पाट पटरी सुफूलन की फूलन की फंदने फंदे हैं ला डोरे में । कहै पदमाकर वितान तने फूलन के फूलन के झालर यों झोलत झकोरे में ॥ फूलरही फूलन सुफूल फुलवारी तहां फूलई के फरस फबे कुंज कोरे में । फूलभरी फूलभरी फूलझरी फूलन में फूलईसी फूलति फूल के हिंडोरे में ॥ ५० ॥

सावन तीज सुहावन कों सजि सूहैं दुकूल सबै सुख साधा । त्यों पदमाकर देखे बनै न बनै कहते अनुराग अगाधा ॥ प्रेम के हेम हिंडोरन में सरसैं बरसैं रसरंग अबाधा । राधिका के हिय झूलत सांवरो सांवरे के हिय झूलति राधा ॥ ५१ ॥

दोऊ सखि झूल झूल झूल सखतूल झूला नेह सुख मूल कहि सोव भरि बरसात । छूटि छूटि अलकैं कपोलन पै छहरात फहरात आंचर उरोजन सों उघरिजात ॥ रहो रहो नाहीं नाहीं अब ना झुलाओ लाल सबाकी सों सिरे यौं जुगल अंग थहरात । ज्योंही ज्यों सघन लचकत लचकीली अंक संकन मयंकमुखी पंकज अघरिजात ॥ ५२ ॥

प्रेम मदमाते अनुरागे लाल बाल दोऊ लागे अमै मोदन में झूलत हिंडोरना । कीनो है चपल दुति चोरनि चुराय चित चंदमुखी चंचल चकोर गन दोरना ॥ ज्यों ज्यों प्रानपति परिरंभन करत त्यों त्यों भावती सुरत हरै मौन के झकोरना । परस प्रसूनहू तें कोमल किसोर हार कठिन कठोर मति गई कुच कोरना ॥ ५३ ॥

घांघरे की घुमड़ उमड़ चारु चूंदरी को पायन सनूप सगराम चार जोरे को । छहरी बिकट छूटी अलकैं कपोलन पै चढ़ी चढ़ी चांपिन पै छबि झकझोरे को ॥ तरिवन तरल जराऊ जरबीलो और बैदंद के ललित ललित सुख मोरे को । भूलत न भामिनिकी सावन सुहान भरी धावन सों ग्रीपति सुहावन हिंडोरे को ॥ ५४ ॥

कुहू कुहू बुंद झरें मोर बारिवाहननि तें कुहू कुहू सब्द बोलत कोर कोकिलान को। तासों सर्मे स्यामा स्याम झूलत हिंडोरे बैठि वारों छवि कोटिन में रति पंचबान की ॥ कुंडल लटक सोहैं भृकुटी मटक मोहैं पटका चटक पट पीत फहरान को। झूलन समै की छवि भूलत न झूलतरी उझकनि झुकनि झकोरनि सुजान को ॥ ५५ ॥

सवैया—झूलत प्रेम भी हेम की डार सों बार सी पातरी है कटिछीनी। है मधकी लचकावति अंगनि रंग सुहावत नारि नवीनी ॥ पीय झुलाय दियो है अचानक प्यारी महा छवि सों भयभीनी। लाल हिंडोरन मोद भरी तिय मोद भरी अंखिया भरि लीनी ॥ ५६ ॥

कारी नई उनई घन की घटा विज्जु छटा करे आनंद जी को। मोर भी मोर पपहूं परसादे मनोहर सोरन को अवली को ॥ चारु सुहाए पतान के भागें सुजान में सोहै हरी रंग नीको। है इहि भांति सुहावनरो पै बिना मन भावन सावन फीको ॥ ५७ ॥

कवित्त—कुहुकत मोर वन पवन झकोर घन कालिदास गाढ़े ये असाढ़ दुग पेखिये। सीतल कदंब छांह गोरी गरे धरे बांह चन्द्र को नगर वन नगर बिसेखिये ॥ मारों अवधेसपुरी रसिक नरेस कान्ह ऐसो देस दूसरो न सुख अवरेखिये। नीके नये छप्पर सटान घट छप्पर घटान के घमंड भूमंडल में देखिये ॥ ५८ ॥

उमड़त घुमड़त घूम घन आये घेरें घोरें देत निनद नगारन की धूम कों। कहत किसोर चारों ओरन तें जोरावरी थोरें देत जर बिजुरिन भारी भूम कों ॥ झाझकर झंझा तैसो झुक झक झोरें देत झमरे ततामन को झाप झाप झूम कों। जलन को जोरें देत जलद को फोरें देत जलन को ठोरें देत बोरें देत भूम कों ॥ ५८ ॥

सवैया—कैसी मनोहर मंजु समीरन जानिये बैर बहै जो कहानि। जैसी किसोर लता लखें तैसी नचै सुरबान की कोंति कमानैं ॥ लूटती कैसे न ऐसे समै सुख छूटती विज्जु छटा चहुंघातें। भाल लगी जमुना तें लगी नमकी नभस्याम घटान की पातें ॥ ६० ॥

छिनही छिन दौरे दुरे दरसै छवि पुंज किसोर उजासे करे। अति दीन बिना पिय जान जिए बिरहीन हिए दरमा से करे ॥ यह देखि भई कबहू पियरी घन की बरि की उपमा से करे। चहुंघातें सदा तड़पै बिजुरी नभ तोम में पाज तमासे करे ॥ ६१ ॥

धंधामें मैं। धुरंधुंध धूधर धुधात धूम धुंधरनि धुधुरै धुंधंदरित धूम धुर धाम मैं ॥ ८१ ॥

आए:मद उमठ उमैठ ऐठ बैठ बढ़े तड़ित नचौड़ौं घटीं तड़पन सोहैं जे। झिल्लीगन झनक पझंझा झांझ झौंकनि, मैं झिमिका झरनि झोंगो झीनी झिनि सोहैं जे॥ पूछत पगस्त को उदोत, जात पीतम के पजन, लखंकुर पनेक उकसोहैं जे॥ सिंधु उदसोहैं दाबि दसहूं दिसोहैं प्राज बादर बसोहैं बरसोहैं-सो बिसोहैं जे॥ ८२ ॥

प्रावस बिवस बिस्स, बामर निसा से भामि भन पजनेस देम.देमस सवारे से। धूम रंग धीरें धीरे धराधर-शृंगन पैं धावत अधर धुर धुंध मत धारे से॥ छूटे बादबानन बिलंद जे जहाज मानो पावत हिमाल नित नेह मद मारे से। झोंती घनी झूमैं धारा धरनी को धूमैं घेरि घेरि घन घूमैं झूमैं गज मतवारे से॥ ८३॥

सवैया—प्यारो मनावत प्यारी न मानत बैठिरही करि प्रीति की टूटनि। कारी घटा घहरान सुनी मुड़ठी तब चौंकि चितै चहुं खूटनि॥ धाइ डराइ लगी पीय के हिय सो कबिदेव सुनो सुख लूटनि। मान तो छूट्यौ मदकरि कै मनतें नहिं छूटत मान की छूटनि॥ ८४॥

कवित्त—बरसै सघन घन सावन सुहाई बूंदें कुंज मैं पवन चलैं मंदर झकोरे में। कुहकैं पपीहा मोर दादुर करत सोर गुंजत भंवर बिज्जु नचत मुजोरे मैं॥ पानंद कहत मंच्यौ चहुंघा चंवर ढोरैं सावन सुहाई मनौं मान रंग घोरे मैं। झहकि ढरकि आतौं धमकैं कपोलन पैं मचकि मचकि झूलैं सचकि हिंडोरे मैं॥ ८५॥

ललित लता हैं कदमोन के पता हैं पुनि पढ़त कबित्त मुख नागरी नबीना हैं। कहै पदमाकर त्यौं पवन झकोर और सोरम के मोर घन घोर कैं छबीना हैं॥ वारि बरखा मैं बरखा मैं हरखा के हेतु डीन हैं हिंडोरे कुच कलस नबीना हैं। बासनी हैं बाम हैं मलारन के राग हैं औ मंजुलामुखी है बंगला है बेस बीना है॥ ८६॥

पावस मरोरे देत पवन झकोरे देत तड़प करोरे देत मानो सिंधु फोरे देत। धनुस टकोरे देत मैन सर घोरे देत बिरही बिथोरे देत मान गढ़ टोरे देत॥ झिल्ली झनकोरे देत भेख कर घोरे देत कुहकंबि मोरे देत घटा घन घोरे देत। सलिल निचोरे देत सरिता हलोरे देत चारो ओर बोरे देत भूमि भिजोरे देत॥ ८७॥

मोद नाचे हग में बिरहे हिय मांझ नाचें बिज्जु नाचें घन में मयूर नाचें नग में ॥ श्रीपति सुकवि कहि सावन सोहावन में पावन पथिक लागे प्यारे पहन में ॥ देह छायो मदन बदेह तन दिसि छायो मेह छायो गगन सनेह छायो जग में ॥ ८४ ॥

करिदिहिंगी कामरी खोहि तुम्हें मधि दे अपनो पियरो दुपटा । छगनी कविभूधर पातन के जिन्ह ऊपर मारिये कोटि पटा ॥ रंग राखि चले क्यों न चूनरी को धुरवा धरि के चमके बिज्जु छटा । बरसैंगे घनै ढिग कुंज चलो बहुंघोरते आई है घोर घटा ॥ ८५ ॥

बदरा बदरैबो करो चहुंधा बड़ी बुंदन तें जल दीबो करो । भने श्रीपति आनंद फूली लतान सुधा मकरंद को पीबो करो । पिय मोहैं करो किन बाम मनोरति दाम चराचर लीबो करो । हम पौढ़त हैं पिय के कोरवा मोरवा सोरवा अब कीबो करो ॥ ८६ ॥

जमुना के तीर भीर भई है हिंडोरना में दूरही तें देखि देखि जिय तरसत है । मंद मंद ताग धुनि गावत श्रवन बीच बीच बीच बंसी धुनि प्रान परसत है । जैसी कारी घटा तैसो द्रुम को लतान बीच तैसेई सोभा सों पीत पट फरसत है ॥ राधा अब धेनि चलि जिय तरसत प्यारी प्यारो मा कदंब तरे रंग बरसत है ॥ ८७ ॥

देव जू जाने सबै मैं पुकारे से चारें से पम्मर बीजुरी सेहजू । जेहजू जोति की जाति मवारक बारक नाये नये सिरनेहजू ॥ साम्यो न माम्योजू नेह उनै अब आयो जथा अब देखिये मेहजू । मेहजू आयो पै रावरी रीझ हि भींजि है पामरी कामरी देहजू ॥ ८८ ॥

गीलो घटकीलो चारु अम्बर छबीलो धरे नीलकंठ हार गरे परे भरे प्रेम सों । मनि मनि भूखमनि बनि ठनि अंग अंग मृगमद बिंदु दये सोस पै घटंग सों । गिरिधरदास भने पावस अमावस की राति बीचजानि बाम स्याम पै उमंग सों । सोहै सुभ ताको मनो रजनी समेटि संग लिये जात चंद संग करि कै पतंग सों ॥ ८९ ॥

मानो एक बोप तंबू ठाठो है सुरूप स्याम डोरी मयतूल तामें लागत सुहावनें । कहै सिवराई मोर करत कलापी पापी भिल्ली भनकारत बिरह उपजावनें ॥ ताही समे प्यारी पखियम सों कहत बात साजि बिनु चरो घरी सुगल बितावनें । काम बादसाह के हुकुम तें फराश मानो सबुज मखमल के बिछाये हैं बिछावनें ॥ १०० ॥

दोहा—इति विहरत घनश्याम के, वृन्दावन अभिराम।
वरषा रितु आरत भई, हरषा कर छविधाम ॥ १०१ ॥

कवित्त—दूरि भयो ताप को प्रताप आप के प्रताप खग मृग नाम ने मक्षु जग हरषा। मधुर अलापी करें मिलत कलापो वृन्द दादुर बहुत बोलें गो घनकरषा ॥ गिरिधरदास भई भूमि हरियारी सारी घन जल भयो भई धान खेत बरषा। नदी भय नारे भए नद भय नदी भई नदो नाह भय नद भए पाय बरषा ॥ १०२ ॥

अधि पावस को ब्रज भामिनी। तन सुंदर कुंजर गामिनी ॥ १०३ ॥
इमि येग कहैं रस दायिका। ब्रजनायक रंजनि नायिका ॥ १०४ ॥

कवित्त—श्याम, घनसामी श्यामभयो घनमानो तैसो कवि घनमानो सुघ, मुदि, घनमानोरी। घन अहिरानी दुख मति अहिरानी फूली फिर अहिरानी संग हरि अहिरानीरी ॥ गिरिधरदास ताप मिथ्यो धुरवा नोदंड उठे धुरवानी किये और धुरवानीरी। मुद बरसानो रीझि लियो बरसानोरो त्यों यह बरसानी रीति रस बरसानी री ॥ १०५ ॥

घुमड़ि घुमड़ि घेरि घेरि घोर घन आए उमड़ि उमड़ि बरसत बारिधारवर। छहरि छहरि से ब्रज घन छायो मज घने छबि घटा घटति कंजारवर ॥ गिरिधरदास बकपवलि प्रकास राजे कुंज कुंज करत मयूर किलकारवर। शोभा दरसात बरसात सुख बरसात जगहरसात देखि दंपति बिहारवर ॥१०६॥

जलद जलद व्योम चलत जलद वृन्द छन छन छन छबि छबि चतिको करे। बामन प्रकाश पाकसासन सरासन को औगन कैगन सों गगन गरिमा धरे ॥ गिरिधरदास पात पात में तें जलपात बात बात बात में सुगंध की महा भरे। ऐसे में सवन पर बिन बनमाली आली वृन्दावन धन पति बनि लिये की हरै ॥ १०७ ॥

कारे घन भारे ते दुरद मतवारे दोऊ गरजनि डंकादेत ब्यात दीप दीप है। चातक कलापी गावै गुनी मूतमंदी वृन्द विमल बलाका केतु जलदो छदोप है ॥ गिरिधरदास धनु इंद्रधनु करलीने बारिधार बान धरे मुखद समीप है। जगबलछायो पधिकायो मन भायो आयो ब्रज में अजेव काम पावस महीप है ॥ १०८ ॥

दादुर की रटनि मचाव साव माव धुनि मोर की नटनि गति चापल सुचाव है। गहे बिज्जु तेग इंद्रधनु धनु धारेकर बिलोसुख वृन्द विलोसुख

निरधारु हैं ॥ गिरिधरदास परतमी बकावलि धर परतल जाके ना जगत सितमारु हैं। एजु घनस्याम आज काम के सिपाही बनि घूमैं घनस्याम वाम करत सिकारु हैं ॥ १०९ ॥

कारो कारो रंग अंग चलिहो उतंग वर गरजनि सोई गरजनि मद संगवर। सांझ बहुरंग सोई झूल गिरिधरदास बकावलि तैसी गजगाह है सुढंगवर ॥ हैकल सुरेस धनु रतनमनरी विज्जु सुवरन सिक्कर सुहावन सुरंगवर। देखो घनस्याम घन जंग के उमंग भरे आए मिलि संगम अनंग के मतंगवर॥ ११० ॥

नभ मत पथ कों पखंड जमद न छायो बरसै वितण्डा बाद जाल दुष्ट जाल है। ज्ञानपभि छप्यो विज्जु बामी चमकनि बढो नाचें नास्तीक मोर जाप विसाल है॥ गिरिधरदास देखियत दंभीवकवृन्द पवन प्रचण्ड पाप चहूं ओर चाल है। एजू ब्रजराज देखो तेरीजान आयो यह बरसन कारुना कठिन कलिकाल है ॥ १११ ॥

बकुला को नान है न यह जपताल चारु विज्जु को प्रकास नहिं प्रेम को दिगंत है। घन भयो नभ है न ज्ञान भरो मन अहै गरमी को अंत है न अघरस अंत है॥ गिरिधर दास मोर बोलैं भने बेद पाठ बरसै न मोर भक्ति रस बरसंत है। एरी यह पावस नहीं है आयो मति मन्त राधा कन्तकाज कोऊ सन्त को महन्त है ॥ ११२ ॥

कारो रंग अंग घन सुन्दर सुढंग सोई पीत पट विज्जु बक माल मोती माल गरे। इन्द्रधनु बैजयन्ती बनी गिरिधरदास सीतल समीर घन राजधैं निवास करै॥ सोरन को मोर सो पुकारत हैं आरत जे जीवन दया को बरसावन अनन्द भरे। अतिहि अनूप ब्रज भूपचारु रूप देखो आयो ब्रज पावस रमापति को रूप धरे ॥ ११३ ॥

बक दरसात हंस ऐसे हरसात सोई दादुर की धुनि पाठ बेद तत्व ज्ञाता को। कनक कमण्डलु सो बिज्जुरी बनो है इन्द्रधनु मनिहारो बनो जलकानि-दाता को॥ गिरिधरदास जगजीवन को सृष्टि करै भजै हरे पाप ताप बसुधा को भ्राता को। पावस पवन हे पवन परमा सी पनी आयो री ब्रजहि बेद-धारि कै बिधाता को॥ ११४ ॥

कारेघन ए न परो गज को चरम चहै घन कोल नाद नाद डमरु सुदेस को। जौगन को चमकन जोवन फिरनि चहै बात सीतदाई मा बरद पनवेस को॥ गिरिधरदास विज्जु हैन है जटा विसाल बकमाल है न मोर हरन

पंधारेरी। मन बेगवारे बिज्जु तम तेग वारे ए तो घन हैं न कारे जमगन हैं नकारेरी ॥ १२१ ॥

फूलेना बिटप बहुरंग एई हाटवारे भंवर न डोलैं ए खरीदैं हैं सुवास नर। बकमा उड़ाहिं एई नर हैं सपेद पोस चपला अनूप ना ए चपला प्रकासकर ॥ चातिक न बोलैं कहूं कहूं गावैं गीत बारे नाचैं हैं न मोर चहैं नट ए हुलास-धर। गिरिधरदास नहिं पावस बिलास धरे जोवन प्रवास काम राजधानी खासवर ॥ १२२ ॥

हैं न ए बलाका उपवीत भट्टे भव दात इन्द्रधनु है न भाल तुलसी को धारे गरें। बोलैं ना पपीहा रटजात्रो स्याम नाम हीं की बिज्जु को प्रकास है न केसर को पुंड करें॥ बरसै न नीर प्रेम आंसू पात दरसात गिरिधर-दास रचि भव ताप दूरि टरे। हरी हरी भूमि है न मति हरिरंग रंगी पावस न होय हरिभक्त कोऊ रूप धरे ॥ १२३ ॥

उमडि उमडि नदी नद कूल बोरत हैं बोर जलधारन सों सूझत कहूं ना है। परम प्रचण्ड पौन धावनि त्यों धुरवा की झिल्लिन को सोर सुनि होत कान सूना है॥ गिरिधरदास महाबिज्जु को प्रकास सोई बागी दौह दुसह दवानल सों दूना है। परो बाल जोइ स्याम बिन सुख खोइ यह पावस न होइ प्रलैकाल को न सूना है ॥ १२४ ॥

. चहैं ए सघन जानो सघन तमाल तरु हैं न ए बलाका फूली मालती सुभाग है। बिज्जु के समूह एन केसर की क्यारी चहैं जल की फुही न परे पुहुप पराग है॥ गिरिधरदास इन्द्रगोप हैं न जपा फूल इन्द्रधनु हैं न ए कनैल बहुभाग है। व्रज तरुनी को नीको सुखद सु भीको ठीक पावस न होय परमेसर को बाग है ॥ १२५ ॥

चार मास परव पढाय मित्र पौन कौं पठावै चहूं ओर चित निज हित मण्डा है। जिपे घन पोथो पटि गाजि सुनावै भांति जल बरसात फल अमित अमंडा है। गिरिधरदास नारिनर उर भक्ति लाइ प्रेम सों पुजावै पाय सुरलास खंडा है। कैनि बिधि बिधि धरे सब सुख सिधि धरे पावस न होय कामदेव देव पंडा है ॥ १२६ ॥

भरे घन थैलिन में जल धन के समूह सागर खजानो जामें बिधिना बटोरयो। गिरिधरदास इन्द्रधनु रत्नराशि तैसो रूपा रासि बक हेम रासि बिज्जु है जंची॥ मालिक हुकुम पावै तबै दरसावै सबै गरतो दरिद्रता

मनुपीसम तप के फकहि, दियो जानि करतार ॥ १३७ ॥
जलभरि सागर तें जलद, जलद चलहिं गाधार
जथा चोर धन चोरि कै, भय सों भाजु पराइ ॥ १३८ ॥
घन जल लेहिं सुदेहिं सरि, घट बढ सिंधु न होय।
परम हंस जिमिमान अप, मान करें भ्रम दोय ॥ १३९ ॥
खग बिस्तारहिं पंखनिज, जब कहुं धूप दिखाइ।
रंक पसारहिं चाचरहिं, प्रभु दाता कहं पाइ ॥ १४० ॥
दोहा—सावन भादों नाम, बरसा के है मास हैं।
भव जग के अभिराम, करत बृंदावन बास हैं ॥ १४१ ॥

सोना से सरीर पै सिंगारन सुभग सजि सेज साज साजि स्याम संगम सुखन में। सुंदरी सिरोमनि सुहागिनि सलोनी सुचि स्यामा सुकुमारि सोहै सोमा के सदन में॥ सोम सोम सुमन सुहायो गिरिधरदास मूर मरमात ज्यों सवारे बरपन में। सिंधुसुता सैलसुता सारदा सचीसी सुचि सावन में सरसै सरस सखियन में ॥ १४२ ॥

सावन साम सखिन संग मोहन। झूलत हैम हिंडोरे सोहन ॥
जमुनाकूलनि बनो हिंडोरो। निरखत होत अनंद भयोरो ॥ १४३ ॥

कनक हिंडोरो बनो बमक अनूप लागे मोतिन की झूमरें सरस दरसावतीं। मनिन के खंभा चौकी मनिकांत चौका ऐसी मरुवा पै मनिमई मोरिनी सुहावतीं॥ गिरिधरदास तैसी परति फुहारैं चाह गोरी चहुंधोर सों मलार राग गावतीं। कामिनी सुहाईं घनस्याम को झुलावतीं ज्यों दामिनी सुहाईं घनस्याम को झुलावतीं ॥ १४४ ॥

रस बरसा बर भावन सावन साम।
भवे हिंडोरे गिरिधर गिरिधर दास ॥ १४५ ॥

नभ नीर देत गौन नीरद नगीच के मे नाद करें सुनि नाक नाग करे नति है। नदी नद नारे नीरनिधि नीर पूरे नए मलिन नमाए नगीं निदाघता नसति है॥ गिरिधरदास नगनाहनो पनग भरे नाग धरि नाचें नेह नदी निकरति है। नभ मास नागर की नागरी निरखि ऐसे नवल निकुंज में निपुन निरतति है ॥ १४६ ॥

भादों में हरिराम दोउ, करहिं सेज की रैन।
जाहि जोहि जग अघ जरै, मुनिरि मिटै मन मैन ॥ १४७ ॥

बांकीपुर—"खड्गविलास" प्रेस की संक्षिप्त सूची।

बलिया का लेकचर

How can India be Reformed

BY

BHARTENDU HARISHCHANDRA.

भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र कृत

जिस को हिन्दी भाषा के प्रेमी तथा रसिकजनों के मनोविलास के लिये क्षत्रिय-पत्रिका सम्पादक श्री म० कु० बाबू रामदीन सिंह ने प्रकाशित किया।

पटना—"खड्गविलास" प्रेस—बांकीपुर।
बाबू साहबप्रसाद सिंह द्वारा मुद्रित।

१८८०

हरिश्चन्द्राब्द ६

प्रथमबार १०००] [दाम ≠) आना।

HOW
CAN INDIA BE REFORMED.

आज बड़े ही आनन्द का दिन है कि इस छोटे से नगर बलिया में हम इतने मनुष्यों को बड़े उत्साह से एक स्थान पर देखते हैं। इस अभागे आलसी देस में जो कुछ हो जाय वही बहुत कुछ है। बनारस ऐसे २ बड़े नगरों में जब कुछ नहीं होता तो यह हम क्यों न कहैंगे कि बलिया में जो कुछ हम ने देखा वह बहुतही प्रशंसा के योग्य है। इस उत्साह का मूल कारण जो हमने खोजा तो प्रगट हो गया कि इस देश के भाग्य से आज कल यहां सारा समाजही ऐसा एकत्र है। राबर्ट साहब बहादुर ऐसे कलेक्टर जहां हो वहां क्यों न ऐसा समाज हो। जिस देस और काल में ईश्वर ने अकबर को उत्पन्न किया था उसी में अबुलफ़ज़ल बीरबल टोडरमल को भी उत्पन्न किया। यहां राबर्ट साहब अकबर हैं तो मुंशी चतुर्भुजसहाय मुंशी बिहारीलाल साहब आदि अबुलफ़ज़ल और टोडरमल हैं। हमारे हिंदुस्तानी लोग तो रेल की गाड़ी हैं। यद्यपि फर्स्ट क्लास सेकेंड क्लास आदि गाड़ी बहुत अच्छी अच्छी और बड़े बड़े महसूल की इस ट्रेन में लगी हैं पर बिना इंजिन ये सब नहीं चल सकतीं वैसेही हिन्दुस्तानी लोगों को कोई चलानेवाला हो तो ये क्या नहीं कर सकते। इन से इतना कह दीजिए "का चुपसाधि रहाबलवाना" फिर देखिए हनुमान जी को अपना बल कैसा याद आ जाता है। सो बल कौन याद दिलावै। या हिन्दोस्तानी राजे महाराजे नवाब रईस या हाकिम। राजे महाराजों को अपनी पूजा भोजन झूठी गप से छुट्टी नहीं। हाकिमों को कुछ तो सर्कारी काम घेरे रहता है कुछ बाल घुड़दौड़ थियटर अखबार में समय गया। कुछ समय बचा भी तो उनको क्या गरज है कि हम गरीब गन्दे काले आदमियों से मिलकर अपना अनमोल समय खोवैं। बस वही मसल हुई। "तुम्हें गैरों से कब फुरसत हम अपने गम से कब खाली। चलो बस हो चुका मिलना न हम खाली न तुम खाली" तीन मेंढक एक के ऊपर

दशा इस समय हिन्दुस्तान की है। अंगरेज़ों के राज्य में सब प्रकार का सामान
पाकर अवसर पाकर भी हम लोग जो इस समय पर उन्नति न करें तो हमारे
केवल अभाग्य और परमेश्वर का कोप ही है। सास के अनुमोदन से एकान्त
रात में सूने रंगमहल में जाकर भी बहुत दिन से जिस प्रान से प्यारे परदेसी
पति से मिल कर छाती ठंढी करने की इच्छा थी उस का लाज से मुंह भी न देखे
और बोले भी न तो उस का अभाग्य ही है। वह तो कल फिर परदेस
चला जायगा। वैसे ही अंगरेज़ों के राज्य में भी जो हम कूंए के मेंढक काठ
के उल्लू पिंजड़े के गंगाराम ही रहैं तो हमारी कमबख़्ती कमबख़्ती फिर
कमबख़्ती है। बहुत लोग यह कहैंगे कि हम को पेट के धंधे के मारे छुट्टी
ही नहीं रहती बाबा हम क्या उन्नति करें। तुम्हारा पेट भरा है तुम को दून
की सूझती है। यह कहना उन का बहुत भूल है। इंगलैंड का पेट भी कभी
यों ही खाली था। उस ने एक हाथ से अपना पेट भरा दूसरे हाथ से उन्नति
की राह के कांटों को साफ़ किया। क्या इंगलैंड में किसान खेतवाले गाड़ी-
वान मज़दूर कोचवान आदि नहीं हैं? किसी देश में भी सभी पेट भरे हुए
नहीं होते। किन्तु वे लोग जहां खेत जोते बोते हैं वहीं उस के साथ यह भी
सोचते हैं कि ऐसी और कौन नई कल या मसाला बनावैं जिस में इस खेती
में आगे से दूना अन्न उपजै। विलायत में गाड़ी के कोचवान भी अख़बार
पढ़ते हैं। जब मालिक उतर कर किसी दोस्त के यहां गया उसी समय कोच-
वान ने गद्दी के नीचे से अख़बार निकाला। यहां उतनी देर कोचवान या
हुक्का पीएगा या गप्प करैगा। सो गप्प भी निकम्मी। वहां के लोग गप्प ही में
देश के प्रबंध छांटते हैं। सिद्धान्त यह कि वहां के लोगों का यह सिद्धान्त है
कि एक छिन भी व्यर्थ न जाय। उस के बदले यहां के लोगों को जितना
निकम्मापन हो उतना ही वह बड़ा अमीर समझा जाता है आलस यहां
इतनी बढ़ गई कि मलूक दास ने दोहा ही बना डाला। "अजगर करै न
चाकरी, पंछी करै न काम। दास मलूका कहि गये, सब के दाता राम॥"
चारो ओर आंख उठाकर देखिए तो बिना काम करनेवालों की ही चारो
ओर बढ़ती है। रोज़गार कहीं कुछ भी नहीं है अमीरों की मुसाहबी दल्लाली
या अमीरों के नौजवान लड़कों को ख़राब करना या किसी की जमा मार
लेना इन के सिवा बतलाइए और कौन रोज़गार है जिस से कुछ रुपया
मिलै। चारो ओर दरिद्रता की आग लगी हुई है। किसी ने बहुत ठीक कहा

है कि दरिद्र कुटुंबी इस तरह अपनी इज्जत को बचाता फिरत
लाजवंती कुल की बहू फटे कपड़ों में अपने अंग को छिपाए जाती
दशा हिन्दोस्तान की है । मर्दुमशुमारी का रिपोर्ट देखने से स्पष्ट
कि मनुष्य दिन दिन यहां बढ़ते जाते हैं और रुपया दिन दिन कमत
जाता है। तो अब बिना ऐसा उपाय किए काम नहीं चलैगा कि र
बढ़े, और वह रुपया बिना बुद्धि बढ़े न बढ़ैगा । भाइयो राजा म
का मुंह मत देखो मत यह आशा रक्खो कि पंडित जी कथा में
उपाय भी बतलावैंगे कि देश का रुपया और बुद्धि बढ़ै । तुम आप
कसो आलस छोड़ो। कब तक अपने को जंगली हूस मूर्ख बोदे ड
पुकरवाओगे। दौड़ो इस घोड़दौड़ में जो पीछे पड़े तो फिर कहीं
नहीं है। " फिर कब राम जनकपुर ऐहैं " अबकी जो पीछे पड़े
रसातल ही पहुंचोगे । जब पृथ्वीराज को कैद कर के ग़ोर ले
शहाबुद्दीन के भाई गयासुद्दीन से किसी ने कहा कि वह शब्दभेदी बान
अच्छा मारता है । एक दिन सभा नियत हुई और सात लोहे के ता
से फोड़ने को रखे गए। पृथ्वीराज को लोगों ने पहले ही से अंधा कर
था। संकेत यह हुआ कि जब ग़यासुद्दीन हूं करे तब वह तावों प
मारे। चन्द कवि भी उस के साथ क़ैदी था। यह सामान देखकर
यह दोहा पढ़ा। " अब की चढ़ी कमान को जाने फिर कब चढ़े ।
चुक्के चौहान, इक्के मारय इक्क सर ॥ " उस का संकेत समझ कर जब ग़या
ने हूं किया तो पृथ्वीराज ने उसी को बान मार दिया । वही बात
है। अब की चढ़ी, इस समय में सर्कार का राज्य पाकर और उन्नति
इतना सामान पाकर भी तुम लोग अपने को न सुधारो तो तुम्हीं
और वह सुधारना भी ऐसा होना चाहिए कि सब बात में उन्नति हो। ध
घर के काम में, बाहर के काम में, रोज़गार में, शिष्टाचार में, चाल चल
शरीर के बल में, मन के बल में, समाज में, बालक में, युवा में, वृद्ध में,
में, पुरुष में, अमीर में, ग़रीब में, भारतवर्ष की सब अवस्था सब जाति
देश में उन्नति करो, सब ऐसी बातों को छोड़ो जो तुम्हारे इस पथ के
हों । चाहे तुम्हें लोग निकम्मा कहैं या नंगा कहैं कृस्तान कहै या भ्रष्ट
तुम केवल अपने देश की दीनदशा को देखो और उन की बात मत सु
... पुरस्कृत्य मानं कृत्वातुपृष्टतः स्वकार्य्यं साधयेतधीमान कार्य्यध्वं

मूर्खता। जो लोग अपने को देश हितैषी लगाते हों वह अपने सुख को होम कर के अपने धन और मान का बलिदान करके कमर कस के उठो। देखा देखी थोड़े दिन में सब हो जायगा। अपनी खराबियों के मूल कारनों को खोजो। कोई धर्म की आड़ में कोई देश की चाल की आड़ में कोई सुख की आड़ में छिपे हैं। उन चोरों को वहां वहां से पकड़ पकड़ कर लाओ। उन को बांध बांध कर क़ैद करो। इस इस से बढ़ कर क्या कहैं कि जैसे तुम्हारे घर में कोई पुरुष व्यभिचार करने आवै तो जिस क्रोध से उस को पकड़ कर मारोगे और जहां तक तुम्हारे में शक्ति होगी उस का सत्यानाश करोगे उसी तरह इस समय जो जो बातें तुम्हारे उन्नति पथ को कांटा हों उन की जड़ खोदकर फेंक दो। कुछ मत डरो। जब तक सौ दो सौ मनुष्य बदनाम न होंगे, जात से बाहर न निकाले जायंगे, दरिद्र न हो जायंगे, क़ैद न होंगे वरंच जान से न मारे जायंगे तब तक कोई देश भी न सुधरैगा।

अब यह प्रश्न होगा कि भाई हम तो जानते ही नहीं कि उन्नति और सुधारना किस चिड़िया का नाम है। किस को अच्छा समझैं। क्या लें क्या छोड़ें। तो कुछ बातें जो इस शीघ्रता में मेरे ध्यान में आती हैं उन को मैं कहता हूं सुनो—

सब उन्नतियों का मूल धर्म है। इस से सब के पहले धर्म की ही उन्नति करनी उचित है। देखो अंगरेज़ों की धर्म नीति और राजनीति परस्पर मिली हैं इस से उन की दिन दिन कैसी उन्नति है। उन को जाने दो अपने ही यहां देखो। तुम्हारे यहां धर्म की आड़ में नाना प्रकार की नीति समाज गठन वैद्यक आदि भरे हुए हैं। दो एक मिसाल सुनो। यही तुम्हारा बलिया का मेला और यहां स्नान क्यों बनाया गया है। जिस में जो लोग कभी आपस में नहीं मिलते दस दस पांच पांच कोस से वे लोग साल में एक जगह एकत्र हो कर आपस में मिलें। एक दूसरे का दुःख सुख जानें। गृहस्थी के काम की वह चीज़ें जो गांव में नहीं मिलतीं यहां से ले जायं। एकादशी का व्रत क्यों रक्खा है? जिस में महीने में दो एक उपवास से शरीर शुद्ध हो जाय। गंगा जी नहाने जाते हैं तो पहिले पानी सिर पर चढ़ा कर तब पैर डालने का विधान क्यों है? जिस में तलुए से गरमी सिर में चढ़ कर विकार न उत्पन्न करै। दीवाली इसी हेतु है कि इसी बहाने साल भर में एक बेर तो सफ़ाई हो जाय। होली इसी हेतु है कि बसंत की बिगड़ी हवा स्थान स्थान

पर अग्नि शमनी से शान्त हो जाय। यही तिहवार ही तुम्हारी मानो म्यु
निसिपालिटी है। ऐसे ही सब पर्व सब तीर्थ व्रत आदि में कोई हिकमत है
उन लोगों ने धर्मनीति और समाजनीति को दूध पानी की भांति मिला
दिया है। खराबी जो बीच में भई है वह यह है कि उन लोगों ने ये धर्म क्यों
मानने लिखे थे इस का लोगों ने मतलब नहीं समझा और इन बातों को
वास्तविक धर्म मान लिया। भाइयो वास्तविक धर्म तो केवल परमेश्वर के
चरण कमल का भजन है। ये सब तो समाज धर्म हैं जो देश काल के अनु
सार शोधे और बदले जा सकते हैं। दूसरी खराबी यह हुई कि उन्हीं महात्मा
बुद्धिमान ऋषियों के वंश के लोगों ने अपने बाप दादों का मतलब न समझ
कर बहुत से नए नए धर्म बना कर शास्त्रों में धर दिये। बस सभी तिथि व्रत
और सभी स्थान तीर्थ हो गए। सो इन बातों को अब एक बेर आंख खोल
कर देख और समझ लीजिए कि फ़लानी बात उन बुद्धिमान ऋषियों ने क्यों
बनाई और उन में देश और काल के जो अनुकूल और उपकारी हों उन को
ग्रहण कीजिए। बहुत सी बातें जो समाज विरुद्ध मानी हैं किन्तु धर्म शास्त्रों
में जिन का विधान है उन को चलाइए। जैसा जहाज़ का सफ़र विधवा
विवाह आदि। लड़कों को छोटेपन ही में ब्याह कर के उन का बल बीर्य
आयुष्य सब मत घटाइये। आप उन के मां बाप हैं या उन के शत्रु हैं। बीर्य
उन के शरीर में पुष्ट होने दीजिए विद्या कुछ पढ़ लेने दीजिए नोन तेल
लकड़ी की फ़िक्र करने की बुद्धि सीख लेने दीजिए तब उन का पैर काठ में
डालिए। कुलीन प्रथा बहु विवाह आदि को दूर कीजिए। लड़कियों को भी
पढ़ाइए। किन्तु उस चाल से नहीं जैसे आज कल पढ़ाई जाती हैं जिस से
उपकार के बदले बुराई होती है। ऐसी चाल से उन को शिक्षा दीजिए कि
वह अपना देश और कुलधर्म सीखें पति की भक्ति करें और लड़कों को सहज
में शिक्षा दें। वैष्णव शाक्त इत्यादि नाना प्रकार के मत के लोग आपस का
वैर छोड़ दें यह समय इन झगड़ों का नहीं हिन्दू जैन मुसल्मान सब आपस
में मिलिए जाति में कोई चाहे ऊंचा हो चाहे नीचा हो सब का आदर
जो जिस योग्य हो उस को वैसा मानिए। छोटी जाति के लोगों को
ार के उन का जी मत तोड़िए। सब लोग आपस में मिलिए।
। भाइयों को भी उचित है कि इस हिन्दुस्तान में बस कर ये लोग
ों को नीचा समझना छोड़ दें। ठीक भाइयों की भांति हिन्दुओं से बर-

लाज करें ऐसी बात को हिंदुओं या जो दुखानेवाली हों न करें । घर में आग लगे तब जिठानी दौरानी को आपस का डाह छोड़ कर एक साथ वह आग बुझानी चाहिए । जो बात हिंदुओं को नहीं मयस्सर है वह धर्म के प्रभाव से मुसल्मानों को सहज प्राप्त है । उन में जाति नहीं खाने पीने में चौका चूल्हा नहीं विलायत जाने में रोक टोक नहीं । फिर भी बड़े ही सोच की बात है मुसल्मानों ने अभी तक अपनी दशा कुछ नहीं सुधारी । अभी तक बहुतों को यही ध्यान है कि दिल्ली लखनऊ की बादशाहत कायम है । प्यारे वे दिन गए । अब आलम हट धरगी यह सब छोड़ो । चलो हिन्दुओं के साथ तुम भी दौड़ो एक एक दो हो गे । पुरानी बातें दूर करो । मीरहसन की मसनवी और इन्दरसभा पढ़ा कर छोटेपनही से लड़कों को सत्यानाश मत करो । होश सम्हाला नहीं कि पट्टी पारली चुस्त कपड़ा पहना और ग़ज़ल गुन गुनाए । " शौक़ तिफ्ली से मुझे गुलकी जो दीदार का था । न किया हम ने गुलिस्ताँ का सबक़ याद कभी" । भला सोचो कि इस हालत में बड़े होने पर वे लड़के क्यों न बिगड़ेंगे । अपने लड़कों को ऐसी किताबें छूने भी मत दो । अच्छी से अच्छी उनको तालीम दो । पिनशिन और वज़ीफ़ा या नौकरी का भरोसा छोड़ो । लड़कों को रोज़गार सिखलाओ । विलायत भेजो । छोटेपन से मिहनत करने की आदत दिलाओ । सौ सौ महलों के लाड़प्यार दुनिया से बे ख़बर रहने की राह मत दिखलाओ । भाई हिन्दुओं तुम भी मत मतांतर का आग्रह छोड़ो । आपुस में प्रेम बढ़ाओ । इस महा मंत्र का जप करो । जो हिन्दुस्तान में रहे चाहे किसी रंग किसी जाति का क्यों न हो वह हिन्दू । हिन्दू की सहायता करो । बंगाली मरट्ठा पंजाबी मदरासी वैदिक जैन ब्राह्मो मुसल्मान सब एक का हाथ एक पकड़ो । कारीगरी जिस में तुम्हारे यहां बढ़े तुम्हारा रुपया तुम्हारे ही देस में रहे वह करो देखो जैसे हज़ार धारा हो कर गंगा समुद्र में मिली है वैसेही तुम्हारी लक्ष्मी हज़ार तरह से इंगलैंड फ़रासीस जर्मनी अमेरिका को जाती है । दीआसलाई ऐसी तुच्छ वस्तु भी वहीं से आती है । ज़रा अपने ही को देखो । तुम जिस मारकीन की धोती पहने हो वह अमेरिका की बिनी है । जिस लंकिलाट का तुम्हारा अंगा है वह इंगलैंड का है । फ़रासीस की बनी कंघी से तुम सिर झारते हो और जर्मनी की बनी चरबी की बत्ती तुम्हारे सामने बल रही है । यह तो वही मसल हुई कि एक बेफ़िकरे मंगनी का कपड़ा पहिन कर

किसी महफ़िल में गए। कपड़े को पहिचान कर एक ने कहा अजी यह अंगा तो ज़नाने का है दूसरा बोला अजी टोपी भी ज़नाने की है तो उन्हों ने हंस कर जवाब दिया कि घर की तो मूछें ही मूछें हैं हाय अफ़सोस तुम ऐसे हो गए कि अपने निज के काम की वस्तु भी नहीं बना सकते। भाइयों अब। नींद से चौंको अपने देस की सब प्रकार उन्नति करो। जिस में तुम्हारी भला हो वैसी ही किताब पढ़ो वैसेही खेल खेलो वैसीही बात चीत करो पर देसी वस्तु और परदेसी भाषा का भरोसा मत रक्खो अपने देस में अपनी भाषा में उन्नति करो।

खुशी।

अर्थात्

'खुशी' शब्द पर एक उत्तम लेख।

भारतभूषणभारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र लिखित।

हिन्दीभाषा के प्रेमी तथा रसिकजनों के मनोविश्राम केलिये क्षत्रिय-पत्रिका सम्पादक श्री मं० कु० बा० रामदीन सिंह द्वारा प्रकाशित।

पटना—"खड्गविलास"-प्रेस-बांकीपुर।
साहबप्रसाद सिंह द्वारा मुद्रित।
१८८७
हरिश्चन्द्राब्द १४

प्रथमवार] [दाम /)

ख़ुशी ।

इस्तदिल ख़्वाह आसूदगी को ख़ुशी कह सकते हैं याने जो हमारे दिल
की ख़्वाहिश हो वह कोशिश करने से या इत्तिफ़ाक़िय: बग़ैर कोशिश किये
बर आवे तो हम को ख़ुशी हासिल होती है ख़ुशी ज़िन्दगी के फल को कहते
हैं अगर ख़ुशी नहीं है तो ज़िन्दगी हराम है क्योंकि जहां तक ख़याल किया
जाता है मालूम होता है कि इस दुनियां में भी तमाम ज़िन्दगी का नतीजा
ख़ुशी है ।

इसी ख़ुशी के हम तीन दर्जे क़ायम कर सकते हैं याने आराम, ख़ुशी
और लुत्फ़—आराम वह हालत है जिस में तकलीफ़ का एक हिस्सा या
बिल्कुल तकलीफ़ रफ़ा हो जावे । ख़ुशी वह हालत है जिस में आराम का
हिस्सा तकलीफ़ के मिक़दार से ज़्याद: हो जाय । और लुत्फ़ वह हालत है
जिसमें तकलीफ़ का नाम भी न बाक़ी रहे।

ख़ुशी तीन क़िस्मों में बंटी है याने दीनी ख़ुशी, दुनियवी ख़ुशी और
…ालत ख़ुशी।

दीनी ख़ुशी अपने २ मज़हब के अक़ीदे के मुताबिक़ कुछ २ अलग है
मगर नतीजा सब का एक ही है याने इन्सान दुनियवी से छूट कर हमेश:
के वास्ते परमेश्वर की क़ुर्बत मयस्सर होनी ही असली ख़ुशी है हम लोगों
के परमेश्वर का नाम सत् चित आनन्द है और हम लोगों के नेक अक़ीदे के
मुताबिक़ परमेश्वर का नाम रूप सब बिल्कुल लतीफ़ है इसी से उस की याद
में लुत्फ़ हासिल होता है। उपनिषद में एक जगह सब की ख़ुशी को मुक़ा-
बला किया है। वह लिखते हैं कि ख़ुशी ज़िन्दगी का एक जुज़ आज़म है
और दुनिया में जितने मख़लूक़ात हैं सब ख़ुशी ही के वास्ते मख़लूक़ हैं
सो सब ख़िलक़त में जानदारों की बनावट और लियाक़त के मुताबिक़
ख़ुशी बंटी हुई है, कीड़ा सिर्फ़ इस बात में ख़ुश होता है कि एक पत्ते पर से
दूसरे पत्ते पर जाय, चिड़ियों की ख़ुशी का दर्जा इस से कुछ बढ़ा है याने
इधर उधर पर वाज़ करना बोलना वग़ैर: इसी तरह आख़ीर में आदमी की
ख़ुशी बनिस्बत और जानवरों के बहुत बढ़ी चढ़ी है आदमियों में भी बनि-

मुवत बेवकूफ़ों में समझदारों की खुशी का दर्जा ऊंचा है। आदमियों की खुशी से देवताओं की खुशी बहुत ज़्यादः है। इस लंबी चौड़ी तक़रीर का खुलासा उन्हों ने यह निकाला है कि सब से ज़्यादः और लतीफ़ परमेश्वर है उस में जितना लुत्फ़ और खुशी है सो हम लोग नहीं जान सकते इसी से अगर हम लोगों को खुशी और लुत्फ़ की तलाश है तो हमलोगों को उसी का भजन करना चाहिए।

इस के पहिले दुनियवी खुशी का बयान किया जाय उस खुशी का वह आप लोग सुन लीजिए जो अब हम हिंदुओं को खास कर साकिनाने बना को मयस्सर हैं। सब से बड़ी खुशी बे फ़िकरी है।

"अजगर करै न चाकरी , पंछी करै न काम ।
दास मलूका यों कहैं , कि सब के दाता राम" ॥

ऐसे ही खूब भांग पीना, भड़ाटे इक्के पर सवार होकर बहरी और कभी २ कुछ गाना सुन लेना बरसात के दिनों में अगर फोलनी दाना मयस्सर हो तो क्या बात है। अगर इस खुशी का दर्जा बहुत बढ़ गया तो आध सेर हो गई कुछ खाना कुछ पीना कुछ नाच कुछ तमाशा हो गया और अगर यही खुशी 'सिविलाइज्ड' की गई तो उस को छोटी २ कुमेटियों या बर्फ़ की दावत से बदल दिया।

इस से मेरा यह मतलब नहीं है कि इन बातों में बिल्कुल खुशी नहीं है बेशक तफ़रीह में खुशी है मगर उन्हीं लोगों को जो हमेश: बड़ी खुशी की तलाश में रहते हैं और जो दुनियवी खुशी के बयान में हम दिखावेंगे।

जिन की तबीयत तहक़ीक़ात की तरफ़ रुजूअ है और जो लोग हर अम्र और हर फ़ेल का सबब और नतीजा दरयाफ़्त करने की ख़्वाहिश रखते हैं और यह भी जानना चाहते हैं कि इस दुनिया में ज़िन्दगी की हालत में इन्सान को किस चीज़ की ज़्यादः ज़रूरत है उन पर यह बात बख़ूबी रौशन होगी कि इस क़िस्म के ख़यालों की तहज़ीब के क़ायदों के पैरौ रह दलीलों से सुलझाने में और मज़बूत कामिल इस अम्र का तस्फ़ियः करने के वास्ते, दरपेश होते हैं। चुनांचे जब हम ख़याल करते हैं कि दुनिया को किस ख़ास चीज़ की ज़रूरत और वह ज़रूरत क़ायदी क्यों है मुख़्तलिफ़ वजूहात के साथ कई क़िस्म के ख़यालात पैदा होते हैं। मुख़्तलिफ़ हाजतों के रफ़अ करने की मुख़्तलिफ़ सूरतें दरपेश आते

अगर इस मौक़ा पर इस हद को उस ख़ास हालत का ज़िक्र करेंगे जिसे ज़िन्दगी का असूल और अक़्ल का नतीजा कहना चाहिये याने ख़ुशी । यह वह चीज़ है जिस के हासिल करने की कोशिश हम पर उतनी ही लाज़िम है जितना उस की तहसील के तरीक़ों के मालूम करने की भी ज़रूरत है इसी से इस लाज़िम मलज़ूम ज़रूरत की कैफ़ियत को हम ख़ुशी के नाम से पुकारते हैं। अब यह सवाल पैदा हुआ कि हमारी ज़िन्दगी के असूल का यह लतीफ़ हिस्सा याने ख़ुशी क्या चीज़ है और क्यों कर हासिल हो सकती है इस सवाल का जवाब अकसर बड़े २ आलिमों ने अपने २ तौर पर दिया है जिन सभों को इख़्तिसार से पहिले बयान कर के तब जो कुछ होगा हम अपनी राय ज़ाहिर करेंगे । मशहूर फ़िलासफ़र पेली का क़ौल है कि ख़ुशी दिल की वह हालत है कि जिस में तअदाद राहत की रंज से ज़्याद: बढ़ जाय । ख़ुशी की मुख्य हालत 'ख़्वाहिश के मुताबिक़ काम शुरू करना,' बाद अज़ां और कामियाब होना है वह काम चाहे किसी किस्म का क्यों न हो मसलन् इल्म व हुनर सीखना मुल्क फ़तह करना बाग़ लगाना गाना खाना वग़ैर: वग़ैर: इसी ख़ुशी के हासिल करने के वास्ते पहिले हम लोगों को चन्द दर चन्द तकलीफ़ें इन कामों में कामयाब होने को उठानी पड़ती है। मुमकिन है कि बग़ैर ख़ुशी हासिल होने तकलीफ़ रफ़ा हो जाय मगर जब तकलीफ़ होगी तब ख़ुशी ख़्वाह न ख़्वाह ज़ाय: हो जायगी हां बिल्कुल तकलीफ़ के दूर हो जाने को हम बेशक ख़ुशी कह सकते हैं और इसी सबब से ख़ुशी हासिल करने का गोया यह असूल है कि पहिले की तकलीफ़ की कोशिश की तकलीफ़ से बदलना और कामियाबी की ख़ुशी से उसी कोशिश की तकलीफ़ को कामयाबी की ख़ुशी से ज़ाय: करदेना । इसी से अगर ख़ुशी की बतौर सरसरी के तहक़ीक़ात की जाय तो यह बात साबित होगी कि ख़ुशी उस हालत का नाम है जिस में रंज का हिस्सा राहत से दब गया है। पेरट साहब का क़ौल है कि ख़ुशी हमेश: तकलीफ़ का नतीजा है और इस की मिसाल मकान बनाने से साफ़ ज़ाहिर है यह बात हम लोगों की आदत में दाख़िल है कि अपनी मौजूद: हालत को कभी नहीं पसन्द करते और हमेश: अपनी हालत अपनों से बढ़ने की कोशिश करते हैं तकलीफ़ मौजूद: को दबा कर ख़ुशी के हिस्से को बढ़ाया चाहते हैं अगर हमारी ख़ुशी हमेश: क़ायम रहती होती तो इस हालत मौजूद: से

नाहीं घटे हुए होतें क्योंकि इसलोग किसी क़िस्म की कोशिश न करते
जिस का नतीजा यह होता कि कोई नई बात न ज़ाहिर होती इसी से
उसी कारसाज़ हक़ीक़ी ने दुनिया की तरक़्क़ी के वास्ते यह क़ायदा मु
किया है कि आदमी पहिले जैसी तकलीफ़ उठावे पीछे से आराम हो
इसी बुनयाद पर आदमी की ख़ासियत भी ऐसी ही बनाई है। हां यह
बेशक है कि किसी को कम तकलीफ़ है और किसी को ज़्याद: और
उसे थोड़ी कोशिश में हासिल करता है और किसी को अपनी उम्र का
बड़ा हिस्सा उस के हासिल करने में सर्फ़ करना होता है। इसी को
हम लोग कहते हैं कि यह आदमी ख़ुश है और यह ज़्याद: ख़ुश है
बहुतों से कहा जाता है कि ख़ुशी ख़ुद कोई चीज़ नहीं है बल्कि तक
के उलटे अक्स का नाम ख़ुशी और यही सबब है कि रंज और रा
लाज़िम मलज़ूम हैं। बल्कि इसी से हमेश: यह एक मुसल्लम क़ायदा है
कोई काम बग़ैर तकलीफ़ के शुरू नहीं होता।

सरविलियम हमिल्टन ख़ुशी की तारीफ़ में फ़रमाते हैं कि ख़ुशी
कोई चीज़ नहीं है बल्कि आदमी की ख़ासियत या आदत को जब
रुकावट नहीं होती तो यही हालत ख़ुशी की कहलाती है—

इन आलिमों की राय पर बहस न कर के अब हम ख़ुशी के अफ़्
भी कुछ बयान किया चाहते हैं। ख़ुशी एक नाम है जो आराम को
ख़ाहिशों के पूरे होने की और तकलीफ़ों की हालत को कहते हैं और
ऊपर के अफ़्शी बयान से भी साबित हुआ कि ख़ुशी एक ऐसा अफ़्
जो हमेशा तकलीफ़ के मुक़ाबले में मुस्तअमल होता है।

बहुत लोगों का ख़्याल है कि ख़ुशी से इल्म से कुछ इलाक़ा नहीं
बल्कि वह एक कुदरती जबली है जो इनसान और हैवान दोनों में बरा
होती है। मगर यह बात नहीं है क्योंकि इस क़िस्म की हैवानी ख़ुशी
आलिम लोगों की ख़ुशी से क्या फ़र्क़ है यह जिन को कुछ भी शऊर है
जान सकते हैं और इसी से कहा जा सकता है कि सिर्फ़ हैवानों की जो ख़ु
है वह झूठी ख़ुशी है और जो इस ख़ुशी के दर्ज: से बढ़ी हुई है वह बड़ी ख़ु
है बल्कि ख़ुदापरस्त लोग इसी वास्ते इन दोनों ख़ुशियों से बढ़ कर के
ख़ुशी ऐसी मानते हैं जिसकी कोशिश में दुनियवी ख़ुशियों को भी तर्क
देना होता है।

यह हर शख्स जानता है कि बार २ इस्तेमाल करने से कैसी भी खुशी क्यों न हो जाय: हो जायगी बल्कि ऐसी हालत में इसी खुशी का नाम बदल कर चाहत है यही सबब है कि ज़्यादा लोग अकसर ग़मगीन देखे गये हैं क्योंकि पहिले जिस खुशी को उन्हों ने बड़ी कोशिश से हासिल किया था अब वह उनका रोज मर्रः हो गया और उससे काम न हुई पस जब वह रोज अपनी औक़ात, ताक़त इल्म और रुपया सर्फ़ करते हैं मगर कुछ नहीं हासिल होता तो ग़मगीन होते हैं। इसी क़िस्म से खाना, पीना, नाच, रंग वगैरह की खुशी भी जल्द जाय: हो जाती है मगर हां शिकार वगैरः की खुशी का दर्जः कुछ इस से बड़ा है और इसी तरह वह खुशी जो सनअत सीखने से हासिल होती है मसलन रंगसाजी, इल्म मुसीकी, कारीगरी वगैरः ऊपर बयान की हुई खुशियों से ज्यादः देरपा है क्योंकि गुंजाइश के सबब से यह खुशी जल्दी जाय: नहीं होती और इसी से जल्द जाय: होने वाली खुशी के तमन्नाओं को अखीर में इसी खुशी से उकता कर के गोशः नशीनी की तलाश होती है।

यही हम कह सकते हैं कि हर शख्स को अपने २ हौसला और हिम्मत के मुवाफ़िक़ ज्यादः २ खुशी मिलती है इस बयान से मेरा यह मतलब नहीं है कि बड़े मर्तबः के लोगों को ग़रीबों से ज्यादः खुशी होती है बल्कि उन ग़रीबों को जोकि अपनी हालत में तो ग़रीब हैं मगर उन के हौसले बहुत बड़े हैं बनिसबत अमीरों के हमेशः ज्यादः खुशी हासिल होती है।

तवारीख़ से यह बात बख़ूबी साबित है कि कि बड़े २ फ़तह करने वाले पादशाह या शाहज़ादे बनिस्बत अवाम के हमेशः ज्यादः तर मुसीबतें झेलते रहे हैं और खुशी से यहां तक महरूम रहे हैं कि उन में से अक्सरों ने खुद कुशी की है और बहुतेरे घर बार छोड़ कर फ़क़ीर हो गये हैं फ़ीलमसल शहन्शाह रूम पर इस की मिसाल बहुत ठीक घटती है बेशक दुनिया में वह सब से बड़ा और सब से ज्यादः खुशी से महरूम है। ग़रीब को एक जान हज़ार दुश्मन। बल्कि हमारे हाज़िरीन में से ज्यादः लोग ऐसे होंगे जो इस वक़्त इस वक़्त, हमारे जनाब सुलताना अल्काब मद्दे र काब शहन् शाहे रूम दाम सल्तनतहू से बहुत ज्यादः खुशी होंगे ०

इसी से हम कहते हैं कि खुशी से मर्तबः से कुछ वास्ता नहीं खुशी एक नेमत उज़मा, है जिसे हर शख्स नहीं पाता फ़ारसी किताबों में मशहूर

कहीं घटे हुए होते क्योंकि हमलोग किसी क़िस्म की कोशिश न करते
जिस का नतीजा यह होता कि कोई नई बात न ज़ाहिर होती इसी से
उसी कारसाज़ हक़ीक़ी ने दुनिया की तरक़्क़ी के वास्ते यह क़ायदा मुक़र्रर
किया है कि आदमी पहिले जैसी तकलीफ़ उठावे पीछे से आराम हो
इसी बुनियाद पर आदमी की ख़ासियत भी ऐसी ही बनाई है। हां यह
बेशक है कि किसी को कम तकलीफ़ है और किसी को ज़्यादः और
उसे थोड़ी कोशिश में हासिल करता है और किसी को अपनी उम्र का
बड़ा हिस्सा उस के हासिल करने में सर्फ़ करना होता है। इसी को तफ़
हम लोग कहते हैं कि यह आदमी ख़ुश है और यह ज़्यादः ख़ुश है
अक्सरों से कहा जाता है कि ख़ुशी ख़ुद कोई चीज़ नहीं है बल्कि तक
के उलटे अक्स का नाम ख़ुशी और यही सबब है कि रंज और ग
लाज़िम मलज़ूम हैं। बल्कि इसी से हमेशः यह एक मुसल्लम क़ायदा है
कोई काम बग़ैर तकलीफ़ के मुरत्तब नहीं होता।

सर विलियम हमिलटन ख़ुशी की तारीफ़ में फ़रमाते हैं कि ख़ुशी
कोई चीज़ नहीं है बल्कि आदमी की ख़ासियत या आदत को सब किसी
रुकावट नहीं होती तो यही हालत ख़ुशी की कहलाती है—

इन आलिमों की राय पर बहस न कर के अब हम ख़ुशी के मफ़्हू
भी कुछ बयान किया चाहते हैं। ख़ुशी एक नाम है जो आराम की
ख़ाहिशों के पूरे होने की और तकलीफ़ों की हालत को कहते हैं और
ऊपर के लफ़्ज़ी बयान से भी साबित हुआ कि ख़ुशी एक ऐसा मफ़्हू
को हमेशा तकलीफ़ के मुक़ाबले में मुस्तअमल होता है।

बहुत लोगों का ख़याल है कि ख़ुशी से इल्म से कुछ इलाक़ा नहीं
बल्कि वह एक कुदरतन जबली है जो इनसान और हैवान दोनों में बरा
होती है। मगर यह बात नहीं है क्योंकि इस क़िस्म की हैवानी ख़ुशी
आलिम लोगों की ख़ुशी से क्या फ़र्क़ है यह जिन को कुछ भी शऊर है वह
जान सकते हैं और इसी से कहा जा सकता है कि सिर्फ़ हैवानों की जो ख़ुशी
है वह झूठी ख़ुशी है और जो इस ख़ुशी के दर्जः से बढ़ी हुई है वह बड़ी ख़ुशी
है बल्कि ख़ुदापरस्त लोग इसी वास्ते इन दोनों ख़ुशियों से
ख़ुशी ऐसी मानते हैं जिसको कोशिश में दुनियवी
देना होता है।

यह हर शख़्स जानता है कि बार २ इस्तेमाल करने से कैसी भी ख़ुशी क्यों न हो ज़ाय: हो जायगी बल्कि ऐसी हालत में इसी ख़ुशी का नाम बदल कर आदत है यही सबब है कि अय्याश लोग अकसर ग़मगीन देखे गये हैं क्योंकि पहिले जिस ख़ुशी को उन्हों ने बड़ी कोशिश से हासिल किया था अब वह उनका रोज़ मर्र: हो गया और इसका कम न हुई पस जब वह रोज़ अपनी औक़ात, ताक़त इज़्ज़त और रुपया सर्फ़ करते हैं मगर हज़ नहीं हासिल होता तो ग़मगीन होते हैं। इसी क़िस्म से खाना, पीना, नाच, रंग वग़ैरह की ख़ुशी भी जल्द ज़ाय: हो जाती है मगर हां शिकार वग़ैर: की ख़ुशी का दर्ज़: कुछ इस से बड़ा है और इसी तरह वह ख़ुशी जो समझत सोचने से हासिल होती है मसलन रंगसाज़ी, इल्म मुसीक़ी, कारीगरी वग़ैर: ऊपर बयान की हुई ख़ुशियों से ज़्याद: देरपा है क्योंकि गुंजाइश के सबब से यह ख़ुशी जल्दी ज़ाय: नहीं होती और इसी से जल्द ज़ाय: होने वाली ख़ुशी के तलबगारों को आख़िर में इसी ख़ुशी से उकता कर के नौम: ग़मगीनों की तलाश होती है।

यहो हम कह सकते हैं कि हर शख़्स को अपने २ हौसल: और हिम्मत के मुआफ़िक़ ज़्याद: २ ख़ुशी मिलती है इस बयान से मेरा यह मतलब नहीं है कि बड़े मर्तब: के लोगों को ग़रीबों से ज़्याद: ख़ुशी होती है बल्कि उन ग़रीबों को जोकि अपनी हालत में तो ग़रीब हैं मगर उन के हौसले बहुत बड़े हैं बनिसबत अमीरों के हमेश: ज़्याद: ख़ुशी हासिल होती है।

तवारीख़ से यह बात बख़ूबी साबित है कि कि बड़े २ फ़तह करने वाले बादशाह या शाहज़ादे बनिस्बत अवाम के हमेश: ज़्याद: तर मुसीबतें झेलते रहे हैं और ख़ुशी से यहां तक महरूम रहे हैं कि उन में से अक्सरों ने ख़ुद कुशी की है और बहुतेरे घर बार छोड़ कर फ़क़ीर हो गये हैं फ़िलज़माना शहनशाह रूस पर इस की मिसाल बहुत ठीक घटती है बेशक दुनिया में वह सब से बड़ा और सब से ज़्याद: ख़ुशी से महरूम है। ग़रीब की एक जान हज़ार दुश्मन। बल्कि हमारे नाज़िरीन में से ज़्याद: लोग ऐसे होंगे जो दर हक़ीक़त इस वक़्त, हमारे जनाब मुअल्ला अल्क़ाब गर्दू र काब शहन् शाहे रूस दाम सल्तनतहू से बहुत ज़्याद: ख़ुशी होंगे ०

इसी से हम कहते हैं कि ख़ुशी से मर्तब: से कुछ वास्ता नहीं ख़ुशी एक बेमुमसी इनाम, है जिसे हर शख़्स नहीं पाता फ़ारसी किताबों में मशहूर

लिखा है कि एक खुदापरस्त हमेशः परमेश्वर से अपने रंजों की शिकायत किया करता था अल्लाह तआ़ला ने उस को यह शिकायत रफ़ा करने को एक आईनः दिया और फ़रमाया कि इस आईनः में तू सब का दिल देख और जो इनसान तुझ को तेरी हालत से ज़्यादः खुश मालूम हो उसका नाम बतला कि तेरी हालत वैसीही कर दी जाये। इस शख़्स ने एक २ के दिल का इम्तिहान किया और ज्यों २ ज़्यादः रुतबे के आदमियों का दिल देखा गया त्यों ज़्यादः तर तक्लीफ़ों से घेरा हुआ पाया यहां तक कि जब बादशाह के दिल के देखने की नौबत आई तब उस आईनः में सिवाय काले दाग़ों के कुछ न बचा और उस ने घबरा कर आईने को दरिया में फेंक दिया और अपनी असली हालत पर खुदा का शुक्र किया। इस कहने से मेरा यह मतलब नहीं है कि आदमी अपने हौसलों को पस्त करदे और कहे बादशाह होना न चाहिए बल्कि हमेशः अपने हौसले को बढ़ा कर कामयाब होता रहे मगर बाद कामयाबी के अपनी हालत ऐसी न परेशान रक्खे जिस से अपनी कोशिशों का सुख भोगने के बदले उसे रात दिन दुख उठाना पड़े हमेशः हुकमा जब अमीरों से उन के तरद्दुदात की शिकायत करते हैं तो उन को रहम की नज़र से देखते हैं मगर वे अमरा अपने से छोटे दर्जे वालों को कभी रहम की नज़र से नहीं देखते बल्कि हिक़ारत की। इस का यही सबब है कि हुकमा अपनी कोशिश से कामयाब होकर खुशी के दर्जे को पहुंच गये हैं और किसी क़िस्म के तरद्दुद बाक़ी न रहने से वह दूसरों की मदद में अपने औक़ात सर्फ़ कर सकते हैं बरख़िलाफ़ इस के अमरा अपनी कोशिशों की नाकामयाबी से दूसरों पर हमेशः हसद किया करते हैं। मरतबे का ख़ास फ़ायदा ऊंचा हौसला और बड़ी २ खुशियों में शामिल रहने का ख़याल है और यह वह खुशियां हैं जो हर हालत में एक सूं रहती हैं। और इन खुशियों का नतीजा यह होता है कि आइंदः लोग अपने क़ौम वतन और दुनिया की तरक़्क़ी की तदाबीर के हौसले का शौक़ पाते हैं बरख़िलाफ़ इस के हैवानी खुशी के शौक़ीन अमरा आपस में दुश्मनी बढ़ाते, हसद फ़साद वग़ैर इस ज़िन्दगी उठाते अपनी ज़िन्दगी मुफ़्त बरबाद करते हैं।

मेरे ऊपर के बयान से आप लोगों पर ज़ाहिर हो गया होगा कि खुशी ... मुस्तमना नहीं बल्कि एक खुदादाद चीज़ है अब मैं यह बयान ... होती किस चीज़ में है। अब इस के हासिल करने की और

बाद हू उस के क़ायम रखने की तदबीर सोचनी ज़रूर हुई। खुशी हासिल करने का तरीक़ा जानने के लिये, सब के पहिले लियाक़त की ज़रूरत है। बहुत सी ऐसी हालतें हैं जिन में खुशी हासिल करने की कोशिश की जाती है मगर उस का नतीजा उलटा होता है और अकसर रंज के मौक़ों में यकायक खुशी हासिल हो जाती है इसी से खुशी हासिल करने की ख़ास तदबीरों का बयान करना बहुत मुशकिल है। सिर्फ़ अपनी हाजतों को पूरा करना खुशी नहीं कही जा सकती क्योंकि बहुत सी हाजतें ऐसी होती हैं जो महज़ ग़लत उसूलों पर क़ायम होती हैं। अकसर उलमा का क़ौल है कि खुशी मुहब्बत में है। दुनिया में खुदा ने मुहब्बत के वास्ते बाप भाई, जोरू, लड़के, रिश्तःदार और दोस्त वग़ैरः बहुतेरे बनाए हैं। अकसर इन लोगों की अदम मौजूदगी में खुशी न हासिल होने से लोग फ़क़ीर होजाते हैं या दुनिया में रहते हैं तो परेशान रहते हैं। चन्द लोग दूसरों की हाजत रफ़ा करने को खुशी कहते हैं क्योंकि दूसरे लोग खुशी हासिल करने की जो कोशिश करते हैं उन को अपनी कोशिश से कामयाब बनाकर खुश कर देना गोया उस की खुशी में शरीक होना है।

बाज़ उलमा खुशी हासिल करने की कोशिश ही को खुशी कहते हैं मगर इस में मुशकिल यह है कि पहिले से उस कोशिश के आख़ीर नतीजे की कामयाबी को बखूबी जांच लेना चाहिये दूसरे जब तक कि उस काम का अञ्जाम बखूबी न हो जाय बराबर मुस्तइदी की भी ज़रूरत है। ऐसे का क़ौल है कि खुशी जितनी अपने इरादों की मज़बूती में है उतनी सिर्फ़ खयालात और कोशिश में नहीं इस क़ौल की तसदीक़ बहुत साफ़ है। जो अपने इरादों पर मज़बूत है वह हमेशः अपनी कामयाबी को अपनी आंखों के सामने देखता है और अगर ऐसा शख़्स अपना काम पूरा किये बग़ैर भी मर जाय तो उस को वही खुशी हासिल रहेगा कि कामयाबी पर हो सकती थी। वही मक़बूल की खुशी हासिल करने के वास्ते काम के पीछे लगे रहना निहायत ज़रूर है ख़्वाह वह अपने फ़ायदे के वास्ते हो या आमफ़ायदे के वास्ते हो। अक़लमन्द लोग इसी काम में लगे रहने को ज़िन्दगी कहते हैं और यह वह ज़िन्दगी है जो आदमियों को अपने इरादों पर कामयाब करके खुशी ही नहीं पहुंचाती है बल्कि रूहानी व जिस्मानी सिहत को भी क़ायम रखती है।

इस में खुशी के चन्द वसीले ऐसे हैं जिन का असर आदमी अपनी मौत

के बाद भी छोड़ जा सकता है मसलन् सुस्ती...की जमाश्रतों का क़ायम करना स्कूल और शफ़ाख़ानों की बुनियाद डालना वग़ैरः वग़ैरः।

ज़ाति फ़ायदों की ख़ुशी भी बाज़ हालत में आदमी के मरने के बाद भी क़ायम रह सकती है मसलन् अपने ख़ान्दान ज़ुर व नोग की सूरत में अहिम क़ायम कर जाना। किसी काम की तरफ़ मशगूली से दिल लगाने में एक फ़ायदा यह भी है कि बीच में छोटी २ तकलीफ़ें जो इत्तिफ़ाक़ से सरज़द होती हैं उन को आदमी अपनी होनहार ख़ुशी की धुन में बिल्कुल ख़्याल में नहीं लाता।

ख़ुशी की एक उमदः हालत यह भी है कि अपनी बुरी आदत को छ देना यह आदमी कैसा ख़ुश होगा जब वह अपने को बुरी आदत से छ छूटा देखेगा।

बहुत से लोग ग़ैर मामूली ख़ाहिशों के पूरे होने को ख़ुशी कहते हैं जै कि जो शख़्स हमेशः तनहाई में रहता उसे अगर दोस्तों की सुहबत नसी होती है तो उस को ग़नीमत जानता है। मगर कोशिश कुनिन्दः को ऐ मौक़ा में बनिस्बत सुस्त लोगों के ऐसे हालत में भी ज़्यादः ख़ुशी हासि होती है। मसलन् जो फ़िलासफ़ी की बड़ी २ किताबों के पढ़ने में हमे अपना वक़्त सर्फ़ करता है उसे अगर छोटी मोटी कोई क़िस्से की किता मिल जाय तो वह बड़ी ख़ुशी से पढ़ेगा बरख़िलाफ़ इस के जो हमेशः क़िस्स कहानियों से जी बहलाता है उस को अगर फ़िलासफ़ी की किताब दे दं जाय तो उस का जी उलझेगा और वह उसे फेंक देगा।

ग़ैर मामूली ख़ुशी अमीरों पर भी असर करती है मसलन् किसी अमी की सालाना आमदनी हज़ार रुपया है मगर किसी साल इत्तिफ़ाक़ से दस या बारह आजावें तो, उस को कैसी ख़ुशी हासिल होगी। यही मिसाल इस बात की दलील है कि अगरचे दौलतमन्दी ख़ुशी की मूजिब है मगर उस में भी तरक़्क़ी ज़्यादः ख़ुशी देती है।

ख़ुशी का एक बड़ा भारी सबब तन्दुरुस्ती भी है और यह तन्दुरुस्ती तभी दुरुस्त रह सकती है जब आदमी रूहानी या जिस्मानी तकलीफ़ से बच सकता है। ख़ुशी है वह जिस का बदन बलग़म या रीह या गरमी से नहीं बीमार है। बल्कि किसी क़िस्म की तकलीफ़ न होने की आमदगी से तैयार है। मगर यह ख़्याल सुन्दर है कि यह तन्दुरुस्ती उस क़िस्म की है किसी से

मे पैदा हो जिस से कि तमाम कोशिश और होवसे पस्त हो जांय जैसा कि हमारे हज़रात बनारस की खुशी है।

हम पहिले कह चुके हैं कि सच्ची खुशी के लिये लियाक़त की ज़रूरत है मगर हम लियाक़त के साथ दुनियवी तहज़ीब और दीनी ईमानदारी की भी निहायत ज़रूरत है क्योंकर लोगों को बहुत सी ऐसी बातों में खुशी हासिल होती है जो दर हक़ीक़त ईमान, तहज़ीब, ताक़त, ताकत, बल्कि जान, माल और जिस्मी आराम की भी ग़ारत करनेवाले होते हैं। तो क्या हम ऐसी खुशी को भी सच्ची खुशी कहेंगे। मसलन् मूजी को ईजारसानी में, बदकार को बदी में, क़िमार बाज़ को जुए में और ऐसे ही बहुत सी बातों में खुशी मान ली जाती है जो चिकमतन्, शरहन् और यक़ीनन्, हर सूरत से सिवाय ज़रर के फ़ायदा नहीं पहुंचाती। इस सूरत में तो बल्कि यह सोचना लाज़िम आता है कि ऐसी खुशियों के नज़दीक भी न जाय क्योंकि जब कोई शय तुम्हारी अक़्ल पर ग़ालिब आ जाय तो तुम नशे के आलम की तरह, अपने हवास पर क़ाबू न रख कर झूठी खुशी की तलाश में ज़ाहिरी लज़्ज़त के धोखे से ज़हर का प्याला पी जाओगे। हक़ीक़ी खुशी वही है जिसका अन्जाम व आग़ाज़ दोनों खुश है। असली खुशी मुफ़रह दिल से रंज का नाम यकक़लम हटा देती है और तमाम जिस्म को, हवा से खुसूस: को और जान को ऐसी राहत देती है कि उस हालत मसरूरियत में उसी मआनी खुशी की निस्बत हर लहज़: में दिल नई २ उमङ्गें और नये २ शौक़ पैदा करता है इस कैफ़ियत का ठीक २ ज़ाहिर करना ज़बान की कूव्वत से बाहर है इस से तजुरिब: कार लोगों के क़यास ही पर छोड़ दिया जाता है।

पेलो ने लिखा है कि खुशी तहज़ीब बाक़िय: जमाअतों की मुतफ़र्रिक़ लोगों में क़रीब २ बराबर हिस्सों में बटी है और इसी से बुराई करने वाला हमेश: बमुक़ाबल: ईमानदार दुनियवी खुशी से भी महरूम रहता है० खुशी से ग़म को मसाहिद: करने के लिये एक ख़ास क़िस्म की लियाक़त की ज़रूरत होती है जो हर शख़्स में नहीं पाई जाती इसी से कामिल खुशी का लुत्फ़ हर शख़्स को नसीब नहीं होता दुनिया में तकलीफ़ भी जब अपनी हद को पहुंचती है खुशी का मज़ा बढ़ाती है ० जब आदमी पर हद से ज़्यादह: ज़ुल्म होता है या हालत तकलीफ़ पहुंचती है तब नई खुशी से बदल जाता है और यही सबब है कि आदमी जितना छोटी २ तकलीफ़ों से

जंग पाता है उतना बड़ी तकलीफ़ में नहीं घबराता मसे चाशिक़ों को हिज़्र की तकलीफ़ जब वह में ज़्यादः बढ़ जाती है तब फ़िराक़ में वस्ल से ज़्यादः मज़ा मिलता है सुई गड़ने में भी तकलीफ़ होती है वह बर्दाश्त नहीं बरदाश्त होती मगर जंग में नुमायां चोटों को आदमी वे तकलीफ़ बरदाश्त कर सकता है। अफ़रीक़: के मशहूर सैयाह डाक्टर लिविंगस्टन ने लिखा है जब वह शेर के पंजा में फंस गये थे तो उनको मायूसी के साथ एक क़िस्म की खुशी हुई थी इसी तरह अक्सर मौत शदीद के वक़्त लोग खुश पाये गये हैं इसका सबब यह है कि जब आदमी की हालत बिल्कुल ना उम्मेदी की पहुंचाती है तो उस तकलीफ़ का ख़ौफ़ का बाक़ी नहीं रहता मसलन् जब तक आदमी को जीस्त की उम्मेद है, उस को मौत का खौफ़ रहेगा मगर जिस वक़्त कि जीस्त की उम्मेद बिल्कुल मुनक़तअ् हो गई फिर उस को किस बात का ख़ौफ़ रहा यही सबब है कि हिन्दू शास्त्रकारों ने ख़ौफ़ और रंज की असली हालत को भी एक रस माना है और ज़ाहिर है कि ट्राजिडी यानी ऐसे तमाशे जिस का आख़िर हिस्सा बिल्कुल रंज से भरा हो देखने में एक अजीब क़िस्म का लुत्फ़ देती है बल्कि ट्राजिडी में जैसी उमदा किताबें लिखी गई हैं वैसी कामेडी में नहीं। जिस तरह रंज की आख़री हालत खुशी से बदल जाती है उसी तरह खुशी की भी आख़री हालत रंज में बदल जाती है और इसी से ज़्यादः खुशी के वक़्त लोग शिद्दत से रोते हुए पाये गये हैं ख़ुलासा कलाम यह कि इस क़िस्म की बहुत सी खुशियां दुनिया में हैं जिन को हम ख़ालिस खुशी नहीं कह सकते।

अब हम इस बात पर ग़ौर किया चाहते हैं कि वह असली खुशी हिंदुओं को क्यों नहीं हासिल होती क्योंकि जब हम इसी खुशी को अपनी पूरी पसन्दी की हद पर हर सूरत से कामिल देखना चाहते हैं तो हमेश: ग़ैर क़ौमों में पाते हैं इस को ज़ाहिर वजूहात जो मालूम होती हैं उन में सब से पहिला सबब हिंदुओं के दीनी व दुनियवी तरीक़ों का आपस में मिल जाना और तमल्लुफ़ी के ज़माने के कम वेश फ़ाज़िलों का इहकाम शरई में दख़ल दर माक़ूलात करना है जिन के कलाम पर आप अपनी नातजुर्बःकारी से पूरा अमल कर लिया है। इन फ़ुज़ला ने अपनी कम हिम्मती की वजह से ऐसे क़ायदे जारी किये जिन से आख़िरकार इस लोगों तर्ज़ के लायक़ हालत पहुंची कि हम लोग उस खुशी को जो फ़ी

ज़माना ग़ैर क़ौमों को हासिल है कभी ख़्वाबोख़याल में भी नहीं ला सकते। इस फ़िलासफ़रों के फ़िलासफ़ी का दूध निकाल कर जिन बातों को हमारे आराम के लिये ज़रूरी बल्कि हमारी नजात का मूजिब ठहराया है वे अगर इस नज़र से देखे जावें जिस से हम ख़ुशी को अब असली हालत पर ग़ैर क़ौमों में बतलाते हैं तो साफ़ ज़ाहिर होगा कि इन्हीं को तअ़ज्जुब का यह फ़ख़ है कि परमेश्वर ने इन बेचारे हिंदुओं को इस सच्ची ख़ुशी से महरूम रख कर इन के हिस्से में अपनी एक दूसरी प्यारी ख़िलक़त की गोद भरदी है जहां कि हर एक को उम्र का जाम ख़ुशी से लबालब नज़र आता है इस क़दीम ज़माने के फ़िलासफ़रों के उसूल को बहस बहुत तूल है और इसी तरह इसको सिलसिलेवार दलीलों से रद्द करने के लिये भी बड़ी गुंजाइश चाहिए इस लिये यहां सिर्फ़ उन पुराने ख़यालों का ख़ुलासा दिखलाया जाता है कि किस तरीक़े पर उन्हों ने अपनी उस असली ख़ुशी की बुनियाद क़ायम की है और वह इस तरक़्क़ी याफ़्त: ज़माने के आक़िलों के क़ौलो फ़ेल के नज़दीक कितनी हेच है।

इस असली ख़ुशी का पहिला तरीक़ा सन्तोष यानी क़नाअ़त है। उन्हों ने अपनी पेचीद: इबारत के बेमानी मज़मून में जिस का हर फ़िक़रा अब हदीस गिना जाता है आख़ीर को यह साबित किया है कि ख़ुशी व रंज दोनों ग़लत और वहम हैं यानी रंज व राहत से अलहद: वह हालत जिस में अक़्ल, ख़याल, इल्म और हरकत (शायद सकते की बीमारी की हालत) सब सलफ़ हो जावें वही परमानंद है और वही ख़ुशी का असलु-लअसूल और सच्चे सवाब है। आदमी को इस हालत तक पहुंचने के लिये इन लोगों ने चंद क़ायदे भी ईजाद फ़रमाये हैं जिन में अव्वल उन के कलाम पर बिला हुज्जत यक़ीन लाना हर्गिज़ हर्गिज़ दलील और अक़्ल को दख़ल न देना दूसरे सभी ग़ारतगर सन्तोष को इख़्तियार करना और ख़्वाहिश व हाजतों को दिल में पैदा न होने देना। तीसरे सब कुछ बर्दाश्त कर लेना और रंज और राहत को एक अम्रे तक़दीरी समझ कर बस बेसुध रहना। चौथे नेक और बद में तमीज़ न करना और भला बुरा सब को यकसां समझना। पांचवें ([illegible]) ख़ालिक़ और मख़्लूक़ न समझना।

ज़ाहिर है कि पहिले क़ायदे पर अमल करने ही से अक़्ल पर ज़वाल आया और फ़ायद: व नुक़सान का ख़याल जाता रहा उन्हीं आंखों को अपने

बांकीपुर–"खड्गविलास" प्रेस की संक्षिप्त सूची।

- रामचरित मानस (रामायण) फोटो और जिल्द सहित ... ७)
- रामायण (फोटोरहित) ४,
- रामायण परिचर्य्यापरिशिष्टप्रकाश
  - (बालकांड फिर छपता है)
  - (अयोध्याकांड) २)
  - (आरण्य, किष्किन्धा, सुंदर, लंका और उत्तर कांड) ५)
- किष्किन्धा कांड सटीक .... ४)
- वैराग्यसंदीपिनी (पं० वन्दन पाठक कृत नेहप्रकाशिका टीकासहित) ॥)
- विवेककोष(हिन्दीभाषाके अपूर्वकोष)१॥)
- रसिकप्रकाश भक्तमाल .... ॥)
- गंगामाहात्म्य मूल्य ।), सटीक ।≠)
- मिथिलामाहात्म्य (पद्य) .... =)
- महाराणी विक्टोरिया का जीवन चरित्र जिल्दबंधी १)
- रामलला नहछू .... =)
- रामहोरीरहस्य .... ।)
- भारतवर्षीय इतिहास .... १)
- काव्यरत्नाकर .... ।=)
- धर्मप्रशंसा भाषानुवाद सहित ।)
- प्रस्थानभेद .... ।)
- बालविवाहविदूषक .... ‌)
- बरवै रामायण सटीक .... ।)
- मानस मालप्रकाश (संतसिंह कृत रामायण की टीका बालकांड ३)
- गुलजारे पुर बहार ... ॥)
- बिहारदर्पण .... ।)
- हरिश्चन्द्रकला का प्रथमभाग नाटकावली जिसमें १९नाटक हैं ५)
  - " द्वितीयभाग इतिहास जिस में १२ ग्रन्थ हैं ४)
  - " तृतीय भाग रामभक्ति जिस में ७ ग्रन्थ हैं ३)
  - " चतुर्थ भाग भक्तरहस्य जिस में १८ ग्रन्थ हैं ४)
  - " पञ्चम भाग काव्य जिस में १७ ग्रन्थ हैं ४)
- सुन्दरीतिलक (१०४९सवैया हैं)१॥
- साहित्यलहरी (सूरदास के कूटों की टीका मय जीवनचरित्र ३)
- प्रहसनपंचक .... ।)
- परिहासिनी .... ।≠)
- हास्यविलास प्रथम भाग .... ।)
  - " २ य भाग .... ॥।)
- सरयू लहरी .... ‌)
- मिथिलाविलास .... ‌)
- पद्मावली (उत्सवप्रकाशिका) .... ।)
- क्षत्रियपत्रिका १, २, ३, ४, ५, ६, वर्ष प्रतिवर्ष का ६।≠)
- नाटकाकार रामायण (पं० दामोदर शास्त्री कृत) ५)

कृष्णचरित्र।

भक्तिपूर्ण भजन और सवैया आदि।

भारत भूषण भारतेन्दु श्री हरिश्चन्द्र रचित.

जिस को हिन्दीभाषा के प्रेमी तथा रसिकजनों के मनोविलास
के लिये क्षत्रियपत्रिका सम्पादक

म० कु० बाबू रामदीन सिंह ने

प्रकाशित किया।

पटना—" खड्गविलास " प्रेस—बांकीपुर
साहबप्रसाद सिंह ने मुद्रित किया।
१८८८

हरिश्चन्द्राब्द ५

आजु हरि छलि कै लाए प्यारी। पार उतारन मिसि नौका पै रसिक राज गिरि-धारी ॥ औघट घाट लगाइ नाव निज विहरत करि मनुहारी। हरीचन्द सखि लिखत चकित चित दित प्रान धन वारी॥१॥

जुगल छवि नैनन सों लखि लेहु। ठाढ़े बाहुं जोरि कुंजन मैं अवसर जान न देहु॥ सांझ समय आगम बरसा कौ फूल्यौ बन चहुं ओर। लहरत कालिन्दी जल झलकत आवत मन्द झकोर॥ प्रथम फूल फूल्यौ आमोदित रस मय सुखद कदम्ब। ता तर ठाढ़े जुगल परसपर किये बांहु अवलम्ब॥ प्रसरित महा मोद दसहूं दिसि मत्त भौंर रहे भूलि। हरी-चन्द सखि सरबस वार्यौ सो छबि लखि जिय फूलि ॥२॥

आजु ब्रज भई अटारिन भीर । आ
जानि सुरथ चढ़िके पथ सुन्दर श्य
सरीर ॥ अटा झरोखन छज्जन छा
गोखन द्वारन द्वार । मुखही मुख लखि
युवतिन के सोभा बढ़ी अपार ॥ फू
मनो रूप फुलवारी हरि हित सा
सनेह । के चन्दन की वंदन माला बां
ब्रज प्रति गेह ॥ करत मनोरथ विवि
भांति सब साजैं मंगल सोनि । हरीच
तिन को दरसन दै दुख मेट्यो ब्रजराज॥
हरि हम कौन भरोसे जीएं । तुम
रुख फिरे करुनानिधि कालहु दरि
सीएं । यों तो सबही खात उदर भ
अरु सब ही जल पीएं । पै धिक धि
तुम बिन सब भावो बादहि हिंसा सी लीएं
नाथ विनी सब व्यर्थ धरम अरु ऊधव
दोउ कीएं । हरीचन्द अवतो हरि वनि
कर अवलम्बन दीएं ॥४॥ जोग

नाथ विसारे तूं नहिं बिनिहै॥ तुम बिनु कोउ जग नाहिं सरम की पीर पिया जो जनिहै॥ हंसिहै सब जग हाल देखि कोउ नाहिं दीनता गनिहै॥ उलटो हमहिं सिखापैहैं दैहैं मेरोई एक न मनिहै॥ तुम्हरे होइ कहां हम जैहैं कौन मीच मैं सनिहै॥ हरीचन्द तुम बिनु दयालता और कोउ नहिं ठनिहै॥ ५॥

नवल नील मेघवरन दरसत त्रयताप हरन परसत सुखकरन भक्त सरन जमुनवारी। सोभित सुन्दर दुकूल प्रफुलित कल कमल फूल मेटत भवसूल भक्ति मूलतापहारी॥ कोमल वर बालु रचित बेदि बिबिध तटनि खचित नव लता प्रतान सचित नचित भृंगभारी। संचल चल लोल लहर कलि कलि कार बालि कहर जग जन जिस जाल जहर भेतान सुखकारी॥ जलकन लै टबिध

पौंन करत जबै कितहुं गौन परसत सुख
भौन सीत सोहत संचारी। अविगा हते
मनुज देव करत सकल सिद्ध सब जानत
निहि भेव भेद वेद मौन धारी॥ ब्रजवर
मंडल सिंगार गोप गोपिका अधार प्रान
नाथ कंठ हार जुगल वर विहारी। पुष्टि
सुपथ पुष्टि करत सेवा को फल वितरत
हरीचन्द जस उचरत जयति तरनि
वारी॥ [illegible]
आजु सुर मुनि सकल ब्रजपुराधीश
रत अभिषेक वर वेद विधि सों करत
सकल तीरथ विमल गंग जमुनादि नद
चतुर सागर मिलित नीर कलसन भरत।
रिग यजुर साम आथर्वनिक वेदध्वनि
स्तोत्र पौराण इतिहास मिलि उच्चरत।
शंख भेरी पणव सुरज ढक्का वाद घनित
घंटा नाद बीच बीच गुंजरत॥ विविध
[illegible] मलय मृगमद मिलित वारि

घनसार केसर सुगंधित परत । कुसुम कल तुलसि मिश्रित सुसंचित सविध पूर्व अधिवासितोदक घटन तें ढरत ॥ श्याम अभिराम तन पीतपट सुभग अति वारि सों अंग सटि लखत ही मन हरत । झरित कल केश कुंचितन ते नीरकण मनहु मुक्तावली नवल उज्ज्वल झरत ॥ पढ़त बंदी बिरद सूत चारन चारु चरित गावत खरे तान मानन भरत । देत आसीस द्विज हस्त श्रीफल लिए सुर जुहारत खरे लख लिए जिय डरत ॥ घोष सीमन्तिनी गान मंगल श्रवन पुट जात दुख दुरित दारिद हरत । दास हरिचन्द के हृदय मधि लीन छवि खचित वल्लभ कृपा बल न टरत ॥ ७ ॥ ॥ [illegible] ॥
मेरे प्यारे जी अरज लीजो मान ही [illegible]न। अब तुमरो दुख सहि न सिकत

हम मिलि जाओ मीत सुजान हो जान॥
एक वेर ब्रज में फिर आओ इतनी द
मोहिं दान हो दान । हरीचन्द अ
चलन चहत हैं तुम विन मेरे प्रान हो
प्रान ॥ ८ ॥

प्रात समै प्रीतम प्यारे को मंग
विमल नवल जस गाऊं । सुन्दर स
सलोनी मूरति नैनहिं निरखत
सिराऊं ॥ सेवा करौं हरौं त्रैविधि
तब अपुने गृह कारज जाऊं । हरी
मोहन विनु देखे नैनन की नहिं तप
वुझाऊं ॥ ९ ॥

प्रात समै हरि को जस गावत उ
घर घर सब घोषकुमारी । कोउ द
मथत सिंगार करत कोउ जमुना
जात कोउ नारी ॥ हरि रस मग
दिवस नहिं जानत मंगलमय ब्रज रह
अटारी । हरीचन्द लखि मदनमोह

छवि पुनि पुनि जात सबै बलिहारी ॥१०॥
हरि को मंगलमय मुख देखो। सुंदर
स्याम अंग छवि निरखत जीवन जनमे
सुफल करि लेखो ॥ देखि प्रथम पिय
प्यारे को सुख तब जग और काज अव-
रेखो ॥ हरीचन्द ब्रजचन्द लखें बिनु
जिगतहि बादि बृथा करि पेखो ॥ ११ ॥
आनंदनिधि सुखनिधि सोभानिधि
बल्लभ बदन बिलोको भोर । मंगल परम
भक्तसुखदायक । टपित करन जन नैन
चकोर ॥ सकल कला पूरन गुनसागर
नागर नेही नवल किसोर । हरीचन्द रसि-
कन के सर्वस इन पै वारों मैन करोर ॥ १२ ॥
हरि मोरी काहे सुधि बिसराई । हमे
तो सब बिधि दीन हीन तुम समरथ
गोकुलराई ॥ सों अपराधन लेखन लगे
जौ तौ कछु नहिँ बनिआई । हम अपुनी
करनी के चूके या हू जनम खुटाई ॥ सब

विधि पतित हीन सब दिन के कहं ल
कहौं सुनाई। हरीचंद तेहि भूलि बिर
निज जानि मिलौ अब धाई ॥१३॥
देखो माई हरि जू के रथ की आवनि
चलनि चक्र फहरानि धुजा की बहतु
गन की धावनि ॥ जापै जुगल दिए गल
बांही सोभित नैन मिलावनि ॥ बीरी
खानि चहूँ दिसि चितवनि हंसि मुरि कै
बतरावनि ॥ घेरे सखी चारु चारौं दिसि
नव मलार की गावनि। हरीचंद चित
तें न टरति है सो सोभा सुख पावनि ॥१४॥
धनि वे दृग जिन हरि अवलोके
रथ चढ़ि कै डोलत ब्रजवीथिन ब्र
तिय द्वार द्वार गति रोके ॥ इक कर रा
रासपति लीने झूमत चलत तुरंग नचा
वत । दूजे कर साँटी लै दृग की साँट
चित्त लगावत ॥ इत उ
१८ चलत चपल चख हंसत हंसाव

गावत डोलैं। छकत रूप लखि निरखनहारे काहू सों हंसि कै मृदु बोलैं॥ संग भीर आभीर जनन की मुरछल चंवर डुलावत धावैं। हरीचंद ते धन धन जग में जे यह सोभा निरखि सिरावैं॥ १५॥

कछु रथहांकनहू मैं भांति। यह कछु औरहि चलनि चलावनि औरे रथ की कांति॥ कहूं ठिठकि रथ रोकि घरिक लौं ठाढ़े रहत मुरारि। कहुं दौरावत अतिहि तेज गति कहुं काहूं सों रारि॥ काहु को अंग परसि रथ चालनि काहू लेनि दौराय। चाबुक चमकि तनक काहू तन मारनि देनि कुआय॥ काह के घर को फेरी दै घूमनि करि रथ मंद। बार बार निकसनि वाही मग मैं जानी हरिचन्द॥ १६॥

वह धुज की फहरानि न भूलति।

उलटि उलटि कै मो दिस चित
रथहांकनि हरि की जिय सूलति ॥
गए सब सुख साथहि मोहन अब
मदन सदा हिय हूलत। सो सुख
सुमिरि कें सजनी अजहूं जिय रस
फूलत ॥ लैं आओ कोउ मो ढिग
को विरह आगि अब तन उनसूल
हरीचंद पिय रंग बावरी ग्वालिन
डोर गहि झूलत ॥ १७ ॥

आजु दोउ बैठे मिलि वृन्दावन
निकुंज सीतल बयार सेवैं मोद भरे
मैं। उड़त अंचल चल चंचल फूल
स्वेदफूल की सुगंध छाई उपवन
रसभरे बातैं करैं हंसि हंसि अंक
बीरीखात जात सरसात सखियन
राधा प्यारी देखि रीझि गि
आनंद सों उमगे समात नहीं त
स॥ १८ ॥

गंगा पतितन को आधार । यह कलि-
काल कठिन सागर सो तुमहिं लगा-
वत पार ॥ दरस परस जलपान किए
तें तारे लोक हजार ॥ हरिचरनारविन्द
मकरन्दी सोहत सुन्दर धार । अवगा-
हत नर देव सिद्ध मुनि कर अस्तुति बहु
बार । हरीचन्द जन तारिनि देवी गावत
निगम पुकार ॥ १९ ॥

जयति क्षमा पद पद्म मकरन्द रंजित-
नीर नृप भगीरथ विमल जस पताके ।
ब्रह्म द्रवभूत आनन्द मन्दाकिनी अल-
कानन्दे सुकृति कृति विपाके ॥ शिव
जटाजूट गह्वर सघन वन मृगी विधि
कमंडलु गलित नीर रूपे । कपिल हुंकार
भस्मी भूत निरयगत स्पर्श तारित सगर
तनुज भूपे ॥ जन्हुतन [illegible] य
शिखर निकर बर भेद [illegible] स्त
गर्वे । [illegible] वि

यमुना मिलित ललित गंगे सदा दास हरिचन्द जन पच्छपाते ॥ २० ॥

सारंग।

प्यारे को कोमल तन परसि आवत आज याही तें बयार अंग सीतल करत है । सनित सुगंध मन्द मन्द आइ मेरे ढिग प्रेम सों हुलसि सखी अंकम भरत है ॥ हिय की खिलत कली मदन जगत अली पिय के मिलन को चित चाव वितरत है । हरीचन्द चलि कुंज जहां करें भौंर गुंज प्यारी सेज साजि मेरे ध्यान कों धरत है ॥ २१ ॥

स्याम अभिराम रतिकाम मोहन सदा वाम श्री राधिका संग लीने । कुंज सुख पुंज नित गुंजरत भौंर जहां गुंजबन दाम गलमांहि दीने ॥ कोटि घन विज्जु ससि सूर मनि नील अरु हीरछबि जुगल ग निरखि छीने । करत दिन केलि

मानहृत मिलित शतधा रचित के
खर्व्वे ॥ विविध मन्दिरगलित कुसुम
तुलसी निचय भ्रमर चिन्हित नवल
विमल धारे । सिद्ध सीमन्तिनी सुकुच
कुंकुम मिलित हिलित रंजित सुगंधित
अपारे ॥ लोलकल्लोल लहरी ललितव
लित वल एक सँगत द्वितिय तर तरंगे।
झरित झर झर झिल्लि सरस झंकार वर
वायु गत रव वीन मान भंगे ॥ मकर
कच्छप नक्र संकुलित जीवचय शीत
पानीय तृष्णादि नाशे । कलितकूजित
सुकारंड कलरव नाद कोक नद कुमुद
कल्हार काशे ॥ निज सहिम वल प्रवल
अर्कसुत नर्क भय दूर कृत पतित जन
कृतपवित्रे । पान मज्जन सरण स्मरण
दर्शन मात्र निखिल अघराशि नाशन
चरित्रे ॥ मुक्ति पथ सोपान विष्णु सायुज्य
प्रद परम उज्वल श्वेतनीर जाते । जयति

यमुना सिलित ललित गंगे सदा दास हरिचन्द जन पच्छपाते ॥ २० ॥

सारंग।

प्यारे को कोमल तन परसि आवत आज याही तें बयार अंग सीतल करत है। सनित सुगंध सन्द सन्द आइ मेरे ढिग प्रेम सों हुलसि सखी अंकम भरत है ॥ हिय की खिलत कली मदन जगत अली पिय के मिलन को चित चाव वितरत है। हरीचन्द चलि कुंज जहां करैं भौंर गुंज प्यारो सेज साजि मेरे ध्यान कों धरत है ॥ २१ ॥

श्याम अभिराम रतिकाम मोहन सदा वाम श्री राधिका संग लीने। कुंज सुख पुंज नित गुंजरत भौंर जहां गुंजवन दाम गलमांहि दीने ॥ कोटि घन विज्जु ससि सूर मनि नील अरु हीरछवि जुगल प्रिय निरखि छीने। करत दिन केलि

भुज मेलि कुच ठेलि लखि दास हरि चन्द जय जयति कीने ॥ २२ ॥

आजु मुख चूमत पिय को प्यारी भरि गाढ़े भुज दृढ़ करि अंग अंग उमगि उमगि सुकुमारी ॥ लहि इकन्त प्रानहु तें प्रियतम करत मनोरथ भारी। उर अभिलाख लाख करि करि के पुन वत साध महारी ॥ मानत धन धन भाग आपुने देत प्रान धन वारी। हरी चन्द लूटत सुख संपति श्री वृखभानु दुलारी ॥ २३ ॥

घन गरजत बरसत लखि दोउ औरहु लपटि लपटि रहे सोय। स्यामा स्याम इकंत कुंज में अरु तीसरो निकट नहिं कोय ॥ दामिनि दमकत ज्यौं ज्यौं त्यौं त्यौं गाढ़ी भरन भुजा की होय। हरिचंद बरसत घन उत इत रस बर सत पिय प्यारी दोय ॥ २४ ॥

धन दिन धन, मम भाग कुंज धन दोऊ जहां पधारे। राखौंगी बिनती करि दोउन कों आजु प्रिया पिय प्यारे। नैन पांवरे बिछाइ करौंगी आंचर बिजन बयारे। हरीचन्द वारौंगी सर्वस गाऊंगी गुन गन भारे॥ २५॥

आज धन भाग हमारे यह घरी धन धन मेरे घर आए गिरिराजधरन। नाचौं गाओंगी करौंगी बधाई वारि डारौंगी तन मन धन प्रान अभरन॥ राखौंगी कंठ लाइ जानन दैहौं फेर करि बिनती बहु गहि कै चरन। हरीचन्द वल्लभ वल पीओंगी अधररस छाडौंगी अब न सरन॥ २६॥

मंगल महा जुगल रस केलि। निन टन करि जग सकल अमंगल पायन दीने पेलि। सुख समूह आनन्द अखंडित भरि भरि धर्यौ सकेलि। हरी-

चन्द नन रीझि भिंजायो रस समुद्र ड
झेलि ॥ २७ ॥

नाथ मैं केहि विधि जिय समझाऊं
बातन सों यह मानत नाहीं कैसे काहे
मनाऊं ॥ जदपि याहि विश्वास परम
दृढ़ वेद पुरानहु साखी । कछु अनुभ
वहु होत कहत है जदापि सोइ बहु
भाखी ॥ तऊ कोटि ससि कोटि मदन
सम तुव मुख विनु दृग देखें । धीरज
होत न याहि तनिक हू समाधान केहि
लेखें ॥ निस दिन परम अद्भुत सम
लीला जेहि मानै अरु गावै । तेहि बिनु
अपुने चख सों देखें किमि यह धीरज
पावै ॥ दरसन करै रहैं लीला मैं जिय
भरि आनंद लूटै । दृप्त होंहिं तब मन
इंद्रिय की अनुभव भुस लै कूटै ॥ संपति
सपने की न कामकी मृगतृष्णा नहिं
नीकी । हरीचंद विनु सुधा जिआवे कैसे

छकिया फीकी ॥ २८ ॥

आजु दोउ बैठे हैं जलभौन । हौज किनारे भरे मौज सों प्यारी राधारौन ॥ सावन भादों छुटत फुहारे नीरहि नीर दिखाई । भींज रहे दोउ तहँ रस भीजे सखि लखि लेत बलाई ॥ बूंद बदन पर सोभा पावत कमल ओस लपटाने । बिथुरे बारन मैं मनु मोती पोहे अति सरसाने ॥ झीने बसन श्याम अंग झलकत सोभा नहिं कहि जाई । मनहुं नीलमनि सीसे संपुट धर्यौ अतिहि छवि छाई ॥ धार फुंहार सीस पर लेहीं लखि कै दृग सुख पावै । मनु अभिषेक करत सब सुर मिलि छवि सो परम सुहावै ॥ कै जमुना बहु रूप धारिकै जुगल मिलन हित आई । कै चपला घन देखि और घन मिलि बरसा बरसाई ॥ लोचन हीं लखिए सो सोभा कहे कह्यौ नहिं आवै ।

हरीचंद विनु वल्लभ पद बल और लख
कौ पावै ॥ २९ ॥

मन मेरो कहुं न लहत विश्राम
तृषातुर धावत इत तें उत पावत क
नहीं ठाम ॥ कबहुं क मोह फांस
बांध्यौ धन कुटुम्ब सुख जोहै। तिन
सों जब लहत अनादर तब व्याकुल ह्वै
सोहै ॥ कबहूं काहू नारि प्रेम बस ताहि
कों सरवस मानै। ताहू सों प्रति प्रेम
मिलन बिनु अकुलि और उर आनै ॥ देवी
देव तन्त्र मन्त्रन में कबहुं रहत अरुझाई।
तिनहूं सों जब काज सरत नहिं तबहि
रहत अकुलाई ॥ कबहुं जगत के रसि-
क भगत सज्जन लखि तिन सों बोले।
कालो हृदय देखि तिनहूं को उचटत
भटकत डोलै ॥ जिनकाहूं मित्र सुहृद
करि मानत राखत जिन की आसा।
तेऊ सुख भंजत तब छोड़त सबही

सों विस्वासा ॥ कबहुं ब्रह्म बनि रहत आपुही जामैं दुख नहीं व्यापै । माया प्रबल तहां अभिमानहि नासि जगत सत थापै ॥ सोचत कबहुं निकसि बन जानो पै जब आयु बिलोकै । तृष्णा क्षुधा साथ तहहूं लखि ताहू सों चित रोकै ॥ ब्रह्मा सों बढ़ि लै पिपीलिका लौं जग जीव सु जेते । कोउ देत न अचल भरोसो निज स्वारथ के तेते ॥ तृष्णा अमित सुखाए छिछले छिलर सब जग माहीं । हरीचन्द बिनु कृपा बारिनिधि प्यास बुझत कहुं नाहीं ॥३०॥

कवित्त ।

एरी प्रान प्यारी बिन देखे मुख तेरो मेरे जिय में बिरह घटा घहरि घहरि उठै । त्यौंहीं हरिचंद सुधि भूलत न क्यौंहूं तेरी लांबो केस रैन दिन छहरि छहरि उठै ॥ गड़ि गड़ि उठत

कटीले कुच कोर तेरी सारी सो लह
दार लहरि लहरि उठै । सालि सालि
जात आधे आधे नैन बान तेरे घुंघ
की फहरानि फहरि फहरि उठै ॥३१॥

बाढ़ी बिथा बिनु आप के प्यारे उपाय
चले न कछू कहा कीजिये । लागत है
बिष सो सगरो इन सों बिन काज क्यों
बारहि लीजिये ॥ चार चवाइन में पड़ि
के हरिचन्द जू क्यों इन बातन छीजिये।
पूछत मौन क्यों बैठि रही सब प्यारे
कहा इन्हें उत्तर दीजिये ॥ ३२ ॥

हमै नीति सों काज नहीं कछु है
अपुनो धन आपु जुगाए रहो । हमरी
कुलकानि गई तो कहा तुम आपनी
को तो छिपाए रहो ॥ हम सों सब
दूरि रहो हरिचन्द न संग मैं सोहि
... । हम तो बिरहा मैं सदाहीं
आपुनो अंग बचाए रहो ॥३३॥

पद ।

जयति जन्हुतनया सकल लोक की पावनी । सकल अघओघ हर नाम उच्चार मैं पतित जन उद्धरनि दुक्ख विद्रावनी ॥ कलिकाल कठिन गज गर्व्व खर्व्वित करन सिंहिनी गिरि गुहागत नाद श्रावनी । शिव जटाजूट जालाधि कृतवासिनी विधिकमंडलु विमल रमनि मनभावनी ॥ चित्रगुप्तादि के पत्र गत कर्म्म विधि उलटि निज भक्त आनन्द सरसावनी । दास हरिचन्द भागीरथी त्रिपथगा जयति गंगे कृष्णचरन गुन गावनी ॥३४॥

श्री गङ्गे पतित जानि मोहि तारौ । जो जस अवलौं मिल्यौ तुम्हें नहिं सो जग में विस्तारौ ॥ जेते तारे हीन छीन तुम अबलौं पतित अपारे । ते मेरे लेखे हैं ऐसे कहा गरीब बिचारे ॥ पाप अनेक प्रकार करन की विधि कोऊ

कछु जानै । हौं तो वदि वदि करौं अनेकन जेहि जस चिनहु मानै ॥ हम कछु जोपै तारि लेहु जगतारिणि नाम कहाई। हरीचन्द तो जस जग मानै नातरु वादि वड़ाई ॥ ३५ ॥

जै जै विष्णुपदी श्रीगंगे । पतित-उधारिन सब जगतारनि नव उज्जल अंगे ॥ शिवसिर मालति माल सरिस वर तरल तर तरंगे । हरीचन्द जन उधरनि देवी पाप भोग भंगे ॥ ३६ ॥

पतित उधारनी मैं सुनी । इक वानी खेलौ हमहूं सों देखैं कैसी गुनी ॥ कबहुं न पतित मिले जग गाढ़े ताही सों गायो सुनी । हरीचन्द कों जो तुम तारौ तौ तारिनि सुरधुनी ॥ ३६ ॥

गंगा तुमरी सांच वड़ाई । एक सगर-सुत हित जग आई तार्‌यौ नर समु-
॥ इक चातक निज तृषा बुझावन

जाचत घन अकुलाई । सो सरवर नद नदी वारिनिधि पूरत सब भरलाई ॥ नाम लेत जल पिअत एक तुम तारत कुल अकुलाई । हरीचन्द याही ते तौं सिव राखी सीस चढ़ाई ॥ ३७ ॥

आजु हरिचन्दन हरितन सोहै । तरु तमाल पै सांझ धूप सम देखत तिंह मन मोहै ॥ ता पैं फूल सिंगार सुहायो वरनि सकै सो कोहै । हरीचंद वड़ भाग राधिका अनु दिन पिय सुख जोहै ॥३८॥

आजु जल विहरत पीतम प्यारी । गल भुज दियें करनि गज से दोउ अवगाहत सुभ वारी ॥ सखी खरीं चहुं ओर चारु सब लै ओषस उपचारी । चन्दन सोंधो फूलमाल वहु भीने वसन संवारी ॥ कोउ गावत कोउ तार वजावत कोउ करत मनुहारी । कोउ कर सों जलजंत्र चलावत हरीचन्द वलिहारी

मिटत न हौस हाय या मन की। होत एक तें लाख लाख नित तृष्णा बुझत न तन की ॥ दैव कृपा सों जौ तमोगुनीवृत्ति दूर ह्वै जाई। तौ रजोगुनी इच्छा बाढ़त लाखन जिय में आई॥ ताहू के मिटे सतोगुन संचय अपुनो लोभ न छोड़ै। जस कीरति चिरनाम मान पै चंचल चित कहँ मोड़ै ॥ भए विरागिहु भक्त सिद्ध कहवावन की रुचि बाढ़ै। रचि रचि छन्द नाम करिबे की इच्छा तब जिय काढ़ै ॥ तासों याहि जीतिबो दुरघट जानि जतन यह लीजै। हरीचन्द घनस्याम मिलन की हौस करोरन कीजै ॥ ४० ॥

वे दिन सपन रहे के सांचे। जो हरि संग विहरत याही ब्रज वीति गए रंग राचे॥ कहां गई वह सरद रैन सब जिन में हरिसंग नाचे। कहं वह यौवन

संन मिलन सुख मिले जौन बिनु जांचे॥
ाय दई कैसी कीनी दुख सहत करेजे
ांचे । हरीचन्द हरि बिनु सूनो बृज
ाखनहि हित हम वांचे ॥ ४१ ॥

हरि हो अब मुख बेगि दिखाओ ।
ही न जात कृपानिधि माधो एहि
ुनतहि उठि धाओ ॥ लखि निज जन
ूबत दुख सागर क्यौं न दया उरलाओ।
ारत वचन सुनत चुप ह्वै रहे निठुर
ानि बिसराओ ॥ करुनामय कृपाल
ेसव तुम क्यौं निज प्रनहि डिगाओ॥
रखि बिलखत हरिचन्द दुखी जन क्यौं
नहिं धीर धराओ ॥ ४२ ॥

यह मन पारद हू सों चंचल। एक
लक मैं ज्ञान बिचारत दूजे मैं तिय
ंचल ॥ ठहरत कतहुं न डोलत इत
त रहत सदा बौरानो । ज्ञान ध्यान
ी आन न मानत याको लंपट बानो॥

मिटत न हौस हाय या मन की. होत एक तें लाख लाख नित तृष्णा, बुझत न तन की ॥ दैव कृपा सों जो तमोगुनीवृत्ति दूर ह्वै जाई । तो रजोगुनी इच्छा बाढ़त लाखन जिय में आई ॥ ताहू के मिटे सतोगुन संचय अपुनो लोभ न छोड़ै । जस कीरति चिरनाम मान पै चंचल चित कहँ मोड़ै ॥ भए बिरागिहु भक्त सिद्ध कहवावन की रुचि बाढ़ै । रचि रचि छन्द नाम करिबे की इच्छा तब जिय काढ़ै ॥ तासों याहि जीतिबो दुरघट जानि जतन यह लीजै। हरीचन्द घनस्याम मिलन की हौस करोरन कीजै ॥ ४० ॥

वे दिन सपन रहे के सांचे । जे हरि संग बिहरत याही ब्रज बीति गए रंग राचे ॥ कहां गईं वह सरद रैन सब जिन मैं हरिसंग नाचे । कहं वह बोलन

हंसन मिलन सुख मिले जौन बिनु जांचे॥ हाय दई कैसी कीनी दुख सहत करेजे आंचे । हरीचन्द हरि बिनु सूनो बृज लखनहि हित हम वांचे ॥ ४१ ॥

हरि हो अब मुख वेगि दिखाओ । सही न जात कृपानिधि माधो एहि सुनतहि उठि धाओ ॥ लखि निज जन डूबत दुख सागर क्यों न दया उरलाओ। आरत वचन सुनत चुप ह्वै रहे निठुर वानि बिसराओ ॥ करुनामय कृपाल केसव तुम क्यों निज प्रनहि डिगाओ॥ लखि बिलखत हरिचन्द दुखो जन क्यों नहिं धीर धराओ॥ ४२ ॥

यह मन पारद हू सों चंचल। एक पलक में ज्ञान विचारत दूजे में तिय चंचल ॥ ठहरत कतहुं न डोलत इत उत रहत सदा बौरानो । ज्ञान ध्यान को आन न मानत

तासों या कहं कथा विरह तप जो को
ताप तपावै। हरीचन्द सो जीति या
हरिभजन रसायन पावै ॥ ४३ ॥

आजु अभिषेकत पिय कों प्यारी
धरि हग ध्यान नवल आंसुन के भ
भरि उमगे वारी ॥ कज्जल मिलित च
मृग मद से विरह परव लखि भारी
बरखत गलित कुसुम बेनी तें सोई फ
म्हर डारी ॥ व्याकुल कल नहिं लह
तनिक सुख हाय मंत्र उच्चारी। हरीच
लखि दुखित सखी जन करि न सक
उपचारी ॥ ४४ ॥

जनमतहि क्यों हम नाहिं मरी
सखि विधना विध ना कछु ना
उलटी सबहि करी ॥ हरि आकृत
चार चवाइन करि निन्दा निदरीं । ि
भय मुखहु लखन नहिं पायो हँ स
रहत भरीं ॥ अय हरि सो व्रज

अनत रहे विलपत विरह जरी । यह दुख देखन ही जनमाइँ वारेंहि विपत परी ॥ सुख केहि कहत न जान्यौ सपनेहु दुख ही रहत दरी । हरीचंद मोहि सिरजि विधिहि नहिं जानौं कहा सरी ॥ ४५ ॥

मेरो हठ राखो हठीले लाल । तुम विनु मान कौन मेरो रखिहै समुझहु जिय गोपाल ॥ हम कों तो तुमरो बल प्यारे तुव अभिमान दयाल । पै तुम हीं ऐसी जो करिहौ कहं जैहैं ब्रजवाल ॥ एक वेर वृज कों फिरि आओ लखि गौअन वेहाल । हरीचन्द वरु फेर जाइयो मधुपुर कृपा कृपाल ॥ ४६ ॥

राखिए अपुनेन कों अभिमान । तुव बल जो जग गिनत न काहू दीजै तेहि सनमान ॥ तुम्हरे होय सहैं इतनो दुख यह तो अनय महान । तुमहि कलंक

हम लज्जा अति कहि है कहा जहान
एक वेर फिरहू ब्रज आओ देहु जीव
दान । हरीचन्द गिरि कर धारन
करिके सुरति सुजान ॥ ४७ ॥

ऊधो अब वे दिन नहिं ऐहैं । नि
में श्याम संग निसिवासर छिन स
विलसि वितैहैं ॥ वह हंसि दान मांग
उन को अब हम लखन न पैहैं
जमुना न्हात कदम चढ़ि छिपि अब ह
नहिं चीर चुरैहैं ॥ वह निसि सर
दिवस बरखा के फिर विधि नाहिं फिरैहै
वह रस रास हमन बोलन हि
हम छिन छिन तरसैहैं ॥ वह गलबाहै
दै पिय बतियां अब नहिं सरस सुनैहैं
हरीचन्द तरसत हम मरि हैं तऊ न
वे सुधि लैहैं ॥ ४८ ॥

हरि बिनु ब्रज बसियत केहि भांए ।
जीवत अब लौं बिनु पिय प्यारे इन

अँखियन दरसाए ॥ केहि सुख लागि जियत हम अब लौं यह नहिं परत लखाई। बिनु बृजनाथ देखि बृज सूनो प्रान रहत किमि माई ॥ वह बन बिह-रन कुंज कुंज में सपनें हू नहिं देखैं। ऊधो जोग सुनन तुव मुख सों प्रान रहे एहि लेखें ॥ बिनु प्रिय प्राननाथ मनमो-हन आरतहरन कन्हाई। हरीचन्द निरलज जग जीवत हम भाथी की नाई ॥ ४९ ॥

सवैया।

देत असीस सदा चित सों यह साहिबी रावरी रोज बनी रहै। रूप अनूप महाधन है हरिचंद जू वाकी न नेकु कमी रहै ॥ देखहु नेकु दया उर कै खरी द्वार अरी यह जाचक भीर है। दीजियै भीख उघारि कै घूंघट प्यारी तिहारी गली को फकीर है ॥ ५०॥

अब तो जग में खलि कै चहंधा पन

प्रेम को पूरो पसारि चुकी । कुलरीति औ लोक की लाज सबै हरिचंद जू नीके बिगारि चुकी ॥ वहि साँवरी मूरति देख तही अपने सरबस्वहि हारि चुकी । जग में कछू कोऊ कहौ किन हौं तौ मरारि पै प्रान कों वारि चुकी ॥५१॥

इति ।

श्री

काशिराजवर्षमालिका ।

एक सौ तेईस बरस की जन्त्री ।

भारत भूषण भारतेन्दु श्री हरिश्चन्द्र लिखित.

जिस को हिन्दीभाषा के प्रेमी तथा रसिकजनों के मनोविलास

के लिये क्षत्रियपत्रिका सम्पादक

म० कु० बाबू रामदीन सिंह ने

प्रकाशित किया ।

पटना—"खड्गविलास" प्रेस—बांकीपुर

साहबप्रसाद सिंह ने मुद्रित किया ।

१८८८

हरिश्चन्द्राब्द ५

श्री

काशिराज वर्ष मालिका।

(जिने बरस यामे लिखे, तबलौं काशीराज। जियो पुत्र अरु पौत्र सह, भोगो सब सुखसाज॥)

इस यन्त्री में जो सब वर्ष हैं वह स्वर्ण शताब्दी के बरस हैं इनमें
संसार की अत्यन्त उन्नति होगी।

एक सौ तेईस बरस की यंत्री

अर्थात्

अङ्गरेजी महीने जानने की तारीखों के वार का ब्योरा,
सन् १८७८ से सन् २००० ईसवी तक।

विषम सम वर्ष अर्थात् जिन में चार का पूरा भाग नहीं लगता।

						जनवरी ३१	फ़िवरी २८	मार्च ३१	अप्रैल ३०	मै ३१	जून ३०	जुलाई ३१	अगस्ट ३१	सिप्टेम्बर ३०	अक्टोबर ३१	नवेंबर ३०	डिसेंबर ३१						
१८४२	१८५३	१८५९	१८७०	१८८१	८८७ १८९८	४	७	७	३	५	१	३	६	२	४	७	२	१८८५	१८९१	१९०३	१९१४	१९२५	१९३१
१८४३	१८५४	१८६५	१८७१	१८८२	१८९३ १८९९	५	१	१	४	६	२	४	७	३	५	१	३	१८८६	१८९७	१९०९	१९१५	१९२६	१९३७
१८३८	१८४९	१८५५	१८६६	१८७७	१८८३ १८९४	६	२	२	५	७	३	५	१	४	६	२	४	१८८१	१८८७	१८९८	१९१०	१९२१	१९२७
१८३५	१८४६	१८५७	१८६३	१८७४	१८८५ १८९१	२	५	५	१	३	६	१	४	७	२	५	७	१८७८	१८८९	१८९५	१९०१	१९०७	१९१८ १९२९
१८४१	१८४७	१८५८	१८६९	१८७५	१८८६ १८९७	३	६	६	२	४	७	२	५	१	३	६	१	१८७९	१८९०	१९०२	१९१३	१९१९	१९३०
१८३९	१८५०	१८६१	१८६७	१८७८	१८८९ १८९५	७	३	३	६	१	४	६	२	५	७	३	५	१८८२	१८९३	१८९९	१९०५	१९११	१९२२ १९३३
१८३४	१८४५	१८५१	१८६२	१८७३	१८७९ १८९०	१	४	४	७	२	५	७	३	६	१	४	६	१८८३	१८९४	१९००	१९०६	१९१७	१९२३

विषम सम वर्ष अर्थात् जिन में चार का पूरा भाग नहीं लगता ।

						जनवरी ३१	फ़िब्रुवरी २८	मार्च ३१	अप्रैल ३०	मै ३१	जून ३०	जुलाई ३१	अगस्ट ३१	सिप्टेम्बर ३०	अक्टोबर ३१	नवेम्बर ३०	डिसेम्बर ३१						
१८४२	१८५३	१८५९	१८७०	१८८१	१८८७ १८९८	४	७	७	३	५	१	३	६	२	४	७	२	१८८५	१८९१	१९०३	१९१४	१९२५	१९३१
१८४३	१८५४	१८६५	१८७१	१८८२	१८९३ १८९९	५	१	१	४	६	२	४	७	३	५	१	३	१८८६	१८९७	१९०९	१९१५	१९२६	१९३७
१८३८	१८४९	१८५५	१८६६	१८७७	१८८३ १८९४	६	२	२	५	७	३	५	१	४	६	२	४	१८८१	१८८७	१८९८	१९१०	१९२१	१९२७
१८३५	१८४६	१८५७	१८६३	१८७४	१८८५ १८९१	२	५	५	१	३	६	१	४	७	२	५	७	१८७८	१८८९	१८९५	१९०१	१९०७	१९१८ १९२९
	१८४७	१८५८	१८६९	१८७५	१८८६ १८९७	३	६	६	२	४	७	२	५	१	३	६	१	१८७९	१८९०	१९०२	१९१३	१९१९	१९३०
	५०	१८६१	१८६७	१८७८	१८८९ १८९५	७	३	३	६	१	४	६	२	५	७	३	५	१८८२	१८९३	१८९९	१९०५	१९११	१९२२ १९३३
		५१	१८६२	१८७३	१८७९ १८९०	१	४	४	७	२	५	७	३	६	१	४	६	१८८३	१८९४	१९००	१९०६	१९१७	१९२३

तारीख और वार के कोष्टक।

१	२	३	४	५	६	७
सो॰ १	मं॰ १	बु॰ १	बृ॰ १	शु॰ १	श॰ १	आ॰ १
मं॰ २	बु॰ २	बृ॰ २	शु॰ २	श॰ २	आ॰ २	सो॰ २
बु॰ ३	बृ॰ ३	शु॰ ३	श॰ ३	आ॰ ३	सो॰ ३	मं॰ ३
बृ॰ ४	शु॰ ४	श॰ ४	आ॰ ४	सो॰ ४	मं॰ ४	बु॰ ४
शु॰ ५	श॰ ५	आ॰ ५	सो॰ ५	मं॰ ५	बु॰ ५	बृ॰ ५
श॰ ६	आ॰ ६	सो॰ ६	मं॰ ६	बु॰ ६	बृ॰ ६	शु॰ ६
आ॰ ७	सो॰ ७	मं॰ ७	बु॰ ७	बृ॰ ७	शु॰ ७	श॰ ७
सो॰ ८	मं॰ ८	बु॰ ८	बृ॰ ८	शु॰ ८	श॰ ८	आ॰ ८
मं॰ ९	बु॰ ९	बृ॰ ९	शु॰ ९	श॰ ९	आ॰ ९	सो॰ ९
बु॰ १०	बृ॰ १०	शु॰ १०	श॰ १०	आ॰ १०	सो॰ १०	मं॰ १०
बृ॰ ११	शु॰ ११	श॰ ११	आ॰ ११	सो॰ ११	मं॰ ११	बु॰ ११
शु॰ १२	श॰ १२	आ॰ १२	सो॰ १२	मं॰ १२	बु॰ १२	बृ॰ १२
श॰ १३	आ॰ १३	सो॰ १३	मं॰ १३	बु॰ १३	बृ॰ १३	शु॰ १३
आ॰ १४	सो॰ १४	मं॰ १४	बु॰ १४	बृ॰ १४	शु॰ १४	श॰ १४
सो॰ १५	मं॰ १५	बु॰ १५	बृ॰ १५	शु॰ १५	श॰ १५	आ॰ १५
मं॰ १६	बु॰ १६	बृ॰ १६	शु॰ १६	श॰ १६	आ॰ १६	सो॰ १६
बु॰ १७	बृ॰ १७	शु॰ १७	श॰ १७	आ॰ १७	सो॰ १७	मं॰ १७
बृ॰ १८	शु॰ १८	श॰ १८	आ॰ १८	सो॰ १८	मं॰ १८	बु॰ १८
शु॰ १९	श॰ १९	आ॰ १९	सो॰ १९	मं॰ १९	बु॰ १९	बृ॰ १९
श॰ २०	आ॰ २०	सो॰ २०	मं॰ २०	बु॰ २०	बृ॰ २०	शु॰ २०
आ॰ २१	सो॰ २१	मं॰ २१	बु॰ २१	बृ॰ २१	शु॰ २१	श॰ २१
सो॰ २२	मं॰ २२	बु॰ २२	बृ॰ २२	शु॰ २२	श॰ २२	आ॰ २२
मं॰ २३	बु॰ २३	बृ॰ २३	शु॰ २३	श॰ २३	आ॰ २३	सो॰ २३
बु॰ २४	बृ॰ २४	शु॰ २४	श॰ २४	आ॰ २४	सो॰ २४	मं॰ २४
बृ॰ २५	शु॰ २५	श॰ २५	आ॰ २५	सो॰ २५	मं॰ २५	बु॰ २५
शु॰ २६	श॰ २६	आ॰ २६	सो॰ २६	मं॰ २६	बु॰ २६	बृ॰ २६
श॰ २७	आ॰ २७	सो॰ २७	मं॰ २७	बु॰ २७	बृ॰ २७	शु॰ २७
आ॰ २८	सो॰ २८	मं॰ २८	बु॰ २८	बृ॰ २८	शु॰ २८	श॰ २८
सो॰ २९	मं॰ २९	बु॰ २९	बृ॰ २९	शु॰ २९	श॰ २९	आ॰ २९
मं॰ ३०	बु॰ ३०	बृ॰ ३०	शु॰ ३०	श॰ ३०	आ॰ ३०	सो॰ ३०
बु॰ ३१	बृ॰ ३१	शु॰ ३१	श॰ ३१	आ॰ ३१	सो॰ ३१	मं॰ ३१

दिन निकालने की रीति ।

जिस बरस के जिस महीने की कोई तारीख़ का वार निकालना हो बरस को देखो कि वह किस घर में है। जहां वह हो वहां से सीधी लकीर तुम जिस महीने की तारीख़ चाहते हो उस महीने के नीचे एक से सात तक अंकों में जो अंक को सब के नीचे वाले सात घरों में उसी अंक के घर में महीने की तारीख़ का वार देख लो। जैसा कि तुमको १९०० सन फरवरी २० तारीख़ को कौन वार होगा यह जानना है। अब देखो कि १९०० कहां है-? वह विषम सम वर्ष के बाईं भुज के नीचे दूसरे काल्म में सातवां है उसी की सूध में उंगली ले चलो। तुम देखोगे कि फरवरी का नं० २४ है अब नीचे के तारीख़ और दिन के सात खानों में नं० २४ के घर में २० तारी मंगल को है। तब यही वार उस दिन पड़ैगा।

यह माला सत बरस की, बिरची श्री हरिचन्द।
सज्जन जन याकों लहैं, कारज साधि अनन्द ॥ १ ॥
मन बच सों हरिनाम की, माला फेरी नांहि।
तो क्यों माला बरस लों, जिए वृथा जग मांहि ॥ २ ॥
बनमाला-वाला नवल, नन्दलाला सों नेह।
नहि जियतो माला बरस, लगि क्यों राखो देह ॥ ३ ॥
'जप माला छापा तिलक, सरै न एकौ काम।
मन कांचे नांचे वृथा, सांचे रांचे राम' ॥ ४ ॥

Hugh Godfray's Treatise on Astronomy,
London, 1874,
Page 291.

Calendar—

373, Sosigenes an Alexandrian astronomer employed by Julious Cæsar to correct the confusion into which the calender was perpetually falling, proposed the ingenious contrivance of bissextile or leap year. Three common years of 365 days were to be followed by a year of 366 days, thus giving to the average civil year a value of 365·25 days, which is a little more than the tropical year, the difference ·007781 days amounting to 1 day in about 128 years, or rather more than 3 days in 400 years. This important change came into operation in the 44th year. B. C.

The next correction was made in 1582 A. D. by Pope Gregory XIII., with a view to take into account this difference of 3 days in 400 years and, by this means to avoid a change which was gradually bringing the festival of Easter more and more into the summer season, whereas the ecclesiastical regulations required that it should be celebrated just after the spring equinox. The Gregorian calendar, which is now adopted by all the Christians, except the Russians and the Greeks, is established on the following rules:—

Three common years of 365 days are to be followed by a year of 366 days, as in the Julian calendar (the leap years being those whose number is divisible by 4 without remainder) except when the fourth year terminates a century as 1700, 1800 &c., and then it becomes a common year; except, again, when the hundreds are divisible by 4, as 2000, 2400, &c., when it remains a leap year, as the Julian calendar would make it 400 civil year, therefore, as determined by the Gregorian rule, there will be 97 leap years instead of 100 and the average length of the civil year will be $365\frac{97}{400}$ days or 365·2425 days. The tropical year contains 365 ·242216 days so the Gregorian rule makes the average civil year too long by 0·00034 days producing an error of 1 day in about 4000 years.

In the year 1582 when Pope Gregory made this reformation, he also omitted 10 nominal days of the month of October, the day after the 4th being called the 15th. This was done for the purpose of bringing back the vernal equinox to the 21st of the March which was the date of its occurrence in 325 A. D. When the council of Nice was held and a rule was framed for the observance of the festival of Easter

The new style, as it was called, was not adopted in England until the year 1752 when 11 days had to be omitted, and the month of September in that year contained only 19 days, which were numbered 1, 2, 14, 15 &c. In Russia the old style is still maintained and the year 1800 has added another day to the difference of styles, so that the dates in Russia are now 12 days behind our. Trace of the old style still lingers in our old Christmas-day, Old Lady-day.

किस वर्ष में किस दिन कौन तारीख थी उस को जानने की रीति।

कुण्डलिया—जे सन को जानन चहत प्रथम मास तिथि वार। अट्ठा भाग देइ कीजे शेष निकार॥ कीजे शेष निकार मांहि श्रुति भागहि है जितो बार सताय अंक और शेषहि मेलो॥ बहुरि गदाधर सते कौन दिये अपेसन। सो यदि क्रम गनि लेहु सोमवारादि सजेसन॥ १॥

दोहा—जो कदापि श्रुति भागते, शेष पूर्ण पुर होइ।
सो एकांक करिके निष्ण, जोरिय शेषहि सोइ॥
यहि विधि गनित विचारिके, भूत भविष वर्तमान।
आदि जनवरी मास के, प्रथम वार तिथि जान॥

अथ फेब्रुरी आदि ११ महीनों के तिथि वार जानने की रीति।

दोहा—प्रथम मास के प्रथम तिथि, नियत होइ जेहि वार।
तिसे करि ताही दिवस, अक्तूबरहु विचार॥
मई दूसरे दिवस को, तीजे जानहु अगस्त।
फेब्रुवरि मार्च नवंबर, चौथे होहि समस्त॥
जून पांचवें होत है, करिके गणित प्रमान।
सीतम्बर दिसम्बरहू, निश्चै छठएं जान॥
जो कदापि सन अंक में, भाग चार के छिन्न।
एक एक दिन प्रति मास बढ़, फेब्रुवरी वैतरिक्त॥

अर्थात् जिस सन् के पहिला महीना अर्थात् जनवरी की पहिली तारीख का दिन जानना हो उस सन् में २८ अट्ठाइस का भाग देव जो शेष बचे उस में देखो कि चार के भाग कितने बार लग सकते हैं उतनेही अंक को उस शेष में और भी जोड़ देव तब फिर सात का भाग देव जो एक बचे तो सोमार २ बचे तो मंगर इसी तरह क्रम से जान लेव सजेसन् नाम वर्ष। परन्तु शेष में यदि चार के भाग देने से पूरंपूर होइ तो चार के भाग में से एक अंक न्यून करके शेष में जोड़ना चाहिये यहि प्रकार ते गणित करिके भूत भविष्य वर्तमान सन् की जनवरी आदि बारहों महीनों के पहिली तारीख का वार जाना जा सकता है।

(क० व० जि० २ नंबर २३)

सुजान-शतक।

कविवर घनआनन्द कृत प्रेमपरिपूर्ण कविता।

भारतभूषण भारतेन्दु श्री हरिश्चन्द्र लिखित.

जिस को हिन्दी भाषा के प्रेमी तथा रसिकजनों के मनोविलास

के लिये क्षत्रियपत्रिका सम्पादक

म० कु० बाबू रामदीन सिंह ने

प्रकाशित किया।

पटना—" खड्गविलास " प्रेस—बांकीपुर

साहबप्रसाद सिंह ने मुद्रित किया।

१८८९

हरिश्चन्द्राब्द ५

प्रथम बार]   [दाम ।) आना

सुजान-शतक।

सवैया।

मेरोई जीव जो मारत मोहि तो प्यारे कहा तुम सौं कहनो हैं।
आंखिन हूं यहि बानि तजी कछु ऐसोइ भोगनि को लहनो हैं॥
आस तिहारियै ह्वौ घनआनन्द कैसे उदास भयें रहनो हैं।
जानि कै होत इते पै अजान जो तौ बिन पावक ही दहनो हैं॥ १॥
क्यौं हँसि हेरि हर्यो हियरा अरु क्यौं हितकै चित चाह बढ़ाई।
काहे कौं बोलि सुधा सने बैनन नैनन मैन सलाक चढ़ाई॥
सो सुधि मो हिय तें घनआनन्द सालति क्यौं हूं कढ़ै न कढ़ाई।
मीत सुजान अनीति की पाटी इतै पै न जानियै कौन पढ़ाई॥ २॥
चाह बढ़ी चितचाक चढ्यौ सो फिरै तिनही दस नै कुन धीजै।
नैन थके छबि पान छके घनआनन्द लाज तौ रीझन भीजै॥
मोहु सौं बावरी है बुध बावरी सीष सुनै न दसा दुख दीजै।
देह दहै न रहै सुधि गेह की भूलिहु नेह को नांवन लीजै॥ ३॥
रावरे रूपको रीति अनूपम पीनयो लागत ज्यौं ज्यौं निहारियै।
त्यौं इन आंखिन बानि अनौखिअघानिकहूंनहिआनितिहारियै॥
एकहि जीवहु तौ सुतौ वारिहि सुजान सकोच औ सोच सहारियै।
रोकि रहै न दहै घनआनन्द बावरि रीझ के हाथ न हारियै॥ ४॥

कवित्त।

आसही अकास मधि अवधि गुनै बढ़ाय चौपनि चढ़ाय दीनो कीनो खेल सोप है। निवट कठोर एहो ऐंचत न आपु ओर लाड़िले सुजान सौं दुहेली दसा को कहै॥ अवरज मई मोहि भई घनआनन्द यौं हाथ साथ लाग्यो पै समीप न कहूं लहै। विरह समीर की झकोरनि अधीर नेह नीर भीज्यो जीव तऊ गुड़ी लौं उड्यो रहै॥ ५॥

बहुत दिनानी के अवधि आस पास परे खरे अरबरनि भरे हैं उठि जान कौ। कहि कहि आयन छबीले मन भावन कौ गहि गहि राखति ही दैदै

सनमान की ॥ झूठी बतियानि की पत्यानी तें उदास ह्वै कै अब न घिरात घनआनंद निदान की । अधर लगे हैं आनि करिकैं पयान प्रान चाहत चलन ये संदेसो लै सुजान को ॥ ६ ॥

स०—जोरि कै कोटिक प्रानानि भाय तें संग लिये अंखियान में आवत ।
भीजे कटाछनि सौं घनआनन्द छाय सदा रस कौं बरसावत ॥
छाड़ भरें फिरि या जिय की गति जानत जीवन है जु जनावत ।
मीत सुजान अनूठियै रीति जिवाय कै मारत मारि जिआवत ॥ ७ ॥
लाखनि भांति भरे अभिलाखनि कै पल पांवड़े पंथ निहारैं ।
लाड़िली आवन लालसा लागि न लागति हैं मन मैं पन धारैं ॥
यौं रस भीजै रहैं घनआनन्द रीझैं सुजान सरूप तिहारैं ।
चाइन रावरे नैन बचे अंसुवान सों रावरे पाय पखारैं ॥ ८ ॥
घनआनन्द जीवन मूल सुजान की कौं धनि हूं न कहूं दरसै ।
सुनि जानि यैं धौं कित जाइ रहे इत चातक प्रान तपै तरसै ॥
बिन पावस तौ इन पावस हौ न सु क्यौं करियै अब सो परसै ।
बदरा बरसै रितु मैं घिर कै नितही अंखिया उघरी बरसैं ॥ ९ ॥

क०—अवधि सिरायैं तापताते ह्वै कलमलाय आपुचाय बावरे उमहि उफनात हैं । दे रस सुखारे चैन बचित बिचारे हारे आंखिनि के मारे आ इतही मड़रात हैं ॥ इते पै अमोही घनआनन्द रुखाई डर सोचनि समाय कै यहीं ठहरात हैं । जानि अनखौहीं बानि लाड़िले सुजान की सुकरि हू परान प्रान फिरि फिरि जात हैं ॥ १० ॥

स०—कहियै किहि भांति दसा सजनी अति ताती कथा रसना हि दहै ।
अरु जौं हिय ही मधि घूंटि रहौं तौ दुखी जिय क्यौं करि ताहि सहै ॥
घनआनन्द जानन बान करै इत के हित की कुत कोज कहै ।
उत उत्तर पाय लगी मिहदी सुकहा लगि धीरज हाथ रहै ॥ ११ ॥
नैन किए अति आरत ऐन सुरैनि दिना चित चोप बिसेखैं ।
नीके सुधानिधि रूप छक्यौ रचो पागि उगै सब त्यागि परेखैं ॥
जैसे सुजान लये घनआनंद नेही न आनि हिये अवरेखैं ।
ऐसे उज्यागर है जग मै पर चंदहि एक चकोर ही देखैं ॥ १२ ॥
रूप छकी तुम्हैं देखि सुजान थक्यो तजि लाज समाजन को दव ।
मोहि लियो हंसि जोहि कवीने कहीं प्रति प्यार पगी बतियां जब ॥

सोच बिचारि के माज टरे घनआनन्द रीझति भीजि रच्यौ तब ।
आम भयो गहि हार पर्यो जिय जा घर आय कै जाय कहां अब ॥ १३ ॥
जान सजीवनि प्रान लखे बिन आतुर आंखिनि आवति आंधे ।
लोग चवाई सबै निरदै अति बान से बैन अयान सैं साधे ॥
को समुझै मन की घनआनंद घोरई बेदति घोरह नांधे ।
पोर बढी जिय धीर धरै नहिं कैसे रहैं जल जाल कै बांधे ॥ १४ ॥
जान की रूप लुभाय कै नैननि बेचि करी अध बीचहि लौंडी ।
फैलि गई घर बाहिर बात गुनीकै नई इन काज कनौड़ी ॥
अरौंकरि थाह लही घनआनंद चाह नदी तट ही अति औंड़ी ।
हाइ दई न बिसासी सुनै कछु है जग बाजत नेही की डौंड़ी ॥ १५ ॥
सेही रहेही सदा मन और को दैबो न जानत जान दुलारे ।
देख्यौ न है सपनैहूं कहूं दुख त्यागै सकोच असोच सुखारे ॥
कैसो संजोग बियोग धौं आहि फिरौं घनआनंद ह्वै मतवारे ।
मो गति बूझि परै तबहीं जब होहु घरी कहुं आपु ते न्यारे ॥ १६ ॥

क०—राव ह्वै सहाय हाय कैसे धौं सुहाई ऐसी सब सुखसंगनै बिछोहदुख दै चले । सींचि रस रंग अंग अंगनि अनंग सोंपि अंतर मै बिषम बिषाद बेलि बै चले ॥ क्यौंधौं ये निगोड़े प्रानजान घनआनंद कै गौहन न लागे जब बेकरि बिजैचले । अति हौं अधीर भई पीर भीर घेरि लई हैली मन भावन अकेली मोहि कै चले ॥ १७ ॥

—आनन पुहन अहुं ओर चाहे लानि ही कौं सुरे पन पूरे जिन्हैं बिष सम पगी है । प्रफुल्लित होत भान कि उदोत कांत पुंज ता बिन बिचारि सदा जोति जाल ममो है ॥ चाही मनचाही जान प्यारे पै आनंदघन प्रीति रीति बिषम सुरोम रोम रमी है । मोहि तुम एक तुम्हैं मोसे तो अनेक आहि कहा कछु चंदहि चकोरन की कमी है ॥ १८ ॥

स०—जीवनि हैं जिय की गति जानत जान कहां कहि बात जैतैये ।
जो कछु है सुख संपति सौंज सुमे मिलहूं हंसि दैनि मैं पैयै ॥
आनंद के घन लागे अचंभो पपीहा पुकारन क्यौं तरसैये ।
प्रीति पगी अंखियान दिखाय कै हाय अनीति सु डीठि छिपैये ॥ १९ ॥

क०—चाहनहीं रीझि लाग्यसानि भीजि सुखमोहि अंग अंग रंग रंग भाव भरि भूं गई । देखि थोर आगें पैहो अगो जू कहूं न माने अन पग रागै पागे

तन को नहीं कहूं। साधि के समाधि सो अराधित हैं काहि दैया अरहि पकरि अति निठुर करे गहूं। प्रानपति आरत जो जाने तो सुजान प्यारो नाचे न धरे पें नाव ऐसी श्री कहां कहूं। राका निसि आनी चाली भई घन आनंद कौं टरि चल्यौ चंदा पै न टरो चंदमुखी तूं ॥ २७ ॥

गरल गुमान को गरावन दसा को मान करि करि धोस रैनि प्रान घट घोटिवौ। हेत खेत धूरि चूरि सीस पाव राखि विष विषम उदेग बान भागे उर ओटिबो ॥ जान प्यारे जौं पै मन माने तौ अनंदघन भूमि हू न सुमिरि परेखे चक चोटिबौ। तिनहे यों सिराति छाती तोहि क्यों लगति जाती तेरे बांट आयौ है अंगारनि पै लोटिबौ ॥ २८ ॥

स०—चलिआई सदा रसरीति यहै किधों सो निरमोहीको मोह नयों।
घनआनंद प्रान हरे हंसि जानन जान परे डर यों उनयौं ॥
चितचाह निबाह की बात रही हित के नितही दुख दाह दयो।
उर ग्राम बिसाम सवाम तजे बसि एकहि वाम बिदेस भयो ॥ २८ ॥
अति रूप की रासि रसीली वे मूरति जोहौं सबै तब रीभि छकौं।
घनआनंद जानि चरित्र के रंगनि चित्र विचित्र दसा सो थकौं ॥
अनदेखें दई जु कछू गति देखिये जीवहि जाने न यों रिसकौं।
यह नेह सदेह अदेह करै पचि हारि बिचारि बिचारि जकौं ॥ ३० ॥
स्यामघटा लपटी थिर बीज की सौहै अमावस अंक उज्यारी।
धूम के पुंज में ज्वाल की माल सो पै दृग सीतलता सुख कारी ॥
कै छबि छायो सिंगार निहारि सुजान तिया तन दीपत प्यारी।
कैसो फबी घनआनंद चोपनि सों पहिरी चुनि सांवरी सारी ॥ ३१ ॥

क०—कौन को सरन जैये आप त्यौंन काहू पेये सूनों सो चितैये जगदैया किन कूकिये। सोचनि समैये गति हेरत हिरैये उर आंसुन भिजैये तापनिये तन सूकिये ॥ क्यौं करि बितैये कैसें कहाधों रितैये मन बिना जान प्यारे अब जीवन तै चूकिये। दनी है कठिन सहर मोहि घनआनंद यों मीचौं मरि गई आसरो न जिन दूकिये ॥ ३२ ॥

स०—कहिये सुकहा रहिये गहि मौन अरी सजनी इन जैसी करी।
परतीति दै कौनी अनीति मया बिस दोनों दिखाय मिठास धरी ॥
इत काहू भो मन रह्यौ न कछू उत रीभत सों हैं मन बात टरी।
घनआनंद आन सयान की हानि सुभाइ बसाइके पैड़े परी ॥ ३३ ॥

अब यों उर आवत है सजनी उन सों गहने हूं न बोलियैरी ।
अब जो मिलजै हो मिलै तो मिलै मन तें गन गुंजन खोलियैरी ॥
इन दैनन की कछु सोंहगहो उन सोहन भूमिन डोलियैरी ।
घनआनंद जान सदा कपटी बिनु काहे परेखनि खोलियैरी ॥ ३४ ॥
किहि नेह बिरोध घड़ी सब सों उर आयल कौन के लाज गई ।
कितने भर भार पहार दये जब मांभ भई तिन तें हरई ॥
इन काहि लगी जु कहूं न लगी मनमानि कहा घनआनि छई ।
घनआनंद जान अजौनहि जानत कैसे अनैसे हो हाय दई ॥ ३५
इन बाटपरी सुधि रावरे भूलनि कैसें उराहनो दीजियै जू ।
इक आस तिहारी सों जीजे सदाघन चातिकको गति लीजियेजू ॥
अब तौ सब सीस चढ़ाय लईजु कछू मन भाई सुकीजियेजू ।
घनआनंद जीवन प्रान सुजान तिहारियै बातनि जीजियैजू ॥ ३६
बधि को बधि लेत सुन्यो छति के गतिरावरी क्यों करि बूझिपरे ।
मतिआवरि बावरि ह्वै जकि जाइ उपाय कहूं किनि सूझि परे ॥
घनआनंद यों अपनाय तजी इन सोच नहीं मन मूझि परे ।
दिन रैनि सुजान वियोग के बान सहै जिय पापी न बूझि परे ॥ ३७ ।
एरे बीर पौन तेरो सबै ओर गौन वारी तोसों और कौन मनो ढर कौंहें
बानि दै । जगत के प्रान ओछे बड़े को समान घन आनंद निधान सुख दान
दुखियानि दै ॥ जान उजियारे गुन भारे अंत मोही प्यारे अब ह्वै अमोही बैठे
पीठि पहिचानि दै । बिरह बिथा की मूरि आंखिन में राखौं पूरि धूरि तिन
पायन की हाहा नेकु आन दै ॥ ३८ ॥
अंतर गठीले मुख ढीले ढीले बैन बोलो सुंदर सुजान तऊ प्रानन खरे
अगौ । सांचे कैसो मूरति ह्वै आंखिन में पैठी आय सदा निरमोही मोह मों
गढ़ो हिये ठगौ । आनंद के घन उघरे पै कल छाय लेत कटुताई भरे रोम
रोम हीं श्रमो पगौ । चाह मतवारी गति भई है हमारी देखौ कपट करे हूं
प्यारे निपटै भले लगौ ॥ ३९ ॥
१०—बैरी वियोग की ऊकनि जारन कूकि उठै अचकां अधरातक ।
बेधत प्रान बिना ही कमान सुबान से बोल सों बान हैं घातक ॥
. हू पचिये बचिये छिति डोलत सोतन लाये सघातक ।
.. . . आनि कुये उन पैंडे परे इन पातकी चातक ॥ ४० ॥

किन कौं ढरिगी यह ढारघटौजिहि जो तनि आंखिनि ढोरत है ।
अरसानि गही उहि बानि कछू सरसानि सौं आनि निहोरत है ॥
घन आनन्द प्यारे सुजान सुनौ तब यौं सब भांतिनि भोरत है ।
मनमाहिं जौं तोरनि हौ तो कहौ बिसवासी सनेह क्यौं जोरत है ॥ ४१ ॥
जिन आंखिन रूप चिन्हारिभई तिनको नितहीं दहिजागनि है ।
हित पोरसौं पूरित जो हियरा फिरि ताहि कहां कहुंलागनि है ॥
घनआनन्द प्यारे सुजान सुनौ जियराहि सदा दुख दागनि है ।
सुख मैं सुखचंद बिना निरखें नख तें सिखलौं बिख पागनि है ॥ ४२ ॥
पूरन प्रेम कौ मंत्र महापन जामधि सोधि सुधारि है लेख्यौ ।
ताही के चाह चरित्र बिचित्र यौं पचि कै रचि राखि बिसेख्यौ ॥
ऐसौ हियो हित पत्र पवित्र जु आन कथा न कहूं अवरेख्यौ ।
सो घनआनन्द जान अजान लौं टूक कियौ परि बांचि न देख्यौ ॥ ४३ ॥
जीव कि बात जनाइये क्यौं करि जान कहाय अजाननि आगो ।
तोरन मारि कैं पीर न पावत एक सो मानत रोइबौ रागो ॥
ऐसी बनी घनआनन्द आनि जु आनन सूझत सो किनि त्यागो ।
प्रान मरैंगे भरैंगे बिथा पै अमोही सो काहू को मोह न लागो ॥ ४४ ॥
तोहि तो खेल पै मो हिय सैल सौं ए रे अमोही बिछोह महादुख ।
जाहि जु लागै सुहाहि सहैगो दहैगो पचो लहि तूतो सदा सुख ॥
एक ही टेक न दूसरी जानत जीवन प्रान सुजान लिये रुख ।
ऐसी सुहाई तो मेरे कहा बस देखिहौं पीठि दुरायहै जो मुख ॥ ४५ ॥

छप्पय ।

कहिये काहि जनाय हाय जौं मो मधि बीतै ।
रजनि बूझौं दुख ज्वाल धकौं निसिबासर हीतै ॥
दुसह सुजान बियोग बसौ ताही संजोग नित ।
बहरि परै नहिं समैं गमैं जिय राजि तकौं तित ॥
घनेहौदईयचना निरखि रीझिखीझि सुरझौसुमन ।
ऐसी बिरचिबिरंचि कौ कहा सर्यौ आनन्द घन ॥ ४६ ॥

क॰—रूप उजियारे जान माननिके प्यारे कब करौ जुन्हैया दैया बिरह महात मैं । सुखदसुधा तैं हंसि हेरनि पिवाय पिय जिग्रहि जिवाय मारिहौ उदेग मैं ॥ सुंदर संदेस आंखै बहुरो बसाय आय बसिहौ छबिली जैसे हुलसि

हियो रमैं। ह्वैहैं सो उघरि भाग उघरि आनन्दघन रसहि बरसि लाल
देखि हौ हरी हमैं। ॥ ४७ ॥

स०—किंसुक पुंज से फूलि रहे सुलगो उरदौ जु वियोग तिजारैं।
मांती फिरै न घिरै अबलानि पै जान मनोज यौं डारत मारैं॥
ह्वै अभिलाखनि पातनि पात,कढ़े हिय मूल उसासनि डारैं।
है पतझार बसंत दुहूं घनआनन्द एकही बार हमारैं॥४८॥

चूरि भयौ चित चूरि परेखनि एही कठोर अजौं दुख पीसत।
मांस हिये न समाय सकोचनि हाय इते पर बान कसीसत।
ओटन ओट करौ घनआनन्द नीके रहौ निसिद्यौस असीसत।
आनन बीच बसे हौ सुजान पै आंखिन दोस कहा जु न दीसत॥४९॥

ज्यौं कहरैनि कहूं ठहरै मन देह सौं आदचि देह कौं लेखौ।
देखत जो अंखियां दुखिया नित वैरियौं को सुपने सु न देखौ॥
हेती सुजान महा घनआनन्द पै पहिचानि कौ राखि न रेखौ।
हाय दई यह कौन भई गति प्रीति मिटेहूं मिटै न परेखौ॥५०॥

जिन कौं नित नीके निहारतहीं तिनकौं अंखियां अब रोवति हैं।
पल पांवड़े पाइनि चाइनि सौं अंसुवानि की धारनि धोवति हैं॥
घनआनन्द जान सजीवनि कौं सपने बिन पाये इ खोवति हैं।
नखुली मुंदी जानि परै दुख ये काहु हाइ लगे पर सोवति हैं॥५१॥

पहिले पहिचानि सुमानि लई अब तौ सुभई दुख मूल महा।
इतकै हित धैरि लियौ उत ह्वै चितज्यौ हरिध्यौ हरि लोभ लहा।
घन आनन्द मीत सुजान सुनौ अब उत्तर दूरि तें देत कहा॥
तुम्हैं पाय अजू हम खोयौ सबै हमै,खोइ कहौ तुम पायौ कहा॥५२॥

कहि टान ठनौहौं सुजान समागति जानि सकौं सुखजाग कह्यौ।
यहि सोच समाय उदेगन साय विछोह तरंगनि पूरि भयौ॥
सुनौंजू मनमोहन ताकी दसा सुधि सोचनि आवनि बीचि रह्यौ।
तुम तौ निह काम अकाम हमै घन आनन्द काम सौं काम पर्यौ॥५३॥

सो बिस ओ तुम्हे पीर बचो सौ ह्वैन तुम्हैं बिन सौहि सियौजू।
सूल भयौ गुन यौं जिहि संग कि दीप सौं बारि वियोग दियौजू॥
चाह कहौं घनआनन्द प्यार इतौ हठ कौन पै चाव लियौजू।
हाइ सुजान सनेही कहाइ क्यौं मौह हनाइ,कै दोष कियौ जू॥ [illegible]

—जा हित मात को नाम जसोदा सुबंस कौ चंदकला कुलधारी ।
सोभा समूह मई घनआनन्द मूरति रंग अनंग जिवारी ॥
जान महा सहजै रिझवार उदार बिलास मैं रास बिहारी ।
मेरो मनोरथ हू पुरवौ तुम हौ मो मनोरथ पूरनकारी ॥ ५५ ॥
पर काजहि देह कौं धारे फिरौ. पर धन्य जथारथ ह्वै दरसौ ।
निधि नीर सुधा कें समान करौ सबही बिधि सज्जनता सरसौ ॥
घनआनंद जीवन दायक हौ कछु मेरियौ पीर हियै परसौ ।
कबहूं वा बिसासी सुजान के आंगन मो असुवानि कौं लै बरसौ ॥ ५६ ॥
जाए कहूं घनआनंद जान सभार की ठौर लै भूल निहेरो ।
धंदे लगैं सब अंग दहै उलटी गति आपने पापनि पेरो ॥
ज्यौं ज्यौं परै जल पावस मैं सुनो त्यौं त्यौं बढ़ै बिरहागि बिसेषी ।
पौन सौं जागति आगि सुनो ही मैं पानो तैं लागति आंखिनि देखी ॥ ५७ ॥
आन छबीले कहौं तुमहो जौं न दीसौ तौ आंखिनि काहि दिखाऊं ।
कौन सुधाई सनी बतियानि बिना इन कानानि लै कहं प्याऊं ॥
हाय मरौ मन पीर तैं प्रीतम या दुखिआहि कहां पर पाऊं ।
चाहत जीव धर्यौ घनआनंद रावरी सौं कहूं ठौरन पाऊं ॥ ५८ ॥
निसि द्यौस उदास उसासु थकी न सकौ तजि आस बिसासजकी ।
घनआनंद मीत सुजान बिना अंखियानि कौं सूझति एकटकी ॥
इत की गति कौंन कहै को सुनै मनहीं मन मैं यह पीर पकी ।
भरिये किहि भांति कहा करियै अब गैल संदेसनि हूं की थकी । ५९ ॥
अंगनि पानिप ओप खरी निखरी नव जोबन की सुघराई ।
नैननि बोरति रूप के भौंर अचंभो भरी छतिया उभराई ॥
जान महा गरुवें गुन मैं घनआनंद हेरि रह्यौ सुघराई ।
पैनै कटाछनि ओज मनोज के बानानि बीच बिधी मधुराई ॥ ६० ॥
अभिलाखनि लाखनि भांतिभरी बरुनी न रोमांच ह्वै कांपति हैं ।
घनआनंद जान सुधाधर मूरति चाहनि अंक मैं चांपति है ॥
टकलाय रहो पल पांवड़े के सुचकोर की चोपहि झांपति हैं ।
जब तैं तुम पावन पौधि बदो तबतैं अंखिया मग नांपति हैं ॥ ६१ ॥
मग हेरत डीठि हेराय गमी जबतैं तुम पावन पौधि बदो ।
बरसौ कितहूं घनआनंद प्यारे पै बाढ़ति है इत सोच नदी ॥

विरह अति मोटउदेग की आमनि मुकरत पानुग मैं न मही।
कव आइही औसर जानि सुजान वहीर लौं वैन तौं बात लही ॥६१॥
क०—सदा दयानिधान हौ कहा कहौं सुजान हौ गमानि टानि मानिडौं न
मान काढ़ि दीजिये। रमाल सिंधु मीति के अरे गरे मनोनि के निकेत नीति
रीति के सुदृष्टि देखि जीजिये॥ ठगी लगी तिहारियै सुभाय त्यौं निहारि
समीप है बिहारिये बसंत रंग भीजिये। पर्दाट मोद दाइये बिनोद के
दाइये विलंब छाड़ि धाइये कियों बुलाय लीजिये ॥६२॥
स०—सुधि चाहन भौं चित चाहत है चख चाहनि ठौरहि पावति ना।
घनआनन्द जान तुम्हें बिनयौं मति पंगु भई गति धावति ना॥
बिनु देखे पियारे तुम्हारे चहो मनि नेकहु धीर धरावति ना।
सुधि दैन कही सुधि लैन चही सुधि पाये बिना सुधि आवति ना॥६३
हमसों हितकै कितकौं नितहीं चित बीच बियोगहि पोइ चले।
सु अखेवट बीज लौं फैलि पर्यो बनमाली कहां धौं समोइ चले॥
घनआनन्द छांह बितान तन्यौ हमैं ताप के आतप खोइ चले।
कबहूं तेहि मूल तो बैठिये आइ सुजान जो बीजहि बोइ चले॥६४
राधे सुजान इतै चित दै हित मैं कित कीजति मान मरोर हैं।
माखन तें मन कोमल है यह बानि न जानति कैसे कठोर हैं॥
सांवरे सों मिलि सोहति जैसी कहा कहियै कहिये और जोर है।
तेरो पपीहा जु है घनआनन्द है ब्रजचंद सु तेरो चकोर हैं॥६६
कैसे करौं गुन रूप बखान सुजान छबीले भरो हिय हेत हौ।
औसर माम लगी रहै मान कहां बसे जो सुधि भूलि न लेत हो॥
चेटकही सब भांतिन तें घनआनन्द पोवत चातक चेत हौ।
बावरो रीझ न बूझि परै तन कै मिलि कै बहु दुःखहि देत हौ॥६७
दृग दौरिये दौरि परौं जिनमौं इन मोहन लौं बन को भटके।
मनु दै फिरि लीजिये आपु नहीं जु नहीं अटकै न कहूं मटकै॥
करि बंदन दीन भने सुनिये दुख फंदन सौं कबलौं लटकै।
घनआनंद मीत सुजान हरौ जिय चातक के हियको खटकै॥६८॥
०—इत घन टेखे देखिबेई जोग दसा भई तेतौ घनाकनौडी मौं बांध्यौं डी
तारे है। जान घनआनंद बनाव सुवन कहैं धीरजहि राखे सोच मुकत
धारे हैं। दीन अति दीननि कों मोहन अमोही रच्यौ गहा निरदई

हूँ मिल्यो करतार है। तेरे बररांबनि हर्द है कांनबोप हाइ बिरही बिचार न की मौंन मैं पुकारे है ॥ ६८ ॥

इंदोवर दननि मिनाइ मौनशुदो गुहो मुहो मान मान रूप गुनन परैं गनैं। पीरो यें पिछौरी छोर मोम पैं उलटि राखै दैसरि विचित्र पंग भाव रंग सौंमनैं। सुरली मैं मीरी धुनि टेरो घन आनंद है तेरे द्वार टहलनि ऊधम घने ठनैं। हा हा हे सुजान आजु दीजै मान दान मैया भावत गुपाल देखि भीजै बनतें बनैं ॥ ७० ॥

स०—मन मोहन तो अगमोह करी यह मोहित होतु फिरै सुयहा।
अब जो अवढार ढरै न ढरै गुनत्यौं तजि मागत दोष महा॥
घनआनंद मीत सुजान सुनौं चित दै इतनो इत बात कहा।
जिय जाचक ह्वै जस देत बड़ौ जिनि देहु कछू किनि लेहु लहा ॥ ७१ ॥
अतर ह्वै किधौं अंत रहौ दृग फारि फिरौ कि अभागिनि भीरौ।
आगि जरौं अकि पानी परौं अब कैसी करौं हिय का बिधि धीरौ॥
जौं घनआनन्द ऐसी रुची तौं कहा बसु है अहो प्रानन पीरौ।
पाऊं कहां हरि हाइ तुम्हें धरनी मैं धसौं कि अकासहि चीरौं ॥ ७२ ॥
हमसौं पिय साचिवे बात कहौ समझ्यौं मनत्यौं अरु नाहि कहूं।
कपटी निपटै हिय दारुन ह्वौ निरदे जु दई डर नाहिं कहूं॥
मन हो रस मैं घनआनन्द पै बस बात परै अरु नाहिं कहूं।
उघरौ बरसौ सरसा तरसौ सब ठौर बसौ घर नाहिं कहूं ॥ ७३ ॥

क०—रांन की उनाउं ताकै सोंह नहि हौं होवाहु जानराइ गुनहि लगाऊं काते दोप जु। बिनाई द्वारे करौतो कहिवे को कहां रही कहै किन करौ दान प्रान परितोप जु॥ तुम्हें रिझवार जानि खीझसौं कहत प्यारे हा हा कृपा-निधि ऐसो मानिये न रोप जु। आनंदके घन झूमि झूमि कित तरसावौ बर-सि सरसि पीजै हेत लता पोष जु॥ ७४ ॥

आंखिनि मूंदिकै बात दिखावत सोवनि जागनि बातहि पेखि लै।
बात सरूप अनूप अरूप है भूलो कहा तूं अलेखहि लेखि लै॥
बात को बात सुबात बिचारिवौ सूझसना सब ठौर बिसेखि लै।
नैननि कानन बीच बसै घनआनन्द मौन बखान सुदेखि लै ॥ ७५ ॥

क०—सुधि करैं भूल की सुरति जब आइ जाइ तब सब सुधि भूलि कूकी गहि मौन की। जातैं सुधि भूलैं सो कृपा तैं पाइयत प्यारे फूलि फूलि भूली या

हित चातक प्रान सजीवन जान रचे बिधि आनंद के घन हीं ।
दरसौ परसौ बरसौ सरसौ सनले हू गए पै बसौ मन हीं ॥ ८३ ॥
आयौ महारस पुंज भयौ घनआनन्द रूप सिंगार कौं भौरै ।
सींचत है हिय देस सुदेस अपूरब आंखिन ठानतु ठौरै ॥
मोहन बांसुरिया सी बजै मधुरैं सुर औ धुनि मैं मति बौरै ।
आजु पै मोहन की सजनी चित दै सुनिलै कछु बोलनि भोरै ॥ ८४ ॥
रूप अनूप सज्यौ दल देखि भज्यौ तजि देसहि धीर मवासौ ।
नैन मिले उर के पुर पैठत लाज लुटी न छुटी तिनुका सौ ॥
प्रेम दुहाई फिरी घनआनन्द बांधि लिये कुल नेम गढ़ा सौ ।
रीझ सुजान सची पटरानी बची बुधि बापुरी ह्वै करि दासी ॥ ८५ ॥
अति सूधौ सनेह को मारग है जहां नेकौ सयानप बांक नहीं ।
तहां सांचे चलैं तजि आपुनपौ झिझकैं कपटी जु निसांक नहीं ॥
घनआनन्द प्यारे सुजान सुनौ इत एक तें दूसरौ आंक नहीं ।
तुम कौन धौं पाटी पढ़े हौ कहौ मन लेहु पै देहु छटांक नहीं ॥ ८६ ॥
कान्ह परे बहुतायत में अकिलैनि की वेदनि जानौ कहा तुम ।
हौ मनमोहन मोहे कहूं न बिथा बिमनैंन की मानौ कहा तुम ॥
बौरे बियोगनि आप सुजान ह्वै हाइ कछू उर आनौ कहा तुम ।
आरतिवंत पपीहनि कौं घनआनन्द जू पहिचानौ कहा तुम ॥ ८७ ॥
घनआनन्द रूप सुजान सनेही पै आपुन आपहीं त्यौं अरसौ ।
इत सौं सधि तेरियै रीति रची उत चाहनि चाहना मैं सरसौ ॥
रसना इक साइकलाइक ह्वै कितहूं भरलाइ कहूं तरसौ ।
अब हौं जु कहौं सुनौ दूसरौ को तुमहीं सब रंग मिलै दरसौ ॥ ८८ ॥
प्रान पखेरू परे तलफैं लखि रूप चुगा जु फंदे गुन गाथन ।
क्यौं हतिए हित पाल सुजान दया बिन ब्याध बियोग के हाथन ॥
सालत बान समान हिये सुनहै घन आनंद जे सुख साथन ।
देउ दिखाय दई मुख चंद जगो अब ओप दिवाकर आथन ॥ ८९ ॥
पहिले अपनाय सुजान सनेह सौं क्यौं फिरि नेह कौं तोरियै जू ।
निरधार दै धार मझार दई गहि बांहन काहू कौं बोरियै जू ।
घनआनंद आपने चातक कौं गुन बांधि लै मोहन छोरियै जू ।
रस प्याइकै ज्याइ बढ़ाय कै आस बिसास मैं यौं बिष घोरियै जू ॥ ९० ॥

हित चातक प्रान मजीवन प्रान रचे विधि आनंद के घन हौं।
दरसौ परसौ बरसौ सरसौ मनले ह्व गए पै बसौ मन हौं ॥ ८३ ॥
आयौ महारस पुंज भयौ घनआनन्द रूप सिंगार कौं मौरै।
सींचत हैं हिय देस सुदेस अपूरब आंखिन ठानतु ठौरै ॥
मोहन बांसुरिया मो बजै मधुरैं सुर जौ धुनि मैं मति बौरै।
आजु के मोरन की सजनी चित दै सुनिलै कछु बोलनि थौरै। ८४ ॥
रूप अनूप सज्यौ दल देखि भज्यौ तजि देसहि धीर मवासौ।
नैन मिलें उर के पुर पैठत लाज लुटी न छुटी तिनुकासौ ॥
प्रेम दुहाई फिरी घनआनन्द बांधिलिये कुल नेम गटासौ।
रीझ सुजान सची पटरानी बची बुधि बापुरी ह्वै करिदासौ ॥ ८५ ॥
अति सूधौ सनेह को मारग है जहां नेकौ सयानप बांकनहीं।
तहां सांचे चलै तजि आपुनपौ झिझकै कपटी जु निसांक नहीं ॥
घनआनन्द प्यारे सुजान सुनौं इत एक तें दूसरौ आंक नहीं।
तुम कौन धौं पाटी पढ़े हौ कहौ मन लेहु पै देहु छटांक नहीं ॥ ८६ ॥
कान्ह परे बहुतायति में अकिलैनि की बेदनि जानौ कहा तुम।
हौ मनमोहन मोहि कहूं न बिथा बिमनैन की मानौ कहा तुम ॥
बौरे बियोगनि आप सुजान ह्वै हाइ कछू उर आनौ कहा तुम।
आरतिवंत पपीहनि कों घनआनन्द जू पहिचानौ कहा तुम ॥ ८७ ॥
घनआनन्द रूप सुजान सनेही पै आपुन आपहीं त्यौं बरसौ।
इत सो मधि तेरियै रीति रची उत चाहिनि चाहना मैं सरसौ ॥
रचना इक सारकलाइक हौ कितहूं अरसाइ कहूं तरसौ।
यह हौं जु कहैं सुतौ दूसरी कौ तुमहीं सब रंग मिलै दरसौ ॥ ८८ ॥
प्रान पखेरु परे तलफैं सखि रूप चुगा जु फंदे गुन गायन।
क्यों हतिए हित पाल सुजान दया बिन व्याध बियोग के हायन ॥
मालस बान समान हिये सुनहू घन आनंद सी सुख सायन।
देउ दिखाय दई मुख चंद भगी भव चौंध दिवाकर घायन ॥ ८९ ॥
पहिले अपनाय सुजान सनेह सौं क्यों फिरि नेह कौं तोरिये जू।
निरधार दै धार मझार दई गहि मोहन काहे कौं बोरिये जू।
घनआनंद आपने चातक कौ गुन बांधि लै मोहन
रस प्यारकै प्याइ बंधाय कै आस

प.लिन मौनौ मिलाप पुरी गुन गाठ पुरी सो जुरी अभिलाषो।
मोहे सुघाइ रंग भरी लिन आनि सनेह पै फनु भाषो॥
भाव में बांधी है प्रीति की गांठ मांहे घन आनंद जीवन माषो।
ऐसम प्रान विराजत जान ज्यों रावरे रूप अनूप को राषो॥ ११

छूटे घटा नहुगा निर ज्यों गहि काढ़े करेजो कहा पिन कूके।
मोहो ममीर भगार दरै बहके अपना अपने करतूके॥
पहो सुजान तुम्हें भरी प्रान सुपासस यो पचिगा बम मूके।
है घनआनंद जोरन मूर घरी चित में कत घातिक चूके॥

क०—रावरे सुमन बांधि लियौ हियो मान प्यारे इतैपै अचंभो और दं
जो मुरति है। ऊपर मनाय चाय चाय में रचाइ हाय यद्यपि बचाइ दीन
मार दुरति है॥ तुम सों न न्यारो है तिहारो प्रीति रीत जानि दौरी हुप
गई गाठ मो सुरति है। कैधौं घनआनंद अदोम में लगी ये खोरि जैधन
भार को परेखम सुरति है॥ ८॥

राधा नव जोबन बिलास की अकस्मा जहां अंग अंग रंगन छिकाम
की भीर है। प्यारो मनमानो घन आनंद सुजान सेवै जाको देख काम
हिये में माहीं पीर है॥ सुरति समाज साज कोकिल कुहूक राजै सामन
गैया सुख सौरभ समीर है। स्वेद मकरंद यों मनोरथ मधुप पुंज मंजु द्रुम
बन देम जमुना के तीर है॥ ८॥

दो०—सहजमिलन बिछुरनसहज, सहज सकल ब्योहार।
सहज रचे सोई बचे, हया पचै हामार॥ १०॥
सुख सुदेस को राज लहि, भए अमर अवनीस।
कृपा कृपानिधि की सदा, छत्र हमारे सीस॥ ११॥
हरितुम सौं पहिचानि कौं, मोहि लगावन लेस।
येहि उमंग फूल्यौ रहै, बसौ कृपा के देस॥ १२॥
सोसि मन पहिचानि कौं, पहिचानै हरि कौन।
कृपा कान मधि नैन ज्यौं, त्यौं पुकार मधि मौन॥ १३॥
गोरी तेरे सरस दृग, किधौं स्याम घन आप।
दावानल सौं पानये, करति विरह संताप॥ १४॥
आपनो जीवन आनंद ऐन, कहौ कृपानिधि कौनहित।
•—भांवर पूर पपीहा नैन, बरसौ पै दरसौ नहीं॥ १५॥

इति सुजान शतक समाप्त।

श्रुतिरहस्य।

सामवेद।

भक्ति ज्ञान से क्यों बड़ी है।

सटीक अष्टपदी।

श्री वल्लभाचार्य्य कृत सटीक चतुश्श्लोकी।

भारतभूषण भारतेंदु श्री हरिश्चन्द्र कृत।

जिन को हिन्दीभाषा के प्रेमी तथा रसिकजनों के मनोविलास के लिये क्षत्रियपत्रिका। सम्पादक श्री म० कु० बा० रामदीन सिंह ने प्रकाशित किया।

पटना—"खड्गविलास" प्रेस—बांकीपुर.
साहबप्रसाद सिंह ने मुद्रित किया.

१८९८.

प्रथमवार १०००]

[दाम]

श्रुतिरहस्य।

नमः श्रीवल्लभाय श्रुतिवाक्येतत्स्वरूपप्रदर्शकाय श्रीगिरिधराय च।

वेद के अक्षर कामधेनु हैं और इसी कारण सब मतों के आचार्य लोग उनके जितने अर्थ करते हैं सब मान्य होते हैं यदि उन में से एक भी न माना जाय तो पूर्वाचार्यों पर आक्षेप होने से न मानने वाले नास्तिक गिने जाते हैं जैसा "चत्वारिशृङ्गा" इस श्रुति का निरुक्तकार, महाभाष्यकार, रामानुजाचार्य, विद्यारण्य, इत्यादि ने अनेक प्रकार का अर्थ किया है और ये सब अर्थकार ऐसे हैं कि उन में से एक के भी मानने बिना काम नहीं चलता तो सिद्धान्त यह हुआ कि श्रुति में जितने अर्थ निकलेंगे वे कोई अप्रमाण न होंगे (जैसा चत्वारिशृङ्गा के यहां सब अर्थ दिखाते हैं)

चत्वारिशृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महोदेवो मर्त्यां आविवेश॥

१ (पदार्थ) इसको चार सींग हैं, तीन पैर हैं, दो सिर हैं, सात हाथ हैं, तीन प्रकार से बंधा हुआ बैल चिल्लाता है तेज देवता मरने वालों में घुसा है।

अब यह केवल रूपक की भांति कूट हुआ, इसको स्पष्ट करने को

२ (निरुक्त कार का अर्थ) यह श्रुति यज्ञ का प्रतिपादन करती है चार वेद इसके चार सींग हैं; तीन सवन अर्थात् मोघ, मध्य और अपराह्न ये तीनों पैर हैं; प्रायणीय और उदयनीय ये दो सिर हैं; सात गायत्र्यादि छन्द इस के हाथ हैं; मंत्र, ब्राह्मण और कल्प तीनों से बंधा हुआ यह वृषभ शब्द करता है तेज का देवता मनुष्यों में इनके कल्याण के हेतु प्रवेश करता है।

३ (महाभाष्यकार का अर्थ) यह श्रुति शब्दरूपी वृषभ के वर्णन में है यथा, संज्ञा, क्रिया, उपसर्ग और निपात ये चार इसके सींग हैं; और भूत, भविष्यत् और वर्तमान ये काल तीन पैर हैं; नित्य और कार्य ये दो सिर हैं; सात विभक्तियां हाथ हैं; हृदय, कण्ठ और सिर तीन स्थानों में बंधा है; बड़ा शब्द करने से इस को वृषभसंज्ञा है; शब्दकरनेवाला महान् देव (शब्द स्वरूप) मर्त्य संसारी मनुष्यों में प्रविष्ट होता है।

वेणु 'गोगोपालमुपास्महे श्रुतिशिरोवंशीरवैर्दर्शितं" इस से वेणुरूप हो धर्म मनुष्यों में प्रवेश करता है।

८ (श्रीसंगीत पर अर्थ) यह श्रुति संगीत को भी प्रतिपादन करती है; इसके तत, वितत, घन और धमन चार सींग हैं, तीन ग्राम तीन पाद हैं, लय और स्वर दो सिर हैं; सात स्वर वा विमूर्छना सप्तक सात हाथ हैं; कंठ, नाभि और मुख इन तीन स्थलों में बंधा हुआ संगीत रूपी वृषभ अर्थात् गान ब्रह्म मनुष्यों को तन्मय कर देता है।

९ (साहित्य पर अर्थ) यह श्रुति साहित्य का भी प्रतिपादन करती है; इसके आरभट्यादि कथन ४ सींग हैं; लक्षणा, व्यंजना और ध्वनि, तीन पाद हैं; दृश्य और श्रव्य दो सिर हैं; चित्रादि सात हाथ हैं; गद्य पद्य और गीत तीन रीति से बंधा है, ऐसा साहित्य रूपी वृषभ मनुष्यों को चित्त में उल्लास कर आनंद देता है यथा "सुभाषितरसास्वादबद्धरोमांचकंचुकाः। विनापि कामिनीसंगं कवयः सुखमासते। सुभाषितेन गीतेन युवतीनां च लीलया। यस्य न द्रवते चित्तं सवै मुक्तो ऽथवा पशुः"।

सामवेद

मन्त्र ब्राह्मण प्रथम प्रपाठक प्रथम खण्ड।

अथ गर्भाधान प्रयोग।

ॐ हे सविता देवता! प्रथम इस कन्या के अङ्ग में यज्ञाग्नि उत्पन्न करो और फिर यजमान उत्पन्न करो (अर्थात् इस को कामोद्दीपन हो जिस से पुत्र हो) चित्त पवित्र करने वाला दिव्य गंधर्व हमारा चित्त प्रसन्न करे और वाचस्पति हमारी वाणी को सुस्वादु करे (प्रार्थना मन्त्र)। १। हे कामदेव! तुम्हारा नाम (पराक्रम) सब जानते हैं तुम मद और यह कन्या सुरा रूप है इस में अपना आविर्भाव करो। हे कामाग्ने! तुम्हारा योनी जाति [illegible] ही है और पुरुषार्थही के हेतु तुम बने हो (तुम्हारे अर्थ आहुति होय) (कामोद्दीपन मन्त्र)। २। हे स्त्रिये! तेरी आनन्देन्द्रिय इस मधु (वीर्य) से सम्यक प्रकार से सींचते हैं यह तेरी इन्द्रिय मानो ब्रह्मा का दूसरा मुंह है इसी से पुरुषों को तू जीतती है और जो तेरे वश में नहीं हैं उनको भी वश में करती है इसी से तू रानी है स्वाहा (अर्थात यह शुक्र रूपी आहुति तुझ को

४ (श्रीरामानुजाचार्य का अर्थ) यह श्रुति ईश्वर के वर्णन में है, चारो वेद चार सींग हैं; नित्य, बद्ध और मुक्त तीनों प्रकार के जीव तीन पाद हैं; शुद्धसत्व और गुणात्मक सत्व इस के दो सिर हैं अर्थात् सिर: स्थान में हैं; महत्तत्वादि, सात प्रकृति और विकृति इसके सात हाथ हैं; ऐसा महादेव श्रेष्ठ रूपा वासुदेव अपने संकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्ध इन तीन रूपों से मनुष्यों में बंधता नाम प्रकट होता हुआ सब वस्तुओं को रोरवीति अर्थात् नामरूपवत् करता है और और मर्त्य नाम चेतनाऽचेतन पदार्थों को अन्तरात्मा होकर प्रवेश करता है।

५ (श्रीविद्यारण्य का अर्थ) यह श्रुति प्रणव पर है, अकार, उकार, मकार और नाद ये इसके चार सींग हैं; अध्यात्म, विश्व और तैजस ये तीन पाद हैं; चित् और अचित् ये दो शक्तियां शिरस्थान में हैं; भूरादि सात लोक सात हाथ हैं; विराट्, हिरण्यगर्भ और व्याकृत इन तीन प्रकारों से बंधा हुआ वृषभ प्रणव ब्रह्म तेजोमयत्व का प्रतिपादन करता है।

६ (श्री वल्लभाचार्यजी के मतानुयायी का अर्थ) यह श्रुति श्रीपुष्टि लीलास्थ पूर्णपुरुषोत्तम ही को प्रतिपादन करती है, उन श्री पुरुषोत्तम के चार नित्य सिद्धादि यूथ शृङ्ग अर्थात् उत्तम स्थान में हैं और उन के तीन पाद अर्थात् प्राप्ति होने के साधन तनुजा, वित्तजा और मानसी यह तीन प्रकार की सेवा हैं; सख्य और आत्मनिवेदन ये दो भक्तियां शिर अर्थात् सिद्ध स्थान में हैं; श्रवणादिक सात भक्तियां हाथ अर्थात् साधन स्थान में हैं; श्रीपुरुषोत्तम की पूर्वोक्त नौ प्रकार के भक्ति से युक्त जीव अलौकिक सामर्थ्य, सायुज्य और सेवा में उपयोगी देह धारण, इन तीन प्रकार से बंधा है, और उन की लीला के प्रवेश के अर्थ धर्मस्वरूप वर्षा करने वाले और शोभा करने वाले वृषभ अर्थात् श्रीआचार्य रोरवीति नाम भक्तों को मंत्र और ग्रंथद्वारा उपदेश करते हैं जिस से वर्णधर्मा जीव अर्थात् सेवामार्गी जीव जब अधिकारी होते हैं तब महादेव लीलास्थ पूर्ण पुरुषोत्तम उन में आवेश कर के लीला का अनुभव कराते हैं।

७ (श्रीवेणु पर अर्थ) यह श्रुति श्रीवेणु का प्रतिपादन करती है; मानसी ४ रीति की वाणी [illegible] आदि तीन स्वर पाद हैं; मुख्य छिद्र या लय और [illegible] और दो हस्तों से [illegible]

ानते हम प्रार्थना करते हैं कि हमारी प्रजा और हमारे वीरों को तुम मत ारो। १४।

इति प्रथम खण्ड।

इस पत्थर पर तू (स्त्रिये !) चढ़ कर पत्थर की भांति स्थिर हो। वैरियों ो तू बाधा करने वाली हो पर उन वैरियों के नीचे मत हो (अर्थात् उनसे ीचा न देख)। १। आग में लावा फेंकती हुई स्त्री यह कहती है। हमारा ति दीर्घायु होय सौ बरस जीवै हमारी जाति (सुसराल वाले) सुख से हें स्वाहा। २। अर्यमा अग्नि की कन्या ने सेवा किया है। वह अर्यमा देवता इस को पितृ कुल से छुड़ा कर मुझे दे, स्वाहा। ३। पूषा अग्नि की कन्या ने सेवा की है। वह पूषा देवता इस को पितृकुल से छुड़ाकर मुझे दे। ४। कन्या पितृ लोगों को छोड़ कर पति के घर में आई और पति को दीक्षा लिया। अब उस तुम्हा कन्या से जल में जलधारा की भांति एक मिल कर हम लोग शत्रुओं को डुबावें। ५। अन्न प्राप्ति के हेतु एक पाद तुझ को विष्णु चलावें। बल लाभ के हेतु दूसरे पद। यज्ञादि के अर्थ तीसरे पद। सौख्य के अर्थ चौथे पद। पशु लाभ को पांचवे पद। धन रक्षा के हेतु छठें पद। सातो सहायता करने की योग्यता लाभ के अर्थ सातवें पद। ६। सात पैर साथ चलने से तू मेरी सखी हो मैं तेरा सखा होऊं। हम दोनों की मैत्री को लड़ाने वाली स्त्रियां न तोडें किन्तु हित कारिणी स्त्रियां वह सख्य बढ़ावें। ७। इस सुमङ्गली बहू को आप लोग आ कर देखो और सोहाग की इस्को असीस देकर तब घर जाओ। ८। विश्वे दे या जल वायु और धाता हम दोनों का हृदय शुद्ध करें और अच्छी स्त्रिय हम दोनों का चित्त मिलावें। ९। सुख के हेतु मैं पति तेरा हाथ बुढ़ा तक पकड़ता हूं। भग अर्यमा और सविता नाम के कुल रक्षक देवों ने गृह स्त्री चलाने को मुझे तुझ को दिया है। १०। अक्रूर दृष्टि, सोहागिनी पशुओं पर दया करनेवाली, प्रसन्न चित्त, बलवती, वीर और दीर्घ जीव बालक जनने वाली, देव भक्त, सुख कारणी, दो पैर और चार पैर के जीव का कल्यान करनेवाली और हम लोगों का भला चाहने वाली तू हो। ११ प्रजापति हम लोगों को सन्तान जनमावे और बुढ़ापे तक अर्यमा उनकी र ढ़ती करे। मङ्गली देवताओं ने मुझको तुझे दिया है तू पति के घर में आ और हमारी और मनुष्य और पशुओं की कल्याण कारिणी हो। १२। हे मघवन्‌वाली इन्द्र ! तू इसको सुंदर और सुपुत्रा कर। इसमें दस पुत्र उत्प

करके मुझे ग्यारहवां कर। १३। ससुर सास और ननद का नित्त प्रसन्न कर के तू रानी हो और देवर का चित्त अधिक प्रसन्न करने से तू रानी हो। १४। हमारे कामों में तुम्हारा जी लगे हमारे चित्त के अनुसार तुम्हारा चित्त हो हमारे जो मैं तुम अपना जी मिलाके तुम हमारी बात मानो, इसमें ... देवे हमें प्रसन्न करने वाली करें। १५। (विवाह प्रयोग)

इति द्वितीय खण्ड।

रेखाओं की संधि में • पलकों की बरौनी में, और आवर्तों में (नाभि आदि स्थानों में) जो कुलक्षण हैं उन सब को पूर्णाहुति से हम मिटाते हैं। १। बालों में या देखने में और चलने में जो दोष होते हैं उन सब•। २। तुम्हारे शील में बोली में या हंसने में जो दोष हैं उन सब•। ३। तुम्हारे मुख में दांत में हाथ पैर में जो दोष हैं उन सब •। ४। नितंब में योनि में ... में और और अङ्गों में जो दोष हैं उन सब •। ५। जो कोई बड़े भी पाप तेरे किसी अङ्ग में हैं उनको हम घृत आहुति देकर मिटाते हैं। ६। जैसे आकाश पृथिवी और यह सब जगत और ये पर्वत स्थिर हैं तैसे स्त्री पति के घर में स्थिर होय। ७। अन्नपान से मणि बंधन से प्राणसूत्र से और सत्य की गांठ से हम तेरा मन और हृदय बांधते हैं। ८। तेरा हृदय हमारा हृदय होय हमारा हृदय तेरा हृदय होय। ९। अन्न ही प्राणों का बंधन है ...ही से मैं तुझे बांधता हूं। १०। टेसू के फूल से लाल छतरीदार सेंहुड़ के काठ से छज्जेदार चित्रित सोने के रङ्ग के सुंदर बनाए हुए अच्छे पहियेवाले रथ में पर सूर्ये तू बैठ और तुझ अमृत की जड़ को घोड़े ले चलें और तू पति को सुख कर। ११।लुटेरे लोग हम दोनों को जान न जाने सब दुःख को दूर करते हुए हम पहुंचें और शत्रु हमारे सामने से भागें। १२। हम लोगों के घर गऊ और पुरुष बढ़ें। और सहस्र दक्षिणा के यज्ञ से प्रसन्न होने वाले देवता हम पर प्रसन्न होंय। १३। हे बधू यहां तुझे धैर्य हो यहां तेरे ... बढ़ें यहां तेरा जी लगे तू यहां रमण कर। मेरे में तुझे विश्वास हो मुझ में प्रेम हो मेरे से जी लगे और मुझ से तू रमण कर। १४। (बधू प्रवेश प्रयोग।)

इति तृतीय खण्ड।

चतुर्थ खण्ड ।

हे अग्ने ! प्रायश्चित्त कार्य्य में आराध्य हो कर तुम देवताओं का दोष दूर करने वाले हो हम स्वामी चाहने वाले ब्राह्मण तुम्हारी आराधना करते हैं, इस (स्त्री) में जो बुरी शोभा हो उसको दूर करो।१। हे वायो ! प्राय०, इसमें पति वियोग करने वाले जो दोष हों उन्हें मिटाओ। २। हे चन्द्र ! प्राय०, इस में वंध्यापन के जो दोष हों उन्हें तुम हरण करो। ३। हे सूर्य ! प्राय०, इस में पशुओं के नाश करने वाले जो दोष हों उन्हें तुम छुड़ाओ। ४। हे अग्नि वायु चन्द्र सूर्य ! प्राय०, इसमें जो बुरी शोभा पतिवियोग वंध्यापन और पशुओं के नाश करने वाले जो दोष हों उन्हें तुम लोग नाश करो। ५। विष्णु तेरा गर्भ स्थान संवारे त्वष्टा उस में रूप सम्पन्न करें प्रजापति उसको सींचता रहे और धाता रक्षा करें। ६। हे सिनीवालि ! चन्द्रमा की शक्ति, इस में गर्भ धारण करो हे सरस्वती इस में गर्भ धारण करो। तेरा गर्भ कमल को माला पहिरने वाले दोनों अश्विनीकुमार देवता धारण (रक्षा) करें। ७। (तेरे गर्भ की रक्षा करने वाले) मित्रावरुण देवता पुरुष हैं और दोनों अश्विनीकुमार पुरुष हैं। अग्नि और वायु भी पुरुष हैं इससे तेरे उदर के गर्भ में पुरुष होय। ८। अग्नि पुरुष है इन्द्र पुरुष है और बृहस्पति देवता पुरुष हैं इससे तू भी पुरुष पुत्र पा कर फिर भी पुत्र की जननी वाली हो। ९। (गर्भ रक्षण प्रयोग ॥)

इति चतुर्थ खण्ड।

भक्ति ज्ञानादि से क्यों बड़ी है।

संसार के जितने काम हैं उन में सिद्ध उसी को समझना चाहिये जिस में फिर कोई झगड़ा बच न जाय क्योंकि जब तक बखेड़े की निवृत्ति नहीं होती चित्त स्वस्थ और एकाग्र नहीं होता विशेष करके मत वा विश्वास के विषय में इस स्वास्थ्य की बड़ी ही अपेक्षा रहती है जो कहो कि मत विषय में तो केवल युक्तियां प्रधान हैं तो ऐसा कभी निश्चय मत रखना क्योंकि युक्ति तो स्वयं अप्रमाण हैं जब जिसको विशेष सूझी उस समय उसी का मत प्रबल रहा और इन युक्तियों से चित्त में जो विश्वास का वृक्ष उपजा है वह तो ऐसा निर्बल है कि अच्छे नास्तिक वादी की एक ही घनघोर बवंडर में

जड़मूल से उखड़ के गिरपड़ैगा वरंच इस बात का सब को अनुभ
विना किसी वादी के भी जब कभी अपना चित्त आपही युक्तियों
उलटाता है और संसार के विचित्र अयोग्य तथा दुःखमय कौतुक
जब उसकी दयालुता से खंडन का प्रत्यक्ष न अनुभव होता है तब
मनुष्य ही एक बार विश्वास उठही जाता है, वेदान्त वाले विश्वा
ज्ञान बिना मुक्ति नहीं पर वे भी निश्चय रक्खें कि जिन वेदों को पा
कर और जिन पंचदशी के वादों को सीख सीख कर तुम ज्ञानी बने
सब युक्ति दशा में निरे पानी के बुलबुले हैं और फिर मूर्खो! ईश्वर
तुम्हें ज्ञान क्या होगा एक छोटी वस्तु का तो ज्ञान करलो एक ति
क्या क्या बनावट है कैसे कैसे रंग रूप हैं उस में जीव क्यों है जब व
ता है तो उस समय विशेष क्या हो जाता है जीव मर के कहां
तारे एक एक कितनी दूर हैं कितने बड़े हैं कैसी गति है कितने
बने हैं मनुष्य में पशुओं की अपेक्षा जिस बुद्धि से विशेषता है वह बु
वस्तु है जल स्थल वायु में खुर्दबीन से देखने से जो असंख्य जीव दिख
ते हैं वह कितनी भांति के हैं इत्यादि तुम अपने संसार का ज्ञान तो
तुम्हारे बाप दादा कहां गए तुम बीच में कहां से आगए फिर कहां
कैसे जाओगे आत्मा व्यापक है कि अणु है यह एक एक विषय ऐसे
का पूरा ज्ञान कभी नहीं हो सकता केमिस्टरी (तंत्र शास्त्र) को देख
खुल जायगी एक एक छोटे छोटे औषधों में कितने गुण हैं कितनी
इसका पारंगत कोई नहीं हुआ नित नित नए नए गुण निकलते चले
हैं तो जब तुम को अपने संसार का तो यथार्थ ज्ञान हुआ ही नहीं
के बनाने वाले का ज्ञान क्या होगा है और जो कहो कि नहीं हमने
लिया उसको न अन्त माया है यह सब इसके कौतुक मनुष्यों को
हैं तो वाह रे आप क्यों न हो उसको माया को तो आप ने अपा
अनन्य माना पर जिसकी माया है उसे मुट्ठी का बटेर समझ लिया
न हो इस समझ की बलिहारी है और यदि तुमने ईश्वर का तत्व ज
लिया तो फिर इसमें क्या क्योंकि इसमें तीन बात हैं प्रथम तो यु
ईश्वर का स्थापन ही कठिन पड़ेगा दूसरे जो स्थापन किया भी तथ
विषय का समूह ही तत्व ठीक है यह समझने भी कठिन है औ
निश्चय करलो तो उसके मिलने का या सोच का ज्ञान था

यह सर्वथा असम्भव होगा क्योंकि केवल जानलेने ही से जो ईश्वर मिल जाय तो आपासर सभी जानते हैं कि ईश्वर एक बड़ा भारी होवा कोई वस्तु है बही तो फिर संसार सिद्ध हो गया उसमें विशेष इतनाही है कि तुम सूक्ष्म रीति से जानते हो वे स्थूल रूप से जानते हैं पर ईश्वर विषयक ज्ञानी दोनों हुए और जो कहो कि ज्ञान से दुःख की निवृत्ति होती है तो इस बात को हम नहीं मानते क्योंकि जब भूख लगेगी चोट लगेगी कोई प्यारा सम्बन्धी मर जायगा तो तुम्हारे चित्त को दुःख अवश्य ही होगा शरीर का धर्म्म शरीर के साथ है यों तुम बाहर हाय न करो पर वह दुःख अवश्य ही भोगोगे जो कहो कि संसारियों की अपेक्षा दुःख थोड़ा होता है तो कोई ऐसा उपाय करो कोई औषध खा लो कि पागल हो जाओ वा मरजाओ तो कुछ थोड़ा सा भी दुःख न हो इसे छोड़ कर ज्ञान का फल केवल भक्ति है क्योंकि प्रत्यक्ष देखो कि कोई राजा है तो उस राजा को तुम भली भांति जान लोगे इसी से वह राजा तुम पर प्रसन्न हो जायगा ? कभी नहीं, जानने का फल श्रद्धा होना है तुमने उसके सुगुण सुने तुम को श्रद्धा हुई तुमने उसकी सेवा आरम्भ की उसके प्रिय साधन किए तब वह प्रसन्न होगा केवल इसी से नहीं कि तुम यह जानके अपने घर बैठ रहे कि एक राजा है उसे दो हाथ दो पांव हैं।

और जो कहो कि ज्ञान को जाने दो हम तो सुकर्म्म करते हैं जो जैसा कर्म्म करेगा वैसा फल पावेगा तो यह भी नहीं सिद्ध हो सकता क्योंकि फिर भी वही युक्तियों का भंडार खुला तुम अच्छा कर्म्म किसको कहते हो बुद्धि कैसे मानेगी कि बकरा काटना आग में घी डालना, मनुष्यों में भेद देखना इत्यादि अच्छे कर्म्म हैं जो कहो कि सत्यादिक अच्छे कर्म्म मानेंगे तो निश्चय सत्य दयादिक सुकर्म्म करना अच्छी बात है परन्तु युक्तियों से तो जिस में अपने को सुख हो वही परम सुकर्म्म है यह सहज में सिद्ध हो सकता है और इसे छोड़ कर कर्म्म मात्र इस लोक से सम्बन्ध रखते हैं और वह परलोक का विषय है तो अब मेरी ऊपर कही हुई बातें स्मरण कीजिये कि अन्त में फिर वही बड़ा वक्र झगड़े वाला दोष इन दोनों बातों में बना रहा परन्तु मेरे प्यारे वह झगड़ा इस प्रेम में नहीं है, यह मेरी सिद्ध तीन बातें स्मरण रख कर इनका आर्ष सूत्र से विशेष आदर करो पहिली यह कि प्रेम के हेतु प्रमाणान्तर मत खोजो तुम्हारा परम अमृत मय प्रेम आप सौ प्रमाणों का एक प्रमाण है इससे वेदादिक के प्रमाण की कुछ

श्री कृष्णाय नमः ।

अष्टपदी ।

हरिरिह व्रजयुवतीशतसंगे ।

विलसति करिणीगणवृतवारणवर इव रतिपतिमानभंगे ॥ १ ॥

अथ अष्टपदी भावार्थ। दक्षिण भाग स्वरूप श्री स्वामिनी जी के साक्षात् हृदय श्री गुसांई जी वसन्तकेलि वर्णन करत हैं। तहां प्रथम पद को अर्थ। यहां हरि कामदेव के मान भङ्ग करिवेवारे अनेक व्रजभक्तन के सङ्ग हथिनीगण सों घिरे बड़े हाथी के भांति विलास करत हैं। यहां प्रथम हरि-शब्द दियो सो सब दुःखन को हरै सो हरि सो यहां व्रजभक्तन को विरह दुःख भयो है ताके आप हरिवेवारे हैं याही सों श्री गोसाईं जी अपने ग्रन्थ हू पर प्रथम श्री हरिः लिखत हैं और अनेकार्थ कोष सों हरि वसन्त कोहू बोधक है सो यह प्रथम वसन्तकेलि को वर्णन है तासों हरिपद दियो सो वसन्तारम्भ सों गहिरो होरी तक के खेल वसन्ताङ्ग हैं और डोलाष्टक को खेल प्रगट है सो वसन्ताङ्ग खेल की मुखिया श्री चन्द्रावली जी हैं तासों श्री गुसांई जी को कानि सों अष्टपदी गाइवे सों आप इन खेलन को अङ्गीकार करत हैं। अथवा या चालीस दिन के खेल में आठ आठ दिन के चार खेल चार स्वामिनिन के हैं और आठ दिन को खेल सब को प्रगट है तासों चार अठवारे ताईं अष्टपदी गावत हैं। अब दूसरो अर्थ कहत हैं हथिनीन सों घिरे बड़े हाथी ऐसे कामदेव के मान भङ्ग करिवे कों हरि विहरत हैं सो हरिशब्द सिंह वाचक है यासों हरि कह्यो। यहां शतशब्द अनेक वाचक जाननो। वसन्त कामदेव को मित्र है सो यहां यह विशेषता जताई कि काम को मान भङ्ग आप ने वाके उदय ही समय में कियो। अथवा रति के समय विपरीत रति सों पति के मान अर्थात् स्मरदर्प भङ्ग करिवेवारे युवति यूथ शत सों आप अकेले विहार करत हैं यासों पुरुषोत्तमता जताई ॥ १ ॥

विभ्रमसम्भ्रमलोलविलोचनसूचितसञ्चितभावं ।

अपेक्षा नहीं क्योंकि प्रमाणों से जो तुम्हारे चित्त में भक्ति उत्पन्न ।
शीघ्र हो छिन्न जायगी पर जो तुम्हारे चित्त के स्वतः प्रमाण से उत्
वह कभी न छिनेगी दूसरी बात यह है कि आस्तिकपना नाहीं
होओ क्योंकि तुम नास्तिक बन के ज्यों ज्यों तत्वों का बल खोजोगे
उसको अपार महिमा प्रगट और चित्त में खचित होती जायगी।
सरे यह कि भक्ति विषय में वादी को उत्तर देने का बल मत रक्
वादी कि भाई परा मूर्खता पर मोह जो कहो सो हमारा प्रेम है
संसार में मोह करना मूर्खता है उसमें हम तो बिन देखे पर प्रेम
और उसके पीछे सब कुछ छोड़ते हैं तो इससे बढ़ के कोई मूर्खता भं
नहीं तो अब बतलाइये वह झगड़ा कहां रहा हम लोग तो अप
आप मूर्ख बनगए सब झगड़े एक मूर्ख बनने से निवृत्त हुए परमा
प्राप्त हुई तो इसी दशा में हम कहेंगे कि भक्ति सब से बड़ी है क्यों
को इसे मान कर फिर किसी से सिर खाली करना न बचा, अैन
झगड़े निवृत्त हैं जो कुछ भला या बुरा मानते हैं उसका कोई
साथी नहीं जो सब झूठ है तो भी हमारा एक अच्छा व्यसन है क्यों
क्तियों से लोगों ने सिद्ध कर दिया है कि संसार के सब आचरण
क्योंकि उनका परिणाम शून्य है तो सब जहां और झख मारते हैं ह
झख मारते हैं तुम लोगों को मूर्ख समझते हो लोग तुम्हें, छुट्टी हं
पर इसमें भी एक बात है वह न भूलना कि भक्ति करके फिर कभी भू
अन्य साधन का नाम न लेना और जो कहो कि इसमें क्या प्रमाण
तुम भगवान को अमुक ही रूप में मानते हो इसका उत्तर इतनाई
जैसे हमारे इस रूप मानने में प्रमाण नहीं वैसेही न मानने में क्या !
है और बाधक क्या है यदि हम उसको डोरी वा लेखनी सा भी मानें तं
उसका बाधक क्या देते हो वह सर्व्व स्वरूप है तो यह भी उसमें सम्भव

तुम और कोई प्रमाण मत खोजो तुम्हारा प्रेम आप लाख प्रमाण
एक प्रमाण है, उसके हो, निश्चय रक्खो कि ये शास्त्र लोक कर्म ज्ञान
भी काम न आवेंगे केवल शुद्ध प्रेम तुम्हारा साथी है क्योंकि यदि ईश्वर
वस्तु है तो निस्सन्देह मतों के झगड़े स्वरों का विचार तत्वोंका विचार ल
भेद वा आग में घी डालने का विषय कभी नहीं है पर केवल शुद्ध प्रेम ।

श्री कृष्णायनमः ।

अष्टपदी ।

हरिरिह व्रजयुवतीशतसंगे ।

विलसति करिणीगणवृतवारणवरइव रतिपतिमानभंगे ॥ १ ॥

अथ अष्टपदी भावार्थ । दक्षिण भाग स्वरूप श्री स्वामिनी जी के साक्षात् हृदय श्री गुसांईं जी वसन्तकेलि वर्णन करत हैं । तहां प्रथम पद को अर्थ । यहां हरि कामदेव के मान भङ्ग करिवेवारे अनेक व्रजभक्तन के सङ्ग हस्तिनीगण सों घिरे बड़े हाथी के भांति विलास करत हैं । यहां प्रथम हरिशब्द दियो सो सब दुःखन को हरै सो हरि सो यहां व्रजभक्तन को विरह दुःख भयो है ताको आप हरिवेवारे हैं याही सों श्री गोसांईं जी अपने ग्रन्थ के पर प्रथम श्री हरिः लिखत हैं और अनेकार्थ कोष में हरि वसन्त कोहू वाचक है सो यह प्रथम वसन्तकेलि को वर्णन है तासों हरिपद दियो सो वसन्तारम्भ सों लहिरो होरी तक के खेल अन्तरङ्ग हैं और दोनाटक को खेल प्रगट है सो अन्तरङ्ग खेल की मुखिया श्री चन्द्रावली जी हैं तासों श्री गुसांईं जी को कानि सों अष्टपदी गाइवे सों आप इन खेलन को अङ्गीकार करत हैं । अथवा या चालीस दिन के खेल में आठ आठ दिन के चार खेल चार स्वामिनिन के हैं और आठ दिन को खेल सब को प्रगट है तासों चार अठवारे तांईं अष्टपदी गावत हैं । अब दूसरो अर्थ कहत हैं [हथिनीन सों घिरे बड़े हाथी ऐसे कामदेव के मान भङ्ग करिवे को हरि विहरत हैं सो हरिशब्द सिंह वाचक है यासों हरि कह्यो । यहां शतशब्द अनेक वाचक जाननो । वसन्त कामदेव को मित्र है सो यहां यह विशेषता जताई कि काम को मान भङ्ग आप ने वाके उदय ही समय में कियो । अथवा रति के साथ विपरीत रीति सों पति के मान अर्थात् रमणदर्प भङ्ग करिवेवारे युवति यूथ शत सों आप अकेले विहार करत हैं यासों पुरुषोत्तमता जताई ॥ १ ॥

विभ्रमसम्भ्रमलोलविलोचनसूचितसखिरसभावं ।

कापिदृगञ्चलकुवलयनिकरैरर्चति तद्गतरागं ॥

प्रभु की रमणीयता दाक्षिण्य देखि के विस्मय सों आकुल भय सों सूचित किये हैं अनेक संचित भाव जिन नें वा अनेक स्त्रीन कौं विभ्रम सों चञ्चल नेत्र करि के सूचित किये हैं अनेक संचित भाव जिन सुलपति श्री लला कों कोऊ अपने नेत्र प्रान रूपी कुमुद के फूलनि सं स्वार पूजित है अर्थात् प्रभु कों अपन भई बारम्बार अवलोकति है। य चित शब्द सों और दिन के अनेक मनोरथ होनी में पूरे होत हैं यह और निकर शब्द सों बारम्बार दृष्टिपात प्रगट कियो। यह श्री राधा सों सखो को वर्णन है याही सों श्रीठाकुर जी की पुजापूर्व्वक रमण को वर्ण गानगारी इत्यादि सों बारम्बार सुन्दर शब्द करिवेवारे को नाम क अथवा सदाई सुन्दर मधुर बोलिवेवारे श्रीठाकुर जी हैं। दृष्टि और नाम अञ्चलगत सुच कुवलय निकर यह जाननो ॥ २ ॥

स्मितरुचिरुचिरतराननकमलमुदीच्य हरे रतिकन्दं
चुम्बति कापि नितम्बवती करतलधृतचिवुकममन्दं ।

सुसिक्यानि कौं शोभा सों अत्यन्त शोभित श्री हरि को सुखकमल को मूल देखि कें अपनो हथेरी पै आप की अमन्द चिवुक धारण करिकै नितम्बवती चुम्बन करति है। यहां नितम्बवती शब्द सों पूर्ण यौवनात हाथ पर चिवुक धरिवे सों प्रेमाधिक्य जनायो। यह श्री ललिता की केलि

उद्भटभावविभावितचापलमोहननिधुवनशाली ।
रमयति कामपि पीनघनस्तनविलुलितनववनमाली ॥

अत्यन्त बढ़े भये भाव की भावना करन सों चञ्चल अर्थात् लोलुप नि नामक निकुञ्ज विशेष के शोभा बढ़ाइवेवारे मोहन अथवा भाव सों मो करिवेवारे श्री लला सेर कैसे कि पिया के घन नाम कठिन स्तन के आनि सों मरगजी होय रही है माला जाकी ऐसे प्रभु कों कोऊ रमण करावै यह श्री विशाखा जी की केलि है। यहां स्पष्ट विपरीति कथन है रसिक अ विषय अदूषित हृदय भगवदीय जन अनुभव अर्थ सों करेंगे ॥ ४ ॥

रिरंसुतलनिन्द्रमभिवीच्य हरिं सविलासं ।
कापि बलादकरोदयं कुतुकेन सहासं ॥ ५ ॥

अपने आलिङ्गन करन सों विलासयुक्त श्री हरि कों देखिकैं कोऊ आप तो हटि गई और दूसरी कों बस करि कैं कौतुक करत भई हंसत हंसत आगे करि दियो। यामें दोय भाव और दोय सखी को वेस वर्णन करो। प्रथम तो दोऊ सखी अंतरंगिनी हैं तासों पहिली ने सुखानुभव करि कै अपनी सखी कों वा सुख के अनुभव करिवे कों आगे करि दियो। दूसरे यह कि पहली सखी दूसरी के सामने प्रभु के आलिङ्गन करिवे सों लज्जित होय कैं वाकों आगे करति भई। यहां पहली श्री चम्पकलता जी और दूसरी श्री भामा जी हैं।५।

कामपि नीवीबन्धविमोक्षससंभ्रमलज्जितनयनां ।

रमयति सं प्रति सुमुखि बलादुपकरतलधृतनिजवसनां ॥६॥

नीवी के बन्ध खोलिवे सों घबराये और लज्जित नेत्रवारी जाने बस करि कैं अपने वस्त्र अर्थात् नीवी पकरि रक्खो है वाकों अब अरी सुमुखी आप रमावत हैं। वा जब वाने अपने वस्त्र पकरि लिये तब वासों बस करि कैं आप रमण करत हैं। वा जब नीवी खुलिगई तासों आप को वस्त्र खींचिकै जाने पकरि राख्यो है तासों आप विहरत हैं। यह श्री इंदुलेखा जी की केलि है ॥६॥

प्रियपरिरम्भविपुलपुलकावलिद्विगुणितसुभगशरीरा ।

उद्गायति सखि कापि समं सह हरिणा रतिरणधीरा ॥७॥

प्यारे के आलिंगन सों बारंबार रोमाञ्चित होन सों द्विगुण होय रह्यो है सुन्दर शरीर जाको ऐसी कोऊ रतिरन में धीर अरी सखी श्री हरि के साथ गीत गावति है। यहां उत् गायति सों ऊंचे गान जनायो नाम सात्विक भाव उदयानंतर आनन्द विशेष प्राप्ति सों ऊंचे गावति हैं। यह श्री चन्द्रभागा जी की केलि है ॥७॥

विभ्रमसंभ्रमगलदञ्चलमलयाञ्चित मंग-मुदारं ।

पश्यति सस्मितमतिविस्मितमनसा सुदृशा सविकारं ॥८॥

विभ्रम नाम रमण शोभता सों विशेष भ्रम नाम आश्चर्य वा कौतुक के संभ्रम नाम आकुलता सों खसि परे है वस्त्र जाके तासों सों प्रकट भये हैं चन्दन सों चर्चित उदार अंग जाके ऐसे श्री कृष्ण कों सस्मित नाम कौतुक हास्ययुक्त मति सों आश्चर्य किये मन सों और नेत्रन सों विकारयुक्त कोऊ देखति है।

अथवा इनि बेचारे प्रभु की अति विक्षिप्त मन सों और सुन्दर दृष्टि काम विकार प्रगट्यो है अंग में जाके ऐसे श्री कृष्ण की कोऊ अलक्ष रूप हृदय और नैन सों अर्थात अन्तर बाहिर दोऊ स्थान में देखति श्री गुसाईं जी ने अपनो स्वरूप भाव वर्णन कीनो है ताही सों यामें कापि, नहीं दियो और सब पदन सों याको भाव याही तें विशेष जो अंग भाव को जानो और श्री प्रभु जी देखत हैं यह अर्थ करो तो हैं। तहां जैसे अपनो नाम न कीनो वैसे ही प्यारे हू को नाम न लो और बाह्याभ्यन्तर दर्शन सकल तराग अति विक्षिप्त इत्यादि पद सों अ शेष अधिकारता जनाई थोरे कहिबे में रसिकजन बहुत अनुभव करैं

अलति कयापि समं मकरग्रह मलसतरं सविलासं

श्रीराधे तव पूरयतु मनोरथ मुदितमिदं हरिरासं

सखी सों सखी कहत है श्री प्रभु जो कोई के अर्थात् श्री स्वामि के साथ हाथ में हाथ दिये आलसयुक्त धीरे धीरे विलास परिहासादि चलत हैं सो हे श्री राधे तुम्हारे मनोरथ या उदित नाम प्रकटित श्री रास में पूर्ण होयं। आठ सखिन के " काचित् करांबुजं शौरेः " याही छिपि छिपि भाव जैसे पञ्चाध्यायी में कहे हैं वैसे ही यहां श्री गुसाईं आज्ञा कीने हैं सो यहां केवल अनन्य रसिकजन के हेतु स्पष्ट कियो है पद में यद्यपि सखी की उक्ति सखी सों है पर छेले पद में सखी आन मग्न होगई है तासों आधी तुक तो अपनो सखी सों कह्यो और आ स्वामिनी जो सों कह्यो ॥ ८ ॥

इति श्री वल्लभीय हरिचन्द्र लिखित अष्टपदी की भाषा में भावा

वसन्तरागेरूपक ताले गीयते।

ललितलवङ्गलतापरिशीलनकोमलमलयसमीरे ।

मधुकरनिकरकरंबितकोकिलकूजितकुंजकुटीरे ॥

विहरति हरिरिह सरसवसंते ।

नृत्यति युवतिजनेनसमंसखि विरहिजनस्यदुरंते ।

उन्मदमदनमनोरथपथिकवधूजनजनितविलापे ।

अलिकुलसंकुलकुसुमसमूहनिराकुलबकुलकलापे ॥ २ ॥
मृगमदसौरभरभसवशंवदनवदलमालतमाले ।
युवजनहृदयविदारणमनसिजनखरुचिकिंशुकजाले ॥३॥
मदनमहीपतिकनकदण्डरुचिकेशरकुसुमविकासे ।
मिलितशिलीमुखपाटलिपटलकृतस्मरतूणविलासे ॥ ४ ॥
विगलितलज्जितजगदवलोकनतरुणकरुणकृतहासे ।
विरहिनिकृन्तनकुन्तमुखाकृतिकेतकिदंतुरिताशे ॥ ५ ॥
माधविकापरिमललिते नवमालतिजातिसुगन्धौ ।
मुनिमनसामपिमोहनकारिणि तरुणाकारणबन्धौ ॥ ६ ॥
स्फुरदतिमुक्तलतापरिरंभणमुकुलितपुलकितचूते ।
वृन्दावनविपिनेपरिसरपरिगतयमुनाजलपूते ॥ ७ ॥
श्रीजयदेवभणितमिदमुदयतिहरिचरणस्मृतिसारं ।
सरसवसन्तसमयवनवर्णनमनुगतमदनविकारं ॥ ८ ॥

इदं श्रीहरिरायजी कृत अष्टपदी द्वय । बसंत रागेण गीयते ।

अवलोकय सखि मंजुलकुंजे । रमयति गोकुलरमणीरिह गोकुलपति रतिकलकोकिलपुंजे ॥ १ ॥ ध्रु०

माधविकालतिकारतिकारिणि रागिणि रुचिरवसंते ।
विविध पवन हत विरह विधूनन मदन नृपति सामंते ॥ २ ॥

किंशुक कुसुम समीक्षित दयिताधररसपान विनोदे ।
मधुप समाहृत बकुल मुकुलमधु विकसित सरसामोदे ॥ ३ ॥

नव नव मंजु रसाल मंजरी बोधित युव जनमदने ।
दयिता रदन समंध्वनि मुकुलितकुंद चिरस्मित वदने ॥ ४ ॥

युवती जनमानसगत मान महागज मद मृगराजे ।

कोकिल कुल कूजित विरहानल तापित पथिक स
विगत पराग कुसुम सम्बन्धि सदागति वासित
कुसुमित किंशुक कैतव विसृत विरहि दहन वन दा
पल्लव कुसुम समेत विपिन विस्मारित युव जन
मदन दहन दीपन विद्रावित विरहि दीन जन दी
जगति समान शीततापित रवि विरचित रुचिराव
वनिता जन संयोग सेविजन जनितानंदयुभारे
इति हितकारि वचन मति मानिनि मानय गोकुल
कुरुरति मतिशय करुणारसव ति वितर मतिं हरिदासि

धन्य श्री रागे ।

विलसति हरिरिह सरसहोलिकासमये रमणीसंगे
गूढ़भावसमुदयसंवर्द्धितहृदयसमुदितानंगे ॥ १ ॥
संयोजयतिदृशादृशमादौ हृदि भावयतिविलासं
मिश्रवचनशतेन विरचयति युवतीजनपरिहासं ॥
स्पृशति कपोलौ पाणियुगेन करोति कुंकुमालेपं ।
निजरमणे लघुताकरणे विदधाति समय संक्षेपं ॥ ३
तालमृदंग विविधवादित्रसुघोषानंदितघोषं ।
सपदि यशोकुरुते निजगोकुलजनमखिलं रसपोषं ॥
सरसवेणुनादेनहृदयमपितनुतेनिर्मलभावं ।
मुरलिकयानुकरोति कदापि मधुरतरकोकिलरावं ॥ ५
नृत्यति मनमिगरतिभावेनमयूरवद्विलसमदं ।
... ... ति गवारमनयमपि निजपद भावनगर्दं ॥ ६
... ... मरमयति कुंकुम रेणु परीत परागं ।
सौरभयुत धूमनिग्रहाविदित दपविभागं ॥ ७

चन्दननीर मेक सरसीकृत युवतीयुवजनदेहं ।
निजसुकुमारतनोरनुरूपं कुरुते बिस मितगेहं ॥ ८ ॥
चति रभसेन कदाचिदुपर्य्यपि पतति युवतिगतयूथे ।
दशविध रतिपथ मदनमनोरथसमुचितरुचिरवरूथे ॥ ९ ॥
श्रीवल्लभपदयुगकृपयैव दृदा पश्यति हरिदासे ।
तव पूरयतु चिन्तितं सकलं सखि सामयिकविलासे ॥१०॥

श्रीश्री वल्लभाचार्य्यकृत चतुश्श्लोकी ।

नमः प्रेमपथप्रवर्त्तकेभ्यः ।

सर्व्वदा सर्व्वभावेन भजनीयो व्रजाधिपः ।
स्वस्यायमेव धर्म्मोहि नान्यः क्वापि कथं च न ॥ १ ॥

संसार के जीवों को कर्म्मजाल में बंधे देख कर आप परम कारुणिक श्री
वल्लभ प्रभु जी अन्य साधनों की निवृत्ति के हेतु परम अमृत स्वरूप वाक्य श्री
मुख से आज्ञा करते हैं सर्व्वदेति—सब समय में दुःख सुख में खाते पीते उठते
बैठते सब क्षण में सर्व्व भाव से व्रजाधिप श्री राधारमण ही का भजन करना
क्योंकि भजनीय वही है और कोई प्रेम का बदला नहीं दे सकता और भज-
ना भी सर्व्वभाव से करना अर्थात् संसार में जितने भाव हैं ईश्वरभाव गुरु-
भाव मित्रभाव पतिभाव इत्यादि पृथक् भाव जिस में जिस से हो सब को स-
मेट कर सब भाव से उन्हीं का भजन करना रीझना भी उन्हीं पर खीझना
भी उन्हीं पर मानना भी उन्हीं से लड़ना तो उन्हीं से जिसमें फिर और कहीं
कोई भाव न रह जाय केवल एक अवलम्ब श्री कृष्ण ही हों इस पर आप
आज्ञा करते हैं कि जो लोग हमारे हैं उन का नियत एक यही धर्म्म है दूस-
रा कोई धर्म्म कदापि किसी भांति से नहीं है अर्थात् कर्म्ममार्ग प्रवर्त्तकः इस
नाम से कोई यज्ञादिकों को ही मुख्य धर्म्म मान कर इसे छोड़ उधर में प्रवृत्त
हो कर भ्रान्त न हो जायं इस हेतु आप मुक्त कंठ से कहते हैं कि हमारे
लोगों का तो मुख्य धर्म्म यही है कि सर्व्वदा सर्व्वभाव से केवल श्री कृष्ण ही
का भजन करना ॥ १ ॥

एवं सर्व्वं स्वतः स्व भगवानेव करिष्यति ।
प्रभुस्सर्व्वसमर्थोहि ततो निश्चिन्ततां व्रजेत्

अब जो कोई शंका करे कि हम सब छोड़ कर एक श्री कृष्ण हीं
तो हमारा योग क्षेम नित्यदेव कर्म्मादिक सब कैसे सिद्ध होगा इसकी
कारण के हेतु आप आज्ञा करते हैं कि इन सब बातों की चिन्ता
जैसा पूर्व में कहा है वैसा ही करो फिर तुम्हारा जो कुछ कर्त्तव्य
सब आप कर लेगा करने न करने अन्यथा करने में और जो सब में
करने समर्थ है इससे आप निश्चिन्त होजाना अवश्य है उसके भरोसे
है तो वह अन्तर्यामी है आप जानता है सब करलेगा गीता में उसकी
है कि जो लोग अनन्य हो कर मुझे भजते हैं उनका योगक्षेम मैं वह
हूं इससे लोक वेद दोनो से निश्चिन्त होकर केवल भजन ही करना

यदि श्रीगोकुलाधीशो धृतस्सर्वात्मना हृदि ।
ततःकिमपरं ब्रूहि लौकिकैर्वैदिकैरपि ॥ ३

जो यह शंका करो कि हम लौकिक वैदिक कर्म्म छोड़दें तो पतित न हो
उस पर आप आज्ञा करते हैं कि जो श्री गोकुलाधीश्वर सर्व्वभाव
चित्तता से हृदय में धारण किए गए हैं तो बताओ फिर और किसी लौकिक
और वैदिक कर्म्मों से क्या ? क्योंकि ये तो दोनों रीति से व्यर्थ पड़ते हैं।
कृष्ण की भक्ति नहीं है तो ये कर्म्म किस काम के क्योंकि ये परमानन्द
कृष्ण वियोग हानमें समर्थ नहीं हैं और जो श्री कृष्ण की भक्ति है तब ये
काम के क्योंकि उन को फिर और कोई कर्म्म अवशिष्ट नहीं है इस से सब
कार से अनन्य हो कर सर्व्वान्तर्यामी एक श्री कृष्ण ही का भजन करना

तस्मात् सर्व्वात्मना नित्यं गोकुलेश्वरपादयोः ।
स्मरणं कीर्त्तनं चापि न त्याज्यमिति मे मतिः ॥ ४

इस से सर्व्व भाव से आत्मा मन बुद्धि प्राण देह और इंद्रिय सब से
प्रतिक्षण श्री गोकुलेश्वर युगल चरणारविन्द का स्मरण और कीर्त्तन
नहीं छोड़ना यह भी महा प्रभु जी आज्ञा करते हैं कि हमारी मति है
र्थात् जो श्री महा प्रभु जी के मतावलम्बि गन हैं उन को सब साधन
कर एक श्री कृष्ण ही भजनीय हैं यह आप ने अपना मत दिखाया ॥ ४ ॥

इति श्री वल्लभाचार्य्य विरचिता चतुश्श्लोकी समाप्ता ।

मानस-भावप्रकाश

अर्थात्

श्री १०८ गोस्वामी तुलसीदास कृत मानस रामचरित भावमरपन्न अपूर्व टीका।

रामायण के प्रेमियों को बहुत दिनों से इस टीका के दर्शन की अभिलाषा थी। पर आजतक ऐसा समय न पाया कि यह मुद्रित अभिलाषियों की अभिलाषा पूरी हो। ईश्वर की कृपा से अब मानस के लिए मैं ने यह किया है और सटिप्पण छापकर प्रस्तुत भी कर दिया है कि पाठक वृन्द इस के पाठ से आनन्द प्राप्त करेंगे।

मानस भावप्रकाश बालकांड — ३)

अयोध्या — २)

आरण्य कांड से उत्तर कांड तक — ४)

रामायण परिचर्य्या परिशिष्ट प्रकाश

अर्थात् महात्मा काष्ठजिह्वा स्वामी, काशी के महाराजा—ईश्वरी नारायण सिंह और सीतारामीय हरिहरप्रसाद तीनों महान पुरुष कृत य साथ तीन टीका। यदि रामायण का यथार्थ तत्व जानना चाहो तो एक उपरोक्त तीन टीकाओं का दर्शन कर लो——

बाल और अजोध्या कांड — ४)

आरण्य, किष्किन्धा, सुन्दर, लंका, और उत्तर कांड — ४) रु०

स्वामी तुलसीदास कृत

कवित्तरामायण और हनुमानबाहुक

सीतारामीय महात्मा हरिहरप्रसाद कृत टीका

और बाबू रामदीन सिंह कृत टिप्पणी सहित।

इस ग्रंथ की जितनी टीका आजतक बनी हैं उन सब से यह उत्तम है नहीं; पाठकवृन्द विचारेंगे। इस के सिवाय कागज इस के मोटे हैं। अक्षर बंबई के पुष्ट और सुन्दर हैं। छापा उत्तम और जिल्द भी बंधी है।

दाम एक रुपया।

मूल कवित्तरामायण पाठांतर आदि के सहित दाम ।/)

मूल हनुमानबाहुक दाम /)

मैनेजर खड्गविलास प्रेस

बांकीपुर।

श्री रामलीला।

अतिरोचक गद्य और पद्य में श्री राम जी की

बाललीला।

भारत भूषण भारतेन्दु श्री हरिश्चन्द्र कृत.

जिस को हिन्दी भाषा के प्रेमी तथा रसिकजनों के मनोविलास

के लिये चत्रियपत्रिका सम्पादक

म० कु० बाबू रामदीन सिंह ने

प्रकाशित किया।

पटना—"खड्गविलास" प्रेस बांकीपुर।

चंडीप्रसाद सिंह ने मुद्रित किया।

१८०४

हरिश्चन्द्राब्द २०

प्रथम बार] [दाम /) आना

पद—हरि लीला सब विधि सुखदाई। कहत सुनत देखत जिअ आनत देति भगति अधिकाई॥ प्रेम बढ़त अघ नसत पुन्यराति जिय में उपजत आई। यांही सों हरिचन्द करत स्तुति नित हरि चरित बड़ाई॥ १॥

गद्य—आहा! भगवान की लीला भी कैसी दिव्य और धन्य पदार्थ है कि कलिमल ग्रसित जीवों को सहज ही प्रभु की ओर झुका देती है और कैसा भी विषयी-जीव क्यों न हो दो घड़ी तो परमेश्वर के रंग में रंग ही देती है। विशेष कर के धन्य हम लोगों के भाग्य कि श्रीमान् महाराज काशिराज भक्त शिरोमणि की कृपा से सब लीला विधिपूर्वक देखने में आती है। पहले मङ्गलाचरण होकर रावण का जन्म होता है फिर देवगण की स्तुति और वैकुण्ठ और क्षीरसागर की झांकी से नेत्र कृतार्थ होते हैं। फिर तो आनन्द का समुद्र श्री रामजन्म का महोत्सव है जो देखने ही से सम्बन्ध रखता है कहने की बात नहीं है।

कुलिस रेख तुव चरन हू, जो मम पाप पहार ॥४॥

कवि को उक्ति

मो ऐसे को तारिवो, सहज न दीनदयाल ।
आहन पाहन वज्रहू, सों हम कठिन कृपाल ॥५॥
परमे मुक्ति हू सों फलद, तुअ पद पदुम मुरारि ।
यहे जतावन हेत तुम, तारी गौतम नारि ॥६॥
एहो दीनदयाल यह, अति अचरज की बात ।
तो पद सरस समुद्र लहि, पाहन हूं तरि जात ॥७॥
कहा पखानहुं ते कठिन, मो हियरो रघुवीर ।
जो मम तारन में परी, प्रभु पर इतनी भीर ॥८॥
प्रभु उदार पद परसि जड़, पाहन हूं तरि जाय ।
हम चैतन्य कहाइ क्यों, तरत न परत लखाय ॥९॥
अति कठोर निज हिय कियो, पाहन सों हम हाल ।
जामें कबहूं मम सिरहू, पद रज देहि दयाल ॥१०॥
हमहूं कछु लघु सिल न जो, सहजहिं दीनी तार ।
लगि हैं इत कछु वार प्रभु, हम तौ पाप पहार ॥११॥

फिर श्री रामचन्द्र जी सानुज जनक नगर देखने जाते हैं पुरनारियों के मन नैन देखतेही लुभाते हैं ।

कवित्त—कोऊ कहै यहै रघुराज के कुंअर दोऊ

कोऊ ठाढ़ी एक टक देखै रूप घर में । के
खिरकीन कोऊ हाट बाट धाई फिरै बावरी
पूछै गए कौनसी डगर में ॥ हरीचन्द झूमे म
वारी दृग मारी कोऊ जकी सी थकी सी को
खरी एकै थर में । लहर चढ़ी सी कोऊ ज
मढ़ी सी भई कहर पड़ी है आजु जनक सहर में ॥

। फ़िर श्री राम जी फुलवारी में फूल लेने जा
हैं । उस समय फुलवारी की रचना, कुञ्जों
बनावट, कल के मोरों का नाचना, और चिड़ि
का चहकना यह सब देखने ही के योग्य है ।

इतने में एक सखी जो कुञ्जों में गई तो वह
राम रूप देखकर बावली हो गई । जब वहां
लौटकर आई तो और सखियां पूछने लगीं ।

कवित्त—कहा भयो कैसी है बतावै किन दे
दसा छन हीं में काहे बुधि सबही नसानी सी
अबहीं तो हंसति हंसति गई कुञ्जन में कह
तिन देख्यो जासों कै रही हिरानी सी ॥ हरीचन्द
... कछु पढ़ि कियो टोना लागी ऊपरी बलाय
है विख सानी सी । आनन्द समानी सी
सों भुलानी सी लुभानी सी दिवानी सी
सी बिहानी सी ॥ ३३ ॥

सवैया—जाहु न जाहु न कुञ्जन मैं उत नांहि तौ नाहक लाजहि खोलि हौ। देखि जो लैहौ कुमारन कों अवहीं झट लोक की लीकहि छोलि हौ ॥ भूलि है देह दसा सगरी हरिचन्द कछू को कछू मुख बोलि हौ। लागि हैं लोग तमासे हहा बलि वावरी सी ह्वै वजारन डोलि हौ ॥ १४ ॥

कवित्त—जाहु न सयानी उत बिरछन मांहि कोऊ कहा जानै कहा दोय झलक अमन्द है। देखत ही मोहि मन जात नसै सुधि बुधि रोम रोम छकै ऐसो रूप सुख कन्द है॥ हरीचन्द देवता है सिद्ध है छलावा है सहावा है कि रत्न है कि कीनो दृष्टि बन्द है। जादू है कि जन्त्र है कि मन्त्र है कि तन्त्र है कि तेज है कि तारा है कि रवि है कि चन्द है॥ १५ ॥

वहां से दूसरे दिन श्रीरामचन्द्र धनुप यज्ञ में आते हैं और उन का सुन्दर रूप देखकर नर नारी सब यही मनाते हैं।

कवित्त—आए हैं सवन मन भाए रघुराज दोऊ जिन्हें देखि धीर नाहिं हिअ मांहि धरि जाय जनक दुलारी जोग दूलह सखी हैं एई ईस करें

राउ आज प्रनहिं बिसरि जाय ॥ हरीचन्द चा
जौन होइ एई सिअ बरें जो जो होई बाव
बिधाता करे मरि जाय । चाटि जाहिं घुन या
अबहीं निगोरो बटपारो दई मारो धनु आगि
लगे जरि जाय ॥ १६ ॥

जब धनुष के पास श्रीरामजी जाते हैं तब
जानकी जी अपने चित्त में कहती हैं

सवैया—मो मन में निहचे सजनी यह तातहु
ते प्रन मेरो महा है सुन्दर स्याम सुजान सिरो-
मनि मो हिअ में रमि राम रहा है रीत पति-
व्रत राखि चुकी मुख भाखि चुकी अपुनो दुलहा
है चापि निगोड़ो अबै जरि जाहु चढ़ो तो कहा
न चढ़ो तो कहा है ॥ १७ ॥

लोगों को चिन्तित देख श्री रामचन्द्र जी
धनुष के पास जाते हैं और उठाकर दो टुकड़े
करके पृथ्वी पर डाल देते हैं। बाजे और गीत
के साथ जय जय की धुन अकास तक छा
जाती है।

कवित्त—जनक निरासा दुष्ट नृपन की आसा
की उदासी सोक रनिवास मेनु के। बीरन
गर्व भरे पर सब ... ...

कौसिक के तनु के ॥ हरीचन्द भय देव मन के
पुहुमि भार विकल बिचार सबै पुरनारी जनु के ।
संका मिथिलेस की सिया के उर सूल सबै तोरि
डारे रामचन्द्र साथै हर धनु के ॥ १८ ॥

धनुष टूटते ही जगत जननी जानकी जी
जयमाल लेकर भगवान को पहिनाने चलीं उस
की शोभा कैसे कही जाय ।

कवित्त—चन्दन की डारन में कुसुमित लता
कैधौं पिखराज साखन मैं नव रत्न जाल है ।
चन्द्र की मरीचिन मैं इन्द्रधनु सोहै कै कनक
जुग कामी मांधि रसन रसाल है ॥ हरीचन्द जुगलि
मृनाल में कुमुद बलि मूंगा की छरी मैं हार
गूथ्यो हीर लाल है । कैधौं जुग हंस एकै मुक्त-
माल लीने कै सिया जू करन महं चारु जयमाल
है ॥ १९ ॥

सवैया—टूटत ही धनु के मिलि मङ्गल-गाइ उठीं
सगरी पुरबाला । लै चलीं सीतहि राम के पास
सबै मिलि मन्द मराल की चाला ॥ देखतहीं प्रिय
को हरिचन्द महा मुद पूरित गात रसाला । प्यारी
ने आपुने प्रेम के जाल सी प्यारे के कण्ठ दई
जयमाला ॥ २० ॥

राउ आज प्रनहिं बिसरि जाय ॥ हरीचन्द चा
जौन होइ एई सिअ बरै जो जो होई। बाध
बिधाता करै मरि जाय । चाटि जाहिं घुन य
अबहीं निगोरो बटपारो दई मारो धनु अ
लगै जरि जाय ॥ १६ ॥

जब धनुष के पास श्रीरामजी जाते हैं
जानकी जी अपने चित्त में कहती हैं ।
सवैया—मो मन में निहचै सजनी यह
तें प्रन मेरो महा है । सुन्दर स्याम सुजान
नि मो हिअ में रमि राम रहा है ॥ रीत
व्रत राखि चुकी सुख भाखि चुकी अपुनो
है चापि निगोड़ो अबै जरि जाहु चढ़ो
न चढ़ो तो कहा है ॥ १७ ॥
लोगों को चिन्तित देख श्री रामच
धनुष के पास जाते हैं और उठाकर
करके पृथ्वी पर डाल देते हैं । बाजे
के साथ जय जय की धुन अकास
जाती है ।

कौसिक के तनु के ॥ हरीचन्द भय देव मन के पुहुमि भार विकल विचार सबै पुरनारी जनु के। संका मिथिलेस की सिया के उर सूल सबै तोरि डारे रामचन्द्र साथै हर धनु के ॥ १८ ॥

धनुष टूटते ही जगत जननी जानकी जी जयमाल लेकर भगवान को पहिनाने चली उस की शोभा कैसे कही जाय।

कवित्त—चन्दन की डारन मैं कुसुमित लता कैधौं पोखराज साखन मैं नव रत्न जाल है। चन्द्र की मरीचिन मैं इन्द्रधनु सोहै कै कनक जुग कामी माधि रसन रसाल है॥ हरीचन्द जुगलि मृनाल मैं कुमुद वलि मूगा की छरी मैं हार गूथ्यो हीरे लाल है। कैधौं जुग हंस एके मुक्त-माल लीने कै सिया जू करत महं चारु जयमाल है ॥ १९ ॥

सवैया—टूटत ही धनु के मिलि मङ्गल-गाइ उठीं सगरी पुरवाला। लै चलीं सीतहि राम के पास सबै मिलि मन्द मराल की चाला ॥ देखतहीं पिय को हरिचन्द महा मुद पूरित गात रसाला। प्यारी नें आपुने प्रेम के जाल सी प्यारे के कण्ठ दई जयमाला ॥ २० ॥

[illegible] धनुष भागे, ओर आनन्द ही आनन्द हो गया।
। फिर अयोध्या से बरात आई यहां जनक
में सब व्याह की तयारी हुई। वैसी ही मण
की रचना वैसाही सब सामान ॥
श्री रामचन्द्र दूलह बन कर चारो भाई व
शोभा से व्याहने चले। मार्ग में पुर वनिता उ
को देख कर आपुस में कहने लगीं।

कवित्त—एई अहैं दसरथ नन्द सुखकन्द ता
गौतम की नारी, इनहीं ने मारी राछसनि। कौ
शला के प्यारे अति सुंदर दुलारे सिया रू
रिझवारे प्रेमी जनन के प्रान धनि ॥ सुन्द
सरूप नैन बांके मद छाके हरिचन्द, घुघुराली
लटें लटकें अही सी बनि। कहा सबै उझकि
त्रिलोकी बार बार देखो नजरि न लागै नैन भरि
के निहारौ जनि ॥ २१ ॥

सवैया—एई हैं गौतम नारि के तारक कौसिक
के मख के रखवारे। कौसला नन्दन नैन अनन्दन
एई हैं प्रान जुड़ावन हारे ॥ प्रेमिन के सुखदेन
[illegible] के प्रानहुं ते अति प्यारे। राज
सिया जू के दूलह एई हैं राघव राज

॥ मण्डप में पहुंच कर सब लोग यथोस्थान बैठे। महाराज जनक ने यथा विधि कन्या दान दिया। जैजै की धुनि से पृथ्वी आकाश पूर्ण हो गया॥

सवैया—वेदन की विधि सों मिथिलेस करी सब व्याह की रीति सुहाई। मन्त्र पढ़ें हरिचन्द सबै द्विज गावत मङ्गल देव मनाई॥ हाथ में हाथ के मेलत हीं सब बोलि उठे मिलि लोग लुगाई। जोरी जियो दुलहा दुलहीं की बधाई बधाई बधाई बधाई॥२३॥

मौर लसै उत मौरी इतै उपमा इकहू नहिं जातु लही है। केसरी बागो बनो दोउ के इत चन्द्रिका चारु उतै कुलही है॥ मेंहदी पान महावर सों हरिचन्द महा सुखमा उलही है। लेहु सबै दृग को फल देखहु दूलह राम सिया दुलही है॥२४॥

विधि सों जब व्याह भयो दोउ को मनि मण्डप मङ्गल चांवर भे। मिथिलेस कुमारी भई दुलही नव दूलह सुन्दर सांवर भे॥ हरिचन्द महान अनन्द बढ्यो दोउ मोद भरे जब भांवर भे। तिनसों जग में कछू नाहिं बनी जे न ऐसी बनी पैं निछावर भे॥२५॥

फिर जेवनार हुई। सब लोग भोजन करने को

प्रेम प्रवीन राम अभिरामिनि सर्वस धन हरिचन्द अली की ॥ २७ ॥

अथ अयोध्या काण्ड की लीला प्रारम्भ हुई। करुणा रस का समुद्र उमड़ चला। श्री रामचन्द्र जी के बनवास का कैकेई ने बर मांगा भगवान बन सिधारे राजा दशरथ ने प्राण त्यागा॥

दोहा।

बिनु प्रीतम तृन सम तज्यो, तन राखी निज टेक।
हारे अरु सब प्रेम पथ, जीते दसरथ एक॥२८॥

नगर में चारो ओर श्री रामजी का विरह छा गया जहां सुनिए लोग यही कहते थे॥

पद—राम बिनु पुर बसिए केहि हेत। बिनु निकेत करुणानिकेत बिनु का सुख इत बसि लेत॥ देत साथ किन चलि हरि की उत जियत बादि बनि प्रेत। हरीचन्द उठि चलु अबहूं बन रे अचेत चित चेत॥ २९॥

रामचन्द्र बिनु अवध अंधेरो॥ ... न ... बिनु मोहि राज पाट घर घेरो॥ ... होत राजमन्दिर ... लखि सूनो सांझ ... अवध विरह सागर में का आवै

दुख क्रियो बसेरो। हरीचन्द करुनानिधि किसवे दे दरस दिन फेरो ॥ ३० ॥

राम बिनु बादहि बीतत सांसे। धिक सुत पितु परिवार राम जे बिनु हरि पद रति नासे ॥ धिक अव पुर बसिबो गर डारे झूठ मोह की फांसे। हरीचन्द तित चलु जित हरि मुख चन्द मरीचि प्रकासे ॥ ३१ ॥

राम बिनु अवध जाइ का करिए। रघुबर बिनु जीवन सों तो यह भल जो पहिलेहि मरिए ॥ क्यों उत नाहक जाइ दुसह बिरहानल मैं नित जरिए। हरीचन्द बन बसि नित हरि मुख देखत जगहि बिसरिए ॥ ३२ ॥

राम बिन सब जग लागत सूनो। देखत कनक भवन बिनु सिय पिय होत दुसह दुख दूनो ॥ लागत घोर मसान हु सों बढ़ि रघुपुर राम बिहूनो। कवि हरिचन्द जनम जीवन सब धिक धिक सियवर ऊनो ॥ ३३ ॥

जीवन जो रामहि संग बीते। बिनु हरि पद रति और बादि सब जनम गंवावत रीते ॥ नगर नारि धन धाम काम सब धिक धिक बिमुख जौन

सियप्रीतें। हरीचन्द चलु चित्रकूट भजु भव मृग बाधक चीतें ॥ ३४ ॥

फिर भरत जी अयोध्या आए और श्री राम चन्द्र जी को फेर लाने को वन गए। वहां उ की मिलन रहन बोलन सब मानों प्रेम क खराद थी। वास्तव में जो भरत जी ने किया स करना बहुत कठिन है। जब श्री रामचन्द्र जी न फिरे तब पांवरी ले कर भरत जी अयोध्य लौट आए। पादुका को राज पर बैठा कर आप नन्दिग्राम में बनचर्य्या से रहने लगे। यहां भरत जी की आरती कर के अयोध्या काण्ड की लीला पूर्ण हुई ॥

आरति।

आरति आरति हरन भरत की सीय राम पद पङ्कज रत की। धर्म्म धुरन्धर धीर बीर वर राम सीय जस सौरभ मधुकर सील सनेह निवाह निरत की ॥ परम प्रीति पग प्रगट लखावन निज गुन गन जन अघ बिद्रावन परतछ पीय मूरत की। बुद्धि विवेक ज्ञान गुन इक रस गुन सन्तन के सरवस हरीचन्द प्रभु विषय

सुंदरीतिलक।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र संग्रहीत।

जिसको हिन्दीभाषा के प्रेमी तथा रसिकजनों के मनोविलास के लिये क्षत्रिय-पत्रिका सम्पादक श्री म० कु० बाबू रामदीन सिंह ने प्रकाशित किया।

"खड्गविलास" प्रेस—बांकीपुर।
साहबप्रसाद सिंह ने मुद्रित किया।

१८९२ ई०

हरिश्चन्द्र सुदद ८,

प्रथम बार ८००]

तिलक न छापै, और यह विज्ञापन उस समय दिया गया कि
लखनऊ वो कानपुर में सुन्दरीतिलक छपी थी और उस पर
का नाम न रख कर प्रकाशक ने अपना ही नाम लिखा था।

४—अन्त में बाबू हरिश्चन्द्र जी ने एक विज्ञापन इस आशय का दि
था कि जो सवैया सुन्दरीतिलक में छूट गये हैं उन सब को सुन्द
सिन्दूर में संग्रह करूंगा।

निदान यह कि सुन्दरीतिलक के संग्रहकर्ता सब प्रकार से बा
हरिश्चन्द्र ही थे न कि पं० मन्नालाल या कोई और अन्त में जो सुन्दरी
तिलक छपा था उस में ६९ कवियों के ४२७ सवैया थे, परन्तु इ
सुन्दरी तिलक में १४५९ सवैया छापे गये हैं। यद्यपि बाबू साहिब
संग्रह वाले अनेक सवैया छूट गये हैं परन्तु जो हो गया उसी को
समझिए, शरीर रहा तो दूसरी बार सब दोष दूर कर दिये जायंगे

प्रकाशक।

विरह निवेदन।

कवियों की नामावली।

८ सवैये में—

चन्दन चन्द गुलाव के नीरन तोख करै कछु गंगे की धार है।
औधहरी कुल आलम मै अजवेस लखी जसवंत विचार है॥
केशव श्रीभगवंत किशोर, वै नागर है पै नवीन अचार है।
गोकुलनाथ जू की ठकुराई की शोभ सुमेरहरी वे शुमार है॥१॥
जानती हैं छितपाल भे भूपति जादव के सरदार बने हो।
है कमलापति श्री जगदीश जू मंडन माथुर लोग घने हो॥
जे कविराज कविन्द पुरंधर ते रसिकेश कहै क्या गने हो।
ए हो दयानिधि देवकीनंदन मेमिन पै रसबीर सने हो॥२॥
राखति है सुमही मै अलीमन है गिरधारन ग्वाल मैंहा कवि।
अम्बिकादत्त सनेह कियो हम सुंदर श्री घनस्याम महा छवि॥
है कै चतुर्भुज श्री घनआनंद व्योग तें सुंदरी कंकन की फवि।
ताहरे केहरे श्री हरि कालिका औध सुमारखे कुवरी कौ अव॥३॥
हे द्विजदेव दरिद्र द्विजानतें दूर करौ बलदेउ के भैया।
देव ता दास है रावरे दूलह दैबे दिनेस समान सयैया॥
मेमिन वल्लभ होहु दामोदर तेज दिवाकर नाथ सहैया।
नौनिधि ईसं नारायन दायक मंद के नंदन मान वसैया॥४॥
जादो नरेस नरेंद्र मृगेश हो नीके नरोत्तम श्री परमेस।
ग्रह्म के बोधा सदा विजयानंद बेनी "नवीन" हो श्री पजनेस॥
मैमैसखी के पुरी "परसाद है पारस प्रेम" प्रताप असेस।
शंभु कृपा नृपशंभु के सेवक साचे हैं श्रीधर श्री हरिकेस॥५॥
जो रघुनाथ सुई रसिया रसराज यो भापत है कृपिनाथ।
जानत या रस को रसखाने रसीले सुभाने अमीरने साथ॥
है मगटी पद्माकर तें लैंछ मो मतिराम सुरामहि हाथ।
श्री मधुसूदन मन्नु सो श्रीपति क्यों न सुनो विरहीन की गाथ६॥

तिलक न छापै, और यह विज्ञापन उस समय दिया गया कि जब लखनऊ वो कानपुर में सुन्दरीतिलक छपी थी और उस पर इन का नाम न रख कर प्रकाशक ने अपना ही नाम लिखा था।

४—अन्त में बाबू हरिश्चन्द्र जी ने एक विज्ञापन इस आशय का दिया था कि जो सवैया सुन्दरीतिलक में छूट गये हैं उन सब को सुन्दरीसिन्दूर में संग्रह करूंगा।

निदान यह कि सुन्दरीतिलक के संग्रहकर्ता सब प्रकार से बाबू हरिश्चन्द्र ही थे न कि पं० मन्नालाल या कोई और अन्त में जो सुन्दरीतिलक छपा था उस में ६९ कवियों के ४२७ सवैया थे, परन्तु इस सुन्दरी तिलक में १४५५ सवैया छापे गये हैं। यद्यपि बाबू साहिब के संग्रह वाले अनेक सवैया छूट गये हैं परन्तु जो हो गया उसी को बहुत समझिए, शरीर रहा तो दूसरी बार सब दोष दूर कर दिये जायंगे।

प्रकाशक।

विरह निवेदन।

कवियों की नामावली।

८ सवैये में—

चन्दन चन्द गुलाब के नीरन तोख कर कछु गंग की धार है।
औधहरी कुल आलम मै अजबेस लखी जसवंत विचार है॥
केशव श्रीभगवंत किशोर वै नागर है पै नवीन अचार है।
गोकुलनाथ जू की ठकुराई की शोभ सुमेरहरी बे शुमार है॥१॥
जानती हैं छितपाल भे भूपति जादव के सरदार बने हो।
है कमलापति श्री जगदीश जू मंडन माथुर लोग घने हो॥
जे कविराज कविन्द धुरंधर ते रसिकेस कहै क्या गने हो।
ए हो दयानिधि देवकीनंदन प्रेमिन पै रसबीर सने हो॥२॥
राखति है सुमही मै अलीमन हे गिरधारन ग्वाल मैहा कवि।
अम्बिकादत्त सनेह कियो हम सुंदर श्री घनस्याम महा छवि॥
है कै चतुर्भुज श्री घनआनंद ब्योग तें सुंदरी कंकन की फवि।
ताहर केहर श्री हरि कालिका औध सुमारखे कुवरी कौ अव॥३॥
हे द्विजदेव दरिद्र द्विजानत दूर करौ बलदेउ के भैया।
देव ता दास है राउरे दूलह दत्त दिनेस समान सवैया॥
प्रेमिन वल्लभ होजू दामोदर तेज दिवाकर नाथ सहैया।
नौनिधि नूर नारायन दायक नंद के नंदन मान बसैया॥४॥
जादौ नरेस नरेंद्र मृगेश हौ नीके नरोत्तम श्री परमेस।
ब्रह्म के बोधा सदा विजयानंद बेनी प्रवीन हौ श्री पजनेस॥
प्रेमसखी के पुली परसाद है पारस प्रेम प्रताप असेस।
शंभु कृपा नृपशंभु के सेवक सांचे हैं श्रीधर श्री हरिकेस॥५॥
जो रघुनाथ सुई रसिया रसराज यो भाषत है ऋषिनाथ।
जानत या रस कौ रसखानि रसीले सुभोने अमीरने साथ॥
है भगटी पदमाकर तें लैछ मो मतिराम सुरामहि हाथ।
श्री मधुसूदन मन्नु सो श्रीपति क्यो न सुनो विरहीन की

कवियों का नाम।

(अ)

१ आलम.
२ अलीमन.
३ अजबेस.
४ औधहरी. (पं० अयोध्यासिंह).
५ पं० अम्बिकादत्त व्यास (सुकवि)
६ अजान (नकछेदी तिवारी)

(क)

१ केशव.
२ किशोर.
३ कंकन.
४ कविराज.
५ कमलापति.
६ कविन्द.
७ कालिका.
८ केहर.

(ग)

१ गोकुलनाथ.
२ ग्वाल.
३ गंग.
४ गिरधारन. (बाबू गोपालचन्द्र श्रीहरिश्चन्द्र जू के पिता.)
५ गुलाब.

(घ)

१ घनआनद.
२ घनश्याम.

(च)

१ चन्द.
२ चन्दन.
३ चतुर्भुज.

(छ)

१ छितपाल. (राजा माधोसिंह अमेठी.)

(ज)

१ जसवंत.
२ जगदीस.

(ठ)

१ ठाकुर.

(त)

१ तुलसी.
२ तोष.
३ ताहर.

(द)

१ देव.
२ द्विज. (पं० मन्नालाल.)
३ द्विजदेव. (राजा मानसिंह.)
४ दास. (भिखारीदास.)
५ दूलह.
६ दत्त.
७ दामोदर.
८ दिनेस.
९ दिवाकर.

२ रिखिनाथ.
३ रसिकेस.
४ रसखान.
५ रसिआ.
६ रसीले.
७ रसराज.
८ राम.
९ रामगुपाल.
१० रघुराज. (राजारघुराजसिंह रीवां.)
११ रसरंग (रामचरित्र)

(ल)

१ लाल,
२ लछू.

(स)

१ शम्भु.
२ सुमेरसिंह (साहिबजादे)
३ सरदार.
४ सेवक राम.
५ सेवकस्याम.
६ सुंदर.
७ श्रीधर.
८ श्रीपति.
९ सिंह.
१० सेख.
११ सेखर.
१२ संकर.
१३ सोभ.
१४ सिव.
१५ साहिबराम.
१६ सिरोमनि.
१७ सिवलाल

(ह)

१ हनुमान.
२ हरिकेस.
३ हरिदास.
४ हरिचंद.

सुंदरीतिलक

ध्यान मंगल

[सवैया]

छहरैं सिर पैं छवि मोरपखा उन-की नथ के मुकुता थहरैं । फहरैं पियरो पट बेनी इतै उनकी चुनरी के झबा झहरैं ॥ रसरंग भिरे अभिरे हैं तमाल दोऊ रस ख्याल चहैं लहरैं । नित ऐसे सनेह सों राधिका स्याम हमारे हिये में सदा ठहरैं ॥ १ ॥

सराहैं सुरासुर सिद्ध समाज, जिन्हैं लखि लाजत हैं रति मार । महा मुद मंगल संग लसैं बिलसैं भव भार निवारन वार ॥ बिराजैं त्रिलोक निकाई के ओक सुदेव मनो भव रूप अपार । सदा दुलही वृषभानुसुता दिन दूलह श्रीव्रजराज-कुमार ॥ २ ॥

दोऊ दुहूँ पहिरावत चूनरी दोऊ दुहूँ सिर बाँधत पागैं । दोऊ दुहूँ के सिंगारत अंग गरे लगि दोऊ दुहूँ अनुरागैं ॥ संभु सनेह समोय रहे रस ख्यालन में सिगरी निसि जागैं । दोऊ

सुंदरीतिलक

ध्यान मंगल

[सवैया]

छहरें सिर पैं छवि मोरपखा उन की नथ के मुकुता थहरें । फहरें पियरो पट बेनी इतै उनकी चुनरी के झवा झहरें ॥ रसरंग भिरे अभिरे हैं तमाल दोऊ रस ख्याल चहैं लहरें । नित ऐसे सनेह सों राधिका स्याम हमारे हिये में सदा ठहरें ॥ १ ॥

सराहैं सुरासुर सिद्ध समाज, जिन्हे लखि लाजत हैं रति मार । महा मुद मंगल संग लसैं बिलसैं भव भार निवारन वार ॥ विराजैं त्रिलोक निकाई के ओक सुदेव मनो भव रूप अपार । सदा दुलही वृषभानुसुता दिन दूलह श्रीब्रजराजकुमार ॥ २ ॥

दोऊ दुहूँ पहिरावत चूनरी दोऊ दुहूँ सिर बाँधत पागें । दोऊ दुहूँ के सिंगारत अंग गरे लगि दोऊ दुहूँ अनुरागें ॥ संभु सनेह समोय रहे रस ख्यालन में सिगरी निसि जागें । दोऊ

दुहूँन सों मान करें पुनि दोऊ दुहूँ न मनाव
लागें ॥ ३ ॥

विहसे दुति दामिनि सी दरसे तन जोति
जुन्हाई उईसी परै । लखि पायन की अरुनाई
अनूप ललाई जपा की जुईसी परै ॥ निखरै सी
निकाई निहारें नई-रति रूप लुभाइ तुई सी परै।
सुकुमारता मंजु मनोहरता मुख चारुता चारु
चुईसी परै ॥ ४ ॥

योगधाजी के चरणारविन्द का ध्यान।

विद्रुम और बँधूक जपा गुललाला गुलाब की
आभा लजावति । देव जू कंज खिले टटके हटके
भटके खटके गिरा गावति ॥ पावँ धरै अलि ठौर
जहाँ तेहिं ओरतें रंग की धारसी धावति । मानो
मजीठ की माठ ढुरी एक ओरतें चादनी वोरति
आवति ॥ ५ ॥

राधिका कान्ह विरंचि रची सव लोकन की
सुखमा सव लै लै ॥ अंग के रंगन के ढिग जात
ह्वै जात हैं संभु सवै रंग मैले ॥ लालन सों पर-
वालन सों बंधी लालन जानिपरे वहि गैले।
पायँधरै जितहीं वह वाल तँही रँग लाल गुलाल
सो फैले ॥ ६ ॥

कोहर कौल जपा-दल बिद्रुम का-इत
जो बंधूक मे कोति है। रोचन रोरी रची, मेह
नृपसंभु कहैं मुकता सम पोति है॥ पांय. ध
ढरे ईंगुर सो तिन मै मनि पायल की घनी जो
है। हाथ द्वै तीन लौं चारिहू ओरतें चाँदनी चून
के रंग होति है॥ ७॥

पांइ तिहारेन कों गिरिधारी लगाय के ध्या
करें वहु जापन। तापर जीव कलावति की छाँ
तावती हो नहीं मानो सिखापन॥ आंगन
चलती जब राधे भने नृप संभु हरे तन तापन
द्वै घरी द्वैक लौं, आभा रहै मनो छीट रंगी
मजीठ के छापन॥ ८॥

सवैया।

जाहिरै जागति सी जमुना जब वूडै वहै उम
है वह वेनी। त्यों पदमाकर हीर के हारन गं
तरंगन की सुख देनी॥ पायन के रंग सों रं
जाति सी भाँति हीं भाँति सरस्वती सेनी। पैं
जहाँई जहां वह वाल तहाँ तहाँ ताल मे हो
त्रिवेनी॥ ९॥

आई हुती अन्हवावन नाइनि सोंधे लि

फेर सूधे सुगाइन । कंचुकी छोर धरी उबटवे कों ईंगुर से रंग की सुखदाइन॥ देव जू रूप की रासि निहारति पाय तें सीस लौं सीस तें पायन। ह्वै रही ठौरही ठाढी ठगी सी हँसे कर ठोढी दिये ठकुराइन ॥ १० ॥

चालि सो आई नई दुलही लखिबे कों सबै कोऊ चाव बढावति । सूही सजी सिर सारी जबै तब नाइन आपने हाथ ओढावति॥ भीतर भौन तें बाहिर लौं द्विजदेव जुन्हाई की धार सी धावति। साँझ समै ससि की सी कला उदयाचल तें मनो घेरति आवति ॥ ११ ॥

लखि सासुहि हास छेपाये रहै ननदी लखि ज्यौं उपजावत भीत हि । सौतिन सों सतरौत छितौति जेठानिन सों निज ठानति प्रीतहि ॥ दासिनहू सों उदास न देव बढावति प्यारे सों प्रीति प्रतीतहि । धाय सों पूछति बातें बिनै की सखीन सों सीखे सुहाग की रीतहि ॥ १२ ॥

निज चाल सों और जे बाल तिन्हे कुल की कुल कानि सिखावती हैं ।ननदी औ जेठानी हसौं-तऊ हँसी ओठनहीं लौं बितावती हैं ॥ हनुमा-

नन नेको निहारें कहूँ दृग नीचे किये सुख पाव-
ती हैं। वडभागिनी पीके सुहाग भरीं कवौं
आँगन हूँ लौं न आवती हैं ॥१३॥

जाने न वोल कुवोल भटू चित ठाने सदा
गति प्रीति सुहाई। केतो करे उपचार सखी सत-
राय न नाह पे भौंह चढाई॥ क्यों नहि होय सुमेर
हरी हरि के हिय आनद की अधिकाई।जाहि
विलोकतहीं पुर की तिय सीख गई पिय की
सिवकाई ॥१४॥

सुग्धा।

लहरें उठें अंग अनंगहूं की मद जोवन के
महरात फिरें। बडडी अँखियां न तिरीछें चितें
सखियाँन लखें लहराति फिरै॥कहि ठाकुर या नि
खरी पखरी थिर सी न रहै थहराति फिरै।सिर-
ओढनी डारें कसें छतिया पहिरें फरिया फह-
राति फिरै॥१५॥

लरिकाई के खेल छुटे न बनाय अजौं न मनोज
बान लगे। चतुराई कछूक चढी चित मे तरुनीन
के बैन सुहान लगे॥ हरि को हैं कहां के हैं कौन
के हैं ए बखान कछूक हितान लगे॥ अब तो

तबै सब गाय उठीं व्रज-डावरियां ॥ अँसुवाँ भ
आवत नैरे अजों सुनिरों उनकी पग पावरियां
कहै जो हैं हमारे वे कौन लगें जिन के सँग
हो भांवरियां ॥ २३ ॥

देखिये आनि कछू दिन तें उर तें उठे
हैं अंकुर चारे । कीजिये वेगि उपाय न तौ
पाई हैं आगे भये पर भारे ॥ हे प्रिय-सेवक
तुम्हैं सुख देहैं अनोखे-विरंचि सँवारे । वीरज
क्यों होत खरी अरी पीर सहैंगे विलोक
वारे ॥ २४ ॥

छाती नितंब लखे दुलही के सखीन हूँ
मनसा ललचानी । ऐसी नवेली को नायक हूँ
आपुस मै सब यों बतरानी ॥ सुंदर जोवन
सराहत सुंदरी आँखिनहीं में लजानी ।
बचाय सखीन हूँ की निज देह को देखि
मुसकानी ॥ २५ ॥

सवैया

गौने के द्यौस कहे मतिराम सहेलिन
जुरि के गन आयो । कंचन की बिछिया पहि
पत प्यारी सखी परिहास बढ़ायो ॥ प्रीतम

समीप सदाँ बजैयों कहिके पहिलैं पहिरायो। कामिनी कोल चलावन कों कर ऊंचो कियो पै चल्यो न चलायो ॥ २६ ॥

दिसि पूरब पछिम दाहिने बायें अधोरध संक न मेली फिरै। सखि सौति के पीछे लगै छन जैसें गुरायिनी के संग चेली फिरै ॥ टहरै ठहरै नहिं सेवक यों खर पौननि ज्यों वन वेली फिरै। मनमोहन के डर मे घर में अलबेली अकेली अकेली फिरै ॥ २७ ॥

अब तेंहू कहे तिहिं भाँति की बातें कठोर हिये की भई तो कहा। हरिनी कों चहैं हरि संग खेलायो अबूझ में बुद्धि गई तो कहा ॥ बिधि ऐसिये जो रचि राखी अली बिसवासिनी आड लई तो कहा। सेवकाई भली हमें सौतिही की दया तोहि दई न दई तो कहा ॥ २८ ॥

सुख आकर मानै निसाकर कों न दियाकर तें अनुरागी रहे। तजि लाज के व्याज परोसिन हूं कों जेठानिन तें ज्वर जागी रहे ॥ कवि सेवक रूठि सहेलिन सों सुठि सासु के प्रेम न पागी रहे। चित आनि केबानि परी धों कहा नित सौति के सासन लागी रहे ॥ २९ ॥

बैरिनि मेरी किनै गई ये कर छोडि उन्है किन देखन तूं दे । यों कहि कै उचकी परजंक तें पूरि रही दृग वारि की बूंदै ॥ जोरन देति नहीं मुख सों मुख छोरन देति न नीवी की फूंदै । देव सकोच सोचन तें मृगलोचनी लोचन लाल के मूंदै ॥३०

लै परजंक निसंक नवेली कों अंक में ला लगे गहि गूंमन । ऊरुन सों कसिकै कवि सं सुजान कों भेटि लगे मुख चूंबन ॥ गोरे करे तरेरे उरोजन दै कर लागे लला झुकि झूंमन गूँजन लागो गरो गरवीली को नीर भरी पुतरी लगि घूंमन ॥ ३१ ॥

बिथुरी अलकैं झलकैं स्रम बारि सखी को गहैं कर हालत सी । दृग नींद भरे मुख ऊंची उसास सुगंध दसों दिसि चालत सी ॥ रघुनाथ मतंगज की गति गोपि गहैं पिय पें रिस पालत सी । तिय जागी चली रति मंदिर तें सब सौतिन के उर सालत सी ॥ ३२ ॥

जामिन जागी जगाई है लालन नींद लखो अँखियां मै रही भरि । सेज सँवारन पाई न फेरि के घेरि के आलस आनि रही परि ॥ सोवन देह । लखो रघुनाथ खरे पलिका के तरे हरि ।

ऐसी लसै बिधि नै थिरकै मनो राखी है बारिद मै बिजुरी धरि ॥ ३३ ॥

सांझही सेज लौं ल्याई सखी नख तें सिख भूखन साज चुनी को। यों हुलस्यौ लखि प्रान पिया जिमि जोत मिलें मन होत मुनी को ॥ लाज गडी मुख खोलै न बोलै कियो रघुनाथ उपाव दुनी को। कोटि रँगे नहिं एक लगै जिमि सूम के आगे सयान गुनी को ॥ ३४ ॥

जाहि न चाह कहूं रति की सु कछू पति को पतियान लगी है। त्यों पदमाकर आनन मे रुचि कानन भौंह कमान लगी है ॥ देति तियों न छुवै छतियां बतियां न मै तो मुसुकानि लगी है । पीतमै पान खवाइबे को परजंक के पास लौं जान लगी है ॥ ३५ ॥

मुख चुंबन मे मुख लै जो भजै पिय के मुख मे मुख नायो चहै। गलबाहीं गोपाल के मेलतहीं मुख नाहीं कहै मनतें न कहै ॥ नाहिं देति नेवाज छुवै छतियां छतिया मे लगाय तें लागी रहै। कर खेंचते सेज की पाटी गहै रति मे रति की परिपाटी गहै ॥ ३६ ॥

आई जो चालि गोपाल घरै ब्रजबाल बिसालै

वैरिनि मेरी किते गई वे कर छोडि उन्हें किन देखन तूँ दै। यों कहि कै उचकी परजंक तें पूरि रही दृग वारि की बूंदै ॥ जोरन देति नहीं मुख सों मुख छोरन देति न नीवी की फूँदै। देव सकोचन सोचन तें मृगलोचनी लोचन लाल के मूंदै ॥३०॥

लै परजंक निसंक नवेली कों अंक मे ल लगे गहि गूँमन। ऊरुन सों कसिकै कवि सं सुज़ान कों भेटि लगे मुख चूँबन ॥ गोरे कठे तरेरे उरोजन दै कर लागे लला झुकि झूँमन गूँजन लागो गरो गरवीली को नीर भरी पुत लगि घूँमन ॥ ३१ ॥

बिथुरी अलकैं झलकैं स्रम वारि सखी कं गहैं कर हालत सी। दृग नींद भरे मुख ऊर्ध उसास सुगंध दसों दिसि चालत सी ॥ रघुनाथ मतंगज की गति गोपि गहें पिय पें रिस पालत सी। त्रिय जागी चली रति मंदिर तें सब सौतिन के उर सालत सी ॥ ३२॥

जामिन जागी जगाई है लालन नींद लखो आँखिया मे रही भरि। सेज सँवारन पाई न फेरि कै घेरि कै आलस आनि रही परि ॥ जोबन देह जू सोभा लखो रघुनाथ खरे पलिका के तरे हरि।

ऐसी लसे विधि ने थिरकै मनो राखी है वारिद मैं विजुरी धरि ॥ ३३ ॥

सांझही सेज लौं ल्याई सखी नख तें सिख भूखन साज चुनी को। यों हुलस्यों लखि प्रान पिया जिमि जोत मिलें मन होत मुनी को ॥ लाज गडी मुख खोलै न वोलै कियो रघुनाथ उपाव दुनी को। कोटि रँगे नहिं एक लगै जिमि सूम के आगे सयान गुनी को ॥ ३४ ॥

जाहि न चाह कहूं रति की सु कछू पति कों पतियान लगी है। त्यों पदमाकर आनन मे रुचि कानन भौंह कमान लगी है ॥ देति तिंया न छुवै छतिया वतिया न मै तो मुसुकानि लगी है। पीतमै पान खवाइबे कों परजंक के पास लों जान लगी है ॥ ३५ ॥

मुख चुंवन में मुख लै जो भजे पिय के मुख में मुख नायो चहैं। गलवाहीं गोपाल के मेलतहीं मुख नाहीं कहे मनतें न कहे ॥ नाहिं देति नेवांज छुवै छतियां छतिया मे लगाय तें लागीरहे। कर खैंचत सेज की पाटी गहे रति मे रति की परिपाटी गहें ॥ ३६ ॥

आई जो ग्वालि गोपाल घरें ब्रजवाल नि

मृनाल सी बाहीं । त्यों पदमाकर सूरति मे रति मे रति छ्वै न सके परछाँहीं ॥ सोभित संभु मनो उर ऊपर मोज मनोभव की मन माहीं । लाज विराजि रही अखियाँन मे प्रान मे कान्ह जुबान मे नाहीं ॥ ३७ ॥

खेलन कों बन कुंजन मे सुनि पुंज सखीन के संग गई री । सामुहें भेट भई रिपिनाथ लखे मनमोहन मैन मई री ॥ छाडी न लाज छपाय के अंचल घूँघुट ओट पिछोंडी भई री । मीजति हाथ हिएँ पछिताति सुपीठि मे दीठि दई न दई री ॥ ३८ ॥

झांझरियाँ झनकैंगीं खरी खनकैंगीं चुरी तन कौ तन तोरे । दासजू जागतीं पास अली परिहास करैंगी सबै उठि भोरे ॥ सौंह तिहारी हों भागिन जाहुँगी आई हौं लाल तिहारे ही धोरे । केलि कों रैनि परी है घरीक गई करि जाहु दई के निहोरे ॥ ३९ ॥

अरविंद के प्रेम सुचंदहू के न मिलिंदन की उपमा से करे । दुति दंतन की दुति दामिनी की दुति दाडिम हूँ की दमासे करे ॥ छकि छैल के करे रति रंग छबीली तिया न छमासे करे ।

मसकीन के जोर जमासे करै सिसिकीन के सोर तमासे करै ॥ ४० ॥

बाजैं चुरी बिछुवा घुघुरू मुख स्वास कढ़े ज्यौं सुगंध झकोर सों । ऊंचे उरोज लगे थहरे खुलि केस नेवाज रहे चहुँ ओर सों ॥ मोलहि लेति सोहाग भरी चितवे जब लाज भरी दृग कोर सों । सौगुनो स्वाद बढ़ावति सुंदरि वा रस मे सिसिकीन के सोर सों ॥ ४१ ॥

अति प्रेम की रासि बढ़ी उर में सुख नाहीं कढ़ी गुन औगुनो सों । फिरि कै गई दीठि हँसोहीं लजोहीं सवाद बढ्यो चित चौगुनों सों ॥ मुख चुंबन के निज चुंबन दै परिरंभन में भयो नौ गुनो सों । वह रूप की बेली की केलि समय सिसिकीन में कै गयो सौगुनो सों ॥ ४२ ॥

श्रीधर भौंन ते प्यारी प्रवीन के रंग भरे रति साजन लागे । अंगन अंग अनंगन तैं अपने अपने सब काजन लागे ॥ किंकिनी पायल पैजनियां बिछुवा घुँघरू मिलि गाजन लागे । मानो मनोज महीपति के दरबार मरातब बाजन लागे ॥ ४३ ॥

कढि किंकिनी नेकु न मौन गहे चुप कैत्रो

चुरीन सों मांगती हैं। सब देखत देव अनोखे नये बिछियान की जीभें न लागती हैं ॥ सुकि सारिका तूती कपोती पिकी अधरातक लौं अनुरागती हैं। छन एक छमा करि देखो इते घरहाँई हहा अब जागतीं हैं ॥ ४४ ॥

विपरीति रची रति दंपति यों जहां छायरहे बँगला खसके। कवि चन्द दुहून के मोद बढ्यो कहि सो कवि वृन्द कथा न सके ॥ मुख चूँमती भावती भाँवतें को अरु देती उरोजन के मसके। रस के उपजावत पुंज खरे पिय लेत परे रस के चसके ॥ ४५ ॥

विपरीति रची रति राजिवनैन सों राधिका राजति ता पल में। झपकें पलकें बिथुरीं अलकें अरु हार लुरें मुकता गल में ॥ कवि सुंदर झांई दोऊ कुच की झलकें इमि श्याम उरस्थल में। छतिया तर तूंबन दे मकरध्वज मानो तिरे जमुना जल में ॥ ४६ ॥

सेज समीप सखी रुचि दंपति कुंज कुटी ब्रज भूपर री। कवि आलम केलि रची विपरीति सरोज लसे दृग दूपर री ॥ सरसीरुह आनन तें बिन्दु परें ते जसोमति भूपर री। बरसें

रसाने की गोरी घटा नँदगाँव के साँवरे ऊपर ॥४७॥

श्रीमनमोहने राधे मिली विपरीति रची ति की परनाली । हार रहे न विहार समय विराज प्रगे रस में बनमाली ॥ सौंधे सनी थरी बिथुरी झलकैं अलकैं हरि के उर आली । ानो कुटुंब समेत सहेत फिरे जमुना जल पैरत ाली ॥ ४८ ॥

दमकैं दुति लोल तन्योन नकी मुसुकात में ोल कपोलनि पें । छबि केसरि की छहरे तन तें कढ़ि बाहिर सेत निचोलनि पें ॥ बिपरीति में ेनी रमे ललना लटें यों द्वै लुरें दग लोठनि पें । मनो फन्द से द्वै मखतूहल के डारे अहेरी मनोज ममोलनि पे ॥ ४९ ॥

केलि करैं बिपरीत समय हरि मन्द भये घुघरू सुर भूपर । बेंदी जराय की छूटी ललाट तें टूटी परी हरयें हरि जू पर ॥ ब्रह्म भने कबरी कर छोरे विराजत यों दग चंचल दूपर । पूंछि पसारे मनो फनिराज मुखो मनि काज मयंक के ऊपर ॥ ५० ॥

कहिके रस की बतियाँ लहि के रति के

सुख कों मन रंजन सों। बिपिरीति मचाय रही बहु
चाय भरी गही गींवें सु पंजन सों ॥ मनिदेव कहे
इमि वेनी को छोर लुरे लगि नैन सु अंजन सों।
लखु आय अली अनुराग रई मनु खेलति नागिनी
खंजन सों ॥ ५१ ॥

करि के बिपिरीति थकी ललना पिय के हि
यों अति भाय रही। झपकीं पलकें हनुमान क
रति के मनहूँ कों लुभाय रही ॥ लट एक लु
मुख तें कुच पें सुभ यों स्रम स्वेद गिराय रही
मनु व्यालिनि चंद तें लेके पियूष गिरीस के सी
चढाय रही ॥ ५२ ॥

रति रंग छकी चख मूंदति ज्यों ज्यों त्यों त्यों
मनमोहन चोपत से। कवि वेनी हहा करि हाँसी
के हौस जगावत जागैं न कोपत से ॥ कर मंडित
मोतिन के गजेरा द्दग मीडत आनन ओपत से। अरि
कौलन कों पकरे मनो तारे कलानिधि भूपत सौंपत
से ॥ ५३ ॥

भोर भये तकिया सों लगी तिय कुंतल पुंज
रहे बगराय के। कंजन से करके तल ऊपर गोल
कपोल धरे अलसाय के ॥ आनन पे बिलसे रद
श्रीपति रूप रह्यो अति छाय के। मानहुँ

राहु सों घायल ह्वै विधु पौढ़ो है पंकज के दल आय के॥ ५४॥

काम कला करि कै वनिता पलँगा पर पौढ़ि रहीं अलसाय कै। त्यों पदमाकर स्वेद के बुंद रहे मुकताहल से तन छाय कै॥ बिंदु घने मेंहँदी के लसैं कर ताकर पैं रह्यो आनन आय कै। सोयो है चंद मनो अरविंद पैं इंद वधून के वृंद बिछाय कै॥ ५५॥

प्रात समै रति मानि भटू धुनि गंग सिखि की हिये खटकी है। चाय भरी अलसाय नितंबिनि गातन मोहन सों अटकी है॥ उन्नत कै कर जोरत बाँह बढ़ी छवि यों मुख के तटकी है। कंज सनाल के कुंडल मे मनो सीखत चंद्रकला नट की है॥ ५६॥

रेख कछू कछू अंजन की कछू कंजन की अरुनाई रहे भ्वै। आलस लाजि पगे रघुनाथ कछू कछू चंचलता कों रहे छ्वै॥ ऐसे लखे दृग प्यारी के प्रातहि भौंह समेटि रही उपमा ह्वै। बेलि सिंगार की ह्वै दल के तर खेलत खंजन के चिगुला द्वै॥ ५७॥

बाल उठी रति केलि किये कवि सु
अंग रसोहैं । आरसी मे मुख देखि
सोचन लोचन होत लजोहैं ॥ लाल
वीच रही ललना पिय कों तकि के रि
पोंछि कपोल अँगोछति ओठ अमेठति
ऐंठति भौंहैं ॥ ५८ ॥

केलि कलोल के रंग में सुन्दरी पीत
रमी रजनी है । नेह सनी दरसाति भटू अ
प्रभा सरसाति घनी है ॥ औरही सोभा भ
आजु अनंतन की सिर मौर गनी है । न
नेह की सोहे मनी पटलाज में चारू छन
बनी है ॥ ५९ ॥

पिय के संग राति जगी सुख सों छवि
अनंग की छाय रही । रघुनाथ न बानक
कही बनी जैसी कछू सुखदाय रही ॥ तकिया
बोह्न दये भुज मूल को बैठी यों भेरही भ
रही । कर लै के बिरी मुख लाय रही अरस
रही औ लजाय रही ॥ ६० ॥

सोवन देहु जगाओ इन्हे मत जो पै लल
बान लोभानो । जागे तें या छवि सों नहि

भेंट खरे रघुनाथ लखौ लखि जानो ॥ कैसी विराजति है पलिका दग नीर भरे अति आलस सानो । खासी मनोज महीपति की यह खासी धरी नवला सी है मानो ॥ ६१ ॥

भोर जगी ब्रषभानलली अलसे विलसे निसि कुंजविहारी । केसव पोंछत अंजन ओरज पीक की लीक गई मिटि कारी ॥ नेक लग्यो कुच बीच नखच्छत देखि भई दग दूनी लजारी । मानो वियोग वराह हन्यो जुग सैल के संधि मैं इंगवेडारी ॥ ६२ ॥

अलसोंहें से अंग लजोहें से नैन कछूक खुले से मुदे वर हें । परि पीक की लीकें कपोल रहीं रिखिनाथ अनूपम ता घर हें ॥ नखरेख उरोजन पैं झलकैं छलकैं छवि त्यों मुकता लर हैं । धरे सीस कला ससि की जुत गंग मनोहर दोऊ मनोहर हैं ॥ ६३ ॥

सखि भोर उठी विन कंचुकी कामिनी कान्हर तें करि केलि घनी । कवि ब्रह्म भनै छवि देखत हीं बलि जाति नहीं मुख तें बरनी ॥ कुच अग्र नखक्षत नाह दियो सिरनाय निहारति यों सजनी ।

बाल उठी रति केलि किये कवि सुंदर सोहत अंग रसोहैं। आरसी मे मुख देखि सकोचन सोचन लोचन होत लजोहैं ॥ लाल हँसे इंहि बीच रही ललना पिय कों तकि के तिरछोहें। पोंछि कपोल अँगोछति ओठ अमेठति आँखिन अैंठति भौंहैं ॥ ५८ ॥

केलि कलोल के रंग में सुन्दरी पीतम संग रमी रजनी है। नेह सनी दरसाति भटू अरसाति प्रभा सरसाति घनी है ॥ औरही सोभा भई हग आजु अनंतन की सिर मौर गनी है। नाह के नेह की सोहै मनीं पटलाज में चारू छनी सी बनी है ॥ ५९ ॥

पिय के संग राति जगी सुख सों छवि अंग अनंग की छाय रही। रघुनाथ न बानक जाय कही बनी जैसी कछू सुखदाय रही ॥ तकिया पर बांझ दये भुज मूल को बैठी यौं भोरही भाय रहीं। कर लै कै बिरी मुख लाय रही अरसाय रही औ लजाय रही ॥ ६० ॥

सोचन देहु जगाओ इन्हें मत जो पै लला जिय बात लोभानो। जागे तें या छवि सों नहीं

भेंट खरे रघुनाथ लखौ लखि जानो ॥ कैसी विराजति है पलिका दृग नीर भरे अति आलस सानो। खासी मनोज महीपति की यह ख़ासी धरी नवला सी है मानो ॥ ६१ ॥

भोर जगी वृषभानलली अलसे विलसे निसि कुंजविहारी। केसव पोंछत अंजन ओरन पीक की लीक गई मिटि कारी ॥ नेक लग्यो कुच बीच नखच्छत देखि भई दृग दूनी लज़ारी। मानो वियोग वराह हन्यो जुग सैल के संधि मैं इंगवैडारी ॥ ६२ ॥

अलसोंहैं से अंग लजोहैं से नैन कछूक खुले से मुदे वर हैं। परि पीक की लीकैं कपोल रहीं रिखिनाथ अनूपम ता घर हैं ॥ नखरेख उरोजन पैं झलकैं छलकैं छबि त्यों मुकता लर हैं। धरे सीस कला ससि की जुत गंग मनोहर दोऊ मनोहर हैं ॥ ६३ ॥

सखि भोर उठी विन कंचुकी कामिनी कान्हर तें करि केलि घनी। कवि ब्रह्म भनै छवि देखत हीं वलि जाति नहीं मुख तें वरनी ॥ कुच अग्र नखक्षत नाह दियो सिरनाय निहारति यों सजनी।

सासिसेखर कै सिर तें सु मनो निहुरे ससि लेत कला अपनी ॥ ६४ ॥

छूटी लटैं लटकैं सिरहँनि ह्वै फैलि रह्यो मुख स्वेद को पानी । सोहैं नए नख दाग उरोजन ओठन की छबि है मुरझानी ॥ पौढी पिया के गरे भुज मेलि कै केलि कै प्यारी नेवाज अघानी । नाह की बाँह दियें तकिया सुख सोवै तिया छतियाँ लपटानी ॥ ६५ ॥

सांम तें भोर लौं प्यारे जगाई जगैवे के ब्योंत कछू फिर नाधे । सोवत ही मिसु खेलन के कर दोऊ लैं फूल की माल सों बाँधे ॥ सेज ही मे अँगिराति जम्हाति अनेक तमासे बतावति राधे । आधे खुले दृग आधे मुदे अखरा मुहं तें कढे आधे ही आधे ॥ ६६ ॥

छतियाँ छतियाँ सों लगाय दोऊ दोऊ जीमे दुहूँ के समाने रहैं । गई बीति निसा पै निसा न भई नये नेह में दोऊ बिकाने रहैं ॥ पट खोलैं नेवाज न भोर भयें लखि द्यौस कों दोऊ सकाने रहैं । उठि जैबे कों दोऊ डेराने रहैं लपटाने रहैं ने रहैं ॥ ६७ ॥

बाँह दुहूँ की दुहूँ के उसीसे दुहूँ हिये सों हिय गाढे गहे हैं। दूसरी बाँह दुहूँ दुहूँ ऊपर दोऊ नेवाज जू नेह नहे हैं॥ सौंहैं दुहूँ के मिले मुख चंद दुहूँन के स्वेद के बुंद बहे हैं। खोइ के दोऊ मनोज विथा श्रम अंक समोइ कै सोइ रहे हैं॥ ६८॥

दीपक जोति मलीनी भई मनि भूषन जोति की आतुरिया है। दासिन कौंल कली विकसी निज मेरी गई लगि आँगुरिया है॥ सीरी लगैं मुकताहल तेऊ कपूर की धूरिन सों पुरिया हैं। पौढे रहौ पटताने लला नहिं बोली अवै चिरिया चुरिया है॥ ६९॥

राधिका स्याम लसैं पलिका पर कोपर जोत दसा कहि हाल की। आपने हाथ सों रीझि के भाँवती प्रीति सों अंजुली जोरी गुपाल की॥ ठाकुर तामै धर्‌यो मुख बालने को बरनै उपमा इहिं ख्याल की। पाननि मे तिय आनन यों लसै चंद चब्यो मनो कंज की नाल की॥ ७०॥

सोवत तें जगी सुन्दरी प्रात उठी अलसाति उतंग उरोज सों। देय दुहूँ कर कंचुकी दाबि

ऐसो लसै । मनहूं मनमथ्थ के हाथी चल्यो सु महावत जोवन अंकुस लै ॥ ७४ ॥

सोवतही रति केलि किये पति संग तिया अतिही सचु पाये । देखि सरूप सखी सब सुन्दर रीझि रहीं ठगि सी टकुलाये ॥ कंचुकी स्याम सजे कुच ऊपर छूटी लटैं लपटी छवि छाये । वैठ्यो है ओढ़ि मनो गज खाल महेस भुजंगनि अंग लगाये ॥ ७५ ॥

वलि जाँउ विचच्छन वेगि विचार विचित्रित गाय चरैवो करौ । सुखदान सुजान सबै घर की प्रन पालन प्यास वुझैवो करौ ॥ सरदार सदा चित चारु चढ़ीं वडी आँखिन आन रिझैवो करौ । हित हेरि हमार हमारे हहा इहिं वेर मे बालम अइवो करौ ॥ ७६ ॥

आजु कहा तजि वैठी हो भूपन ऐसेही अंग कछू अरसीले । बोलति वोल रुखाई लिएँ मति राम सनेह सुने तें सुसीले ॥ क्योंनि कहौ दुख प्रानपिया अँसुवाँ न रहे भरि नैन लजीले । कौन तिन्हे दुख है जिन के तुम से मन भाँवन छैल छवीले ॥ ७७ ॥

रैन जगे तुम काहू के साथ लहे रति चैन भए अति आरसी। शवरे ओठ रह्यो रमि भौंर सो मेरे हिये में गडावत आरसी ॥ नेकुन आवति लाज अजौं हनुमान ग्रहै तिय नैनन आरसी। बातें वनावत काहे लखौ किन हाथ के कंकन कों कहा आरसी ॥ ७८ ॥

भोर भएँ मनभाँवन आए बनी बिन डोरन हीं उर माल है। प्रानपियारी रही है निहारि न रूसेंई वैन कहें न रसाल हैं ॥ नेकु लला ढिग बैठन दीन्हो तिया एतनेहीं मे कीन्हो निहाल है। बाँहँ गही जबहीं तब पे भई भौंहैं तिरीछीं भए दृग लाल हैं ॥ ७९ ॥

घूमत नैन कढै मुख वैन न झूमत नींद भरे अलसाने। अंजन ओट महाउर भाल मरू करि संभु परो पहिचाने ॥ गोद गहो तिनहीं जिन तैं सब रैन विनोद करे मन माने। पाँयन जाय परो तिनहीं के रहे जिन के हरि हाथ बिकाने ॥८०॥

भोरहीं न्योति गई ती तुम्हे वह गोकुल गांव की ग्वालिनि गोरी। आधिक राति लों वेनीप्रवीन कहा ढिग राखि करी वरजोरी ॥ आवे हँसी मोहि

देखत लालन भाल मे दीन्हो महावर घोरी। एते वडे व्रजमंडल मे न मिली कहूँ मागेहूँ रंचक रोरी ॥ ८१ ॥

देव जू जो चित चाहिए नाह तौ नेह निबाहिए देह ह्न्यो परे। जो समुझाय सुझाइएं राह अमारग में पग धोखें धऱ्यो परे ॥ नीके में फीके ह्वै आँसू भरो कत ऊंचे उसास गरो क्यों भऱ्यो परे। रावरो रूप पियो अँखियान भऱ्यो सो भऱ्यो उबऱ्यो सो ढऱ्यों परे ॥ ८२ ॥

आए कहूँ रति मानि लख्यो तिय के अंसुवॉन की धार चली ह्वै। देखि कहा रघुनाथ कह्यो तौ कही सकुचै इमि चातुरता छ्वै ॥ रावरे को मुख चंद चितै ए कुमोदनि आँखें अनंद महा भ्वै। ही मे न बंद सकी करि फूल तें ऊपर ह्वै मकरंद चल्यौ च्वै ॥ ८३ ॥

जावक सीस धरें उठि भोरही पीव कहूं ते प्रिया ढिंग आयो। कौनै दियो यह भाल मैं लाल गुलाब को फूल कहो कहाँ पायो ॥ यों कहि मांगति खेलिबे को लइ बावरी बातन ज्यो बहलायो।

त्यों हँसिके मुख सों मुख छ्वाय लिलार स
प्यारे लिलार लगायो ॥ ८४ ॥

रैन जगे रतिरंग रँगे परभात भएँ पि
आये गये री । ऊँचे उरोजन खोज लगे उ
मौज मनोज के चोज दये री ॥ बूझिबे कों न
बाल रसाल के ओठन लों अखरा उनये री
पौरि ते दौरि के प्यारे ने प्यारी के पाननि लोयन
मूंदि लये री ॥ ८५ ॥

भोरहीं आवत नौलकिसोर बिलोकत ही
ललना उठि दौरी । बेनीप्रबीन दोऊ कर सों
गहि गाढ़े के लागि गई लडबौरी ॥ जाने कहा ये
अजाने सबै मे देखाय हों ले सखियान कों ओरी।
साँवरे रंग लगे हरि रावरो साँवरी ह्वै गई पीत
पिछौरी ॥ ८६ ॥

अंकित चारु चुरी वलया मलयागिर जात
लगो लखि लीजे । सिंदुर बिंदुर बानके चिन्ह
चुनी जरि केसर कुंदन कीजे ॥ चूर ह्वै लागि रह्यो
कन सो जसवंत जू पूरन प्रेम लहीजे । राख्यो
भुजा में छपाय जराय को कंकन सो हम कों
पिय दीजे ॥ ८७ ॥

नाह की छाती मे देखि नखच्छत नारि नवोढ कह्यो पुनि ऐसें। सुंदर बागे कि चोली मे भूलि के ल्याएहो चंदकला धरि कैसें॥ खेलिवे कों हम कों यह देहु जू यों सुनि के हरि दौरे हरेसें। लाय लई उर सों हँसि यों गसि दोऊ रहे कसि राखिये जैसें॥ ८८॥

लाल के भाल मै पावक सी अवलोकति जावक जोति जगाए। दौरि के गोरी भरे अँसुवा जसवंत सखी सो कहे चितलाए॥ दीजे हमे जू वताय हमारी सों वूझति तोहि हितू हित पाए। काल तौ द्वेज को टीको कह्यो अव आजु कहो ये कहा हें लगाए॥ ८९॥

अंजन बिंदु वन्यो अधरानि मे मे छवि आजु अनूपम पेखी। तो पुतरीन की छाँहँ परी ढरि ओर की ओर अली लखि लेखी॥ जो यह छाँह तो नाह कहा यह हे नखरेख हिये अवरेखी। लाय लई हँसिके हिय मे कहि तेरी सों तेरी हे तें अव देखी॥ ९०॥

आये कहूँ रति मानि के भोरही भूपन भेप सबे वदले हें। यों पिय को तकि रूप तिया तऊ

बोली, कछू न बुरे की भले हैं ॥ आँखिन छोर तें आँसू गिरे कहि सुंदर काजर सों मसले हैं। सो छवि यों अरविंदन तें अलि के मनो चेटुवा छूटि चले हैं ॥ ९२ ॥

राति कहूं रमिके मनमोहन प्रात वड़े उठि गेह कों आये। देखतही उर माँह नखच्छत वाल के लोचन लाल सुहाये ॥ भूलि गयो रस रोस वढ़ो उर वैन कहे न कछू मन भाये। आँसू कढ़े दृग माँहि जवै अँगिराय जम्हाय जम्हाय छिपाये ॥ ९३ ॥

हार वड़े औ उरोज गड़े उर यों निरख्यो ढिंग प्यौ परभात है। ताही समै नख ते सिख लौं अति तीछन ताप गयो चढ़ि गात है ॥ चित्र मे काढ़ी सी ठाढ़ी ठगी सी रही, कछु देख्यो सुन्यौ न सुहात है। रोचन से भए लोचन लाल सकोचन ते न कही कछु वात है ॥ ९४ ॥

मुख आरसी मे लखि आयो करो सिख सेवक यों कहि आली भई। धन रावरी वावरी तें वढ़ी है गुन जोवन जोति निहाली भई ॥ समुझो समुझाओं कहा अव मे सिखि लाज मनोज-

प्रनाली भई । अखियाँ सम सोच सनी इनकी अँखिया दोऊ रोवत लाली भई ॥ ९५ ॥

आइये बैठिये आज अजों अँखियानि तें आरस होत न हीनो । साँवरे अंग मे साँवरोई कछू आज विराजि रह्यो पट झीनो ॥ भाग तें आए हो भौन हमारे पे काहू सिंगार भलो यह कीनो । ओठ मे अंजन रेख दई अरु भाल मे लाल महावर दीनो ॥ ९६ ॥

जाही पै आए हो मान महारति साँझ समै पुनि ताही पै जैहो । आवत प्रातहि योंही चले घर मेरे यहाँ पै कहा सुख पैहो ॥ चिन्ह लगे गर में कुच दोउ के मोहि भले फिरि अंक मिलैहौ । देखहु क्यों न सनाथ के अंक कहाँलों कलंकी कलंक छिपैहो ॥ ९७ ॥

पीतम आये प्रभात तिया मुसकाय उठी दृग सों दृग जोरे । आगे कै आदर कै मतिराम कहै मृदु बैन सुधारस बोरे ॥ ऐसे सयान सुभायन हीं सों मिली मनभावन सों मन भोरे । मानगो जान सुजान तबै अँगिया की तनी न छुटी जब छोरे ॥ ९८ ॥

नख ते सिखलों लखि मोहन को तन लाड़िल
लौटिन पीठि दई। कवि वेनी छबीले भरी अँक
वार पसारि भुजा करि नेह मई॥ यह गुंज क
माल कठोर अहो रहौ मो छतियाँ गड़ि पी
भई। उचकी लची चौंकी चकी मुख फेरि तरे
बड़ी अँखियाँ चितई॥ ९९॥

भोरही भाँवतो आनि कह्यो तिय गैल कै नैन
किये सकुचौंहैं। लाल लिलार लला को लखे
गए लोचन ह्वै ललना के ललौंहैं॥ डोरन हीं बिन-
हार हिये लखि दूती की ओर तकै सतरौंहैं॥
पाँय अँगूठे खरी छिति छोलति बोलति है न
चितौति है सौंहैं॥ १००॥

साहस हूं न कहूं दुख आपनो भाखे बनै न बनै
बिन भाखैं। त्यों पदमाकर यों मग में रँग देखति हौं
कब की रुख राखें॥ वा बिधि साँवरे रावरे कौन
मिले मरजी न मजान मजाखैं। बोलनि बानि
बिलोकनि प्रीति की वे मन वे न रही अब
आँखैं॥ १०१॥

आए हो मेरे मया करि मोहन मोहनी मूरति
मैन मई है। आरस सों रस सों अनुराग सों

चाही कि दीठि सों दीठि छई है ॥ रावरे ओठन अंजन देखि कै मीरन मो मति तेह तई है। मानहूं आन तें बोलिबे कों वहि भौंवती ने मुख छाप दई है ॥ १०२ ॥

खंजन को परदा करिकें अलि कंज दुवो पखुरी पर रागें। काम तरोवर साख उए ससि बाल विसाल महासुख पागे ॥ चित्रइ सो सरदार बनाय विचित्र महा जिहि ते जस जागे। बालन सीख सिखाइन तें धरे लाल के पिंजर लाल के आगे ॥१०३॥

ताए हुतासन में न घरी भरिना मनि मानिक के जरवाए। खेंचि खराद चढाए नहीं न सुढार सुढारिन मध्य ढराए॥ ए सरदार कहो हम सों तुम स्याम सुजान कहा कर पाए। वे कलधौत कड़े ककना कहु कौन गँवार सुनार बनाए ॥१०४॥

रीत पतिव्रत सुंदर की पति में मन वाको रहे अनुरागी। आप सुखी पति होत सुखी पति के सुख दुष्यित होत सभागी ॥ आपर दक्षन ना हरि दछत तेरे कहावत को वुधि जागी। मेर ही ओठ को चाहिये पीर कै आपने ओठन काटन लागी ॥ १०५ ॥

आजुही के अधरातक में अधरा जुग देख्यो न काहू जनायो । या सपनों को सुभाउ कहां तुमही पिय आपन बुद्धिन भायो ॥ नींद विदा कै दई जबते महाराज हियो चक चोहट छायो । लाल गयो छुट मेरे हिये तें कहा कहिए जो परोसिन पायो ॥ १०६ ॥

भावे नहीं मुहि कोटि उपाइन आपन पान की पान सो जोल है। काल्ह गए तुम आन ढिठाई हो गाठि हिये कहो क्यों कर खोलि है ॥ ब्रह्म भनें तुम मो सहयो कहु तो संग नेह डुलाइन डोलि है । आय हो आज उजागर बोलन ए दई हों तुम सो फिर बोलि है ॥ १०७ ॥

विसरो वल दूति सहेलिन को औ चिचोरी के चेरिन को अखिवो । वतिया चिकनाइ सबै विसरो वल हाइ हहा करतें करिबो ॥ उसरो वनमाल को टूटवो लाल ओ धूरि तें भालहू को भरिवो । अब नेकहू नाहि परो पिय पाइन बेनन पाइन को परिवो ॥ १०८ ॥

जान परी जेहि लायक हो इनहीं गुन ते घर घाले कई को । मोहि कलंक हुतो इतनो

यह दोष तुम्हें नहीं दोष दई को ॥ मोतिय राम न वाद कछू हम सों तुम सों यह बीच भई को । देहु कृपा करि राह इतै उत लेउ निवाहन नेह नई को ॥ १०९ ॥

लोचन लाल गुलाल भरे की खरे अनुराग सों पागि जगाये । कै रस चाँचरि चौंचँद मैं छतिया पर छैल नखच्छत छाये ॥ भीजि रहे श्रम नीर सुजान धरौ डग ढीलिये लागौ सहाये । भोरहू ऐसी खेलारिन पैं घनआँनद का छल छूटन पाये ॥ ११० ॥

हिय की गति जानत जान सुजान हौ, कौन सी बात जू आय दुरी । टपक्योई परै हिय अंकुर ओस लौं ऐसी कछू रस रीति बुरी ॥ बिछुरे कित साँति मिलेहू न होति छिदी छतियां अकुला बिछुरी । तुमहीं तेहिँ साखी सुनो घन आनद प्यार तिगोड़े कि पीर बुरी ॥ १११ ॥

बंक बिसाल रँगीले रसाल छबीले कटाच्छ कलानि मै पंडित । साँवल सेत निकाई निकेत हियो हरि लेत हो आरस मंडित ॥ बेधि कै प्रान करो फिरि दान सुजान भरे खरे नेह अखंडित ।

आनद आसव घूमरे नैन मनोज के चोजनि ओज प्रचंडित ॥ ११२॥

एहो हितू हित ऐसोई कीजत कै हित साँचो कियो उपखान है। बेनी हँसाय हमैं जग मैं बरसाय सनेह बढ़े यतमान है॥ पौरि पराई के पाहरू ह्वै बलि कीबो गरूर बड़ोई अयान है। नातो कहा हम सों तुम सों रस राखिबो सैनन हीं को सयान है॥ ११३॥

रमि रैन सबै अनतै बितई सो कियो इत आवन भोर ही को। नहिं छूटत छैल छबीले लला जो सुभाव रह्यौ परि छोरही को॥ हित प्रान है सोहन बेनीप्रबीन कहो नित है उत ओर हीं को। तरवा सहरावन मेरे चले हरवा पहिराय कै और ही को॥ ११४॥

भोरही आवत प्रीतम के टकटोरिबे कों सजनी समझाई। चोरिबे कों चितयों वित बालनै कोरिक कामकला बगराई॥ तोरि न दीजिये मोतिन माल तें मोरिये ना मुख भाखि अगाई। थोरि ही बार में आँगुरी छोर तें मानिक की मुद्री उतराई॥ ११५॥

ह्यां हम सों मिलिबो ठहरायके सैन कहूं अनतें ही करीजे। भोरही आय बनाय के बातन चातुर ह्वै बिनती बहु कीजे॥ ऐसिये रीति सदा मतिराम सु कैसे पियारे जु प्रेम पतीजे। सौंहैं न खाइये जाइये ह्यां तें न मानिहौं जोऊ पै लाख न दीजे॥ ११६॥

छैल की छाती मैं छाप छबीली की छोभ छई छतियाँ छबि छाकी। झीनि झगा मैं झपी झुमका दुति झूमैं झुकै झपकैं दृग ताकी॥ ऐंड़ भरे मद पैंड़ धरें उघरे न कछू मति की गति थाकी। बाँकी सी दीठि फिराय कह्यो अहो जाउ जू दै करि कालि की बाकी॥ ११७॥

मोहि चढ़ी तरुनाई नहीं तुम्हैं चोप चढ़ी इहिं ओप भुराए। बेनी जबै उभरे कुच रंच परे तुम मानो महा धन पाए॥ जाहू जू जानि परे हौ खरे कित दूतिन सों जित भेद लगाए। मैं अपनाए जबै चित दै हित तोरि कहा चित दै इत आए॥ ११८॥

द्वारिका छाप लगे भुजमूल कह्यो फल बेद पुरानन तीन है। कागद ऊपर छाप सुनी जेहि

को सिगरे जग जाहिर गौन है ॥ आप लगा लगाई जो कुंकुम की सो सोहाई लगे छवि सं उर भौन है । छाती की छाप को प्यारे पिय कहिये वलि याको महातम कौन है ॥ ११९ ॥

पग छाप सु भाल मे लाल कहा हिय को अहो माल दई गुन हीनी । पल पीक की लीक रची असुची वलि मे नखरेख खची दुख भीनी ॥ यह स्यामलता अधरान धरी सु करी घनस्याम सु नीति प्रवीनी । मुखही तो अलीक रचे हैं लला तुम काहे सजाय समीपिन कीनी ॥१२०॥

आए कहूं रति मानि के मोहन मोहिनी देखि भई मन हीनी । सुन्दर दास तुमैं न कछू विधि मेरे लिलाट मैं यों लिखि दीनी ॥ वैर कन्यो सिगरे जग सों तुम सों हित सो तुमहू यह कीनी । सुन्दरि यों इतनो कहिके भरि सांस लयो अंखिया भरि लीनी ॥ १२१ ॥

पाछे जो प्रीति करी सो करी अब आन परी तुमै औरन की दब । लालन राखिये लालनहार करी जिहि प्यार भरो कर दे सब ॥ को बिन काज करे बकवाद सुनी हती आज लई लखि

वा छत्र । आज तें राज करो वलि जाउं सु
काज कहा हम सों तुम सों अब ॥ १२२ ॥
भोरहीं आये कहूं तें सखी रति की सिगरी
लगी अंग निसानी । प्यारी के आँसू चले दुख
ते लखि बूझी यों प्यारे कहा उर आनी ॥ लाज
तें उत्तर आयो न और कही तब यों रघुनाथ
सयानी । कीन्ही खटो मन मोसों सु देखि चल्यो
अँखियान को जीभ तें पानी ॥ १२३ ॥
सालत है उर में हँसि बोलिबो आजु की ये
लखि के झिझिकारियाँ । नीर नदी करि जारियाँ
हारियाँ आखें हमारी बिचारीं दुखारियाँ ॥ कौन
सी बात नवीन के कीजिये सोच परेखो परे न
सुमारियाँ । नेकु न लाजत हे मिलते अब देखि
के भाजत हैं बलिहारियाँ ॥ १२४ ॥
हम को तुम एक अनेक तुम्है उनहीं के बिबेक
बनाय वहो । इत आस तिहारी तिहारी उते
बिभिचारी को नेम कबै निबहो ॥ मन भावै ममा-
रख सो ई करो अनुराग लता जिन बोय दहो ।
घनस्याम सुखी रहो आँनद सों तुम नीके रहो
उनहीं के रहो ॥ १२५ ॥

हम को तुम एक अनेक तुम्हे उनहीं के बि
बिकाने रहो। इत चाह तिहारी तिहारी उतै बिभि
सनेह में साने रहो ॥ हम तो अब और की अं
भई उनहीं को प्रिया निज जाने रहो । अरसा
रहो सरसाने रहो हरसाने रहो तरसाने रहो॥१२
तुमरेई लिये ब्रजबीथिन मे फिरि के बि
देखें तई तो तई । नहिं काहू कि खोरि हे यां
कछू दई मोहि ब्यथा जो दई तो दई ॥ हनुमा
इती बिनती हे सुनो बिछुरें निसि मेरी गई ते
गई । उनहीं को लगावो लला छतियाँ हम को बद
नामी भई तो भई ॥ १२७॥
रावरे नेह को लाज तजी अरु गेह के काज
सबै बिसराये। डार दयो गुरु लोगन को डर
गाँव चवाय मे नाँव धराये॥ हेत कियो हम जो
तो कहा तुम तो मतिराम सबै बिसराये । कोऊ
कितेक उपाय करो कहूँ होत हैं आपने पीउ
पराये॥ १२८ ॥
गुन औगुन का कहिये किहि तैं अपनो तन
आप जराने परो। सब गाँव मे गैल में गोकुल मे
गुरु लोगन देखि लजाने परो ॥ सरदार बिचार

विनां बन के बन के विन काज, विकाने परो । विन जाने अजाने सु जाने हमें करि प्रीति महा पछि- ताने परो ॥ १२९ ॥

सीख न मानि सयानी सखीन की यों पदुमाकर की अमनें की । प्रीति करी तुम तें बजिकें सु बिसारि करी तुम प्रीति घनें की ॥ रावरी रीति लखी इमि साँवरे होति है संपति ज्यों सपने की । साँचहूँ ताको न होत भलो जो न मानत है कही चार जने की ॥ १३० ॥

पापी पिया से सदाँ हीं रहे दृग पायो न मैं कहूँ पानिप पीको । घेरि रहे न भए चहुँघाँ घर- हाँई करें उपहास कितीको ॥ नाहक हौं बदनाम भई न भयो परमेस मनोरथ जीको । जो कहूँ अंक से लागती री तौ कलंक हू लागिबो लागतो नीको ॥ १३१ ॥

रोज न आइये जो मनमोहन तौ यह नेक मतौ सुनि लीजे । नैन हमारे तिहारे वसे सो कहो बिन देखें सु कैसे के जीजे ॥ ठाकुर लाल पियारे सुनो विनती इतनी पै अहो चित दीजे । दूसरे तीसरे पाँचयें सातयें आठयें तौ भला आयबो कीजे ॥ १३२ ॥

छल छोरिकै दौरि मिले तब तो अब औ
नहीं चित लावनो है । रस लोभ अधीन भ
अब तौ कछू लालच दै बिरमावनो है ॥ क
ठाकुर बाँह गही सो गही पुनि सुदत लौं पहुँच
वनो है । यह नेह की नाव चलाई सों तो प
खेई कै पार लगावनो है ॥ १३३ ॥

रमि कै रस रीति की गैलन माहिं अनीति क
पंथ न गाहिये जू । अब तौ छल छंद की बा
तजो हँसि बोलि कै चित्त उमाहिये जू ॥ रसिय
कर जोरि करौं बिनती कछू और हमैं नहिं चाहि
जू । यह प्रेम की आँखें लगीं सो लगीं पै कुलीन
ज्यों ओर निवाहिये जू ॥ १३४ ॥

हम चोरी तिहारी करी न कछू चितचोर
किते कतरान लगे । यह नीति नहीं है अनीति
महा करि प्रीति कहा इतरान लगे ॥ मुख रावरो
प्यारे विलोके बिना अँग अंग सबै पतरान लगे।
रसिक हम सों सतरान लगे हँसि औरन सों
बतरान लगे ॥ १३५ ॥

प्रीति करी तुम तें हम ने निसिबासर रूप
तिहारो सराहत । वृद्धि परी बिपरीत कछू हित

और किये इत रीति निबाहत ॥ एहो हरी इन बातन तें तुम काहे कों मेरो हियो नित दाहत ॥ पन्नग की मनि कीनी तुम्हें तुम पन्नग की केंचुरी कियो चाहत ॥ १३६ ॥

छाँडि पतिव्रत प्रीति करी निवही नहीं तौन सुनि हम सोऊ । मौन भये रहनोहीं पर्यो सहनोहीं पर्यो जो कह्यो कछू कोऊ ॥ साँची भई कहनावति वा कवि ठाकुर कान सुनी हुती जोऊ। माया मिली नहिं राम मिले दुविधा मे गये सजनी सुनो दोऊ ॥ १३७ ॥

जानत तो अपने नहीं होत पराय पिया यह वेदन ताई । सो परहेलि के प्रीति करी गुरु लोगन में कुल कानि गँवाई ॥ ठाकुर ते न भये अपने अब कौन कों दोस लगाइये माई । दूध की माखी उजागर वीर सो हाथ मैं आँखिन देखत खाई ॥ १३८ ॥

जाके लियें गृहकाज तज्यो न सिखी सखियान की सीख सिखाई । वैर कियो सिगरे ब्रज गाँव सों जाके लियें कुलकानि गँवाई ॥ जाके लियें घर वाहिर हूँ मतिराम रहे हँसि लोग चवाई

ता हरि सों हित एक ही वार गँवारि मैं तोर धार ना लाई ॥ १३९ ॥

ए घरहाँई लुगाइन के ढिग साँवरे रावरे के गुन गाए । जानें कछू न सयानप ए करिहैं सँग मैं बिसवास बढाए ॥ दोस दें कौन सों रोस करों अपसोस हिये के मिटैं न मिटाए । मैं निज हाथन हीं ब्रजनाथ दियो तुम्हें भूलि कै हाथ पराए ॥१४०॥

कासों कहा मैं कहौं दुख यों मुख सूखत ही है पियूष पिये तें । त्यों पदमाकर या उपहास की त्रास मिटै न उसास लिये तें ॥ व्यापै व्यथा यह जानि परी मनमोहन मीत सों मान किये तें । भूलि हूँ चूक परी जो कछू तेहि चूक की हूक न जाति हिये तें ॥ १४१ ॥

अनुराग सों खेलि फागु थक्यो रह्यो कंत इकंत कहूँ टरि के । पहुँची दोउ सौतें समीप तहाँ दुरि अंजन आँगुरी मैं करि कै ॥ यह पेंच कियो तहँ छैल छबीले कछू छल रीति हिए धरि कै । मुह एक के दीन्ही गुलाल मुठी लई एक को तालों भुजा भरि कै ॥ १४२ ॥

सँग नील बधू लिए दोउ अटा पर बैठे त्रिलो-

कत जोन्ह अरी । रघुनाथ गुलाब को धोखो बनाय मँगाय के वारुनी पास धरी ॥ पिश्रो आपु औं के हठ प्यायो उन्हें सरसाय के एकहि नींद भरी । तिय एक सों काम कला रचि के सब राति ळला रस लूटि करी ॥ १४३ ॥

अति सुन्दर मंदिर मे रुचि सों परजंक विछाय दयो है अली । लखि काम ते स्याम महा अभिराम बनाय के बानिक भाँति भली ॥ मनभाई निहारि विचारि हिये चतुराई करी तहाँ छैलछली । कर एक सों आरसी के मुख ओर गही कर एक सों कंज कली ॥ १४४ ॥

बैठी ही भाँवती दोऊ जहाँ तहाँ मोहन आनि करी चतुराई । वेनी जु तेरे विलोचन चाहि कोऊ कहै कौंलनि यों छवि पाई ॥ होंहूँ लख्यो करि नीरे दुहून वहू कियो भाँवते दीठि बराई । के बस एक तिया वतियान सों एक तिया छतिया सों लगाई ॥ १४५ ॥

तीज के आज सिंगार के काज बरोवरि साज धन्यो दुहुँ आगे । साजे लगी अपने कर एक प्रवीनता सेवक सों सुनि रागे ॥ एक पै रोस

वेहोस वखानत बेंदी त्रिरी कजरा बहु वागे
भूखन अंगन अंगन सेवक आपने हाथ सँवार
लागे॥ १४६ ॥

मध्य दुहून के बैठे लला कियो हास विला
महा सुख पाई । दोउन तें पुनि श्रीधर जू रस व
वतियाँ कहि लीन्ह भुराई ॥ एक तें बाँए बता
कह्यो लखु नागिनी नेरे अचानक आई । ताक
लागी तिया जब लौं तब लौं लियो दाहिनी क
उर लाई ॥ १४७ ॥

राजै नवीन निकाई भरी रतिहू तें खरी वे
दुहूँ परजंक मै । आइ के बैठे तहाँ मनमोहन
ज्यों घन बीच लसै दु मयंक मे ॥ सीसा उसीसा
के सीस तें लै कर एक के सौंप्यो जु प्यारे ससंक
मै । लागी निहारन आरसी जौ लगि तौ लगि
दूजी भरी पिय अंक मे ॥ १४८ ॥

आँगन आई अरी नदनंदन चंदन तें छवि
छाप छपाई । छैल छली छरकाइल छिप्र छको
मद के मद छाजत माई । हा सरदार न जान
परी जु करी अधिकी अलि आप अढाई । दे

पिचकी इक ओर मनोहर एक के गाल गुलाल लगाई ॥ १४९ ॥

चौपर खेलती दोऊ दुरें तहां आइगो लंगर सूधे सुभाइ कें। हारिहि सों मिले आपु हि यों ठहराइ हराइ दई सुख पाइ कें॥ जीत के जोम भरी हासि येक रही इक बैसियो वैठ लजाइ कें। कीहू को नेक न संक करी भरी अंक मयंक मुखी सुख पाइ कें॥ १५० ॥

खेलत फाग खिलार खरे अनुराग भरे वढ़ भाग कन्हाई। एकही भौन में दोहुन देखि के देव करी इक चातुरताई॥ लाल गुलाल सों लीनी मुठी भर वाल की भाल की ओर चलाई। वा द्रिग मूंदि उते चितई इन भेंटी इते ब्रपभान की जाई॥१५१॥

जाय नहीं कुल गोकुल मे अरु दूनी दुहूँ दिसि दीपति जागे। त्यों पदमाकर जोई सुने जहँ सो तहँ आँनद मे अनुरागे॥ ए दई ऐसो कछू करु व्योत जो देखे अदेखिन के दग दागे। जामे निसंक कै मोहन कों भरिये निज अंक कलंक न लागे॥ १५२॥

देख्यो चहूं निसि वासर हूँ पै न देखिबे की

छू जानति घातें । मेधौं कहाँ तें गई ओहि ओर
ई परि मेरी धौं दीठि कहाँ तें ॥ व्याहि दियो
रहें तात कहूँ मोहि मे सखि तोहि सिखावति
गतें । तूँ गुरु लोगन सों न करे किन कान्ह सं
मेरेई व्याह की बातें ॥ १५३ ॥
गुंज हरा रिखिनाथ गरें कढि कुंजन तें छ
पुंजन छाइगो । मंद हँसी है वसीकर सी सरस
रुह लोचन लोल नचाइगो ॥ सूही सजी सिर
पगरी लियें फूल छरी इत औंचक आइगो ।
नियरे सियरे हग को पियरे पट को हियरे
समाइगो ॥ १५४ ॥
गैल मे छैल कढै जितहीं तहीं वंसी वज
हीं यह टेक है । गेह सों नेह भरीं कढै कां
दामिनी सीं छुटि जात विवेक है ॥ देखतीं
निमेख न लावतीं लेखतीं या जग ठाकुर एव
होति निहाल महा सो वडी अँखियाँन सों
निहारत नेक है ॥ १५५ ॥
मोर पखा मतिराम किरीट मनोहर मूर
मन लेगो । कुंडल डोलनि गोल कपोलनि
... वीजनि वेगो ॥ लोल विलोचन

सों मुसकाय इतै अरुझाय चितैगो। एक घरी घन से तन सों अँखियान घनो घनसार सो दैगो ॥ १५६ ॥

को है अरी वह गैल चलो गयो बेनु बजावत साँवरो सोहै। सोहै सदाँ अँग अँग बिभूषन धीर सुधा सब को मन मोहै ॥ मोहि बताव हियें हित कै बलि गाँव औ ठाँव जहाँ अब जोहै। जोहै सोहै सुनु भोरी भटू जनि झाँकि झरोखें को जानिये कोहै ॥ १५७ ॥

अंबरपीत कसें कटि सुन्दर मैन हूँ जाहि बिलोकि लजो है। साँवरी सी रही सोहनी सूरति हेरत को जुवती नहीं मोहे ॥ मोसों बताव सखी हितकै अरी तूँ हनुमान जो राखति छोहै। नेकु चितै दुचितै करि मोहि गयो री इतै सो के जानिये को है ॥ १५८ ॥

चन्दन खौरि लिलाट बिराजत मोरपखा सिर ऊपर सोहै। कुँडल लोल कपोल लसै मुरली की बजावनि मैं मन मोहै ॥ मोहि बिलोकि बिलोकि हँसै चित चोर बडे बडे नैनन जोहै। पूछति गोप-बधू भगवंत या सांवरो सो जमुनातट को है॥ १५९॥

सांवरो रंग अनंग सो अंग है गायँन के सँग
जात उवाने। यों गुन देव जू हेर्यो अचानक
काव कहीं सुख दै गयो प्राने ॥ ज्यो न सुहात
कछू विन देखें रि कासों कहीं कोउ जी की न
जाने। आयगो कान्ह समायगो नैननि नायगो
चेटक गायगो ताने ॥ १६० ॥

एक वहै मुख देखोई भावत वादि सवै मिल
माडती राहो। कीजै कहा वस है न कछू सिग
मिलि डाहन आई तौ डाहो ॥ मोहि न काज क
कुलकानि सों जाहि निवाहनी है सो निवाहै
मेरे तो माई वहै उर आनि रह्यो गडि गै
को चरवाहो ॥ ॥ १६१ ॥

क्यों इन आँखिन सों निरसंक है मोहन
तन पानिप पीजै। नेकु निहारें कलंक लगै
गांव वसें कहो कैसे कै जीजै ॥ होत रहै म
अति राम कहूं वन जाय घडो तप कीजै
वनमाल हियें लगिए अरु व्है मुरली अध
लीजै ॥ १६२ ॥

देखि हमें सव आपुस मे जो कछू मन
कहती हैं। ए घरहांई लोगाई सवै

द्यौस नेवाज हमे दहती है ।। ब्राते चवाव भरी सुनिके रिसि लागति पै चुप ह्वै रहती है । प्रान पियारे तिहारे लिए सिगरे ब्रज को हँसिबो सहती है ॥१६३॥

या डरहीं घरही मे रहीं कहि देव दुन्यो नहीं दृतन को दुख । काहू की बात कही न सुनी मनमारि बिसारि दियो सिगरो सुख ॥ भीर में भूले भए सखि मै जब तें ब्रजराज की ओर कियो रुख । मोहि भटू तबते निसि द्यौस चितोत हीं जात चवाइन को मुख ॥१६४॥

गोकुल के कुल को तजि के भजि के बन वीथिन मे बढि जैये । त्यों पदमाकर कुंज कछार बिहार पहारन मे चढिजैये ॥ है नंदनंद गोविंद जहां तहां नंद के मंदिर मैं मढिजैये । यों चित चाहत एरी भटू मनमोहन लै के कहूँ कढि जेये ॥१६५॥

धारत ही बन्यो येही मतो गुरु लोगन को डर डारत ही बन्यो । हारत ही बन्यो हेरि हियो पदुमाकर प्रेम पसारत ही बन्यो ॥ वारत ही बन्यो काज सबै वरु यों मुख चंद निहारत ही

बन्यो। दारत ही वन्यो घूंघुट को पट नंदकुमार निहारत धन्यो॥ १६६॥

कुल लाज जँजीरन सो जकन्यो जुलमी तऊ ऊधम ठानत है। तन मैन महावत एडके आंकुस ताहू की आनि न आनत है॥ झुकि झूमे झुके उझके न रुके परमेस जू जो जग जानत है। पिय रावरो रूप विलोकें बिना मन मेरो मतंग न मानत है॥ १६७॥

सब संक ताजि गुरु लोगन की कुलकानि की आनि न आनती हैं। करि कोटि उपाव बुझा कोऊ अपनी एक टेकही ठानती हैं॥ परमेस और न जानें कछू एक प्रेम को पंथ पिछान हैं। पिय प्यारे तिहारे निहारे बिना अँखि दुखियाँ नहीं मानती हैं॥ १६८॥

नलिनी रविमध्य को आड़ करे जुग फूटें जुरा उडावहि को। मन चुंवक बीच को लोहो उ तहां दूसरो रूप दिखावहि को॥ कवि संभु स की रीति यही बिछुरें जल मीन जियावहि गुनवारे गोपाल की आंखिन तें अरुझीं आँ वहि को॥ १६९॥

ठाढ़ी कहा दुचिती सुचिती चलु देखुरी कौनसी गोहन गो। वह वेनु बजाय रिझाय हमैरी सु धेनु कहूं वन दोहन गो॥ कवि ठाकुर ऐसिही जानि परी अरी गुंज के हारन पोहन गो। कोऊ दौरियो टेरियो फेरियो री वा अहीर को मोहन मोहन गो॥ १७०॥

रैन दिना घुटिबो करैं प्रान झरैं अंखियां दुखियां झरना सी। पीतम की सुधि अंतर मै कसकै सखि ज्यौं पंसुरीन मै गांसी॥ चौचंद चारु चबाइन के चंहु ओर मचै बिरचै करि हांसी। यौं मरिये भरिये कहि क्यों सु परो जिन काहू के प्रेम की फांसी॥ १७१॥

भूलिहू मो गली आवे जो मोहन पूरव पुन्यन को व्रत पूजे। हाय दई न बसाय कछू दुरि देखिबो दूबर छांह को छूजे॥ मागौं यहै बिधिना पै बड़े खिन जौ कबहूं पिय आसही पूजे। चौथि को चंद लखें व्रजचंद सों लागो कलंक पै ऊजूर हूजे॥ १७२॥

सबरे दिन सास रिसात रहै ननदी नित बोल कुबोल कहै। सकि ऊंचे न झांकि सकौं कबहूं गुरु लोगनि को उपहास दहै॥ मिलि भागन आनि

अचानक तूं यह ओसर पाइ हियो उमहे । व
तूंही उपाय बताव सखी जिहिं लाल मिलें अ
लाज रहै ॥ १७३ ॥

अजू नंद के नंदन सों कहिये कहो नेनी
रावरो होस रहे । संग छाँह ज्यों सास फिरें अन
खानी जेठानी ढुकाढुकी सौसरहे ॥ कवि नाथ
जू जानति हौं जियमें बय बीति गयें कह
मोसरहे । पर कीजे कहा इहिं गांव को लोग गुं
चरचा न को चौसर है ॥ १७४ ॥

यह डोंड़ी सनेह की औंड़ी बजें जग भांडी
भली वकही तो कहा । कुलकानि तें कोलों कनोड़ी
रहीं पुर कानि रही न रही तो कहा ॥ चित तो
गड़िगो या चितौनिही में कहो नाथ चही न चही
तो कहा । जब लाज नेवारि भई हरि की अब
लाज रही न रही तो कहा ॥ १७५ ॥

हम जानती हैं सुनी हूं के गुनी कुलकानि सों
ज्ञान मुरो सो मुरो । रंग सांवरो ऐसो न छूटत
सेवक लालिमा लाइ पुरो सो पुरो ॥ अब का
समुझावति को समुझे जिय जो कछु आइ फुरो
सो फुरो । पट गांठि को जोरि मुआँरही मों मन
मों जाइ जुरो सो जुरो ॥ १७६ ॥

हौं कित ह्वै इत आनि कढ़ौंगी कहाँ तें इतै वह कान्हर ऐहै। ह्वै है कहाँ तें अचानक भेट कहाँ तें लिलाट लिख्यो फल पैहैं ॥ और सों और भई गति मेरी दईबे किसोर कहा कर देहै। हौं कहा जानो हमारेहू भाग की लागलगी अँखियाँ लगि जैहै ॥ १७७ ॥

साँकरी गैल वा खोरि हमै किन खोरि लगाय खिजैबो करो कोउ। धीरज देव धरो सो धरो अधराधर दंत पिसैबो करो कोउ ॥ हाय नहीं करिहैं कबहूं जिय घाय पै लोन घसैबो करो कोउ। रूप हमै दरसैबो करो अरसैबो करो की रिसैबो करो कोउ ॥ १७८ ॥

जा दिन तें निरख्यो नँदनंदन कानि तजी घर बंधन छूट्यो। चारु बिलोकनि कीनी सुमार सम्हार गई मन मारने लूट्यो ॥ सागर कों सरिता जिमि धावे न रोकी रहे कुल को पुल टूट्यो। मत्त भयो मन संग फिरे रसखान सरूप अमी रस घूँट्यो ॥ १७९ ॥

जब रीझि सवाद भरी अँखियाँ तव रूप भलो अरु पोच कहा। अपने अंग ब्याधि असाध

उठी तब बेदन हीं सों सकोच कहा ॥ रस रां
मिलाप सुधा अँचयो तब जाति औ पाँति
सोच कहा । छकि लौंड़ी भई हित डौंड़ी बज
कनौड़ी भए अवलोच कहा ॥ १८० ॥

कहते न बने कछुओ कहूघाँ सब की
हू तें बने सहतें । घर बाहिर घेर उठ्यो री
मनमोहन लालन के चहतें ॥ कहि ठाकुर
चले गहिये अरु जीभ चलें न बने गहतें । स
नदगाँव को कौतुक री लखतेही बने न
कहतें ॥ १८१ ॥

पिय मोहन को वह मोहिनी रूप निहारे
नाँहि जीजतु है । तिहिं तें जुलटी भली य
मैं सिखमानि सबै सुनि लीजतु है ॥ कहि
लाल के देखिबे के लिये ज्वाब न काहु वै
है । अब का कहिये अपने अरुझे सब
खुसामद कीजतु है ॥ १८२ ॥

चौचँदहाई जरैं ब्रज की जे परायो व
भाँति बिगारैं । काहू की बेटी बहून के
घर जाय कमंध से पारैं ॥ ठाकुर या
की होस ना आठहू गांठ रही हैं हमा

नेये करैं करनी करि आवे कहूं तो कहा करि पारैं ॥ १८३ ॥

काहु के होय तो कैसी करो किन तैसे मनै लगे तैसे सिखाये । ज्यों ज्यों अरी हटक्यो इन लोगन त्यों त्यों खरे बिगरे ये सवाये ॥ ठाकुर काहू रुचै न तो का करौं मोहि तो ऐसे लटे भले भाये । नैन हमारे हमारे मनै लगे चाहे जहाँई तहाँई लगाये ॥ १८४ ॥

ए जो कहैं तो भले कहिबो करो मान सहा सो सबै सहि लीजै । ते बकि आपुहि तें चुप होइँगी काहे कों काहु वै ऊतर दीजै ॥ ठाकुर मेरे मते की यहै धनिमान कै जोवन रूप पतीजै । या जग में जनमें को जिये को यहै फल है हरि सों हित कीजै ॥ १८५ ॥

अब तो जो भई सो भई सो भई हम वाही में आँनद लीवो करैं । इन कानन की यह बानि अरी बतरानि सुधा मधु पीवो करैं ॥ कविराम कहै अभिराम सरूप चितै चित वाही में दीवो करैं । सखि हों वा रँगीले के रंग रँगी ये चवाइने चौचँद कीवो करैं ॥ १८६ ॥

कानन दूसरो नाम सुने नहीं एकही रंग रँग्य
यह डोरो । धोखेहु दूसरो नाम कढ़े रसना मुर
काढ़ि हलाहल घोरो ॥ ठाकुर चित्त की वृत्ति यह
हम कैसे हूं टेक तजैं नहीं भोरो । बावरी वे अँखियं
जरि जाहिं जो साँवरो छोड़ि निहारतीं गोरो ॥१८

पूरब तें पुनि पाच्छिम ओर कियो सुरआपगा
धारन चाहै तूलन तोपि कै क्वै मतिमंद हुतासन
दंड प्रहारन चाहै ॥ दास जू देखि कलानिधि
कालिमा छूरिन तें छिलि डारन चाहैं । नीति सुनाय
के मो मन तें नंदलाल को नेह निवारन चाहै ॥१८

घर पास परोसिनी घेर करो अरु नाव धरो
व्रज गाँवरी री । जब ढोल दई बदनाम भई तब
कौन की लाज लजावरी री ॥ कवि ठाकुर प्रेम
फँद परी व्रज खोरि फिरों भई बावरी री । अ
होन दे बीरि हँसी सो हँसी हिरदे वसी मूर्रा
साँवरी री ॥ १८९ ॥

तुम चाहो सो कोउ कहो हम को नँदवारे
संग ठई सो ठई । तुमहीं कुल बीने प्रवीने स
हमही कुल छांडि गई सो गई ॥ रसखान य
प्रीति की रीति नई सुकलंक की मोटें लई ग्रो

लेई । इहिं गाँव के बासी हँसो सो हँसो हमें स्याम की दासी भई सो भई ॥ १९० ॥

दिवस देखति हौं दुति दूसरी देखे हैं जो दिन तें ब्रजभूप में पूरी रही री वहे पुर कानन आनन ध्यानन ओप अनूप में ॥ ये अँखियाँ सखियाँ हैं हमारी सो जाइ मिली जलबूंद ज्यों कूप में ॥ कोर करो नहिं पाइये केहूँ समाइ गई ब्रजराज के रूप में ॥ १९१ ॥

नाम कुनाव धरैं पल में चलि लोग लबार बुरे ब्रजमारे । नेक किसोर की ओर निहारत बात अनेक रचैं बदकारे ॥ कोन से नेन बिगूचे हमें अब जीतें सबै सब ते हग हारे । आन हमारे न हैं हमें आन के हैं हम कान्ह के कान्ह हमारे ॥ १९२

ननदी औ जेठानी नहीं हँसती तो हितू तिनहूँ कौं बखानती मैं । घरहाँई चवाव न जो करती तो भलो औ बुरो पहिचानती मैं ॥ हनुमान परोसिन हूँ हित की कहती तो अठानन ठानती मैं । यह सीख तिहारी सुनो सजनी रहती कुल कानि तो मानती मैं ॥ १९३ ॥

वारि गई एक झाँकी उहाँ मग रोकि सुतो

मिस के दधिदान को। वासों भटू भरि मे
भुजा पुनि नातो निकास्यो कछू पहिचान को
आई निछावरि के मन मानिक गोरस दै रस
अधरान को। वाही दिना तें हिये मे गड्यो
ढीठ चडो बडरी अँखियान को ॥ १९४ ॥
सासु कह्यो दधि वेचन कौं सु दई दुर
कहाँ तें धौं हाँकरी। मोहि मिले नृपसंभु ग
तमाल तरें वह गैल जो साँकरी ॥ मो तन
बडी अँखियाँन तें काँकरी लै फिर मो तन घ
काँकरी ओडि लई कर तें पै करेजे कहाँ
गडि काँकरी ॥ १९५ ॥
गाय के तान वजाय कै बाँसुरी
मोहनी मो सिर दीन्ही। ऐंठि कै पाग उ
पेचनि टेढी सी चाल चले रस भीनी
रिझाय कै जात भये मकरंद कहो सु क
लीन्ही। जाँवरी का पर नावरी बूझन साँव
वावरी कीन्ही ॥ १९६ ॥
बावरी तूँ तौ बकै वहु तेरा लग्यो
कहूँ यह घावरी। घावरी घायल जान
कै निसि वासर प्रेम सुभाव री ॥ भाव

भौन न नींद हियें अरुझी वह मूरति साँवरी । साँवरे रँग में हों तो रंगी न चढे अब दूसरो रंग सो बावरी ॥ १९७ ॥

बैर बढे तें बढै अतिहीं अब को कहि कै कढि कौन सों जूझे । जैसी भई हरि हेरत हीं सुतो को हिय की जियकी गति बूझे ॥ बाहिर हूँ घर हूँ मे सखी अँखियाँन वहे छवि आनि अरूझे । साँवरो रंग रह्यो उरमै सिगरो जग साँवरो साँवरो सूझे ॥१९८॥

ब्रजबीथिन मे फिरिबे के लियें गुरु लोगन हूँ मिलि कीन्ही खई । परमान्यो नहीं उनहूँ को कह्यो जिय ऐसी कछू मति आनि ठई ॥ तुम हूँ अब का समुझावती हौ बिधि ने हनुमान लिखी सो भई । अब तो मनमोहन हाथ सखी कुलकानि दई बदनामी ठई ॥ १९९ ॥

अब का समुझावती को समुझे बदनामी के बीजन वो चुकी री । तब तो इतनो न बिचार कियो यह जाल परें कहु को चुकी री ॥ कहि ठाकुर या रस रीति रँगे सब भाँति पतिव्रत खो चुकी री । अरी नेकी बदी जो बदी हुती भाल मे होनी हुती सुतो हो चुकी री ॥ २०० ॥

। जब तें दरसे मनमोहन जू तब तें अँखियाँ
ये लगी सो लगी । कुलकानि गई सखि बा
री जब प्रेम के फंद परी सो परी ॥ कहि ठा
नेह के नेजन की उर में अनि आनि खगी
लगी । तुम गाँवरे नावरे कोउ धरो हम स
रंग रँगी सो रँगी ॥ २०१ ॥
हम एक कुराह चलीं तो चलीं हटको इन
ना कुराह चलें । यह तो बलि आपनो सूझ
प्रनपालिये सोई जो पालें पलें ॥ कहि
प्रीति करी है गोपाल सों टेरें कहीं सुनो
गलें । हमें नीकी लगी सो करीं हमने तुम्हे
लगो ना लगो तो भलें ॥ २०२ ॥
नाम धरो जो चहौ सो कहौ कछू
सु तो कै चुकी हैं । लखि लाजत मैन जि
सों बलदेव सनेह तो बै चुकी हैं ॥ अ
नहीं समुझाँवन को मन भावन कों मन
हैं । अपने मग आप चलें हम तो नि
को फल ले चुकी हैं ॥ २०३ ॥
को चहुँ ओर सो चोचँद कीबो करें न
को डर मानती हैं । अपने अरु औरन

भली भाँतिन सों पहिचानती हैं ॥ गति भाल की सेवक जौ ध्रुव तौ सब प्रीति की रीति पिछानती हैं । तुम जानती हौ तौ वचायें चलौ हम जानती हैं की अजानती हैं ॥ २०४ ॥

अपवाद कोऊ किन कीबो करौ हम नेकु नहीं सक मानती हैं । वहि छैल छबीले कि चाहन तें द्विज प्रेम की वारुनि छानती हैं ॥ वेइ फूँकि कै पावँ धरैं सिगरी अपने कों सदाँ जे वखानती हैं । नहिं काज भलौ औ बुरौ तें कछू हम जानती हैं की अजानती हैं ॥ २०५ ॥

जिहिं तें तजि दीन कलिंदी को कूल औ भूल हूँ आई न जाय के री । कुल कानि की आनि हूँ एही हुती सो भई दुख दानि वजाय कै री ॥ अब कौन सोच रह्यो है सुमेर हरी भी निसंक बनाय कै री । जो कलंक लग्यो मोहि धाय कै री तौ सु अंक हू लागि हौं धाय कै री ॥ २०६ ॥

गुरु लोग करैंगे चवाव घनो तिन कों सुनि के नहिं भाखिहौं मै । करिहैं जो पै दंड प्रचंड तुपै सुमेरसहरि नहिं भाखिहौं मै ॥ वदनाम जो गाँव करै सिगरो तऊ रूप सुधा रस चाखिहौं

मे । ब्रजराज जो आजु मिलैं सजनी इहिं ला
सों काज न राखिहौं मे ॥ २०७ ॥

लहि जीवनमूरि को लाहु अली वे भली, उ
चारि लों जीवो करैं । द्विजदेव जू त्यों हर
हियें पर वैन सुधा मधु पीवो करैं ॥ कछु
खोलि चितै हरि औरन चौथि ससी दुति
करैं । हम तौ व्रज को बसिवोई तजो अब
चवाइने कीवो करैं ॥ २०८ ॥

जानि झुकाझुकी भेंप छपाय कै गाग
घर तें निकरी ती । जानो कहाँ तें कवै कों
ते आइ जुरे जितै होरी धरी ती ॥ ठाकुर
परे मोहि देखत भाग वचौं जु कछू सुघर
बीर जो द्वारन देहुं किवार तो मै होरी
हाथ परी ती ॥ २०९ ॥

हौं अलि आजु गई तरके वहाँ
कालिंदी नीर के कारन । ज्यों पग एक बढ़
रपट्यो पग दूसरो लागी पुकारन ॥ अ
धों कहाँ तें अचानक नंद को वारोरि मो
रन । जो गहि लेतो न मोहि कहूं
संदेस हू दीन्हे हजारन ॥ २१० ॥

बछरा सखि एक भज्यो खरिका तें महूँ तेहि दौरि पछेरो कियो। घन कानन जाय परी कपि त्यों लपटाइ दई भट भेरो कियो ॥ कुच कंचुकी केस कपोलनि त्यों अधरानन दे कै निबेरो कियो। श्रमसीकर कंप उसासनि सेवक संचित यों तन मेरो कियो ॥ २११ ॥

जानी न मै ललिता अलि ताहि जु सोवत माहिं गई करि हांसी । लाये हिये नख नाहर के सम मेरी नहीं तऊ नींद बिनासी ॥ लै गई अंबर बेनीप्रवीन उढ़ाय लटी दुपटी ठग मासी । तोरि तनी तन छोरि अभूषन देन कों भूल गई गल फाँसी ॥ २१२ ॥

बार बहारन भोरही हौं पठई मति हीन मतो के लोगाइन । घेरी किवार उघारत ही अलि मोर चकोर कठोर कुदाइन ॥ देव कहा कहौं देह दसा यह हौं सकुचौं कुल लोग लोगाइन । सासुरे की उपहाँस करें बिसवास करो तुम सासु गोसाँइन ॥ २१३ ॥

कौन सी चालि चली व्रज मे गुरु लोगन सों कहि बैर बढ़ावें । और की बात न कान सुने

औरनीं कहिं कै उलटी समुझावें॥ कौन बोलावन जात इन्हें निसि बासर चौचँद आन मचावें। चोरि चिवाइन चातुर ये हियरे को हरा अनत धरि आवें॥ २१४ ॥

आज भटू एक गोप कुमार ने रास रच्यो एक गोप के द्वारें। सुंदर बानक सों रसखानि बन्यो वह छोहरा भाग हमारें॥ ए बिधना जो हमें हँसतीं अब नेक कहीं उत कों पग धारें। ताहि बदों फिरि आवे घरें बिनहीं तन औ धन जोवन हारें॥ २१५ ॥

काहे ब्रजवालन मैं बसिबो बिन कारन बैरु करैं कुल वामैं। हौं गुरुलोगन माझ गनी कुलकानि घनी बरतौं प्रति जामें॥ हो तुम प्रान हितू सिगरी कवि सेखर देहु सिखावन यामें। गेल मैं गोपद नीर भर्यो सखि चौथ को चंद पर्यो लखि तामें॥ २१६ ॥

भूलेहु नंद के भौन न जैहों मैं तूं किन केतिको सौंह दिवावे। पाले परेवा अनेक तहाँ मनि मानिक देखि सुवा डर पावे॥ ओंठ मैं दाग कहूं परे जाय त्यों मो पै न केहूं कछू कहि आवे।

कैसेॱकरौं कहु मो मुख चंद की और चकोर जो पौंच चलावै ॥ २१७ ॥

जाति हौं गोरस बेचन को व्रजवीथिन धूम मची चहुँघां तें ॥ वाल गोपाल सबै अमनेक हैं फागुन मैं व्रांचि हौं कहां तें ॥ छींटि हूं जो परी वेनीप्रबीन कहूं पट मैं रंग की बरखा तें ॥ नेह के ज्योंहीं पठवती हैं करिहैं फिरि नेह भरी विष बातें ॥ २१८ ॥

देहौं सकौं सिर तो कहँ भाभी पै ऊख के खेत न देखन जैहौं ॥ जैहौं तो जाउ डेरावन देखिहौं वीचहीं खेत के जाय छपैहौं ॥ पैहौं छरीर जो पातन को फटिहे पट के हूँ तो हौं न डेरैहौं ॥ रैहौं न मौन जो गेह के रोस करेंगे तो दोस मै तेरोई देहौं ॥ २१९ ॥

संग गांव को गोधन लै सिगरो रघुनाथ भरे मन चाइन मैं ॥ नहिं जानिये जात रहे कित कों बन भीतर कुंज सुहाइन मैं ॥ दुख जानती है न कछू उत को छत लागत जो अंग पाइन मैं ॥ कहे धाय मिलाय कै आव उताल तू गाय गोपाल की गाइन मैं ॥ २२० ॥

जानि नहीं पहिचानि नहीं दुख होत यहै र
साँवरो कोरी । हां तो चली जमुनाजल कों क
दूलह सुद्ध सुभाव सों भोरी ॥ गाज परो ब्र
को बसिबो तुमहूँ सखि देखती हौं बरजोरी
मेरो गरो गहि ऐसें कहै तुम काहे न आवत
खेलन होरी ॥ २२१ ॥

गैयन घेरन वे चले गेह सु मे चली रैन भ
अकुलानी । स्याम सरीर महा इन को झलके मेरे
देह सुगंध सों सानी ॥ देखती तें न जो बेनी
प्रवीन न मानत केहूं अचंभित बानी । बेलि वे
धोखे गह्यो इन मोहि तमाल के धोखे इन्हें
लपटानी ॥ २२२ ॥

कामरी डारे कँधा पर देव अहीरक के सबही
ठहरायो । जोई है सोई है मेरो तो प्रान है
बाहिरी पाय मैं प्रान सो पायो ॥ कामरी लीन्ही
उढ़ाय तुरन्त ही कामरी मेरो कियो मन भायो ।
कामरी मो जिय मान्यो हुतो इहिं कामरी वारे
विचारे बचायो ॥ २२३ ॥

आजु अकेली उतावली हों पहुँची तट लों
तुम आई करार मे । बाल सखीन के हाहा किये

मन केहूँ दियो जलकेलि बिहार मै। सीतल गात भये सिगरे उछरी तो मरूं के कितेक हूं बार मै। कान्ह जो धाय धरे ना अली तो वही ती भली जमुना जलधार मै ॥ २२४ ॥

अब हीं की है बात हों न्हात हुती औचका गहिरे पग जात भयो। गहि ग्राह अथाह कों लै ही चल्यो मनमोहन दूरही तें चितयो ॥ द्रुत दौरि के पौरि के दास बरोरि के छोरि कै मोहि बचाय लयो। इन्हे भेटती भेटिहों तोहि अली भयो आज तो मो अवतार नयो ॥ २२५ ॥

उधम ऐसो मच्यो ब्रज मे सब अंग तरंग उमंग न सींचे। त्यों पद्माकर छज्जन छाति न छ्वै छिति छाजत केसर कीचे ॥ दे पिचकी भजी भीजी तहाँ परे पीछे गोपाल गुलाल उलीचे। एक ही संग इहाँ रपटे सखि ये भये ऊपर हौं भई नीचे ॥ २२६ ॥

आई सँदेस सुनावन कों सु भई कवि दूलह झेल हमारी। वारिये कुम्भकरन की नींद कि है मुचकुन्द की नींद कहा री ॥ ऊपर हौं मचकी मचकों लचके पलिका सखि देखि हहा री। तें

क्योंन। आय जगावै इन्हें हौं जगाय जगा जगाय कै हारी ॥ २२७ ॥ ... परिपूरन प्रेम तें पूजि सिवा प्रति जाम पति व्रत पालती हैं ॥ निसि वासर ध्यान धरैं तिनकै मन तें तन नेक न हालती हैं ॥ सरदार निवा हनहार वही हम को न कला लखि लालती हैं ननँदी ए तिहारी सुनें बतिया नटसाल से साहिब सालती हैं ॥ २२८ ॥ ... ... थिर की बतियाँ करि कै थिर जे थिरकी करि वे थिरकी हैं । वे खिरकी खिरकी न बनावत कै खिरकी खिरकी खिरकी हैं ॥ ए सरदार सुनैं सबरी नवरी नवरी नवरी ढरकी हैं ॥ वे घर की घर की न बिचारत ए पर की पर की परकी हैं ॥ २२९ ॥ । ... रहो अरगाइ लगाइ कै काहू सों काहे को देति हौ मार रिसानी । आज जो काहू के कान परैगी तो होयगी वैरिन की मन मानी ॥ कंकन टेव तिहारी यों आँकरी तूहि न जाहिर जात जिठानी । त्योंही त्यलाइ कुवजाधि लई अब जाइ मलाइ तु लाइ के पानी ॥ २३० ॥ ... । बैठियो देखि सुखेन सखी सँग बाल चितानन

देखि जेरी हैं। सास गनै निस बासर हू सुन एक की सोक बनाइ धरी है ॥ जान चतुर्भुज मोहि सबै निज सूधे सुभावन तें पसरी है । मैं इन को धौं कियो है कहा घर ग्वालिनी बैरिनी बैर परी है ॥ २३१ ॥ आवत याहि खिलाइबे कों नित सूने बिसूने तौहूँ सकाति हौं । छोह भरी बतियानहुँ सों यह छोहरा मोलि लई सब भाँति हौं ॥ टूटे हरा अचरा फटे ज्यौं जु सु त्यौं सुख लूटत हौं न अघाति हौं । योंही दिये छतियान खरोट पै आंखिन ओट भये मरि जात हौं ॥ २३२ ॥

। है निज काज करें अपने मन को तन को न दया उर धारति हैं । गिरि सों गिर आइ मिलावति फेर उपाइन सों विच पारती हैं ॥ मिलि सोंचहि यानी चवाइन ये कुलकानन नेक निहारती हैं। इन सो न उपाइ चलै कबहूँ मिलि मोहनी मंत्र सो डारती हैं ॥ २३३ ॥

। है बैठो भटू उठि मो ढिग आन सुता दिन की रिस पेट पचायें ॥ गारि दयें को न मानि भली बुरो या सुनि के सुर सोर सचायें ॥ तू न उघारिए आनन कों पट घूघट ल्यौ द्विग नेक नचायें ।

कामरी ओढि के नंद को सामरो ऐसे विचारे चयोर वचायें ॥ २३४ ॥

याही ते नीके परोस वसे सब अंत परोसई होत सहाई। आली हे सौति मतो रस वादिने जानति हो नहीं पीर पराई ॥ कान्ह उठाय लयो मुहि दौर कहा कहिए कविराम वडाई । वैठि गई सुधि यो न रही तन ऐसी कछू मोहि घूमरि आई ॥२३५॥

खेलि रहे हैं हमेंस जिहाँ उहि वैस कहाँ वर ही सुखदानि है । वेसही पीछे तें आन के मोहन मूदत नेनन काहू की कानि हे ॥ ए तो सयानी हैं जानती हैं यह रावरी जो लडवाउरि वानि है। देखि है कोऊ जो ऐसे मे और सो ओर की ओर कछू जिय आनि हैं॥ २३६ ॥

चोर सो मोहि पर्‍यो पहिचानि लग्यो कछू दूरि तें सेवक सोहे । आनि अचानक वाँह गही मोहि जानि अकेली महावन मोहे ॥ आवत तोहि इते लखि के तव ढीठ हिये मे कछू सकुचो हे । गेंद हमारे हरे कहिकें अँचरा गहि भाज्यो न जानिये को हे ॥ २३७ ॥

अलि हों तो गई जमुनाजल कों सु कहा

कहौ बीर बिपत्ति परी ॥ घहराय के कारी घटा उनई इतने हीं मे गागरि सीस धरी ॥ रपट्यो पग घाट चढो न गयो कवि मंडन ह्वै के बिहाल गिरी । चिरजीवहि नंद को बारो अरी गहि बाँह गरीबने ठाढी करी ॥ २३८ ॥

ज्यों ज्यों चवाव चलै चहुँओर धरैं चित चाव ये त्योंही त्यों चोखे । कोऊ सिखावनहार नहीं बिन लाज भये बिगरैल अनोखे ॥ गोकुल गाँव की एती अनीति कहाँ तें दई धौं दई अन-जोखे । देखती ही मोहि माझ गली मे गही इन आनि धौं कौन के धोखे ॥ २३९ ॥

बेनी जू या ब्रज मे बसि के हँसि के न चली न मे सीस उठायो । कालिह कलिंदी के तीर गयो गिरि टीको लिलार को नीको न पायो ॥ हेरि लियो हरि टेरि कह्यो यह कौन को है अजू मे पर्यो पायो । मोहि जँजाल पर्यो री महा नंदलाल सों बोलत हीं बनि आयो ॥ २४० ॥

लोग लोगाइन होरी लगाई मिला मिली चारन मेटत ही बन्यो । देव जू चंदन चूर कपूर लिलारन लै लै लपेटत ही बन्यो ॥ वे तिहिं

औसर आय गये समुहाय हियो न समेटत ही बन्यो। कीन्ही अनाकनी में मुख मोरि पे जोरि भुजा भटू भेटत ही बन्यो॥ २४१॥

आयो सुहायो सु मो मन भायो कहो सुख सासु ननंद तें भारो। मो तें जुदो कबहूँ न रहै कवि दूलह मो मन प्रान अधारो॥ कोककलान के सीखत हूँ यह किंकिनी पायल को झनकारो। सो जा सखी भरमै मति री यह खोजा हमारे ही भाय के वारो॥ २४२॥

तूँ मुसुकाति कहा कनखैयन भैयन सों इन कों समुझाऊँ। हार हरो हरि मो जमुनातट लै गुरुलोगन नाऊँ कढाऊँ॥ सासु सुनै ननदी दुख दारुन तो घर भीतर पैठ न पाऊँ। पानि धरे न पयोधर पै सखी ईस के सीस की सौंह खवाऊँ॥२४३॥

जाके चरित्र औ चातुरई चित चेति चितै चतुरानन हारो। त्यों पदुमाकर स्वाँग सबै दसहूँ अवतार को ल्यावन हारो॥ देखनी हौं नख तें सिख लौं बनि बैठो वहै मनो नंद को बारो। मोहि सकेलि कै केलि करै सखी या बहुरूपिया कंत हमारो॥ २४४॥

हो तो कहा जुपै भाखतीं ए हमहूँ तुमहूँ को कहूँ अनुरागत। जानतीं एऊ इहाँ मिलतें छतियाँ छतियाँन सों कीन्हे गलागल॥ त्यौं पदमाकर है तिरछी कढि जाउ लला कर जोरि यों मांगत। खोरि न नंदकिसोर तुम्है यह खोरि तौ साँकरी खोरि को लागत॥ २४८॥

जोर जगीं जमुनाजल धार में धाय धँसी जलकेलि की माती। त्यौं पदमाकर पैग चलें उछलें जब तुंग तरंग बिघाती॥ टूटे हरा छरा छूटें सबै सरबोर भई अंगिया रंग राती। को कहतो यह मेरी दसा गहतो न गोविंद तो मैं बहिजाती २४६॥

आजु अकेली उतावली ह्वो पहुंचो तट लौं तुम आई करार में। बाल सखीन के होंहों किये मन केहूँ दियो जलकेलिविहार में॥ सीतल गात भये सिगरे उछरी तो मरूके कितकं हूँ बार मे। कान्ह जो धाय धरे न अली तो वहीतो भली जमुनाजलधार मे॥ २४७॥

गांव के लोग धरें सब नाव चवाव चहूँ दिसी तें उनयो है। भीतर संभु सदाँ रहिये जमुना को नहायबो छूटिगयो है॥ देखतहीं लोग जात कलंक निसंक के काहू न अंक लयो है। गोकुल

में अरी नंदलला अबलान कों घाँथि को चंद भयो है ॥ २४८ ॥

कातिकी न्हैबे कों लोग चले अपनो अप सबही संग जोऱ्यो । राखि गई घर सूने बिसासि सासु जंजाल तें मोहि ना छोऱ्यो ॥ है तो भल घरही जो रहो तुम यों कहिके ननदी हू निहोऱ्यो प्यारी परोसिन सों कह्यो टेरि परोसी के कान सुधा सो निचोऱ्यो ॥ २४९ ॥

धाय रिसाय गई घर आपने तीरथ न्हान गए पितु भैया । स्यामें सुनाइ कहै को दुहैगो लगी निसि आधिक में यह गैया ॥ दासियौ रूसि गई कितहूँ सजनी यह कौन सुने दुख दैया । दै पट पौढ़ि रहौंगी भटू पलगाँ पर मेरिऊ जानै बलैया ॥ २५० ॥

भादव की निसि भूरि उठे घनघोरन तें तन जोर बितैहैं । सासु बिसासिन औ ननदी प्रन पालि परोसिन के घर जैहैं । चौ चँदचोरन को पहुँचौ सरदार कहाँ केहिनें दुख कैहैं । मोच हमैं सवरी दिसि को निसि पाछिले जाम पिया घर ऐहैं ॥ २५१ ॥

आलि गोधन पूजन को उमह्यो बृज माहि घरी

तप सोगन तें। सब पैहें मनोरथ को फल बैनी रही घर मे महा भागन तें ॥ सजनी रजनी घरी द्वैक रहें सब पूजिहैं पूरब जोगन तें। योंह कान्हें सुनावती आली के ओखें जियोंगी में क्यों छुटे लोगन तें ॥ २५२ ॥

खेलतही सजनीन मिली संग चौपर चारु महा रस लैबो। नंदन गोकुलचंदजू को कहूं दीठि पर्यो ललचाय चितैबो ॥ नागरि नारि कह्यो परो गोटिन सों कीजतु है कत आपुन ऐबो। जो करो ईस तो बीस बिसे कछू दांव परे अब के मिलि जैबो॥२५३॥

जातहुती गुरु लोगनि में कहूं आय गए हरि कुंजगलीन सों। लाज सों सौहें चिते न सकी फिर ठाढी भई लगि आलि अली सों ॥ आरसी ऊँची करी कर की कहि तोष लख्यो छबि भांति भली सों। चारुता चातुरता पर लाल गयो बिकि श्रीवृषभानलली सों ॥ २५४ ॥

बैठी तिया गुरुलोगनि में रति तें अति सुंदर रूप बिसेखी। आयो तहां मतिराम सो जामें मनोभव ते बढि कांति उरेखी ॥ लोचन रूप पियाइ चहें अरु लाजनि जात नहीं छबि पेखी ।

नवीनो । नैनन बोध करै इतनों उत सैनन मोहन को मन लीनो । नैनन की चलनी कछु जानि सखी रसखानि चितैवे कों कीनो । जो लखि पाय जम्हाय गई चुटकी चुटकाय बिदा करि दीनो ॥ २५९ ॥

कसिकै सिसकी बिहि कै छिन तें अंग अंगन दास दिखाय रही । अपनेहीं भुजानि उरोजनि कों गहि जानु सों जानु मिलाय रही ॥ ललचौहैं लजौहैं हँसौंहैं चितै हित सों चित चाय बढ़ाय रही । फलखी करिकै पग सों परिकै फिरि सूने निकेत मे जाय रही ॥ २६० ॥

बंसुरी सुनि देखन दौरि चली जमुना जल के मिसि बेगि तबै । कवि देव सखी के सकोचन सों करि ऊधम यों रस को चितवै ॥ ब्रखभानकुमारि मुरारि की ओर कटाच्छन कोरन सों चितवै । चलिबे को घरै न करै मन नेकु घरै फिरि फेर भरे रितवै ॥ २६१ ॥

गोरस बीच फिरी बनिता अरु मोहन लाल लिये अनुरागी । गेंद बनाइ कै फूलन की झलि खेलत आपुस माझ सभागी ॥ आवत कान्ह बजावत बांसुरी देखि तिया मनो सोवत जागी । धीर सखी मिस लै कर बाल चलाई सुगेंद गुपाल कै लागी ॥ २६२ ॥

छुवो जाति हाथे सों हाथ किये पलटू पल
ाढत प्रेम कला । न जानिये जामें कहा चढि
गाइ चले पुनि केशव कौन चला ॥ भलेही भले
नें बहे सों भली यह देखिबेही की यह लोहू भलानि।
मेलो मन तो मिलिबोइ कहू मिलिबो न अलौ
किकानि दलला ॥ २८७ ॥

जबलौं घर को धनी आवे घरे तबलौं तौ कहीं
चेत दीवो करो। पदमाकर ए बछरा अपने बछ
रनि के संग चरैबो करो ॥ अरु औरन के घरते
हम सों तुम दूनी दुहावनी लैबो करो। नित सांझ
सबेरे हमारी हहा हरि गाएँ भला दुहि जैबो
करो॥ २८८ ॥

प्रिय पागे परोसिनि के रस मे बस मेंन कहू बस
मेरे रहैं। पदमाकर पाहुनी सी ननदी ननदी तिजे
ए अवसेरे रहैं॥ दुख और ऊ कासों कहों को
सुने ब्रज की बनिता द्रग फेरे रहैं। नसखी घरै
साँझ सबेरे रहै घनस्याम घरी घरी घेरे रहैं॥२८९॥

। यह लात चलावनी हाय दैया गिहरा एक पै
नाहिं चलावनी है। सुनी तेरी तरीफ मिलाइबे
की हित तेरे सों माल पुहावनी है। कवि ग्वाल
चराबो लै आवो इहाँ फिरि बाँधनी प्यारि सोहाँवनी

हेगा मनभावनीं देहीं दुहावनी पे यह गाय तुह
पै दुहावनी हैं ॥ २७० ॥
सासुरे जाय कछू दीनतें रह्यो छांडिदियो
निज मंदिर भैंयां ॥ दाउदे दाउद हैं जर सों
परसों लडे कांतिकी की मग भैंयां ॥ याही मर
मरों का करों रिखिनाथ परों मैं परोसिनि पैंय
कोऊ कहूं न मिले मग में हौं सवारहीं जा
दुहावन गैयां ॥ २७१ ॥
ऐसें बने रघुनाथ कहे हरि काम कलानि
के मद गारे ॥ झांकि झरोखे सों आवत देखि
खडी भई आय के आपने द्वारे ॥ रीझी सब
सों भींजी सनेह यों बोली हरें रस आखर भारे
ठाढे हो तो सों कहोंगी कछू अरे ग्वाल बडी बडे
आंखिन वारे ॥ २७२ ॥
बुरा मानती जो सिख देत मटू दुख पावती
बात सुनाइबे । मे कहां जायगी देखि कुरीति
कछू समुझेगी न जो समुझाइबे मे ॥ कहा लेउगी
हाथ पराये बिके कहि ठाकुर लोग हंसाइबे मं ।
न को गने वासों परोजन है बुनिबे मे न बैन
मे ॥ २७३ ॥
कहि आई इहाँ की कुरीति लखे मो भरी

ुख बात चलाइबे में। तुम पांच कि सात नेलाय कहो इत लैहौ कहा खिसियाइबे मैं ॥ कहि ठाकुर कौन सों का कहिये दुख पावती हौ समुझाइबे में। परो कौन परोजन है जू हमैं ुनिबे मे न बीन बजाइबे मैं ॥ २७४ ॥

उतै आहट पायकै सांवरे को इतै देखिबे ने मन थारो पगो। मिसकै सखियांन तैं ह्वै कै ज़ुदी झुकि झांकी झरोखे अनंद खगो ॥ यह मैं हूं निहारत ही तुलसी समुझायबे, मैं कत मोसों जगो। परो कौन परोजन है तुम सों कहिये कछू तो को हमारी लगो ॥ २७५ ॥

ब्रजमंडली देखि सबै पदुमाकर ह्वै रही यों चुप चापरी है। मनमोहन की वहियां में छुटी उलटी यह वेनी दिखा परी है॥ मकराकृत कुंडल की झलकैं इतहूँ भुज मूल मैं छापरी है। इनकी उन तें जो लगीं अँखियाँ कहिये कछू तो हमै का परी है ॥ २७६ ॥

वीतिबे ही सुतो वीति चुकी अब आँजती हौ केंहि काज लुकंजन। त्यों पदमाकर हाल कहें नत टाल करो दग स्याल के खंजन ॥ रोखित रंचुकी

आई हो पांयँ दिवाय महावर कुंजन ते करि कै सुखसेनी । सांवरे आज सवांर्यो है अंजन नैनन कों लखि लाजती येनी ॥ बात के बूझत हीं मतिराम कहा करती अब भौंह तनेनी । मूंदी न राखति प्रीति अली यह गूंदी गोपाल के हाथ की बेनी ॥ २८१ ॥

बातें बनावती क्यों इतनी हमहू सों छप्यो नाहिं आज रह्यो है । मोहन की बनमाल को दाग देखाय रह्यो उर तेरे अहा है ॥ तू डरपे करे सोहें सुमेरहरी सुनु सांच कों आंच कहा है । अंक लगी तो कलंक लग्यो जो न अंक लगी तो कलंक कहा है ॥ २८२ ॥

अतिराते सुहाते दिगंतन मे कछु आरसी की रुचि राखि चली । इहि भांय सुधा मधु पाइ केते अभिलाष पयोनिधि नाखि चली ॥ द्विजदेव जू आज प्रभात ससे वन कौन के नामहिं भाषि चली । मुखसों मुखलाय अघाय किते रस कौने रसाल को चाखि चली ॥ २८३ ॥

आई हो भोर भली बनी देव बसंत निसा बसि बाग बगीचें । सूहे की सारी सलौट लसै मुख

तुम कान्ह को नेह छपावती हो हित सों करि राखती अंदर मे । चुपरी सी कहो कोउ ऊपरी सों यह चूपरी बात पुरंदर मे ॥ उर अंतर को अनुराग सुतो झलकै दृग कोर के कंदर मे । जिमि बारिध मे कहूं बूडे जहाज कढे हुगली बर बंदुर मे ॥ २८८ ॥

यह भीगि गई धौं किते अँगिया छतिया धौं किते यहि रंग रंगी । उबटेहू न छूटत दाग अजू कब की हों छुड़ावती ठाढी ठगी ॥ सुनि बात इती मुख नाइनि के अति सूधी सयानप तें सो पगी । मुखमोरि उतै मुसुकानी तिया इत नाइनिहूं मुसुकान लगी ॥ २८९ ॥

लख्यो अपनी अँखियांन सों मै जमुनातंट आजु अन्हात मै भोर । लगे दृग रावरे सों उनके लगे रावरे के इतके मुख ओर ॥ दुरावति हो सहवासिनि सों रघुनाथ वृथा बतियान के जोर । सुनो जग मे उपखान प्रसिद्ध है चोरन की गति जानत चोर ॥ २९० ॥

मोर सुमंजुल मौलि बनो दुति कानन कुंडल की मकरारी । गुंज हरा के छरा उर मे पट पीत

तारिं लईरी। मेरियो जान के संघी सभै चुप ह्वै ई काहू न कीन खईरी ॥ भावते स्वेद की बास खें ननदी पहिचान प्रचंड भईरी । मैं लखिवे स की अखियां मुसक्याइ नचाइ उँचाइ लईरी।२९५। खेलन को रस छाडि दियो दिन द्वैकते राति हो बसती हो। मंडन अंग सम्हारन कों नित दिन केसरि लै घसती हो॥ छाती बिहारि निहारि छू अपनी अंगिया की तनी कसती हो॥ तोतन कों अँचरा उघरो कहो मो तन ताकि कहा सती हो ॥२९६॥ ... सोर करें जुग सो जुग मारि सहेली को हाथ थेली सों ठेलै। मंडन आनके पासे परे तो बेरानी लै सारि कहू धरि मेलै॥ औरन सों लडबा उ रहो बिन दाउ परे सबरी न सकेलैं। मोहन को चित चोरि हिते सु उतें चितवैं इत चोपर खेलैं ॥२९७॥ ...

जब बांसुरी की धुनि कान परे अंगराइ के अंग उमेठती हो। जनु जाननीए न कहू ए छपवित ये निजपोरमें पैठती हो॥ कहिए जो कछू तो चवाइन हूजिय यो इठलाइ के ऐंठती हो॥ हांसि बाहिर

बाते करो हरि सो घर आइ के लाज के बैठती हो ॥ २९८ ॥

तू इत जोबन रूप भरी उतहू मन लाल को लाल चहा है । तेऊं कछू बिनती सी करी उनहूं बड़ी बेर लों खाई हहा है ॥ देखि दुहूं को दुहूं पर प्यार भयो जिय में सुख मोहिं महा है । प्रीति बढ़े दिनहीं दिन दून दुरावती काहे को होत कहा है ॥ २९९ ॥

तुम जानती हौ की अजान सबे करि आगि को उत्तर धावती हौ। बतराती कछू की कछू हित सों अनुराग की आँखें छपावती हौ ॥ हमें काह परी जो मने करिबें कवि बोधा कहें दुख पावती हौ । बदनामी की गैलें बचायें चलौ कुलै काहें कलंक लगावती हौ ॥ ३०० ॥

धनि हौ ब्रजबालन मे तुमहीं तुम तौ हम कों भल भावती हौं । करती हौ दुराव की बातें कहा हमहूँ सों न प्रीति लगावती हौ ॥ हनुमान चवाव चलैं तौ चलौ हक नाहक हौ तन तावती हौ । हित मानती हौ तुम राधिका को, नँदलाले सनेह सिखावती हौ ॥ ३०१ ॥

तोहि विलोकत आवै इतै मन भावती साँवरी सूरति सोहै। तूँहूँ निहारि लजौंहीं है जाति पै नेकहू चाहति नाहिं विछोहै॥ जानति हैं तौ वताव अली यह को हनुमान भरो अति मोहै। भौहैं मरोरि सिकोरि कै नाक कहौ अनखाय कों जानिये कोहै॥ ३०२॥

भोरहीं आवती हौ कित तें कुलकानि कहा तुम दीन्ही विसार सी। मोहन रूप महा मद पान कैए अँखियाँ बिलसैं सर सार सी॥ कंचुकी हू दरकी कुच पैं हनुमान रही यह प्रीति पसार सी। तूँ हीं लखै किन एरी अली अव हाथ के कंकन को कहा आरसी॥ ३०३॥

ग्वाल गुपाल के प्रेम पगी दिन दूध दधी व्रज वेचन आवै। झूठ इतै उत डोल फिरै हरि कों पिछवार ते वोल सुनावै॥ नोलवधू अतिवाल वय-क्रम स्याम के आवत नैन दुरावै। गोरस वेच चलै घर कों डग चार चलै वहुरो फिरि आवै॥३०४॥

आगे तो कीन्ही लगा लगी लोयन कैसें छपे अजहूँ जो छपावति। तूँ अनुराग को सोध कियो व्रज की वनिता सव यों ठहरावति॥ कौन सकोच

रह्यो है नेवाज जो तूँ तरसै उनहूँ तरसावति। बावरी जो पै कलंक लग्यो तो निसंक ह्वै काहे न अंक लगावति॥ ३०५॥

भाई भुजा अरु गोल कलाई सु कंचुकी छोटी लसै कुच छोटैं। टेढिये भौंहैं बडी बडी आँखिन तें जु तिरीछे लगावति खोटैं॥ लागत लोटहीं पोट सु होत बचै नहीं कोटिक वोटन कोटैं। नई कमनैत नई यै कमान नये नये बान नई नई चोटैं॥३०६॥

एकन सों मिलिबे कों सहेट बद्यो एक सों हित हेत निहोरति। एकन सों चितवै चित दै तिय एकनि सों मुरि भौंह मरोरति॥ भोर तें साम लौं काम यहै रघुनाथ अनेकन के मन चोरति। छोरति एकन के चित कों हित एक सों तोरति एक सों जोरति॥ ३०७॥

यों अलबेली अकेली कहूँ सुकुमार सिगारन कै चलै कै चलै। त्यों पदमाकर एकन के उर मे रस बीजनि वै चलै वै चलै॥ एकनि सों बतराति कछू छिन एकनि को मन लै चलै लै चलै। एकनि कों तकि घूंघुट मे मुख मोरि कनेखिनै दै चलै दै चलै॥ ३०८॥

अंजन दै निकसै नित नैननि मंजन कै अति अंग सँवारे। रूप गुमान भरी मग मैं पग ही के अँगूठा अनौट सुधारे ॥ जोबन के मद सों मतिराम भई मतवारिन लोग निहारै। जाति चली एहि भाँति गली बिथुरी अलकैं अँचरा न सँभारे ॥३०९॥

काहू सों नैननहीं मुसुकात है काहु सों कौनी लगावति घातैं। काहु सों भाव सों भौंह चढाय के बैन सुनावति मीठें सुधा तें॥ जानि न जाति है जाति कहाँ छिन मे फिरि आवति हैं धौं कहाँ तैं। तोहि परी यह बानि कहा सिगरे दिन येही सुहाति हैं बातैं॥ ३१०॥

बार के लागि किवारन सों रहै बार न गौनी लखै मग पी को। भौंहनि मैं हँसि सैनानि बोलति आरसी देखि बनावति टीको॥ होंहि सबै रसिया कलि मैं कविराज यहै अभिलाष है जी को। बाम कौं और न काम कछू एक काम है काम की बातन ही को॥ ३११॥

घूंघट खींचे रहै अलबेली दृगंचल चंचल है चपला तें। सुन्दर नैन की सैननि ही मैं अनेकन भाँति की आनति बातें॥ बैठि झरोखन मैं अँगरे

आंगी कसै उकसे कुच ऊंचे हंसै हुलसै फुफुतीन की फूंदे। चंदन चोट करै पिय जोट पै अंचल ओट दृगंचल मूंदे॥ देव जू कुंकुम केसर कामक वारिज बीच बिराजति बूंदे। बाढो विनोद गुलाल लै गोदन मोद भरी चहुं कोदन कूदे॥३१६॥

जोबन के मदमाती कै ऐंडि के सुन्दर बेसर टीको बनाए। चूंदरियां चटकीली छबीली की बेसरियां चित लेत चुराए॥ ठाढ़े पयोधर, जेहर गाढ़ी हंसे हरि हेर घनी छवि पाए। नैन नचाये चले नटुआ से अंगूठन ऐंठ अनौठ उठाए॥३१७॥

कोमल कंज से पायन जावक अंग घनो घनसार लगावे। हाथन में मेहंदी मुख पान लिलार में आड सहा मन भावे॥ अच्छन अंजन चीर प्रवीन चितै चहुंओर खरे मग धावे। या छबि सों निकरे तरुनी सबरे निज गांव के छैल रिझावे॥३१८॥

बारही गोरस बेचरी आज तूँ माय के मूड़ चढ़े कित मौड़ी। आवत जात लौं होयगी साँझ भटू जमुना भतरौंड लौं औंडी॥ ऐसे मे भेटत हीं रसखान कै हैं अँखियाँ बिन काज कनौंडी। एरी

प्यारे को जानि मिलाप सखी सब सौरभ ले उबटे सुख देनी। केसरि के जल सों अन्हवाय करी छवि छाय हियो हरि लेनी ॥ भूषन सों सब भूषित कै रघुनाथ दै अंजन आँखिन पैनी। रीझ की बात सुनावति जाति रिझावति रीझि बनावति बेनी ॥ ३२३ ॥

भूषन जेब जरायन के बर सुंदरि के सब अँग सँवारे। दीरघ स्याम महा सुकुमार से बार से बार बनाय सुधारे ॥ कुंकुम सों रचि बंत के दन्तनि लोल कपोलनि ही मे निनारे। दर्पन देखतहीं सखि के कुच कुंभ दोऊ जलजात सों मारे ॥ ३२४ ॥

बैठे कहैं तब बैठियो पास कहैं उठि जान तो जाइयो नीके। सोय रहो रघुनाथ कहैं सँग सोइयो लाय कै हीय सो हीके ॥ पाँय पलोटियो कीजियो वाय सुभाय सों दीजो मिलाय कै जीके। पैहो महा सुख सीख सुनो यह या बिधि सों करियो बस पीके ॥ ३२५ ॥

बैठहुगी गुरु लोगन के ढिग बात समै की बिचारि कहौगी। पीतम के मन की करिहो तब तो धन मे धनि होय रहौगी ॥ गोकुलनाथ को

है न समौ यह रूसिबे को सुनो भूल भरी सी कछू मति यामे। आवत मेघ मघा के मडे उमड़े कहां करिहैं रतिया मे ॥ गोकुलनाथ के नाथ बिना कटिहै कहो काम की कोक तिया मे। दूरि करौ रिस की बतियाँ बलि जांय छपो पिय की छतिया मे ॥ ३३० ॥

जल बुंद बडी बडी साँवर से घन नैन वियोगी कों दूसत है । मिलि फूल अनेकनि सों बलकै तनपौन फूकार के झूसत है ॥ रघुनाथ सहाय बिना लखिकै अरु मैन ढुक्यो मन मूसत है । पिय प्यारे सों प्यार की बातें बिसारि के ऐसी समै कोऊ रूसत है ॥ ३३१ ॥

हारि गई सिगरी कहि के हम रावरे की जे हितू सखियाँ हैं । भावन भौन सों रूसि गयो अब आनदहू के जमी पखियाँ हैं ॥ गोकुल माह मे मान करैं ते भई तिय वारि बिना झखियाँ हैं। दोष बिलोकिबे कों पिय के बिधि कीनी मनो ये बडी अँखियाँ हैं ॥ ३३२ ॥

बैठे रहे पलिका के तरे दृग वारि भरे हियरे दुचिताई । भूलि गये सुधि सोयबे की दुख दीह

बूझिये। नोलकिसोर जो बीच गली बहियाँ झकझोरी॥ ३३६॥

चाले के द्योस भने सुकविन्द असीसन आई सुहाग लुगाई। नाइन पाइन जावक देत करी परिहास की यों चतुराई॥ लाल के कौनन के मुकताहल लाल भए रहें या अरुनाई। प्यारी लजाय रहीं मुख फेर दियो हँसि हेरि सखीन की वाँई॥ ३३७॥

गौने के द्योस सिंगार सिंगारि असीसती भोरी सोहाग घनेरी। नाइन पाँइन जावक देत पढी परिहास की खास पहेरी॥ बाजिहै कंत के कंध चढी सुनु बाल लजी सजनी हँसि हेरी। सौतिनि कों करि डारिहै कूंजरी ऊंजरी गूंजरी गूजरी तेरी॥ ३३८॥

मोरपखान को मौर धऱ्यो सिर ओढ लियो पटपीत नवीनो। कांधर को करि स्वांग सखी परिहास यों प्रानपियारी सों कीनो॥ गाढे गहे कुच दोउ अचानक दूर कियो उर तें पट झीनो। सीवीं के भाव सों भौंहें चढाय भलेजु भले कहि कै हँसि दीनो॥ ३३९॥

छन की सरि कों तरसेल नहीं फिर ॥ नैननहीं की घलाघलि के घने घायल कों कहूँ तेल नहीं फिर। प्रीत पयोनिधि में धसिं कै हँसि कै कढिबो हँसी खेल नहीं फिर ॥ ३४३ ॥

जित स्यामे सखान लिये चितहीं भरि लोचन चित चेतावती हो । बडरी अँखियाँन चितौ तित हीं परा के उर सूल सलावती हो। छितिपालनि छैल छली छलिके छिटकाय महा सुख पावेती हो। इन औतन तें बदनामि मिस हो हक नाहक बैर बढावती हो॥ ३४४ ॥

नाहि ने नंद कों मंदिर ह्याँ वृषभान को भौंन कहा जकती हो। हो हीं अकेली तुहीं कविदेवजू घूँघट के किंत कों तकती हो। भेंटती मोहि भटू केहि कारन कौनकी धौं छवि सों छकती हो। काहे भयो है कहा कहीं कैसी हो कान्ह कहाँ है कहा बकती हो॥ ३४५॥

कान्ह मई वृषभानसुता भई प्रीति नई तइये जिय जैसी। जाने को देव बिकानी सी डोलै लगे गुरुलोगनि देखि अनैसी॥ ज्यों ज्यों सखी बिहरावति बातनि त्यों त्यों बकै वह बावरी ऐसी।

राधिका प्यारी हमारी सों तू कहि कालि बेनु बजाई मै कैसी ॥ ३४६ ॥

आपने ओर की चाहै लिख्यो लिखि जा कथा उत मोहन ओर की। प्यारी दया कौ वेगि मिलो सहि जाति न व्यथा नहिं मैन मरो की ॥ आपुही बाँचि लगावति अंग अहो किओनी चिठी चितचोर की। राधिके राधे रहे जकि भोर लौं के गई मूरति नंदकिसोर की ॥ ३४७

क्यों कलकंठ जिल्यो इहिं कों जिहिं तें अति ही यह रोस भरी है ॥ ग्वानपियारे तिहारी प्रिय हमें जानि के वेनी प्रवीन अरी है ॥ एती कहै किन जाय कोऊ अब मोसों कछू कन चूक परी है। वैर तिहारे हमारे हियें इहिं कोकिल कूक कै हूक करी है ॥ ३४८ ॥

बोल न बोलें हँसाए हँसे नहिं रूसि रहो तौ न फेरि मनावे । कुंजकुटी बन बाग तडागन ठाढो ठगो सो कहै न कहावै ॥ तोसों कहों हित मानि भटू इत प्रेम के फंदन को सुरझावे । मोहन संग रहै निसवासर हाथ पसारो तो हाथ न आवे ॥ ३४९ ॥

आधे बिलोकि बिलोयन कोयन फेर जकी

झपकी कहि दीवो। आधो चलाइवो चंचल सो मन फेर तहाँ को तहाँ नहिं॥ दीवो॥ अधिक सोर परे निज पानिसों पान जहाँ को तहाँ रहि दीवो। ऐसी दसा बिरही जिय देखि भली मन भाँवतें सों कहि दीवो॥ ३५०॥

लटकी पगिया लपटीजुलफै सिर गोरज रेख सँवारि दई। मकराकृत कुण्डल गोल कपोल हिये लटकी वनमाल नई॥ गहिं डार कदंब की झूमत हे इन भाँयन बेनी जुहौं चितई। सुबिसारेतें क्यों बिसरे निसरै जिय तें वह मूरति मैन मई॥ ३५१॥

देव मैं सीस बसायो सनेह के भाल मृगंमद बिंदु कै भास्यो। कंचुकी सों चुपस्यो करि चोवा लगाय लयो उर सों अभिलास्यो॥ के मखतूल गुहे गहने रस मूरतिवंत सिंगार के चास्यो। साँवरे लाल को साँवरो रूप मैं नैननि को कजरा करि रास्यो॥ ३५२॥

केसहू कोऊ करो उपहास हौं नीकेहीं नाचति नेह नटू हों। ऐगुन होउ किधौं गुन देव करी गुन जाल लपेटि लटू हौं॥ चातक लौं घनस्याम को रूप अघाति नहीं दिनराति रटू हौं। दूसरो कोज

न लोक की लाज भई ब्रजराज की भ
भट्ट हों ॥ ३५३ ॥

मोरपखा मतिराम किरीट मे कण्ठ ब
वनमाल सुहाई । मोहन की मुसुकानि मनो
कुंडल डोलनि मे छविछाई ॥ लोचन लो
बिसाल बिलोकनि को न बिलोकि भयो ब
आई । या सुख की मधुराई कहा कहों मी
लगै अंखियानि लुनाई ॥ ३५४ ॥

मैन मसालसी चंपक माल सी बाल रसा
दिवाल दुरी सी । ठाढ़ीभई छिन एक गवाछ
छायरही छवि पुंज पुरी सी । देखे अचानक वा
कढ़ै गई दीठि कछू घनसार घुरी सी । याह
अटा महिं या खिरकी महिं बारक कौंध ग
बिजुरी सी ॥ ३५५ ॥

बार लगै न लगै उर मे चलिपै गति मंद
महा गज मोहे । सीतल हीतल देत किये पै लगै
वह पावक सी लपको है ॥ सीधी सदा हमे बेनी
प्रबीन पै टेढ़ी चितोनि किये कहों सोहै । मानु कै
के कबहूं न तनीपै समान है वाकी कमान की
भौंहे ॥ ३५६ ॥

चोरिन गोरिन मे मिलिके इत आइहि हाल गुवालि कहांकी । जाकी न को अवलोकि रह्यो पदमाकर वा अवलोकनि बांकी ॥ धीर अबीर की धूंधुर में कछु फेर सो के मुख फेर के झांकी । के गई काटि करेजन के कतरे कतरे पतरे करि हांकी ॥३५७॥

मेरो सिंगार करो सिगरो चहिये मनि मैं गहिनो पहिरायो । सोंधे सनो पियरो पट ल्याय जो है उन के मन माह सुहायो ॥ गोकुलनाथ की मूरति ध्यान मे देखि कहे बिरहा भ्रम छायो । सेज सजे सजनी रति भौन मे बैठी कहा मन भावन आयो ॥ ३५८ ॥

जाछिन तें मतिराम कहे मुसकात कहूं निरख्यो नंदलालहि । ताछिन तें छिनहीं छिन छीन व्यथा वह बाढी वियोग की बालहि ॥ पोंछति है कर सों किसले गहि बूझति स्याम सरूप गुपालहि । भोरी भई है मयंकमुखी भुज भेटति है भरि अंक तमालहि ॥ ३५९ ॥

आजु भले गहि पायो गोपाल गुहो गहि लाल तुम्हे गुनजालहिं । होन न देहुं कहूं चल चाल सुराख हिये पे मिलाय के मालहिं ॥ बोलत काहे

न बैन रसाल हौ जानत भाग भरे निजभालहि
सींचि के नैन बिसालन के जल वाल सु भेंटति
वाल तमालहि ॥ ३६० ॥
कान्ह मई भई कौलमुखी जु कही कुलटानि
रही कुलरीतिन । देव सु देह सनेह सों भी
विदेह की आँचन देह की रीतिन । हेरे ह
ज्ञ तें हरी कुंज मैं और की हेरति हेर हरीतिन
अंचर हार न वार समेंटति भेंटति है घर वार
भीतिन ॥ ३६१ ॥
मोहनलाल लखे कहूँ वाल वियोग की ज्वाल
सों तन डाढति। लागि गई अँखियाँ चितचोर
भागि गई गुरु लोग की गाढति ॥ और
और कहै सुनै देव महादुचिताई सखीन
बाढति । नावँ लिये मुख ओर चितै रहै सोचि
घरीक मैं घूंघुट काढति ॥ ३६२ ॥
आपु चले जब सों मथुरा तब सों यह
तन ताप सों छीजै । आए कृपा करि गोकुलनाथ
लगो हिय सों अधरा मधु पीजै ॥ ध्यान की
मूरति जान प्रतच्छ कहै पुलकै भरि नैन पसीजै।
आजु बड़े मुकतान की माल हमै घनस्याम
इनाम मैं दीजै ॥ ३६३ ॥

आपुही आपु पै लसिरहे कबहूं पुनि आपुही आपु मनावै। त्यों पदमाकर ताकि तमालनि भेंटिवे कों कबहूं उठि धावै। जो हरि सांवरो चित्र लखै तौ कहूं कबहूं हँसि हेरि बुलावै। व्याकुल वाल सुआलिन में कह्यो चाहे कछू तौ कछू कहि आवै॥ ३६४॥

जब तें निरखे हरि कुंजन में तब तें रस पुंज छकी विहरै। छिन गाय उठे छिन धाय उठे छिन गोठ तें गैयन लै डगरै॥ कवि बेनी धरै छवि मोहन की मनमोहनी मोहियै ख्याल करै। परै पायन मानिनी कै ललिता लता कै बनिता हँसि अंक भरै॥ ३६५॥

मोरकिरीट छुटी जुलफैं मुख चंद अमी मुसकानि महा है। गुंजहरा मखतूल छरा वनमाल त्रिभंग है अंग रहा है॥ गोकुल गोरज साँवरो रंग रही पट पीट की पूरि प्रभा है। मोही सों राधा कहै सजनी न विलोकति मोहि भई तू कहा है॥ ३६६॥

मोहि कह्यो संग गोधन लै वृषभानपुरा को चलो छकती हो॥ गुंजहरा मुरली पियरो पट

मोरकिरीट कहा तकती हो । गोकुल साँवरे
गई हो कहा साँवरो जो न कहे। झपती हूं
कान्ह कहाँ नंदगाँव । कहाँ तुम कैसी भई हो
बकती हो ॥३६७॥

केसव चौंकति सी चितवे छतियाँ धरके त
तकि छाहीं । बूझिये और कहे कछु औरही
की और भई पल माहीं ॥ डीठि लगी किधौं
लग्यो मन भूलि पर्यो की कहो कछु काहीं । घूं
की घट की पट की हरि आज कछु सुधि राधि
नाहीं ॥३६८॥

न्यौते गए घर के सिगरे सो बेरामी
व्याज कै आजु रही मैं । ठाकुर है बाहिरी ए
दासी सो राखी वरोठे विचारि कै जी मै ॥ आ
भले खिरकी मग ह्वै यह आइबो चाहतिं
हुती ही मैं । आजु निसा भरि प्यारे निसा भी
कीजिए लालन केलि खुसी मे ॥३६९॥

लोग बरात गए सिगरे तुम राति जगे कै
चली सव कोऊ । सुंदर मंदिर सूनो इहाँ अ
को रखवार है ताहि न जोऊ ॥ सासु कही तब
हीं लखि यों लहुरी दुलहि घरहीं रहि सोऊ

फूलि गए सुनि बातन गात समात न कंचुकी में कुच दोऊ ॥ ३७० ॥

सासु रिबकै ननदी लरिबो करै या को तो ख्याल यहै दिनराति है। सूनो निकेत जु नेकहू पावे खरी तव रीझि भरी ललचाति है॥ नीरें अटा पर पीतमैं पेखि तिया अतिहीं अँगिराति जम्हाति है औं कछू आँनद होत हिए अँगिया फटि कोटिक टूक ह्वै जाति है ॥ ३७१ ॥

ग्रीषम की निसि फूलन को परवीन तिया परजंक बिछायो। चंदन चारु उसीर के नीरन बाउरी चौक सबै छिरकायो॥ आइ कहूँ तें सयानी सखी निरसंक है जो परजंक उठायो। मोहन फेर तरेर सुनैन सखी तन हेर हिये सुख पायो ॥ ३७२ ॥

सोधि परी मनि मंदिर में रंग रावटी पीय अनूप बनाई। चित्र बिचित्र लिखे बहु भाँतिन देखि लगै सब भांति सुहाई॥ द्वार निहार पछित की भीत मे टेरि सखी मुख बात सुनाई। चौगुन फूल हिये मह राख चितेरिन चौगुनी रीझ दिखाई ॥ ३७३ ॥

सूनो भयो खरिका भई सांझ सखी संग सब जानमे वाके । आइ गये इतने में तहां कामकलानिधि चेरो है जाके ॥ चाही भई अनचाचक यों मनमोद भयो उर ताके । मोती के उठे सब हालि भये अँगिया की तनी तराके ॥ ३७४ ॥

सासुरे आई सरोजमुखी विरुखी रुख माइ को अँग धाके । पास परोस के बाग के कोलखी खिरकी निज भौन के नाके ॥ ब्योंत बन्यो हित को चितचाय चब्यो मन आनद वृन्द के चाके । फूलि उठे कुच कंचुकी मे जुग गे बँद टूटि तराक तराके ॥ ३७५ ॥

आरस सों रस सों अँगिराति दसों अँगुरी करि अंजुली काढी । त्योंरनि त्योंरी मरोरति भौंहनि मोरति नाक व्यथा मनो बाढी ॥ नीवी को नाव न राखति सूधे कसे उकसेई करे फिरि गाढी । घूंघुट टारि उघारि भुजंचल कंचुकी के बँद बाँधती ठाढी ॥ ३७६ ॥

मोहन सों कछु बोलनि तें मतिराम बढ्यो अनुराग सुहायो । बैठी हुती तिय माइके में ससु

रार को कान्ह सनेस सुनायो ॥ नाह के ब्याह की चाह सुनी हिय माहँ उछाह छबीली के छायो। पौढि रही पट ओढि अटा दुख को मिस कै सुख बोल छिपायो ॥ ३७७ ॥

गाँव के ठाकुर को है बुलाव सुनावैं धन्यो सब ही को जु आयो। नंद गये औ गयो सिगरो ब्रज क्यों परसाद जू जात गनायो ॥ जाइबे कों तुमहूं कों उतै यों परोसी सों टेरि कै कान्ह सुनायो। सूख धन्यो सो परोसी, पन्यो पै परो सो कछूक परोसिनी पायो ॥ ३७८ ॥

सासु गई चली पीहर कों पति लाद कै माल कहूं कों सिधायो। संग रहीं सजनी सो सहेट की साथिनी जौनकरे मन भायो ॥ गोकुल भाग भरी तिय के हिय काम कलोल को चौचँद छायो। फूलि पसीजि उठी सुनतै घर मीत परोस को पीतसे आयो ॥ ३७९ ॥

है दिन के पथ तीरथ न्हान कों लोग चलैं मिलि कै सिगरोई। सासु बहू सों कह्योकि रहो तुम और रहैं नहि राखत जोई ॥ सुन्दरि आनद सों उमगी हिय चाहत ही सो भयो अब सोई।

प्रेम सों पूरन दोऊ जने घर आप रही की र
ननदोई ॥ ३८० ॥

ले अनुसासन वासव को सु उठे नभ मं
मेघ अपारन । ह्वै छितिछोरन कों धुरवा क
वारि मई धरनी जलधारन ॥ पीतम संग प
अकुलात हिये हहराति सुहात अगारन । बो
सबै बन कों बन त्यों उमगी सरिता छितिछो
क़रारन ॥ ३८१ ॥

जाय जहाँ रतिरंग मचाय करै मनभाव
की चित चोरी । हावन भावन सों सिगरी निरि
बीततहीं जहाँ आनद बोरी ॥ गोकुल ह्वै ग
व्याकुल सी तिय के तन मे तलबेली सी दौरी
बूडि गयो जल सों सिगरो सुनि कालिंदी कूल
कों कुंज किसोरी ॥ ३८२ ॥

रितु आई सुहाई नई बरखा बिढ्यो मोद
मयूरन के हिय को ॥ हरिआई चिहूं दिसि
फ़ैलरही अनुराग जगावति है जिय को ॥ चढि
ऊंचे अटान विलोके घटा कर कंज सों हाथ गहै
पिय को । लखि कंजकलीन तडागन में मुख
मंजु मलीन भयो तिय को ॥ ३८३ ॥

काहू सों काहू कही लखि यों यह जो रघुनाथ महीपति आयो । पाटि के नारे नदीतट के वन काटि के चाहत घाट बनायो ॥ कान में कामिनी के यह आनि के बोल पऱ्यो मनो वज्र सो नायो । सूखि गयो अँग पीरो भयो रँग स्वेद कपोलन के सँग छायो ॥ ३८४ ॥

नीचिये नारि किये रहे नारि मुरारि के प्रेम पगी कछु ऐसें । काहू की बात सुने समझे नहीं बोलत बोल बराय हरे सें ॥ खेत कट्यो सुनिकै बिलखी अवचित्र लिखी लखिये भई जैसें । ऊख में जो रस पावतही अब सो रस को तिय पायहै कैसें ॥ ३८५ ॥

बोयो सुबीज सुखेत सवाँरि कै बेस सुधारी के साजि कियारी । जामें भई हरियारी रहे नित चौसहू में निसि की अँधियारी ॥ अंग को ताप हरे तहाँ जात सुकाटत है जहाँ लोग अनारी । तूरत देखत दूखत गात है ज्वारि के सूखत सूखत प्यारी ॥ ३८६ ॥

पैहौ न होन उदास बलायल्यों है हमहीं सी परोसीनि पीके । सासुरे जात में सोच कछू न करो

त्यों ससुरार तिहारेहु बाग बडे ढिग हैं खिरकी के ॥ ३९० ॥

लालन को पिंजरा कर लाल लिये प्रति कुंजन कुंजन ज्वै रहे । सेवती सोनजुही के प्रसून खरे खुर से तिहिं ऊपर ह्वै रहे ॥ देखतही नवेली तिहिं कों जसवंत लगे अलगे पल द्वै रहे । च्वै रहे चंचल बाल विसाल के दीरघ जो दृग कानन छ्वै रहे ॥ ३९१ ॥

चारिहू ओर तें पौन झकोर झकोरन घोर घटा घहरानी । ऐसी समै पदमाकर कान्ह के आवत पीत पटी फहरानी ॥ गुंज की माल गोपाल गरें ब्रजबाल बिलोकि थकी थहरानी । नीरज तें कढि नीर नदी छवि छीजत छीरधि पैं छहरानी ॥ ३९२ ॥

कानन तीखियें तान सुनै निसि द्यौस सुहात न नेकु निवासु री । खेद करे अतिंही तन में छिनहीं छिन छेदत भेदत पाँसुरी ॥ काम सों मोहनी मंत्र पढी अलि कैसे बनै इहि ठौर सुपासु री । मोहन के अधरान धरी हठि वैरि परी यह वैरनि बाँसुरी ॥ ३९३ ॥

यह ऐसो अभाव भयो या घरी घर हाँ
के परि पुंजन में। मिस कोउ न आय चढ़े चि
पें इन की बतियाँन की गुंजन में॥ कविरा
कहे भई ऐसी दसा गिरिलंघन की जिमि लुंज
में॥ किमि हों अब जाय सकों है दई बजी वैरि
बाँसुरी कुंजन में॥ ३९४॥

सुनते धुनि धीर छुटै छन में फिरि नेक
राखे सचेती नहीं। गुरुलोगन के परी फं
जऊ कुलकानि तऊ रहे देती नहीं॥ बलि कासं
कहौं मैं दसा अपनी हनुमान कहे कोऊ हेत
नहीं। यह वैर परी कस बाँसुरिया बजि के फिरि
हा सुधि लेती नहीं॥ ३९५॥

एक समै एक गोपवधू भई बावरी नेकु न
अंग सम्हारै। माय सुधाय कै टोना सो ढूंढति
सासु सयानी सयानी पुकारै॥ यों रसखान कहै
सिगरे ब्रज आन को आन उपाय विचारै।
कोउ न मोहन के कर तें यह वैरिन बाँसुरिया
गहि डारै॥ ३९६॥

ताप चढ़ी सी रहे तन में सुख सोयबो भूलि
२ दिन राति हैं। साथ सखी के निकुंजन लौं

चलि व्याकुल ह्वै दृग वारि सों न्हाति है ॥ गोकुल भोजन की कहै कौन सो पानी न पीवति बीरी न खाति है । जा दिन तें मथुरा कों चले हरि ता दिन तें पियरी परी जाति है ॥ ३९७॥

रूप निधान सुजान लखे बिन आँखिन दीठि ही पीठ दई है । ऊखर ज्यों खरकै पुतरीन मे सूल की मूल सलाक भई है ॥ ठौर कहूँ न लहै ठहरान को मूंदे महा अकुलान भई है । बूडत ज्यों घनआनद सोच दई बिधि ब्याधि असूचि नई है ॥ ३९८ ॥

दूती सकेत गई बन को बदि प्यारी पगी हरि के गुन गाथ मे । गाय दुहावन कों कहि संभु खरी खरी कान सखी न के साथ मे ॥ केलि के कुंज बजी मुरली बुधि गोपबधू की बँधी ब्रिजनाथ मे । दोहनी हाथ की हाथै रही न रह्यो मन-मोहनी को मन हाथ मे ॥ ३९९॥

भूषन हार सिंगार सब अंग पूजन हेत चली सखी साँवरी । कामकला सी लसै बिलसै हुलसै मनमोहन को सुनै नाँवरी ॥ केलि के कुंज बजी मुरली कबिदत्त गई ठगि सी चोहि ठाँवरी ।

साँवरी सूरति सों अटकी भटकी सी त्रिधू बरबै भरे भाँवरी ॥ ४०० ॥

कल कानन कुंडल मोरपखा उर पै बनमाल विराजति है। मुरली कर में अधरा मुसकानि तरंग महा छवि छाजति है ॥ रसखानि लखै तन पीत पटा सत दामिनी की द्युति लाजति है। वह बाँसुरी की धुनि कान परे कुलकानि हियो तजि भाजति है ॥ ४०१ ॥

सुनती हो कहा भजिजाहु घरे बिधिजाहुगी मैन के बानन में। यह बंसी नेवाज भरी विष सों विष सों बगरावति प्रानन में ॥ अबहीं सुधि भूलि हो मेरी भटू भभरो जनि मीठी सी तानन में। कुलकानि जो आपनी राखी चहो दे रहो अँगुरी दोऊ कानन में ॥ ४०२ ॥

फूँकि के आई सबै बन को हिय फूँकि के मैन की आगि जगावति ॥ तूँ तो रसातल बेधिगई उर बेधत और दया नहीं लावति ॥ आपु गई अरु औरन खोवति सौनि के काम भली बिधि आवति। ज्यों बड़े बंस तें कूटी है त्यों बड़े बंस [illegible]न हूँ को उड़ावति ॥ ४०३ ॥

जो सिगरी ब्रजतारिन कों रघुराज छिनो छिन देति हुलासु री। पीवत हीं जेहि होति भई बिरहागि-व्यथा को बिसेष बिनासु री॥ पूरि भई गृह सोति हमारी करे नित लालन के मुख बासुरी। पान करे हरि को अधरामृत कौन कियो तप बाँस की बाँसुरी ॥ ४०४ ॥

जो सुनि के धुनि ऐसी भई है तो तूँ काहे को और उपाव कों धावे। मै कहौं सो करु तूँ रघुनाथ की सोंह जिये वह तूँ जस पावे ॥ साँप डसे पर फेरि डसे उतरे विष प्रान सरीर मे आवे। तातें सखी कहु मोहन तें ओहि टेर सों बाँसुरी फेरि बजावे ॥ ४०५ ॥

सखि जाकों है जैसो सुभाव सुनो वह कोटि उपाव करो न हिले। कहूँ कूर वसे सतसंगति जाय तो कूरता वाकी न नेकु छिले ॥ कवि गोकुल जारति है तन कों सिगरे ब्रज के मन माँहँ खिले। सो सुधानिधि से मुख सो लगि के विख ब्यालिनी बाँसुरिया उगिले ॥ ४०६ ॥

देह धरी पर काज ही कों जगमाझ है तोसी तुहीं सब लायक। दौरे थकी अँग स्वेद भयो

समुझी सखी क्यौं न मिल्यो सुखदायक ॥ मोहीं सों प्यार जनायो भली बिधि जानी जु जानी हितून की नायक । साँच की मूरति सील की सूरति मंद किये जिन काम के सायक ॥ ४०७ ॥

मो उपकार बडोई बिचार गई तूँ बोलावन छैले छमासे । एती अवार लौं क्यौं तू रही दुस केतो सह्यो ओहि बेसरमासे ॥ क्यों अनखाति कहा तौ भयो हनुमान न भेट भई बलमासे ऐसेहीं आवत जात भटू दिन चारि मे ह्वै है तमा तमासे ॥ ४०८ ॥

उत्तम प्रीत प्रतीत भऱ्यो रस रासि महा मिठ बोलो कन्हाई । जो कोइ वाहि बुलावन जात खवावत वाहि बिरी बरिआई ॥ पूस निसा की जडोहीं बयारि बिचारि कै आपनी सालं उढाई । तोसों कहा यह मोही सों प्यार जनायो हे जानि हमारी पठाई ॥ ४०९ ॥

गुन एक अपूरव मै तो लख्यो तिहिं सीखिवे अभिलाष करौं । कमलापति तोसों हितू है के सब भाँति अनंद भरौं ॥ इहि हेतु यह बात बताय ल्यों दूजी उपाय चित

धरों। चित और को हाथ मे लीवो बताय दै पाहुनी पायन तेरे परों ॥ ४१० ॥

देखि परोसिनि कों पहिरे अपने पिय को तिय मान अनैसो। हे रघुनाथ कह्यो हँसि कै इमि कै अति आदर चाहिये जैसो ॥ मोती को हार बिहार करै कुचऊपर रावरे के यह जैसो। खोयो गयो अबही दिन द्वै भये रावरे देवर को रह्यो ऐसो॥४११॥

मोहि मनावन जो पठई कहि सो तुम सों रघुनाथ हँसे हैं। व्याह को दोस हमै औ उन्है वेतो रावरे के अनुराग गसे हैं ॥ काहे कों आप कहो इतनी रितु सूखे मे वे नहीं सोच ससे हैं। पावस माँहि सतावैगो मैन क्यों नाह तो बाँह तिहारी बसे हैं ॥ ४१२ ॥

आवत मोहि बिलोकि बलाय ल्यों छोडि सखीन सों बात सोहाती। ओठ अमेठि नचाइ कै लोचन भौंह चढाइ क्यों होति हो ताती ॥ जानि परी रघुनाथहि सों सब जो वह आजु गई कहि घाती। लीजिये थाती है सोहन की उन के कर-कंज लिखी यहपाती ॥ ४१३ ॥

छाइ रहे छद छाती कपोलनि आनन ऊपर

ओप चढाई । छूटे बँधे कच कामिनि के कवि
सुजात छपे न छपाई ॥ नाहिं कह्यो परे बैननि मे
सु नैननि में झलके छवि छाई । का सों कहों
कौतुक दूती गई ही अधीर पै धीर ह्वै आई ॥४१
॥ देहुँ कटीली कंपै अजहूं लगी सीखन दूत
के सुभाइनि । न्हाय सी आई हो जाय कहूं
॥ बनाय कहो कछु मेरी गुसाँइनि ॥ मैं तो पठा
चहों तुमहीं, तुम पै नहीं चूकति आपने दाइनि
भेद कहे सब क्षां को तिहारे लग्यो यह केस
को रँग पाइनि ॥ ४१५ ॥
। देव पुरैनि के पातनि जानत हे जुग च
सचान गहेरी । चीते के चंगुल मे परि के क
सायल घायल ह्वै निमहेरी ॥ मीजि के मंजु दल
कदली लरि के हरि कुंजर लुंज रहेरी । हे
सिकार रहेरी कहूं ब्रजनाथ अहेरी ह्वै आ
रहेरी ॥ ४१६ ॥
। कीर सुबिंब बिचारि के ओठ दए छत स
सहिरी धनियामे । नारँगी नीबू उरोजनि जा
दये नख बानर चोतनियामे ॥ स्वेद सुक
। च बढ्यो तन सेवक स्याम डरे जनि यामे ।

ोहि पठाई सु भूलिगई भई बावरी बावरी के
ंनियामें ॥ ४१७ ॥

बीति गयो हिमहार बसंत सुसंतत ग्रीषम
ेत दरेरी। दीरघ देखि परें दिननाथ छपाकर
ो छवि छीन परेरी ॥ देन लगी सरदार बयार
ुतासन सी फिरही फिर फेरी। सूख गई सरिता
सिर रूप सु ऊख पिरी न परोसिनि तेरी ॥४१८॥

दै लिखि बाहन मे ब्रजराज सु गोल कपोलन
कुंजबिहारी। त्यों पदमाकर या हिय में हरि मोसे
गोविंद गरें गिरिधारी ॥ या विधि ते नख ते
सिख लों लिख कंत को नाम इकंत हो प्यारी
सांमरे को अँग गोद दे गातन ए गोदनान की
गोदनहारी ॥ ४१९ ॥

॥ आन भरे अमनेक अमान गुमान मृगीन के
जीति लिये हैं ओज मनोज भरे जिनके सु
सरोज न रोंजन छोर छए हैं ॥ सालत सालीसे
सौतिन कों तिन की चितचाएँ वियोगि हिये हैं
देखि अपूरब नोखे व्रिए मतरंजन खंजन मीन
भए हैं ॥ ४२० ॥

तार किनारिन की झलकैं पलका पै मनोजन

ओज जभांत है। चूर चुरी वो चुनोती के ढे
वीरी बनाकर को इतखात है ॥ श्रीधर
अबसोस महा यह रोस कछूक सु जानो न जा
है। रात को यों उतपातन के मेरे लाल को आ
छला छलि जात है ॥ ४२१ ॥

हेरे हंसे नहिं औरन को अरु चौगुनो चि
वढावत मेरो। नाहक तू बदनाम करे व्रज के
बनितान करे घर घेरो ॥ दोस न दीजिये ये
भटू परनारिन को सपनो नहिं हेरो। मारिवो पै
को न सालत है अब सालत सौत बचायवे
तेरो ॥ ४२२ ॥

गई सांझसमै की बदी बदि के बडी बे
भई निसा जान लगी। कवि मन्य जू जानी
दगैलन छैलन छैल की छाती निदान लगी ॥
अब कौन को कीजे भरोसो भटू निज बारिये
खेतिये खान लगी। अति सूधे बोलायवे की बतिया
नहिं जानिये कार्धो बतान लगी ॥ ४२३ ॥

चंदन की चरचा न रही न रही अरी आ
जो भाल दई ही। मोतिन की लरकी उर है
अंगिया पहिरी जो नई ही ॥ आयो न

आयो बलाय ल्यों तेरी तु काहे लरी लरिबे कों गई ही। छीकत हा पठई जुहती सुतो तैन सुनी सुनि हौंहीं लई ही ॥ ४२४ ॥

अगँना मे बुलाय घनी अगँना कँगना पहिनाय दे जोसिनी कों। दखिना दिल खोलि कै दीजे अली सु बधाई सुनाव सु तोखनी कों ॥ कबि सेवक पाँव परों सब के विधि दाहिनो आजु अदोसिनी कों। तजि औषधि मै तो अराम भई आइगो मेरी परोसिनी को ॥ ४२५ ॥

तूँ तो गई ही बुलावन लालहि मो सों कहे गात बिगार सी। कंचुकी ढीली परी यह मो हियरें उपजावति झार सी॥ तोहि कहा हनुमान भये मनमोहन तेरे सिपारसी। बिचारि लखै न अरी अब हाथ के कों कहा आरसी ॥ ४२६ ॥

आजु की जाइयो फेरि सखी तुम्हरे पट जो बदले। ईंहि मै हनुमान है दोस कहा ज्ती हौ भला रूंधे गले॥ हम सों तुम भेद नहीं यह जानि अरी न तहाँ तें। अति छोहन तें तुमहीं गों मिले मनमोहन हमारे भले ॥ ४२७ ॥

ओज जभांत हे । चूर चुरी वो चुनोती के ढेरन वारी बनाकर को इतखात हे ॥ श्रीधर मो अवसोस महा यह रास कछूक सु जानो न जात हे । रात को यां उतपातन के मेरे लाल को आन छला छलि जात हे ॥ ४२१ ॥

हेरे हंसे नहिं औरन को अरु चौगुनो चित्त बढावत मेरो । नाहक तू बदनाम करे व्रज की बनितान करे घर घेरो ॥ दोस न दीजिये येरी भटू परनारिन को सपनो नहिं हेरो । मारिबो पी को न सालत हे अब सालत सौत बचायबो तेरो ॥ ४२२ ॥

गई सांझसमै की बदी बदि के बडी बेर भई निसा जान लगी । कवि मन्य जू जानी दगैलन छैलन छैल की छाती निदान लगी ॥ अब कौन को कीजे भरोसो भटू निज बारिये खेतिये खान लगी । अति सूधे बोलायवे की बतिया नहिं जानिये काधों बतान लगी ॥ ४२३ ॥

चेदन की चरचा न रही न रही अरी आड़ जो भाल दई ही। मोतिन की लरकी लर हे तरकी अँगिया पहिरी जो नई ही ॥ आयो न

आयो बलाय त्यों तेरी तु काहे लरी लरिबे कों गई ही। छीकत हा पठई जुहती सुतो तैन सुनी सुनि होंहीं लई ही ॥ ४२४ ॥

अगँना मैं बुलाय घनी अगँना कँगना पहिनाय दै जोसिनी कों। दखिना दिल खोलि कै दीजै अली सु बधाई सुनाव सु तोखनी कों ॥ कबि सेवक पाँव परों सब के बिधि दाहिनो आजु अदोसिनी कों। तजि औषधि मैं तो अराम भई पति आइगो मेरी परोसिनी को ॥ ४२५ ॥

तूँ तो गई ही बुलावन लालहि मो सों कहै कत बात बिगार सी। कंचुकी ढीली परी, यह तेरी सु मो हियरें उपजावति झार सी॥ तोहि कहा डर है हनुमान भये मनमोहन तेरे सिपारसी। तूँ हीं बिचारि लखै न अरी अब हाथ के कंकन कों कहा आरसी ॥ ४२६ ॥

निसि आजु की जाइयो फेरि सखी तुम्हरे पट भूखन जो बदले। इँहिं मैं हनुमान है दोस कहा कत बोलती हो भला रूंधे गले॥ हम सों तुम सों कछू भेद नहीं यह जानि अरी न तहाँ तें चले। अति छोहन तें तुमहीं मों मिले मनमोहन मीत हमारे भले ॥ ४२७ ॥

दिव देव को चित्त चहा है॥ झूँठि को बोलि तजै धरमै रघुनाथ कहै अस कौन वहा है। तो कुच संभु की सौंह किये जब है तब संभु की सौंहैं कहा है॥ ४३१ ॥

हरी कंजप्रभा पदपंकज तें गति देखि कै तेरी लजानो करी। करी चंदहू की गति मंद अली मुख चंद उघारति ताही घरी॥ घरी है विधना बडे भागिनी तू नित सौतिन के उर साल अरी। अरी जा पर वारत प्रान सबै सो बिकानो तो सूरत देखि हरी॥ ४३२॥

आनन की धुनिये सुनिये श्रुति कूकनि कोयल की धँसती हैं। स्वास को चारु प्रकास बयारिन मंद सुगंध हियो मसती हैं॥ दंतन की दुति ये रघुनाथ कलान कलानिधि की गँसती हैं। देखि भरी रिसि प्यारी तुम्हें ये दसोंदिसि आपुस मैं हँसती हैं॥ ४३३॥

बने पंकज से पग पानि मनोहर कानन लों दृग धावतु हैं। रघुनाथ लसें लगि एडिन लों कच चंद सो आनन भावतु है॥ विधि ऐसो अपूरब रूप रच्यो जिहिं तें मन आपु कहावतु

ए घनघोर उठे चहुंओर इन्हें लखि का करिहै रिसि कै तू । सौति पै जायहैं जो कमलापति पाय है छाँह छनेकन छ्वै तू ॥ जानि लई अबही सिगरी कलपैहै सु हाथ के हीर को खैतू । पाँय परेहू न मानती री अब जा जिनि ऐसी मिजाजिनी ह्वै तू ॥ ४३८ ॥

घेरे रहै घरहाँई घनी फिरि बीते न फागु कछू कहि जायगी । लाल गुलाल की धूंधुर में मुख चन्द की जोति कहूं लहि जायगी ॥ प्रेम पगी बतियान तें री छतियान की लाज सबै बहि जायगी । जो न मिलि मनमोहने तो मन की मन ही मन मैं रहि जायगी ॥ ४३९ ॥

माधवी मंडप मंडित कै महकै मधु यों मधु पान करै री । रातीलतान बितानन तानि मनोज हू साजि रह्यो सरसै री ॥ धीर रसाल के बौरन बैठि पुकारत कोकिल डौंडिन दै री । भूलि हू कंत सों ठान बीमान सो जानबी बीर बसन्त को बैरी ॥ ४४० ॥

बलि कंज सों कोमल अंग गोपाल को सोऊ सबै तुम जानती हौ । वहै नेक रुखाई धरें

दिखाय दयाकरि जो चलि दूर तें देखिवे आवै ॥ ४४४ ॥

और सो केतऊ बोलें हंसें पर पीतम की तू पियारी है प्रान की। केतो चुनै चिनगी को चकोर पै चोप है केवल चंद छटान की ॥ जौलौं नहीं तुम तौलों अली गति दास के ईस पै और तियान की। भास तरैयन मों तव लों जव लों प्रगटै न प्रभा जग भान की ॥ ४४५ ॥

मानी न मानवती भयो भोर सु सोच तें सोय गए मनभावन। तेह तें सासु कही दुलही भई वार कुमार को जाव जगावन ॥ मान को रोस जगैबे की लाज लगी पग नूपुर पाटी बजावन। सो छवि हेरि हेराय रहे हरि कौन को रूसिवो काको मनावन ॥ ४४६ ॥

अपनो हित मानि सुजान सुनो धरि काननि दान तें ऊकिये ना। निज प्रेम के पोषनहार विसारि अनीति झरोखन झूकिये ना ॥ हिय अंदर रावरो मंदिर है तेहि यों विरहानल लूकिये ना। हम जो हित हीन हैं दीन हैं तौ तुम प्रेम प्रवीन ह्वै चूकिये ना ॥ ४४७ ॥

पाय पै मान न छोरो ॥ छाके हियें उपचार विचार निहार तऊ नहिं उतर भोरो। खंडित कौल को लै दल कामिनी बंधुक के दल सो गहि जोरो ॥४५१॥

आरसी लाइ सँभारो सु भौन तहाँ तिय रैन कें दीपक वारे। मान के मैन रही चलदेउ गए चलि लाल मनावन हारे ॥ चारहू ओर चितै चकवाइ कै भूलि गए जु विचार विचारे। पाय परे प्रतिबिंब के जाय के प्यारी तबै विछिया झनकारे ॥४५२॥

घोर घटा उनई चहुओर सो ऐसे मैं मान न कीजें अयानी। क्यौंरी बिलंबत है बिनु काज बडे बडे बुंद न आवत पानी ॥ सेष कहैं चल लालन पै सुनु कै सब रैन कहै सु कहानी। देखि तुहीं ललिता पुलतान को तेऊँ तमालव सो लपटानी ॥४५३॥

वाहन ओट दुराइ दुहूँ कुच बैठ रही है दुहूँ कर नीवी। गंग कहे जु इहाँ तो यहै वा उहा अति देत गुबिंद गरीबी ॥ आन भई हो नई नवला परजंकन पारवि अंक न लीवी। बातन नैन नदी करि देत है और कहा तुम पूजत्रो कीवी ॥४५४॥

मैन मयंक समीर सनी निसि कोक पुकारत

है। एक कहैं बिसराम थली वृषभानलली की गली के गुलाम है ॥ ४५८ ॥

है यह नायक दच्छिन छैल सुतो अनकूल कियो चित चोर है। है अभिमानी सु आपन रूप को दीन हो तोसों रहो निस भोर है ॥ है तन स्यामरो गोरो रगो मन तेरेई प्रेम परो झकझोर है। हैं सुखदायक नैनन नागर हैं ब्रजचंद पै तेरो चकोर है ॥ ४५९ ॥

मोहि तुम्हे इन्हे जानो उन्हे मन मोहती वा न मनावन ऐहै। त्यों पदमाकर मोरन को सुनि सोर कहो नहि को अकुले है ॥ धीर धरो किन किन मेरे गुबिंद घरीक हू मे जो घटा घहरै है। आपहू ते तजि मान भलै हरुये हरुये गरुये लगि जैहै ॥ ४६० ॥

लघु बैस की ऐस छिनौ छिन की भरी भेदन मैं जे न ठानती हैं। तिनके गुन रूप लोनाई विमोहनी भावन कों धिक मानती हैं ॥ सुख ऐसो न दूसरो सेवक जानैं हितू तुम यातें बखानती हैं। न हिलैं मिलै पितम सों निज वे हम जानती हैं की अजानती हैं ॥ ४६१ ॥

सुनु नीको न नेह लगावनो है फिर जो पै लगै तो निवाहनो है। अति ओखी है प्रीति की रीति सखी नहिं रोस को जोस सुहावनो है ॥ चलि चंदमुखी व्रजचंद मिलो तुम कों हमें का समुझावनो है। दिनचारि को रूप या पाहुनो है फिर तो पै रहैगो उराहनो है ॥ ४६२ ॥

वंकविलोकनि दीठि चलाय री नेह लगा के पीठि न दीजै। बौरी न हूजिये मान कह अव पीतम को अपनाय के लीजै ॥ मोहन रू की वैसही पाइ कै को नहिं जोवन के मद भीजै ऊजरी जो पै करी करतार तो गूजरी एतो गरू न कीजै ॥ ४६३ ॥

ऐहै न फेर गई जो निसा तन जोवन है घन की परछाहीं। त्यों पदुमाकर क्यौंन मिलै उठि यों निवहैगो न नेह सदाँहीं ॥ कौन सयान जो कान्ह सुजान सों ठान गुमान रही मन माँहीं। एक जो कंज कली न खिली तो कहा कहूँ भौंर कौ ठौर है नाहीं ॥ ४६४ ॥

रूप की चास अनूप चढी यह प्रेम मिठास पगाय लै जी को। नैनन सैन सलोनी भरी मुख

सखी दूतिन को रुख हेरो कियो ॥ हनुमान दियो सुख तो सिगरो परकीयन को जुपै चेरो कियो । विधि की विपरीत कहौं मैं कहा अपनो दिन हाय न मेरो कियो ॥ ७३८ ॥

बानी मे बीन की बान सबै पगपात मनों मति बारिज गोती । ऐसी लगी सविलासन मैं रतिहूँ मे न रूप की रासन ओती ॥ आइ करी दिन मैं जेहि जो न कहै हरिनाम अरी वह कोती ॥ बारे बडे बडे नैननि राजत राजत नाक बडे बडे मोती ॥ ७३९ ॥

पूख की ऊख हि दूखन सो लगो सोतो पयूष के सिंधु भरी सी । लोइन सोइन होड करी सुतो खंजन की छबि छीन लई सी ॥ झाँकी मे झाँकी किवारी को खोलि चतुभुज है रति जाकी सखी सी । चित्त बसी मनमोहनी सी निकसी करसी सरसीरुह कैसी ॥ ७४० ॥

चूनरि चार चुई सी परै चटकीली नई अँगिया छबि छावै । जोबन भार सों जात नई उनई खिरकी मे नई छबि छावै ॥ ऊंचे अटा चढि चंद-मुखी कवि संभु कहे इम पीक चलावै । दै विधि

सो विध बीच मनो विधना रँगरेज कुसुम चुवावे ॥ ७४१ ॥

बैनन सैनन मैन मई अति कोककला रति सो दरसी सी। लोयन लोल अमोल अडोल बसी रहे भौंह कपोल कसी सी ॥ केहर जोहत ही मन मोहत सोहत हेमलता विकसी सी। झाँकि झरोखा रही जो अटा सु घटा फट चंद छटा निकसी सी ॥ ७४२ ॥

आछे किये कुच कंचुकी मे घट मैं नट कैसें वटा करिये कों। मो दृग दूपें किये पद्माकर तो दृग छूटि छटा करिवे कों ॥ कीजे कहा विधि की विधि कों दियो दाव न लोट पटा करिवे कों। मेरो हियो कटिवे कों कियो तिय तेरे कटाच्छ कटा करिवे कों ॥ ७४३ ॥

जाइ न जंत्र तें मंत्र तें मूरि तें जाति कहीं नहीं होत तथा है। सूख्यो करै तन भूल्यो फिरै मन देखि कहैं जन बौरो जथा है ॥ हाय दई जनि काहू के होय कहै रघुनाथ भयेंही मथा है। बूझे कहा अनबूझी भली यह प्रेम व्यथा की था अकथा है ॥ ७४४ ॥

गति मेरी यही निसिबासर है नित तेरी गलीन को गाहिबो है। चित कीन्हो कठोर कहा इतनो अब तोहि नहीं यह चाहिवो है ॥ कवि ठाकुर नेकु नहीं दरसे कपटीन कों काह सराहिबो है। मन भावे तिहारे सोई करिये हमें नेह को नातो निबाहिबो है ॥ ७४५ ॥

यह प्रेम कथा कहिवे की नहीं कहिबेई करो कोउ मानत है। पुनि उपरी धीर धरायो चहै तन-रोग नहीं पहिचानत है ॥ कवि ठाकुर जाहि लगी कसके नहीं सो कसके उर आनत है। बिन आपने पाँय बेवाई गए कोउ पीर पराई का जानत है ॥ ७४६ ॥

वा निरमोहिनी रूप की रासि जो ऊपर के उर आनति ह्वैहे। बारहूँ बार बिलोकि घरी घरी सूरति तो पहिचानति ह्वैहे ॥ ठाकुर या मन की परतीति है जोपै सनेह न मानति ह्वैहे। आवत हैं नित मेरे लिए इतनो तो बिसेखहू जानति ह्वैहे ॥ ७४७ ॥

लगी अंदर की करे वाहिर को विन जाहिर का कोउ मानत है। सुख औ दुख हानि वा

सो विध बीच मनो विधना रँगरेज कुसुभ चुचावै ॥ ७४१ ॥

बैनन सैनन मैन मई अति कोककला रति सो दरसी सी । लोयन लोल अमोल अडोल बसी रहे भौंह कपोल कसी सी ॥ केहर जोहत ही मन मोहत सोहत हेमलता विकसी सी । झाँकि झरोखा रही जो अटा सु घटा फट चंद छटा निकसी सी ॥ ७४२ ॥

आछे किये कुच कंचुकी मे घट में नट केसें बटा करिये कों । मो दृग दूपें किये पदुमाकर तो दृग छूटि छटा करिबे कों ॥ कीजे कहा विधि की विधि कों दियो दाव न लोट पटा करिबे कों । ... हियो कटिबे कों कियो तिय तेरे कटाच्छ

गति मेरी यही निसिवासर है नित तेरी गलीन
ो गाहिवो है । चित कीन्हो कठोर कहा इतनो
मव तोहि नहीं यह चाहिवो है ॥ कवि ठाकुर
कु नहीं दरसै कपटीन कों काह सराहिवो है ।
न भावै तिहारे सोई करियै हमै नेह को नातो
नेबाहिबो है ॥ ७४५ ॥

यह प्रेम कथा कहिवे की नहीं कहिवेई करो
कोउ मानत है । पुनि उपरी धीर धरायो चहै
तन-रोग नहीं पहिचानत है ॥ कवि ठाकुर जाहि
लगी कसकै नहीं सो कसकै उर आनत है । बिन
आपने पाँय बेवाई गए कोउ पीर पराई का
जानत है ॥ ७४६ ॥

वा निरमोहिनी [illegible] हिय में तहां जैये
आनति [illegible] री । ढिग जाय सबै समुझी
ते तौ [illegible]ताल कहूं सुर गावने री ॥ कवि
[illegible] ति समाज जहाँ तिनतें कहा नेह लगावने
[illegible] देखि भटू हों वृथा अटकी सुने दूर के
[illegible] हावने री ॥ ७५४ ॥

[illegible] राखी चहैं कुल की कुलकानि उतै नँद-
[illegible] केयावती हैं । निज गेल मे आनि कढे

कहूँ न झरोखन झाँकन पावती हैं ॥ कवि ठाकुर हैं न वनाव कछू दुविधा मिलि साँच सचावती हैं। चहैं आसिकी औ डरमामन को कहो है ' कहाँ वनि आवती हैं ॥ ७५५ ॥

कैसे सुचित्त भए निकसो है हँसो विलसो सव सों गलवाँहीं। वे छल छिद्रम के छलता छलि ताकती हैं सव की परछाँहीं ॥ ठाकुर सो मिलि एक भई रचिहैं परपंच कछू व्रजमाँहीं। हाल चवाइन को दहचाल सो लाल तुम्हे हैं दिखात की नाहीं ॥ ७५६ ॥

कहिवे सुनिवे की कछू न इहाँ न लटी भली को दुख पावनो है। उनकी तौ सवै मरजी करि कै अपने मन कों समुझावनो है ॥ कवि ठाकुर काम निकासिवे कों अव मंत्र यही ठहरावनो है। इन चौचँद हाँइन मे परिकै समयो यह वीर वरावनो है ॥ ७५७ ॥

कहिवे की व्यथा सुनिवे की हँसी को दया करिकै उर आनत है। उर पीर वडी तजि धीर सखी कहि को नहिं कासों वखानत है ॥ कवि वोधा कहे मे सवाद कहा को हमारी कही पुनि

मानत है । हमे पूरी लगी की अधूरी लगी यह
जीव हमारोई जानत है ॥ ७५८ ॥

अबहीं मिलिबो अबहीं मिलिबो यह धीरजहीं
मे धिरैबो करे । उर तें उठि आवे गरे तें फिरै
चित की चितही मे थिरैबो करे ॥ कवि बोधा न
चाँड सन्यो कतहूं नितहीं हर वासी हरैबो करै
सहतेही बनै कहते न बनै मनहीं मन पीर पिरै
करै ॥ ७५९ ॥

आवत है इतै बोले बिना सो तज्यो हम वं
उतै जैबे परो । गुन रावरे के बलदेव जिते प्र
कै अब सो सब गैबे परो ॥ गति देखि कै हा
न जानो कछू तजि लाज समाज बसैबे परो
सहजै न प्रतीति परैगी तुम्हे अब काढि करेज
दिखैबे परो ॥ ७६० ॥

तन तें मन तें रमिकै अनते हमै बातन
बहराइये जू । तरसैं अखियाँ दरसें बिन ए इन
रूप सुधारस प्याइये जू ॥ कवि नौनिधि की
जो ऐसिही तौ कहा लोन जरे पै लगाइये जू
कबहूँ तौ हमारे गरे लगि कै यह ताप हियें व
बुझाइये जू ॥ ७६१ ॥

वालिन झाकि गवाछन। देखि अनोखी सी वोखी सी कोरि अनोखी परें जितही तित जाछन॥ नरेंई जात तिहारे ममारख ए सहजें कजरारे मृगाछन। काजर दे री न एरी सुहागिनी आगुरी तेरी कटैगी कटाछन॥ ५०६॥

न्हातई न्हात तिहारई स्याम कलिन्दियो स्याम भई बहुतैहे। धोखेहू धोयहों यामे कहूं तो यहे रंग सारिन में सरसैहें॥ सांवरे अंग को रंग कहूं यह मेरे सुअंगन में लगि जैहें। छैल छबीले छुओगे जो मोहिं तो गातन मेरे गोराई न रैहें॥ ५०७॥

चित चीन सरोज समीप रहें बर भौंरन भाखत भेद खरे। सरदार सुचार विचारन तें नित खेलत खंजन ख्याल भरे॥ बरु मान रहो कर क्यों सजनी रजनी न विचारत चारु अरे। कलहंसन के बचबा विचही वरियाई हमारई बैर परे॥ ५०८॥

है नहिं मायको मेरी भटू यह सासुरो है सबकी सहिबो करो। त्यों पदुमाकर पाय सुहाग सदाँ सखियान हूँ कों चहिबो करो॥ नेह भरी

केवस प्यारे कों और कहा कहों मे सब की मौर कहैहों ॥ ५०२ ॥

हे बडरी अनियारी अनूपम पानिप रूप भ कहा कैहों। मीन दले अँग मान मले न भ लगें भौर भोराई न लैहों॥ भोर तें आज सरा हत हौ सुअनाहक ही ब्रज मे विषवैहों। लाखन वार तुमै बरजे पिय काहू कि आँखिन दीठि लग हौं ॥ ५०३ ॥

देव सुरासुर सिद्धवधून कै जेतो न गर्व तितो यह तीको। आपने जोवन के गुन के अभिमा सबै जग जानत फीको॥ काम की ओर सिको रति नाक न लागत नायकनाक को नीको। गोरी गुमानिनि ग्वालि गँवारि गनै नहीं रूप रतीक रतीको ॥ ५०४ ॥

सीतल मंद सुगंध समीर अमीर कही गुन कौन विहारे। ए सरदार उदार बडे सांसे आवत जात रहे मति वारे॥ मान समै मनभावन संग रहो मिलि मोहि मनोज मुनारे। कोइल कूक कुरूपिन हाय परी वर वैरिन वैर हमारे।५०५॥

कान्ह के बांकी चितौन खुभी झुक काल्ह की

ग्वालिन झाकि गवाछन । देखि अनोखी सी चोखी सी कोरि अनोखी परें जितही तित जाछन ॥ मारेंई जात तिहारे ममरख ए सहजें कजरारे मृगाछन । काजर दे री न एरी सुहागिनी आगुरी तेरी कटेगी कटाछन ॥ ५०६ ॥

न्हातई न्हात तिहारई स्याम कलिन्दियो स्याम भई बहुतैहे । धोखेहू धोयहों यामे कहूं तो यहे रंग सारिन में सरसैहें ॥ सांवरे अंग को रंग कहूं यह मेरे सुअंगन में लगि जैहें । छैल छबीले छुओगे जो मोहिं तो गातन मेरे गोराई न रैहें ॥ ५०७ ॥

चित चीन सरोज समीप रहें वर भौरन भाखत भेद खरे । सरदार सुभार विचारन तें नित खेलत खंजन स्याले भरे ॥ वरु आनि रहो कर क्यों सजनी रजनी न विचारत चारु अरे । कलहंसन के बचबा विचही वरियांई हमारई बेर परे ॥ ५०८ ॥

हे नहिं मायको मेरी भटू यह सासुरो है सब की सहिबो करो त्यों पदुमाकर पाय सुहाग सदाँ सखियान हूँ कों चहिबो करो ॥ नेह भरी

चतियाँ कहि कै नित सौतिन की छतियाँ
करो। चंदमुखी कहैं होतीं दुखी तो न
कहैगो सुखी रहिबो करो॥ ५०९॥
वे पति मोहि पतिव्रत है रघुनाथ सदाँ
लहती हो। वे प्रभु हैं अपने मन के उन के म
के तुम क्यों वहती हो॥ त्रास करो परलोकहु के
तुम तो तिय मैं मति मे महती हौ। मो मुख की अनु-
हार कलानिधि वोहू कहैं तुमहूँ कहती हौ॥ ५१०॥
न सरोजन की कली चाहो अली तो कहाँ
तेंहि मे मन दे चलो री। फिर देहौं कलंक वृथा
ही सबै इहिं तें पहिलेही बचे चलो री॥ तुम
और कहूं जो कहोगी चले चलिहौं हनुमान अ
चलो री। मनभाये न फूल मिलेंगे तुमे न सरो-
वर पै हमें लै चलो री॥ ५११॥
हौं जब लौं तब लौं सिगरो दिन मैं गुडियान
सों खेलि बितैहों। धाय सिखाय मरें कितनी
गुन सीखिबे के मैं नजीक न जैहौं॥ पै इत
कहे राखति हौं धनि सौतिन मे रघुनाथ कहैहौं
गौनेहि जाय कै पौरी भट्ट सुनि मायके फेरि न
आवन पैहौं॥ ५१२॥

मैं न सकी कहि लाज तें आजु लौं पै अब औसर है कहि आवै। मो सों कहो नित ही न तू ढी कछू हों न पढी सो सुनो एहि दावै॥ और तो बात कहा मै कहौं रघुनाथ की सौंहैं लखौ भरि चावै। को तिय है जग मे जिहिं को पिय को करिबो बस सौतिन भावै ॥ ५१३ ॥

मनभावन पूस मे रूस चल्यो चित बीच विचारि बिदेस कियो। सुनि कै सब सौतिन की सिगरी सुधि जाति रही अरु काँप्यो हियो॥ सकि है सरि को करि है रघुनाथ उठाय कै हाथ मै बीन लियो। कछु गाय कै मेघ अकासि मे छाय कै मै तबहीं बरसाय दियो ॥ ५१४ ॥

बंसी बजावत आनि कढे बनिता घनी देखन मे अनुरागी। हौंहू अभाग भरी डगरी मगरी गिरे चौकि सबै डरि भागी ॥ लागें कलंक न सेवक सों इन्हे फोरि हों सौति सुभाव लै जागी। हाय हमारी जरी अँखियाँ बिसु बान है मोहन के उर लागी॥ ५१५ ॥

तरिहौं दृगनीरहि जाइ हौं तीर मिलै न मिलै हरि नावटी उ घसिहौं घनसार पटीर मिलै

मिलै वात कहीं न वनावटी ऊ ॥ यह वेनीप्रवीन है भोरी महानं कही विरहानल आवटी ऊ। लगे सीर समीर लला करि जाइये एक उसींर की रावटी ऊ ॥ ५१६ ॥

बीसों बिसै व्रपभानसुता पर जानत कौं कर्यो कछू टोना। काहू कह्यो वरसाने तें री नँद गाँव चल्यो घनस्याम सलोना ॥ खेलत ही की अचानक चौंकि चितै चहुँ देव दए द्रग कोना। सूल उठ्यो तन हूल गयो मन भूल गये सव खेल, खेलौना ॥ ५१७ ॥

पौढे हे पीउ पिया पलगौं चलिवे की करी चरचा पिय तोलै। वेनी रही छतियाँ लगि लाडिली लाड अनेक करेऊ न वोलै ॥ मै करी हाँसी हहा रहि री पी कहा भई पीरी यों वात न छोलै। घूंघुट मै सुसकै भरै साँसिं ससै मुख नाह के सौंहें न खोलै ॥ ५१८ ॥

चोप भई दिन चारिही तें लगे लागन पी के विलास सुधा से। ऐसेही मे चलिवे कों विदेस कहूं मुह ते पिय वैन निकासे ॥ चंदमुखी सुन विलखी उलहे विरहानल के अँकुरा से। आँसू

गिरे दृग कोरन तें भुव मोरन के मुह तें मुकता से॥ ५१९ ॥

आए हौ बूझन मो सों कृपा करि आप हौ जीते महा मनसेस को। मैं किहिं भाँति मने के सकौं रघुनाथ मे जानेहौं नेह नरेस को॥ पै विनती यह एक हमारी है मानो तो मानो है कारन वेस को। होरी के वासर गोरी की वैस विचारि कै कीजो विचार विदेस को॥ ५२० ॥

रावरे जो चलिवे कों विदेस कों विप्रन बूझि विचार कियो है। कीजिये सो सुभ कारज कों मन मै पन जो रघुनाथ लियो है॥ मोहि न और अंदेसो सुनो सुन एतिक काँपत मेरो हियो है। वाम वियोगिनि के बध कीवे कों काम वसन्तही पान दियो है॥ ५२१॥

देव जो वाहिरही विहरे तो समीर अमी रस विंदु लैजैहै। भीतर भौन वसे वसुधा ह्वै सुधा मुख सूंघि फनिन्द लैजैहै॥ जैये कहूं इहिं राखि गुविन्द के इन्दुमुखी लखि इन्दु लैजैहे। राखिहो जो अरविन्द हूं में मकरन्द मिले तो मलिन्द लैजैहे॥ ५२२॥

विदेस भले तुम प्रान पियारी के साथ ही जानो॥५

प्रीतम गौन सुन्यो गजगौनी को भोजन भ
सबै बिसरो है। अंग परी तलबेली महा का
राज तहाँ भरिआयो गरो है ॥ नैनन तें ध
धार धन्यो जल अंजन सों उर आय परो है
चीरिबे कों तिय को हियरा बिरहा चढई म
सूत धरो है ॥ ५३० ॥

केलि कै रात प्रभात चले मो पिया धू
पांठ पढावन लागे । सो सुनि सेवक राधे बैचं
सो बैन करेजो कढावन लागे ॥ प्रेम पयोनिधि
सों कुच पै घन से दृग आँसु वढावन लागे
मानो मुरारि न जाहिं विचारि पुरारि पै वारि
चढावन लागे ॥ ५३१ ॥

मिसहीं मिस जान की बात कही जु सुनै न
बिथा सहि जाति भई । उर लाडिली के बिर
हागि जगी सुधि औ बुधि हू दहि जाति भई ॥
ठगि से रहे सेवक स्याम लखे रसना गति वी
गहि जाति भई । इमि नैन तें नोखी नदी प्रगटी
... । विदा वहि जाति भई ॥ ५३२ ॥

वाल सों लाल विदेस के हेत हरे हँसि कै

बतियाँ कछू कीनी। सो सुनि बाल गिरी मुरझाय धरी हरि धाय गरे गहि लीनी ॥ मोहन प्रेम पयोधि भयो जुरि दीठि दुहूं की गई रस भीनी। मागे विदा को विदा को करै मिलि दोऊ विदा को विदा करि दीनी ॥ ५३३॥

जो उरझार नहीं झुरसी मृदुमालती मालिव है मग नाखे। नेहवती जुवती पदमाकर पानी न पानि कछू अभिलाखे॥ झाँकि झरोखे रही कब की दबकी दबकी सुमनै मन भाखे। कोऊ न ऐसो हितू हमरो सु परोसिनि के पिय कों गहि राखे ॥ ५३४ ॥

पन्नग सीस पै पाँय धरे तजी लोक की लीक सराहिये है। नीति निवासी अनीति गही तऊ नीति अजौं अवगाहिये है ॥ तो हित कोटि कलेस सहे सो विदेस चलो तो निवाहिये है। नाथ तिहारेई साथ रमैं इहिं जीव अनाथ को चाहिये है ॥ ५३५॥

आँखिन के अँसुवान ही सों निज धामहीं धाम धरा भरि जैहै। त्यों पदमाकर धीर समीरन धीर धनी कहुं क्यों धरि जैहै ॥ जो तजि मोहि चलोगे कहूं तौ इति विरहागिनिया अरि जैहै। जैहै कहा

बिदेस भले तुम प्रान पियारी के साथ ही जानो॥५२९॥

प्रीतम गौन सुन्यो गजगौनी को भोजन मौन सबै बिसरो है। अंग परी तलबेली महा कविराज तहाँ भरिआयो गरो है॥ नैनन तें धरि धार धर्‍यो जल अंजन सों उर आय परो है। चीरिबे कों तिय को हियरा बिरहा बढई मनो सूत धरो है॥ ५३०॥

केलि के रात प्रभात चले मो पिया-धृति पाठ पढावन लागे। सो सुनि सेवक राधे वेचैन सो वैन करेजो कढावन लागे॥ प्रेम पयोनिधि सों कुच पें घन से दृग आँसु वढावन लागे मानो मुरारि न जाहिँ विचारि पुरारि पै वा॥ चढावन लागे॥५३१॥

मिसही मिस जान की वात कही जु सुने न विथा सहि जाति भई। उर लाडिली के विरहागि जगी सुधि औ बुधि हू दहि जाति भई॥ ठगि से रहे सेवक स्याम लखे रसना गति की गहि जाति भई। इमि नैन तें नोखी नदी प्रगटी बलिहारी बिदा बहि जाति भई॥ ५३२॥

बाल सों लाल बिदेस के हेत हरे हँसि कै

बतियाँ कछू कीनी। सो सुनि बाल गिरी मुरझाय धरी हरि धाय गरे गहि लीनी॥ मोहन प्रेम पयोधि भयो जुरि दीठि दुहूं की गई रस भीनी। मागे विदा को बिदा को करे मिलि दोऊ बिदा को विदा करि दीनी॥५३३॥

जो उरझारं नहीं झुरसी मृदुमालती माखि है मग नाखे। नेहवती जुबती पदमाकर पानी न पान कछू अभिलाखे॥ झाँकि झरोखे रही कब की दबकी दबकी सुमनै मन भाखै। कोऊ न ऐसो हितू हमरो सु परोसिनि के पिय को गहि राखे॥५३४॥

पन्नग सीस पै पाँय धरे तजी लोक की लीक सराहिये है। नीति निवासी अनीति गही तऊ नीति अजों अवगाहिये है॥ तो हित कोटि कलेस सहे सो विदेस चलो तो निबाहिये है। नाथ तिहारेई साथ रमैं इहिं जीव अनाथ को चाहिये है॥५३५॥

आँखिन के अँसुवान ही सों निज धामहीं धाम धरा भरि जैहे। त्यों पदमाकर धीर समीरन धीर धनी कहुं क्यों धरि जैहे॥ जो तजि मोहि चलौगे कहूं तौ इति बिरहागिनिया ...

कछू रावरे को हमरे हिय को तो हरा जरि जैहैं।५३
परदेस तुम्हे चलिवो अवहीं विरहागिनि
जागी हमारे हिये। कहो क्यों हमसों रहि जैहै
विना इन आँखिन रावरो रूप पिये॥ कितो हीरन
हीं के हरा सुख पैहों कितो मुकतान की माल
दिये। पिये दीजिये ऐसी निसानी कछू जो
तिहारे विछोह में जोहि जिये॥ ५३७॥
गमना भए चार दिना न भए नए चार
विचार न चाह गुने। तव लो परदेस के पानन के
पिय के मुख ते वल वोल सुने॥ सरदार रही
मन मे मुरझाइ उपाय न एक उचार सुने। सिर
टो कर के पिय को सु त्रिया वहुरो सिर आपन
आयु धुनें॥ ५३८॥
कोऊ कितेक कहे न सुनै गुन धो कह चि
महा मुरझावत। आँखिन नीर भरे सरदार विचा
विचार महा चित चावत॥ मोल दै दून दु
करके वर औरन के दधि देखि गिरावत। छ
लये दलगीर गुवारिन दौर के नंद की पौर
आवत॥ ५३९॥
आनन के पहरू सरदार वने वरवी कवहू सुधि

नीकी। जो तुहरो चित चाहत चाल सु हाल कहूँ हमहू न नबी की ॥ पै इक पूजन पूजन काजि सु साज सुनी सब ते जग जीकी। जो हित हेर स्वयंभु कें ऊपर लाल चढाइए मालजुही की ॥ ५४० ॥

तब तो छबि पीवत जीवत हे अब सोचन लोचन जातजरे। हिय तोख के पोख जे प्रात पले बिललात सु तो दुख दोपभरे॥ घनआनद मीत सुजान बिना सबही सुख साज समाज जरे॥ तब हार पहार से लागत हे अब बीचन आइ पहार परे॥ ५४१ ॥

मीत सुजान अनीत करो जिनि हाहा न हूजिए मो हिअ मोही। डीठ को ओर कहा तेहि ठौर फिरे द्रिग रावरी रूप की दोही ॥ एक बिसास की आस गहे लगि आस रहे बसि आन बटोही। हो घनआनद जीवनमूल दई कत प्यासन मारत मोहीं ॥ ५४२ ॥

पी चलिबे की चली चरचा सुनि चंदमुखी चितई द्रिगकोरन। पीरी परी तुरिते मुख पे बिलखी अति व्याकुल मैन सकोरन ॥ को बरजे अलि का सो कहे मन झूलत नेह ज्यों लाज

झकोरन । मोती से पोइ रहे अंसुवान गिरे न
वरुनीन के कोरन ॥ ५४३ ॥

कान्ह चले कहि आयो कछू न कपी कद
दल ज्यों थहरानी । सोचत ही सव द्यौस ग
पुनि शल पुकारत राधिका रानी ॥ आई न वा
को ज्योंनित आवत आंखिन मे परि पेरि परानं
गंग सु तो फिरि फेर फिरी नहीं वूडन के ड
नींद डरानी ॥ ५४४ ॥

मे सुधि पाई जनावन आई सनेह ते हाथ के
ढील चलैगो । चाह कह्यो सु अबै कहि ले वहु
कहि है सखि मं हि न लेगो ॥ ब्रह्म भनै विरहा
तुर है सबही दुख के फल फैल फलैगो । राख
परे री तो राख हियो मन भावि तो भामिन भोर
चलैगो ॥ ५४५ ॥

सीत समै परदेस पिया जु पयान सुनो यह
रावन लागी । या रितु मे हरि केहू रहे वरदेवता
पूजि मनावन लागी ॥ और उपाय न कीन कछू
तव साज के वीन वजावन लागी । प्यारी प्रवीन
भरी सुर मेघ मलार अलापन गावन लागी ॥५४६॥

फटि है तो नही लटि है तो नही घटि है तो

रही कै तही दहिहै। जब चाहहिगे तब चाह रही अब चाहति हैं कह का चहिहै ॥ लखि ब्रह्म मने हरि वेहैं सिधारत हो सु कहीं अरु को कहि है। सुनिरी छतिया तुहि बूझति हौं पिय के बिछुरे बिछुरो सहिहै ॥ ५४७ ॥

रूप लुभाइ लगी तब तो अबलों गति हीत सुभाइ निमेखो। जो रसरंग अभंग लह्यौ सु रह्यो अवलेखिये लाखन लेखो ॥ हो घनआनद एहो सुजान तऊ अब दाह उछाह परेखो। आँखिन आपनी आँखिन देखो कियो अपनो सपनो जिन देखो ॥ ५४८ ॥

संग रह्यो सुख संग लह्यो कबहूँ न भयो कसुकै पल न्यारो। छोड़िकै ताहि चल्यो पिय चाहत कैसे बनै बलि कोऊ बिचारो ॥ पीतम को अरु प्रानन को हठ देखिबे है अब होत सवारो। कैधौं चलैगो अगार सखी यह देह तें प्रान की गेह तें न्यारो ॥ ५४९ ॥

बात कही सो कही चलिबे की न यों कबहूँ बहुरो उर आनबी। आँसूँ चले सो चलेही चले द्रिग नींद औ भूख गई पहिचानबी ॥ ... तम

ह्वोगे अचानक देव जू यों निहिचै करि मानवी।
ढूँढि हौ प्यारे कपूर लौं प्रान सु या तन तें उडि
जात न जानवी ॥ ५५० ॥

ज्वाल नें जोर जुन्हाई के डारि हैं चारों दिसा बिष
सो बरसैहें । देखत हीं दृग दैहैं अचानक आँच
तें कोटिक नाच नचैहें ॥ मो मुह की कबहू तुम सों
समताई न पाई रह्यो रिसकैहें । प्रानपियारे तिहार
चले अबहीं यह चंद जवाल ह्वै जैहें ॥ ५५१ ॥

बात चली चलिबे की जँही फिर बात सुहानी
न गात सुहानो । भूषन साज सकै कहि को मह
राज गयो छुटि लाज को बानो ॥ यों कर मीडति
है वनिता सुनि पीतम को परभात पयानो
आपने जीवन को लखि अंत सु आयु की रे
मिटावति मानो ॥ ५५२ ॥

गो गृह काज गुवालन के कहें देखिबे कों प
दूरि को खेरो । मागि बिदा चले मोहनी सों प
माकर मोहन होत सवेरो ॥ फेंट गही न
बहियाँ न गरी गहि गोविंदे गौन तें फेरो ।
गुलाब के फूलन को गजरा लै गोपाल की
मे गेरो ॥ ५५३ ॥

बहुभाँति हँसाय मनाय कही प्रिय मोंकह दीजै बेदेस बिदाई । सो सुनि बाल बिहाल भई लई ऊँची उसास महा दुखदाई ॥ साले नरायन जो उमडे बडे नैनन तें अँसुवा झरलाई । हाइ ना जाइ बिथा कहि बाल की आहि कै धाइ गरे लपटाई ॥ ५५४ ॥

बात चली यह है जबतें तबतें चले काम के तीर हजारन । भूख औ प्यास चली मनतें अँसुवा चले नैनन तें सज़ि धारन ॥ दास चली कर तें बलया रसना चली लंक तें लागी अवारन । प्रान के नाथ चले अनतें तनतें नहिं प्रान चलैं किहिं कारन ॥ ५५५ ॥

जैयत पीतम प्यारे विदेस कों मोहिं कहा उपदेस बतैयत । तैयत हैं छतियाँ जो कहो बतियाँ चलिबे की सुने बिलखैयत ॥ खैयत रावरे पायँ की सौंहैं अलीमन याकी उपाय ना पैयत । पैयत औधि के औसरे जो बिछुरे तें जियें यह लाज लजैयत ॥ ५५६ ॥

मेलि गरे मृदु बेली सी बाहन कौन सी चाँहैंन छाँहन डोलिहों । कासों सहास बिलास समारख

हीके हुलासन सों हँसि बोलिहों ॥ श्रौनन प्याइ॰ कौन सुधारस कासों व्यथा की कथा गढि छोलिहों प्यारे बिना हौं कहा लखिहों सखियाँ दुखियाँ अँखियाँ जब खोलिहौं ॥ ५५७ ॥

सखि जा दिन तें परदेस गये पिय ता दिन तें तन छीजतु है । निस वासर भौने सुहात नहीं सुधि आये उसासन लीजतु है ॥ अब और बनाव बनै न कछू अनुभौ इतनो सुख कीजतु है । उन की अनुहार निहारि सखी ननदीमुख देखि कै जीजतु है ॥ ५५८ ॥

बरुनी न ह्वै नैन झिकें झिझिकें मनो खंजन मीन पें जाले परे । दिन औधि के कैसे गनै सजनी अँगुरीन के पोरन छाले परे ॥ कहि ठाकु कासों कहा कहिये हमें प्रीति करे के कसाले परे जिन लालन चाह करी इतनी तिन्हें देखिबे के अब लाले परे ॥ ५५९ ॥

हीतो बिथा बहुतै पै भई अब चौगुनी चन्दन की चरचाही। यों हीं दवासे लगैहे हुते अब चाँदनी सा[illegible] दिसि दाही ॥ औधि लौं जीवन औधि [illegible] तू कहि तेरे कहा मन माहीं । चाहति

यों कह्यो प्यारी सखी सों पै लाजन तें कहि आवति नाहीं ॥ ५६० ॥

तीखन बानन सों मन बेधत काम भले नित देह दहै री । भावत ना घर आँगन नेक सोहाय नहीं बन बाग उतै री ॥ सुंदरि गुंजत भौंरन को लखि देखत चन्दहि कों डरपै री । काहू सों जो कहिबे को करै कछु आवत कंठहिं लौं सकुचै री ॥ ५६१ ॥

सेवक बालै बिलोकै नहीं न सुनै हलराय झुलाय कै टोके । पानी औ पान छुटे सिगरे झगरे परे लाज औ काम दुवो के ॥ कंत को काहू के जुदे न करौ हरि अन्त को प्रान रुकें नहिं रोके । औरई सी भई औरई देखत बौरई सी भई बौर बिलोके ॥ ५६२ ॥

आजही प्यारो चल्यो यह आजही आय दबाय व्यथा तन जीति है । पैंडो निहारति आइबे को कछु आजही औरै भई पर कीति है ॥ कंठ ह्वै प्रान रहे अबही अब औधि के पैबे की कौन प्रतीति है । द्यौस तो बीत्यो मरूं करिकै अब आई है राति सो कैसे धौं बीति है ॥ ५६३ ॥

बैठी बिसूरतही पिय आगम एते में कोइल की सुनि बानी। जागि उठी बिरहागि महा लखि मे रघुनाथ की सौंह सकानी॥ चन्दन लाय मिलाय कपूर निसा भरि सींचि गुलाब के पानी। कौन कहै बतियाँ निसि की न तिया की तऊ छतियाँ सियरानी॥ ५६४॥

सुख सेज सुगन्ध सुधाकर सीत समीर सुहात नहीं सखियो। कबिराज कहै इन भाँतिन कैसे बिना जगजीवन जाय जियो॥ कबहूं बिरहागिन मैप जर्यो कबहूं धरि नीर मे बोरि दियो। पिय के बिछुरे हियरा यह काम लोहार के हाथ को लोहो कियो॥ ५६५॥

भरी अंग अनंग की दीह व्यथा सों खरीहीं अटा पै अलीन घिरीं। मग जोवतही मनभावन को धरि ध्यान मे पाय सरोज सिरी॥ कवि गोकुल बोले कलापी इते मे चितै चहुँघाँ अकुलाय थिरी। कहि हाय गए परि ढीले से गात अराय तिया थहराय गिरी॥ ५६६॥

छिति मंडल के नभमंडल मेघ उमंडि द... ... धाय रहे। कवि चन्दन चाव सों ...

मोर हरे बने सोर मचाय रहे ॥ पिय पावस मे बिछुरे बनितानि सों आवनहार सो आय रहे ॥ किहिं कारन हाय विहाय हमे हरि जाय विदेस मे छाय रहे ॥ ५६७ ॥

केसेहुं सीत के बौस टरे वहुरे सुधि कीने सुध्यो बिसरेगी । ग्रीषम मे बहराय के राखी इतो कोऊ धीरज और धरेगी ॥ आए न लाल अजौं कवि बीर सु याकी उपाय कहा धों करेगी । खाय दरार रही छतियाँ अब पानी परे अरराय परेगी ॥५६८॥

कछु और उपाय करो मति री इतने दुख सों मरिबोई भलो । निज देखि अबीर की धूंधरि कों जिन वीर वृथा अब हाथ मलो ॥ यह अन्तक सो विनु कन्त एकन्त बसन्त सु तन्तही आवै चलो । चढि नारि परास की डारिन मे निरधूम अँगारन क्यों ना जलो ॥ ५६९ ॥

फूलन दे इन टेसू कदंबनि आमन बौरन छावन दे री । री मतिमन्द मधु व्रत पुंजन कुंजन सोर मचावन दे री ॥ को सहिहै सुकुमारि किसोर अली कल कोकिल गावन दे री । आवतही बनि है घर कन्तहि वीर बसन्तहिं आवन दे री ॥५७०॥

आगे तो आपु अकेलो रह्यो अब साज सम
घनो सँग छायो। वैर वहे निज बूझत है मि..
कूजत है कलकंठ मे भायो ॥ औधि की आस
बची अवलों अब चाहत है रघुनाथ सतायो।
ऊधो मिलें मधुसूदन सों कहियो व्रज मे बहुरो
मधु आयो ॥ ५७१ ॥

फैलि परी घर अंवर पूरि मरीचिन वीचिनसंग
हिलोरति। भौंर भरी उफनाति खरी सु उपाव
के लाव तरेरनि तोरति ।। क्यों बचिये भजिहू
घनआनद बैठि रहें घर पैठि ढँढोरति। जोन्ह
प्रलै के पयोनिधि लों बढि वैरिनि आजु वियो-
गिनि बोरति ॥ ५७२ ॥

पावक पुंज न खाय अघाय घने घने घायन
अंग सँवारत। ऐसेही दीन मलीन हुतो मन
मेरो भयो अव तो अति आरत ॥ ए मनमोहन
मीत मनोज दया दृग तें किन नेकु निहारत।
जानत पीर जरे की तऊ अवला जिय जान कहा
अब जारत ॥ ५७३ ॥

उन को नहीं दोस परोस तज्यो कहि का फर-
परे। अपसोस यहै कहि बेनीप्रवीन

जो औरन के तू अराए अरे ॥ सखियान की सी-
विहाय वृथा अँखियान के हाय हराए हरे । मन
नीच निदान तू निन्दवे जोग मनोज जरे के
जराए जरे ॥ ५७४ ॥

मिलि संग सखीन के बैठे कछू नहिं खेल
कहानि ऊँरोचत सी । परि पीरी गई कहि वेनी-
प्रवीन रहे निसि वासर दोचत सी ॥ जब तें पर-
देस सिधारे पिया अँसुवा अँखियानि विमोचत
सी । वह सोनजुही सम मौन भई लुकि भौन के
कोन मैं सोचत सी ॥ ५७५ ॥

नैनन में भरि आवत नीर पै बाहिर जाहिर
होत न आयहे । बोल्यो चहे तौ गरो भरि आवै
सखीनहूं मे रहि जाति लजाय है ॥ और वियो-
गिनी हैं पै अनोखी लगी कछु याहि वियोग बलाय
है । आजही के बिछुरे यह हाल तौ औधी लौ
कैसे के को पहुंचाय है ॥ ५७६ ॥

बालम के बिछुरे ब्रजबाल को हाल कह्यो न
परे कछु ह्यौंही । चै सी भई दिन तीनहीं में तब
औधि लौं क्यों छजि है छबि छाँहीं ॥ तीर सो
धीर समीर लगे पदमाकर बूझेहूं बोलति नाहीं

चन्द उदो लखि चन्दमुखी मुख मंद ह्वै पैठ
मन्दिर माहीं ॥ ५७७ ॥

आर कितेक सहेलिन के कहें कैसेहूं लेति
बीरी सँवारी । राखति रोकि कहे मतिराम च
अँसुवा अँखियांन तें भारी ॥ प्रानपियारो चल
जबतें तबतें कछु औरही रीति निहारी । पी
जनावति अंगन मे कहि पीर जनावति काहे
प्यारी ॥ ५७८ ॥

खेल्यो करे सँग सेवक मेरे नहीं पलओट
देति अनन्दहि । जाग्यो न जोवन को रसहू अनु
राग्यो नहीं हिय काम के फन्दहि ॥ हाय तैं कीन्ही
कहा करुना न विचारति दूसरे के दुखदन्दहि ।
प्रान तजोंगी अरी बलिजाऊँ बिदा न करै अ
मेरी ननन्दहि ॥ ५७९ ॥

निज कन्त वियोग सो बैठि इकन्त नवाय
सीस रही घरी द्वै । कुच ऊपर आनि परे दुग
सों जे चले अँसुवा मुख ऊपर ह्वै ॥ लखि गंग
ज्यों कल्पना की प्रभा त्यों मके ममता कही औ
मनो म्दन की विष आदि की औ
सुधारस को यन्यो च्वै ॥ ५८० ॥

लिखि लाख उपाय न आखर द्वै पठई धरि धीरज रंग रची। गुरु सौं दुरि दुतिन दासी के हाथ दई तिय कों पिय प्रेम पची॥ कवि देव जू बाँचत आयो गरोभरि हाथ की हाथही जात तची। दिन बीसक लौं पति की पतिया की बियोगिन पैं बतियाँ न बची॥ ५८१॥

पिय साखि दै चैत के चन्दहि जीत्यो सहा मे लगी अति नेरे रही। पुनि सेवक सों करि सेवक सारदी हारदी मोको उजेरे रही॥ तन बूड्यो अबे श्रम पानिप सों पुलकावलि हू को तरेरे रही। चलि द्वैज के कौन से जीतबे काज उए अथये लगि हेरे रही॥ ५८२॥

जाहि दवानल पान किये तें बढी हिय में सरदी सरदे सों। दास अघासुर जोर हर्‍यो जो लर्‍यो बलसासुर से बरदे सों॥ बूडत राखि लियो गिरि लै व्रज देस पुरंदर बेदरदे सों। ईस हमें परदे परदे सो मिलों उडि ता हरि सों परदे सों॥५८३॥

मधु मास में दास जू बीस बिसे मनमोहन आय हैं आय हैं आय हैं। उजरे इन भौनन को सजनी सुख पुंजन छाय हैं छाय हैं छाय हैं॥

अब तेरी सों मेरी न संक इकंक व्यथा सब जाय हें जाय हें जाय हें । अवलोकि गोपालहिं दास जू ये अँखियां सुख पाय हें पाय हें पाय हें ॥५८४॥

मनमोहन मेरे गए जबतें तबतें ना कहूं कल पावनो है । हम कासों कहें दिल की बतियां छतियां वही छेल पै तावनो है ॥ सु द्मोदर निसबासरही उनहीं के सु ध्यान में धावनो है धन देवे धनी घनो आवे जबै कोऊ भाँति बर वितावनो है ॥ ५८५ ॥

अब कैहे कहा अरविंद सो आनन इंदु के हाथ हवाले पऱ्यो । एक मीन विचारो विध्यो बनसी पुनि जाल के जाय दुमाले पऱ्यो ॥ पदुमाकर भाखे न भाखें बनै जिय कैसो कछूक कसाले पऱ्यो । मन तो मनमोहन के संग गो तन लाज मनोज के पाले पऱ्यो ॥ ५८६ ॥

पति प्रीति के भारन जाती उनै मति सो दुख भारन साले परी । मुख सासतें होती मलीन सदाँ सोई मूरति पौन के पाले परी ॥ द्विजदेव अहे र कछू करतूति न रावरी आले परी । व गोरी गुलाबकली सी मनोज के ह ले परी ॥ ५८७ ॥

साँझ के ऐवे की औधि दै आए वितावन चाहत याहू बिहानहिं। कान्ह जू कैसे दया के निधान हौ जानो न काहू के प्रेम प्रमानहिं ॥ दास बडोई बिछोह कै मानती जात समीप के घाट नहानहिं। कोस के बीच कियो तुम डेरो तौ को सकै राखि पियारी के प्रानहिं ॥ ५८८ ॥

बालम के बिछुरे ब्रजबाल को व्याकुलता बिरहा दुखदानि तैं। चौपरि आनि रची नृपसंभु सहेलिनि साहिबिनी सुखदानि तैं ॥ तूँ जुग फूटै न मेरी भटू यह काहू कह्यो सखियाँ सखियानि तैं। कंज से पानि सें पासे गिरे अँसुवा गिरे खंजन सी अँखियानि तैं ॥ ५८९ ॥

सँगवारी सुनो सब कानन दै बिरहागि को हौं तो मरी सुख मैं। करि चेटक चन्दन वन्दन रीति निहारि यो भावते के रुख मैं ॥ सुधि लेहिंगे सेवक जातहीं मेरी पठाइहैं धावन को दुख मैं। तजि आगि सुधा गुने पीतम की धरि दीजियो पाती मेरे मुख मैं ॥ ५९० ॥

अब कौन भरोसो करैं इन को लटी दीठि कै कोऊ चिते गई री। हँसिबो अरु बोलिबो लाइबो

दूरि उसास लों जाकी रिते गई री ॥ नई नोखी बियोगिनी हैं ये अब नहिं सेवक आंधि बिते गई री । टक लागी हलै न चलै पुतरी तजि नैन कौं नींद कितै गई री ॥ ५९१ ॥

पूरन आप पुरान सुनौ यह संवत संमत वेद वखानो । जो परकाज करें तिनको कहि जात नहीं अति पुन्य प्रवानो ॥ तो हित हो सरदार न जो भल भूपन भोजन भावित वानो । कोकित वात सुने किहि की अब मो चित में व्रत आन समानो ॥ ५९२ ॥

कास प्रकास हुलास भरे गन रास चले ससि के समुहाई । ओ सरदार लखो सर में अवली कलहंसन के ध्रुव धाई ॥ हाइ हमारे अभागन ते विधि आप कछू रितु आन वनाई । रंजन जो द्रिग के सजनी सिर कंजन खंजन देत दिखाई ॥५९३॥

कान्ह विदेस ते आए नरोतम यों कहिहै व्रज को जन कोऊ । भेंटहुगी पग छ्वै छतिया पुनि छाडिहे नाह घरीक मे ओऊ ॥ वैठहुँगी गुरलोग मे कर घूंघट नैन नवा कर दोऊ । वोलिहे सा... दुलही कहु ह्वैहै सखी कबहू दिन सोऊ ॥५९...

प्यारे सुजान के पान के मंडन खेद अखंडन भेद कलाको । ज्यों रस तेज वही दरसै वरसै घनआनद नेह झला को ॥ सूच्छम सो पै भन्यो अतलो सुख रंक विभो जुग नैन पला को । प्रीतम गें हिय राखत हाथ विछोह में ज्यावत मोह ाला को ॥ ५९५ ॥

आवतही मन जान सजीवन ऐसे गए जो ाले नहि लोटन । अंग भये पियरे पटलो मुरझे वेरहानल ढंग सरोटन ॥ और सोहात कछू न पुखी भरी नैन विहाय न हाय करोटन । हो पुचचेत घनानद पे हमै मारत हैं विरहागिन चोटन ॥५९६॥

बालवियोगिनी लाल विना कुंभिलाय गई मनो पल्लव साखें । बोलै न डोलै न खोलै हियो ससिनाथ घरी की गनावति लाखें ॥ जीव में मैंन मरूर उठें उडि पीय पे जैवे कों चाहत पाँखें । द्वार पै ठाढी किवार की ओट वडे वडे वार वडी वडी आँखें ॥ ५९७ ॥

मनहीं मन भीतर सोचि रहाँ अपने नाहिं दुःख कहाँ परसाँ । कव होय घरी कवि राम भली

जब जादिन जाय पिया परसों ॥ अब कासों क
कब आवैंगे मोहन आज की काल किधों परस
मन ऐसो करै उडि जाय मिलों कहु कैसे उड
बिना परसों ॥ ५९८ ॥

गोकुलनाथ चले जबसों तबसों बिरहान
ताप तईसी । भोजन भूपन पानि औ पान
जानि परै सुधि भूल गईसी ॥ केलि के कुंज
साथ सखीन के जाइबे की नित बानि लईसी
भेंटति है हिय लाय तमालन लालन बावरी बों
भईसी ॥ ५९९ ॥

न्योते गये नँदलाल कहूं सुनि बाल बिहाल
बियोग की घेरी । ऊतर कौनहूं के पदमाकर
फिरै कुंज गलीन में फेरी ॥ पावै न चैन सुमन
के बाननि होति छिनै छिन छीन घनेरी । बूझ
जु कन्त कहै तो यहै तिय पीय पिरात है पाँसुरी
मेरी ॥ ६०० ॥

जब ते तुम आवन आस दई तबते तरसों कब
आयहो जू । मन आतुरता मनहीं में लखों मन-
भावन जानि सुनायहो जू ॥ बिधि ब्योंत लौं आँधि
वटी दिनहीं दिन जानि बियोग बिनायहो जू ।

रस सों घनआनँद वा रस कुंज रसारस सों कच छायहो जू ॥ ६०१ ॥

मीत सुजान अनीति करौ जिनि हाहा न हूजिये मो हिअ मोही। दीठि कों और कहीं नहीं ठौर फिरी दृग रावरे रूप की दोही ॥ एक बिसास की टेक गहे लगि आस रहे बसि प्रान बटोही। है घनआनँद जीवनमूरि दई कत प्यासन मारत मोही ॥६०२ ॥

जा मुख हाँसी लसी घनआनँद कैसे सुहात बसी तहाँ नासी। जाइ हिते हतिये न हितू हँसि बोलन की कत कीजत हाँसी ॥ पोखि रसै जिय सोखत क्यों गुन बाँधिहू डारत दोस की फाँसी। हाहा सुजान अचंभो अयान जू बेधि के गाँसहि बेधत गाँसी ॥ ६०३ ॥

घनआनँद जीवन रूप सुजान है पीवत क्यों दृग प्यास नहीं। फबि फूलि रहे कुसुमाकर से सुकहूं पहिचान की बास नहीं ॥ रसिकाई भरे अपने मन मैं सु कहूं रस आसहू पास नहीं। पचि कौने बिरंचि रचे हौ कहौ जू हितू न हतौ हिय त्रास नहीं ॥ ६०४ ॥

मो अबला जिय जान तुम्हे विनयो बलके वल
जु बलाहक । त्यों दुख देखि हँसै चपला अ
पानहू दूनो विदेह ते दाहक ॥ चन्दमुखी सुं
मंद महा तम राहु भयो यह आन अनाहक
प्रान धरोवर हैं घनआनँद लेहु न तौ अब लेहिं
गौंहक ॥ ६०५ ॥

सेत सरीर हिये बिष स्याम कला फनरी मन
जानि जुन्हाई । जोभ मरीची दसों दिसि फैलति
स्वत जारि वियोगिनी ताई ॥ सीस तें पूछिलौं
गात गस्यो पै डसे बिन ताहि परै ना रहाई ।
सेस के गोत के ऐसेहि होत हैं चंद नहीं या
फनिंद है माई ॥ ६०६ ॥

आली सिंगारति है हठ सों पर लागत अँग
अंगार सिंगारो । पीरी परी तन मै मतिराम चलै
अँसुआनि तें नीर पनारो ॥ सोऊ नहीं मनभावत
लायक आवत जो बहुतै घनवारो । वार बिला-
सिनी कों बिसरै न बिदेस गयो पिय प्रान
पियारो ॥ ६०७ ॥

अबीर अभीरन को दुख भाखें बनें न
भाखें । त्यों पदमाकर मोहन मीत के

पाये सँदेस न आठयें पाखें ॥ आये न आपन पाती लिखी मन की मनहीं मे रही अभिलाखें। सीत के अंत वसंत लग्यौ अब कौन के आगे वसंत लै राखें ॥ ६०८ ॥

घनसार पटीर मिलै मिलै नीर चहै तन लावै न लावै चहै। न बुझै विरहागिनी झार झरीहू चहै घन लावै न लावै चहै ॥ हम टेर सुनावती वेनीप्रबीन चहै मन लावै न लावै चहै। अब आवै विदेस तें पीतम गेह चहै धन लावै न लावै चहै ॥ ६०९ ॥

गाँवन कों मनभावन जात दसा यह वारवधू की बिराजी। खोलत नैन न डोलत बोलत बैन सुनै न बकै कोऊ काजी ॥ गोकुल लीक लिखी सी परै लखि साँस तो लूक सी लागति ताजी। तार रहे न तमूरन पैं सब जात रहे सहसाज समाजी ॥ ६१० ॥

अंगन अंग सिंगार सिंगारत वाढ़त है हिय मे छबि दूनी। केलि के मंदिर जाइ निसंक मयंक-मुखी नहि रंक बिहूनी ॥ सोति सँजोगन आनि परै मनमानत सासन जान्त ऊनी। सुंदर मंजुल

मोतिन की पहिरै न भटू किन नाक नथूनी ॥६

चंदन पंक गुलाव के नीर सरोज की विछाइ मरोरी । तूल भयो तन जात जरो वैरी दुकूल उतार धरोरी ॥ देवजू झूठे सबै चार यहीं मे तुसार के भार भरोरी । लाज के गाज परै ब्रजराज मिलै सु इलाज करोरी ॥६

नागरनारि को पीय विदेस लग्यो मकर यों तन तावै । कंचुकी खोलि धरी यह जानि वैरी निहार नजीक न आवै ॥ वेनी भुजंग रिप के रिप सीतल मंद सुगंध न भावै । संवार लिये पसु को पति कै पटओट कि दुरावै ॥ ६१३ ॥

दिन रैन न चैन परै पलको कल कोकिल कल छीजतु है । जगता मद मार मनोरथ पन साधकहू मन लीजतु है ॥ बिरहानल ताप त्रासन ते भर अंकन ओसन पीजतु है । प्यारे पिया की उनार सखी ननदी मुख दे कै जीजतु है ॥ ६१४ ॥

चंदन पंक लगाइ कै अंक जगावत आ परजोरै । तापर दास मृनासन घोरि

देतु है वारि बयारि झकोरें ॥ पापी पपीहान जी हाथ केतुव पी पी पुकारि उठै कर भेरें । देत कहा है दहे पर दाह गई करि जाउ दई के निहोरे ॥ ६१५ ॥

जान पखानन की सुधि हेत मयूर न देती भगाय भगाय । मने के दियो पियरे पहिराउ सुगांउ मे प्यादे लगाय लगाय ॥ भुलावती वाके हिये ते हरी सुकथान मे दास पगाय पगाय । कहा कहिये यह पापी पपीहा बिथा हिय देतु जगाय जगाय ॥ ६१६ ॥

लीलहि लेत निसाचर से मुख प्राची दिसा की पिसाच की दारा । काहू प्रियान की प्रान पयान पिकी पिकरोर कृपान की धारा ॥ गंग बसंत की अंतक सीत समीर कि तीर तरन्य कि तारा । जोन्ह की ज्वाल मृनाल की व्याल सवी घनसार के सार कि आरा ॥ ६१७ ॥

सुख सेज सुगंध सुधाकर सीत समीप सुहात रही सखियों । कविराज कहै इन भातन कैसें येना जगजीवन जाइ जियों ॥ कबहूं बिरहागिनि ो जपत्यो कबहूं धर नीर में बोर दियो । पिय

मोतिन की पहिरे न भटू किन नाक नथूनी
चंदन पंक गुलाब के नीर सरोज
बिछाइ मरोरी । तूल भयो तन जात
वैरी दुकूल उतार धरोरी ॥ देवजू झूठ
चार यही मे तुसार के भार भरोरी । ला
गाज परे ब्रजराज मिले सु इलाज करो

नागरनारि को पीय बिदेस लग्यो
यों तन तावे । कंचुकी खोलि धरी य
वैरी निहार नजीक न आवे ॥ वेनी
रिप के रिप सीतल मंद सुगंध न
संवार लिये पसु को पति कै पटओ
दुरावे ॥ ६१३ ॥

दिन रैन न चैन परे पलको कल
कैल छीजतु है । जगता मद मार
पन साधकहू मन लीजतु है ॥ बिरह
त्रासंन ते भर अंकन ओसन पी
प्यारे पिया को उनार सखी ननद
कै जीजतु है ॥ ६१४ ॥

चंदन पंक लगाइ कें अंक उ
सखी बरजोरे । तापर दास

हुँहुँकै सुनिलैहों। मंडन मोरन की धुनि कै पन गाउड़ डारन देखि डरैहों ॥ नेकहू जो ब्रजराज को माई कहू इन आँखिन देखन पैहों । नाही तो आज की जोन्ह की मार मे जीपर जोहँर कै मरिजैहों ॥ ६२२ ॥

परदेस गए पहिलैई पिया तिय अंग अनंग तरंग न ताए। सीरी हो जाइ तचे लच्छीराम थके उपचार जिते सब लाए ॥ ईंठि न धाइ खवासिनहूँ मुरझाइ रही न भए मन भाए। ऐसे कहे तें जिये तो जिये कहो गाँउ ते भाउ ते मोहन आए ॥ ६२३ ॥

काल के कान गए मथुरे मनो बीत गए जुग वासर सैं। विरहागिनि काम लगाइ दई है दसों दिस देखि वही दरसै॥ कवि ब्रह्म भनै मोहि जान जडै सखि स्याम घटानल सो परसै। विरही वर वारही वार उठै द्रिग नीर किधो घन धो वरसै ॥ ६२४ ॥

जा थल कीन्हे विहार अनेकन ता थल काँकरी वैठि चुन्यो करें। जा रसना तें करी वहुवातन ता रसना सों चरित्र गुन्यो करें ॥ आलम जौन

से कुंजन के करी केलि तहाँ अब सीस
करें। नैनन मे जे सदाँ रहते तिन की अब
कहानी सुन्यो करैं ॥ ६२५ ॥

ह्याँ मिलि मोहन सों मतिराम सु केलि
अति आनंद वारी। तेई लता द्रुम देखत
चलैं अँसुवा अँखियान तें भारी ॥ आवति
जमुनातट कों नहिं जानि परैं बिछुरे गिरधा
जानति हौं सखि आवन चाहत कुंजन तें
कुंजविहारी ॥ ६२६ ॥

कहिवे की कछू न कहा कहिये मग जो
जोवत ज्वै गयो री। उन तोरत वार न लाई
तन तें वृथा जोवन ख्वै गयो री ॥ कवि ठा
कूवरी के वस ह्वै रस मे बिसासी बिस वै ग
री। मनमोहन को हिलिवो मिलिवो दिना चा
को चाँदनो ह्वै गयो री ॥ ६२७ ॥

लावन चंदन ऐहैं तिया कुल के जे पि
करिहैं घर आवन। आवन ह्वैहै सुहावन लो
कहेंगे ममारख आये रि भावन ॥ भावन मो
लगेंगे तबै ब्रजनाथ फिरेंगे जो आपने पावन
पावन ह्वैहौ तबै सजनी रजनी भरि कंठ
पाइहौं लावन ॥ ६२८ ॥

सारी सुरंग रँगै अपनी वलि तैसियै प्यारे जु पाग बनैये। चोवा सों कंचुकी बोरियै आपनी तैसी झगा की या चोली रचैये॥ वेनी चवाइन मे वसि कै नए जो करि ब्यौंत सखी कहुँ पैये। भीजत एक छता तर मे गलबाँही दै दोऊ मलारन गैये॥ ६२९॥

वैहर वीर वरी सी वसंत की वारति है यह कौन वराय है। कूकति कैलिया हूकति सी इहिं को मुख मूँदि कै दूरि दुराय है॥ गोकुलनाथ सों मेरी व्यथा कहि कै कव तूं अँखियाँ डवराय है। वीति है जो पिय संग अरी सजनी रजनी वहुरो कव आय है॥ ६३०॥

मन पारद कूप लौं रूप चहै उमहै सुर है नहीं जेतो गहौं। गुन गाडन जाय परै अकुलाय मनोज के ओज न सूल सहौं॥ घनआँनद चेटक धूम मै प्रान छुटै न छुटै गति कासौं कहौं। उर आवत यौं छवि छाँह जो हौं व्रज छैल की गैल सदाँही रहौं॥ ६३१॥

कौन को लाल सलोनी सखी वह जाकी वडी अँखियाँ रतनारी। हेरनि वंक विसाल के वानन

वेधत है घट तीखन भारी ॥ यों रसखान सँभ
परे नहीं चोट सु कोटि करौ सुखकारी । भ
लिख्यो बिधि हेत को बंधन खोलि सकै अस
हितकारी ॥ ६३२ ॥

जमुनातट वीर गई जब तें तब तें जग
मन माझन हों । ब्रजमोहन गोहन लागि भटू
लटू भई लूटि सी लाख लहौं ॥ रसखान ल
ललचाय रहे गति आपनी हों कहि कासों कहै
जिय आवत यों अब तो सब भाँति निसंक
अंक लगाए रहौं ॥ ६३३ ॥

जीवत एकही आस लिये है निरास भये प
एक न जीजि है । सोभ कहूं बँसुरी बट मैं बँसु
रीधर की रसतान सुनीजि है ॥ ए अँखियाँ दुखि
कबलारी चकोरी भई बिरहानल सीजि है । क
दिन वा ब्रजचंद चकोर चितै मुखचंद सुधारस
भीजि है ॥ ६३४ ॥

कौन धों सीखी रही भई है इन नैन अनोखि
नेह की नाधनि । प्यारे सों पुन्यनि भेंट भई यह
की लाज बडी अपराधनि ॥ ओट किये
बनै कहते न बनै बिरहानल दाधनि ।

स्याम सुधानिधि आनन के मरिये सखि सूधी चितैबे कि साधनि ॥ ६३५ ॥

पहिले सतराइ रिसाइ सखी ब्रजराइयै पाइ गहाइयैतो। भरि भेंट भटू भरि अंक निसंक वडे खन लों उर लाइयैतो ॥ अपनो दुख औरनि को उपहास सबै कबि देव बताइयैतो । घन-स्यामहिं नेकहु एक घरी कों इहाँ लगि जो करि पाइयैतो ॥ ६३६ ॥

कोऊ न आयो उहाँ तें सखी री जहाँ मुरली-धर प्रानपियारे । याही अँदेसे मे वैठी हुती उहि देस के धावन पौरि पुकारे ॥ पाती दई धरि छाती लई दरकी अँगिया उर आनद भारे । पूछन कों पिय की कुसलात मनो हिय द्वार किवार उघारे ॥ ६३७ ॥

जाम भरे दिन है चलिबो सुनि प्यारी निसा सब रोवत खोई । हां कह्यो रोये न जैये घरें यह रोइबो तो सुनि है सब कोई ॥ सोई निवाज सदाँ सुधि सालति साहस कै कै चली पग दोई । आधिक दूरिलों जाय चितै फिरि आय गरें लप-टाय के रोई ॥ ६३८ ॥

साहस कै हँसि कै रस के मिसि मागी
विदा मृदुवानि सों। सो सुनि वाल गई मु
रही वर वेलि ज्यों धीर दवानि सों॥ नैन
हियरो भरि आयो पै बोलि न आयो व
सुजानि सों। सालैं अजौं उर माझ गडी
अखियाँ उमडी अँसुवानि सों॥ ६३९॥

वह मान दसा चित चातुरी चाह
नाहिं कहै हँस कै। झिझिकारनि पानि
वा मुसिकानि रही हिय मै वस कै॥
हेत दुरावन की भनै प्रेम हियें लगिवो
रति के रस के कुच के मसके जे लई
अजौं कस कै॥ ६४०॥

वाको विलोकिये जो मुखःइंदु कहूँ
लगै लवलेस मै। वेनीप्रवीन महा र
जो परसै कहूँ स्यामल केस मै॥ सो
उसास लै लै निसि वासर है परो
मै। प्रानपियारी विहाय कै हाय अ
परे परदेस मै॥ ६४१॥

भीतर तें उठि आवत देखि क
भरि लैहैं। सेखर कंठ लगाय

आँनद के अँसुवाँनि अन्हैहैं ॥ कंत भले भले बोल के साँचे कह्यो तुम हो हम वा दिन ऐहैं । औधि गए यों भिया घर जाय कवै हम हाय ओराहने पैहैं ॥ ६४२ ॥

लहि सूनो सकेत अलिंगन कै मदनागिनी की व्यथा खोती रही । मुसुकानि भरि बलि बोलनि तें श्रुति माँहि पियूष निचोती रही ॥ द्विज प्रान-प्रिया मो सनेह सनी छतियाँ तें लगी सदाँ सोती रही । तजि ताहि विदेस बसे तिय जो कबहूं पल ओट न होती रही ॥ ६४३ ॥

दृग लाल विसाल उनींदे कछू गरबीले लजीले से पेखहिंगे । कब धौं बिथुरी सुथरी अलकैं झपकी पलकैं अवरेखहिंगे ॥ कवि संभु सुधारति भूषन भेष विलोकनि यों जग लेखहिंगे । अँगिराति उठी रतिमंदिर तें कबधों वह भाँवती देखहिंगे ॥६४४॥

लाल प्रबाल से ओठ रसाल अमी रस पान को ताप बुझैहैं । श्रीफल से बरजोर कठोर उरोज की कोरन काम जगैहैं ॥ कुन्दन काँति से लोल कपोल अमोलन चूंमि कै काम बढैहैं । फूलन की परजंक पै पौढि मयंकमुखी कब अंक लगैहैं ॥६४५॥

पीरोइ रूप कियो अपनो सम तीय सरूप याद करावति । काम की लाय लगाय हिये त ताय के मोहि वियोग जगावति ॥ कौन लई य रीति नई विपरीत भई विरहीन सतावति। डर सों कर सों पर सों नहीं तूं सर सों सर सों चलावति ॥ ६४६ ॥

वे बँगले पै बिसाल उसीर की चाह भरी ट चाँप चमोटे । वे चित चाहि चहूँघा चलावि चंदमुखी सजनीहूँ जमोटे॥ सालत है सरदार कुह हजारन वार विहाल सँजोटे । बैन हरे लहरे समीर की वेग हरे गुन तान की चोटे ॥६४७

काहू की भूल न भूलत हो झुकि झूलत ह परि प्रेम के झूलहि । प्रीति हिये पहिचानत ह नहिं जानत हो विरहा तन सूलहि॥ मोद भ मन माहि मलिन्द रहो अनकूल सुखी सुख मूलहि को तुम सो कहिये जग में नित सेवत हो स सेवती फूलहि ॥ ६४८ ॥

मुख भावन भूखित जाको बिलोकि न चंद ओर चितैबो भलो । अधरामृत पान के मैन के पियूष सों कौन हितैबो भलो ॥ जिहि लाग

अंक निसंक दई न परीन को रंक मितैबो भलो । धिक ताके बिना पल कों तजि कै न वियोग मैं बैस बितैबो भलो ॥ ६४९ ॥

निज देह कै सेवक संभु धरी सुभ जानि त्रिया के अराधन तें । उर माहिं रमाई रमा को रमापति जासु की संक अगाधन तें ॥ अरधंगनी बाल कों बेद बद्यो बल पायो नहीं तुव साधन तें । तजि मान मुधा न सुधा तोंहि भेट्यो मऱ्यो जो वियोग की बाधन तें ॥ ६५० ॥

लखि लीजिये साँच न क्यों मोहि बौरि भई सुनि संक जोरागिनि है । न छ्वै जमत्रासनि तें ज़रिबे के बढे तव आयु अभागिनि है ॥ कछु को कछु गायो पुराननि मे जो कहीं सोइ बात अदागिनि है । गर बाँधि कै सेवक बूड्यो त्रियोगी न वारिधि मे वडवागिनि है ॥ ६५१ ॥

सोवति नीलतिया सपने पिय आइ छुई छतियाँ भय भारी । चौंकि परी चित चेती चितै चहुँ आँसू उसासनि सों न सम्हारी ॥ कोहै कहा है कहै न कहा भयो यों कहि देव सहेली पुकारी। नीवी दुहूं कर दाबि रही सु गही उठि पायँ

सोवत मे सखि जान्यो नहीं वह सोवत
आयो हमारे । पीत पटी लपटी कटि मे अर
सुंदर रूप सँवारे ॥ देव अवे लगि आँखिन
वांकी चितौनि टरे नहीं टारे । चोरि लि
मो सपने वहि चोरही मोरपखौवनवारे

क्वै सपनो पिय को पिय आय दई
वनाय विरी त्यों । चूमतही चख चौंकि
सेज तैं भूमि मे घूमि गिरी त्यों ॥ दे
किवारनहू झझरीन झरोखनि झाँकि
दीन क्वै मीन जरा की भई सु फिरै फ
की चिरी त्यों ॥ ६५४ ॥

वितान तने जहाँ फूलन के दुति
सी जोति अमन्द । प्रिया सपने मे
देव सुजानी भले मिटि है दुखदन्द ।
सुवास सुगंध सने तवहीं कोऊ कूकि
मन्द । खुली अँखियाँ तो न चन्दमु
वान चाँदनी चंदन चन्द ॥ ६५५

सोवतही सपनो लख्यो लाडिल
घने वदरान कों । ता समै प्यारे
सों वुलाय हहा कै वडे अदरान

लाव मिलाव वही जेहिं ओछे उरोज लगे गद-
रान कों। यों सुनि चादर मूड तें ओढि सुदंतनि
दावि रही अधरान कों ॥ ६५६ ॥

साँझ समै रितु साँवन की अवला अतिही
अनुराग उचाटी। सोवत स्याम मिले सपने सव
जागत रैन कथा कहि काटी ॥ वान कहे जौं
विलास की वेलि की वात सबै मिलि दोउ न
ठाटी। चौंकि परे घन के गरजे सु रही गहि
अंक प्रजंक की पाटी ॥ ६५७ ॥

वालम आये विदेस तें रात सनेह भरे गरे लाय
लई री। सोय रही हों लला के लगे हिय काम
कला के अनंद मई री ॥ सौंतुक को सपने मे भयो
सुख जागतहीं विपरीत भई री। आवन लौं मन-
भावन के अलि ऐसेही नींद दई न दई री ॥६५८॥

सोवत आजु सखी सपने द्विजदेव जू आय
मिले वनमाली। जौंलौं उठी मिलिवे कहँ धाय
सो हाय भुजान भुजान पैं घाली ॥ वोलि उठे ए
पपी गन तौ लगि पीव कहाँ कहि कूर कुचाली।
संपत्ति सी सपने की भई मिलिवो व्रजराज को
आज को आली ॥ ६५९ ॥

आवत मे हरि कों सपने लखि नेसुक
सकोच न छोडी । आगे ह्वै आडे भये मति
चली सुचितै चख लालच ओडी ॥ ओठन
रस लेन कों मोहन मेरी गही कर कंपत ठोडी
और भटू न भई कछू वात गई इतनेहीं मे नें
निगोडी ॥ ६६० ॥

मोहन आये इहाँ सपने मुसुकात औ ख
विनोद सों वीरो । वैठी हुती परजंक में हौंहूँ उ
मिलिवे कहँ कै मन धीरो ॥ ऐसे मे दास विस
सिनी दासी जगाई डुलाय किवाँर जजीरो । झू
भयो मिलिवो व्रजराज को येरी गयो गिरि हा
को हीरो ॥ ६६१ ॥

भेटत ही सपने मे भटू चख चंचल चारु अं
के अरे रहे । त्यों हँसि कै अधरान हू पै अधरान
धरे ते धरे के धरे रहे ॥ चौंकी नवीन चरी
उझकी मुख स्वेद के बुंद ढरे के ढरे रहे । हाय
खुली पलकैं पलमें दिल में अभिलाख भरे के
भरे रहे ॥ ६६२ ॥

सपने में गई सखि देखन हौं सुन्यो नाचत
नंद जसोमति को नट । वा मुसिकाइ कै भाव

बताइ के मेरोहि ऐंचि खरो पकर्‍यो पट ॥ तौ लगि गाय भँभाय उठी कवि देव वधून मथ्यो दधि को मट । जागि परी तौन कान्ह कहूँ न कदंब को कुंजन कालिंदी को तट ॥ ६६३ ॥

धाय के अंक मे सोई निसंक सु पंकज सी अँखियान झकाझकी । यों सपने मे मिली अपने पिय प्रेमपने छवि ही की छकाछकी ॥ ठाढे ही ठाढे गही भुज गाढे सु बाढी वधू के हिये मे सकासकी । देव जगी रतियाँ हूँ गई न तिया की गई छतियाँ की धकाधकी ॥ ६६४ ॥

औंचक आनि गह्यो अँचरा त्यों नहीं नहीं जीभ लगी जपने मे । हाथनि सों झिझिकारो कियो परी हौं कछु ऐसी अयानपने मे ॥ वैतो कितेको कियो अनुराग अभाग कहाँ लौं कहौं अपने मे । जाहि बखानतही निसि द्यौस सो साँवरो आजु मिल्यो सपने मे ॥ ६६५ ॥

संग सखीन के सोय गई पट दे कर पोढे जँजीरन जोहै । आय गयो कित्त ह्वैके कोऊ करि कोटि कलानि दिखाय के छोहै ॥ सेवक जो जोरी करी झकझोरी न सो दुख जा।

नैन गये खुलि नींद के साथ गयो मजि एरी
जानिये को है ॥ ६६६ ॥

सोवत नींद मे मोहि मिल्यो छवि कोरि अनं
की सूरति सोहे । अंक लई भरि के सजनी र
रंग तरंगन सों करि छोहे ॥ जागि परी इतने
तउ कवि कालिका आँखिन आगे खरो है । पूछ
भेद न पायो कछू रजनी गई बीति को जानि
को है ॥ ६६७ ॥

जब तें सुने देखे बसे मन मे तब तें फिरि भेट
भई नहीं री । जल हीन सी मीन दुखी अँखियाँ
तलफैं दिन रैन बिथा भई री ॥ बिधि सों अब
सोवत हीं सपने मे गह्यो कर मैं हूँ उठी दई री।
मनमानी भई नहीं सेवक सों तजि नैन को नींद
किते गई री ॥ ६६८ ॥

राधिका सों कहि आई जो तू सखि साँवरे की
मृदु मूरति जैसी । ता छिन तें पदमाकर ताहि
सोहात कछू न बिसूरति वैसी ॥ मानहुँ नीर भरी
घन की घटा आँखिन मे रही आनि उनैसी।
ऐसी भई सुनि कान्ह कथा जो बिलोकहिगी तब
ह्वोयगी कैसी ॥ ६६९ ॥

चौंकी चकी ससकीन सकी चिते मित्र की मूरत चित्त चढी है ॥ ६७६ ॥

केसरिया पट केसर खौर हिये बन्यो गुंज को हार ढुरारो । ठाढे अहो कब के हरिकेस खरे अँगना तुम डीठि न टारो ॥ आपुन को हौ जू जा छबि सों बनि ठाढे बिकाउ से रोकि दुवारो । हौं तौ बिकाउँ जो लेते बने हँसि बोल तिहारोई मोल हमारो ॥ ६७७ ॥

आनि कढ्यो यहि गैल भटू ब्रजमंडल मे अमनैकन औरु है । देखत रीझ रहीं सिगरी मुख माधुरी को कछू नाहिन छोरु है ॥ बेनीप्रवीन बिसाल बिलोचन बाँकीचितौन चलाँकी को जोरु है । साँची कहै ब्रज की जुवती यह नंदलडैतो बडो चितचोरु ॥ ६७८ ॥

बाँसुरी कुण्डल मोरपखा मधुरी मुसक्यान भरी मुख हैये । बेनी पितंबर हार हरो भरो रूप समुद्र को पारु ना पैये ॥ जाय अजान लखे सो लखे हम जानि कै वाहि कितीक बरैये । वा दिन हेरि दियो मनि मानिक देहुँ कहा फिरि हेरि कन्हैये ॥६७९॥

गुच्छन के अवतंस लसैं सिर पच्छनि अच्छ

रातौ दिना दोऊ देखैं दुहूं पै तऊ न दुहूंन के नैन अघात हैं ॥ ६८३ ॥

मंडपहीं मै फिरै मेडरात न जात कहूं लखि नेह को औनो । त्यों पद्माकर तोहि सराहत बात चलै जो कहूं कछु कौनो ॥ ए बडभागिनि तोसी तुही बलि जो लखि रावरो रूप सलौनो । व्याह हीतें भए नाह लटू तब ह्वैहै कहा जब होयगो गौनो ॥ ६८४ ॥

तन को तनको उघरे पट औचक संभु कछू परो पावत से । दिनमे हूं लगेई पगेई रहैं भरे नैन कुहीलों जगावत से ॥ वह लाडिली लाजन जात गडी ये रहैं अँखियानि गडावत से । बरु गौनो ले आए लला जब तें तबतें रहैं सोनो गढावत से ॥ ६८५ ॥

आसन एक पै आँनद सों पियैं आपुस मै रस रूप बिलास को । मै रघुनाथ गई तिहिं औसर डाल लिये कर फूल की माल को ॥ रीझ रही दुति देख दुहूं की औ कौतुक एक भटू इहिं हाल को । अंग के रंग तें अंग को रंग भो गोरी को सौंवरो गोरी गोपाल को ॥ ६८६ ॥

किरीट वनायो । पल्लव लाल समेत छरी करपल्ल
सो मतिराम सुहायो ॥ गुंजन को उर मंजुलहार
निकुंजन तें कढि वाहिर आयो । आज को रूपलखे
व्रजराज को आजुही आँखिन को फल पायो॥६८०॥

देखि सराहैं सवै मुखखोल अमोल महा छवि
सी उलही है । वेनीप्रवीन जू पूरन पुन्य तें ऐसी
तिया तव तो सु लही है ॥ कोन गनै नर भे
की वरु ऐसी न देवन के कुलही है । जैसो हु
घनस्याम हो दूलह तैसियै राधा मिली दुल
है ॥ ६८१ ॥

एडिन जोति जगे कहैं ईंगुर तामें लगैन न
औ चुनीना । वेनीप्रवीन सवै तन की सुठि सुन्द
रता सकै सेस गुनीना ॥ का कुरविंद मरिंद स
इन्दु प्रभा मुख ओठ समान दुनीना । ऐसी दई
दुलही है लला तुम ऐसी तो काहू की देखे
सुनीना ॥ ६८२ ॥

व्याह के द्योसही तें दिनहीं दिन प्रेम दुहूं के
हिये सरसात हैं । गौनो भयो भये दोउ निहाल
दुहूं को दुहूंन के वैन सुहात हैं ॥ वैठक एकहीं
ठौर किये सु दुहूं को दुहूं छिन छोटे न जात हैं।

पिया अतिही अकुलाने ॥ जागि परे पै तऊ यह जानत पौढ़ि रही हम सों रिस ठाने । प्रानपियारी के पाँपरि कै करि सोंह गरे की गरे लपटाने ॥६९०॥

नारि पराई तें बोलिबो को कहै क्यौंहूं न काहू को भूलहू हेरे । मेरो लखै मन वेई औ मेहूं लियो उन को लिखि चित्र हियेरे ॥ बाँधि सके उन को मन को बंध्यो रैन दिना रहै मेरई नेरे । लेस नहीं उन मे अपराध को मान की हौंसे रही मन मेरे ॥ ६९१॥

डोलत हैं इक संग खरे इक संगहीं बोलत हैं मन भायक । दूसरी बात न जानत ए निसबासर संग रहैं सुख दायक ॥ कौन समान करै इन की गति ये इनहीं को सदा खग नायक । देखि परे खग राजन मे इक सारस सांचे सिपारस लायक ॥६९२॥

मनमोहन के गरे हार चमेली को वालन वेलिन सों चितयो । कबि बेनी सुगंध सरूप भरो सबहीन को प्रान लटू ह्वै गयो ॥ एक बार कह्यो सबही मिलि देहु जू नेह नयो हरि ब्यौंत ठयो । चहुँ ओर की झोरि मे झारि पितंबर छोर हरैं कर तोर दयो ॥६९३॥

पांव धरे दुलही जिहि ठौर रहे मतिराम तह दृग दीने। छोर्‍यो सखान के साथ को खेलिबे बैठि रहें घरही रस भीने॥ सांझहि तें ललके मनही मन लालन यों रस सों वस कीने। लोनी सलोनी के अंगन माह सु गौने की चूनरी टोने से कीने॥ ६८७॥

लैकर काँगही लाय फुलेल गुहें गुन लाल सों वेनी बनावत। दे उरजेव जवाहिर की चुनि चोप सों चूंदरी लै पहिरावत॥ देखी हैं और सोहागिनि केतिकौ भाग की बात कही नहीं आवत। राखति जा मग राधिका पाँयँ तहाँ हरि आगे ह्वै फूल बिछावत॥ ६८८॥

केहूं नहीं बिसरै निसिवासर मंद हँसी मुखचंद उज्यारी। त्यों ही दिपै अति नेह सों देह की दीप कली सम दीपति न्यारी॥ तेरियै जोति जगै हिय भीतर आवत और न राति अँध्यारी। नैननहूं अरु बैननहूं तनहूं मनहूं कों तुही अति प्यारी॥ ६८९॥

एकही सेज पै सोवत हैं पदमाकर दोउ महा सुख माने। सापने मैं तिय मान कियो यह देखि

पांव धरे दुलही जिहि ठौर रहे मतिरा
दृग दीने । छोन्यो सखान के साथ को
वैठि रहे घरही रस भीने ॥ सांझहि तें
मनही मन लालन यों रस सों बस कीनै
सलोनी के अंगन माह सु गोने की चू
से कीने ॥ ६८७ ॥

लैकर काँगही लाय फुलेल गुहैं गुन
वेनी वनावत । दै उरजेब जवाहिर की
सों चूंदरी लै पहिरावत ॥ देखी हैं
गिनि केतिकौ भाग की बात कही ना
राखति जा मग राधिका पाँयँ तहाँ
फूल विछावत ॥ ६८८ ॥

केहूं नहीं विसरै निसिवासर मंद
उज्यारी । त्यों ही दिपै अति नेह
दीप कली सम दीपति न्यारी ॥ तेरि
हिय भीतर आवत और न राति
नैननहूं अरु वैननहूं तनहूं मनहूं
प्यारी ॥ ६८९ ॥

एकही सेज पे सोवत हैं पदमा
सुख साने । सापने मे तिय मान

मानै नहीं अपराध किये को । गारि दै मारि दै टारति भाँवती भाँवतो होत है हार हिये को ॥६९७॥

मार्यो है फूल की मालन सों कर बाँधि के त्यौं फिरि चौगुने चाइन । सुंदर वासों कितो खिझिये न तजै तऊ आपने सील सुभाइ न ॥ बाहिरे काढि दियो दै कपाट हों पौढि रही पटतानि गुसाँइन । जो पल मे पल खोलि कै देखौं तो पाँय तें बैठ्यो पलोटत पाँइन ॥ ६९८ ॥

काढि दिये घर तें त्यौं घरीही मे पाँयन देखे परे हहाखात हैं। फूल की माल सों बाँधे तऊ मुसक्याय तकैं तन को न सकात हैं ॥ बातन तें डरपैये कहा झकझोरतहू न अरी अरसात हैं । लाज को लेस नहीं मन मे नित मारेहू जात तऊ न लजात हैं ॥ ६९९ ॥

अरुनाई दुवो द्रिग मे भरि के घर आवत हाइ चितैवो करो । सरदार अमोलन बोलन ते रुख राखत रूखी बतैवो करो ॥ करजोरि निहोरत प्रान-प्रिया पर के बरनामन लैबोकरो । रिसहाइ नसीधन के ठनके धन रैबोकरो मन लैबोकरो ॥ ७०० ॥

रुचि पंकज चंदन कंचन चंपक रंचन रोवनहू

साँझ समै ललना मिलि आई खरो जहाँ नन्द लला अलबेलो। खेलन कों निसि चाँदनी माँह वनै न मतो मतिराम सुहेलो॥ आपनी आपनी पौरि बताय कै वोलि कह्यो सिगरीन नवेलो। त्यों हँसि कै व्रजराज कह्यो अब आज हमारिहीं पौरि मै खेलो॥ ६९४॥

सुर सुच्छ उचार विचार महाहित पावन पालन पूरन के। सरदार उठे तन रोमति से जल जोग भए रति पूरन के॥ चित चाह भरे चमकै अति सै रन काज जिसे सुचि सूरन के। परखे घन के मन को करखें हरखे गन मंजु मयूरन के॥६९५॥

वहि अंतर गूढ अगूढ निरंतर काम कला कहि कोन गनै॥ कहि केशव हास विलास सबै प्रति द्योस बढे रस रीत सनै॥ जिन को जिय मेरई जीव जियै सखि काइ मनो वच प्रेम घनै। तिन को कहै आन वधू के अधीन सुसा परतीत किये सपने॥ ६९६॥

ठानै मजा अपने मन को डर आनै न रोसहू दोस दिये को। त्यों पदमाकर जोवन के मद पै मद है मद पान पिये को॥ राति कहूं रमि आयो घरे डर

ाने नहीं अपराध किये को । गारि दे मारि दे ारति भाँवती भाँवतो होत है हार हिये को ॥६९७॥
मान्यो है फूल की मालन सों कर बाँधि के त्यों फेरि चौगुने चाइन । सुंदर वासों किती खिझिये न तजे तऊ आपने सील सुभाइन ॥ बाहिरे काढि दियो दे कपाट हों पौढि रही पटतानि गुसाँइन । जो पल मे पल खोलि के देखों तो पाँय तें बेघ्यो पलोटत पाँइन ॥ ६९८ ॥
काढि दिये घर तें त्यों घरीही मे पाँयन देखे परे हहाखात हैं । फूल की माल सों बाँधे तऊ मुसक्याय तकें तन को न सकात हैं ॥ बातन तें डरपैये कहा झकझोरतहू न अरी अरसात हैं । लाज को लेस नहीं मन मे नित मारेहू जात तऊ न लजात हैं ॥ ६९९ ॥
अरुनाई दुवो द्रिग मे भरि के घर आवत हाइ चितैबो करो । सरदार अमोलन बोलन ते रुख राखत रूखी वर्तबो करो ॥ करजोरि निहोरत प्रान-प्रिया पर के बरनामन लैबोकरो । रिसहाइ नसीबन के ठनके धन रैबोकरो मन लैबोकरो ॥ ७०० ॥
रुचि पंकज चंदन कंचन चंपक रंचन सोवनहू

की रची । कहिये केहि कारन को इते लाइक कार
भामिन भौंह नची ॥ अनुमानत हो अँखिया
लखि लाल ए नाहिंने राति के रोस रची ॥ तन
तेरो वियोग तप्यो तरुनी नहि मानहु मो हिय
माह नची ॥ ७०१ ॥

ऋतुराज के आगम लोग सबै सु गुनै गले
बड भागन में । इन के मत ले के मलिन्द सदा
नित आय के गुंजत आंगन में ॥ जिन के सुचि
सुन्दर बोल सुने मन होहि नहीं अनुरागन में।
कत कोकिल कूर किये विधना सखि बोले सदा
वन बागन में ॥ ७०२ ॥

करि कंद कों मंद दुचंद भई फिर दाखन
उर दागती हैं। पदमाकर स्वाद सुधा तें सि
मधु तें महा माधुरी जागती हैं ॥ गिनती क
एरी अनारन की ए अँगूरन तें अति पागती
तुम बातें न सीठी कहो रिस मैं मिसरी तें मि
हमें लागती हैं ॥ ७०३ ॥

पाप पुराकृत कों प्रगट्यो बिछुर्यो तोहि
भयो सुख घात है । जीवन मेरो अधीन है तेरा
मीन कों कौन सी बात है ॥ तोख हिं

रु मैन व्यथा हरु जातो प्रिया मन मे पछितात । जो तुम ठानती मान अयान तो प्रान पयान किये अब जात है ॥ ७०४ ॥

बेनी गुही लर मोतिन की भरी ईंगुर माग निहनि भोरी । हार मनोहर ही पहिराय रचे कर कंकन जेवर जोरी ॥ या विधि रीति सों प्रीति बढाय बढाय प्रतीति धरी चित चोरी । धारतही रसना कटि बीच मुदी फुफुंदी की फुँदी गहि छोरी ॥ ७०५ ॥

परजंक परी निरसंक कहू भरि अंकन आप सकेलती हो । तिरछी तकि मैन मई बरछी करछी कर ठीक न ठेलती हो ॥ सरदार सु लालई लोद लिये उर औरन के उर मेलती हो । नख तीन विचार करो बखती झखती अखती नित खेलती हो ॥ ७०६ ॥

लखि संकर घाघरो घेरि घरीक लों घूमि के घूंघुर घेरो फिरै । तर नाभि रोमावली पै चढि के कुचसृंग के बीच दरेरो फिरै ॥ चलिगो मुख चाड मे ठोढी कि गाड मे बूडि सुधारस हेरो फिरै । लटको नव बेसरि झूले जहाँ अटको मन मेरो न फेरो फिरै ॥ ७०७ ॥

लोक की संक ससंकित लोचन वे दुखमोचन कोरन ढारिवो । किंकिनी की धुनि धीर सुने अन धीर है हाथन ताहि सुधारिवो ॥ नूपुर के घुंघरून की घोरन होरनि में चित की गति पारिवो। है जगजीवन को फल जीवन ऐसी नवेली को नित्त विहारिवो ॥ ७०८ ॥

गति मेरी यही निसिबासर है नित तेरी गलीन को गाहिवो है । चित्त कीन्हो कठोर कहा इतनो प्रिया तोहि नहीं यह चाहिवो है ॥ कहि ठाकुर नेकु नहीं दरसो कपटीन को काह सराहिवो है। मन भावे तिहारे सोइ करिये हमें नेह को नातो निवाहिवो है ॥ ७०९ ॥

भौंर भयो भरमै मद अंध सुगंध झकोरन की झकझोर में । मानो सुधा के समुद्र पर्यो अँक वार समै सिसकीन के सोर में ॥ भूलि रह्यो लखि भौंह के भाय रह्यो ठहराय उरोज के ठौर में। वारवधू के विलास वँध्यो सु कहो मन कैसे लगै तिय और मै ॥ ७१० ॥

कुन्दन सो तन चंद सों आनन कानन मुकतान की वारी । देखत आरसी पान न खात

भुजा मनो सुन्दर ढार तें ढारी ।। ऐंठी सी आँख अमेठी सी भौंहनि पैने कटाच्छ लटैं सटकारी । वारवधू यों विलोकत प्यारे जु देन कों मोती की माल उतारी ॥ ७११ ॥

छोरतही जु छरा के छिनौ छिन छाए तरंग उमंग अदा के । त्यों पदमाकर जे सिसकीन के सोर घने मुख मोरि मजा के ॥ दै धन धाम धनी अब ते मनहीं मन मानि समान सुधा के । बार-विलासिनी ती के जपै अखरा अखरा नखरा अखरा के ॥ ७१२ ॥

निज वाल मै सेवक सूधियै चाल न ख्याल यौं मीनधजा के करै । परनारि सों कोनें रहै मनमारि चुकै परसंग सजा के करै ॥ गनिका धनि हैं जो नचैं रचैं राग बिहाग में रंग रजा के करै । जुत हावन भावन तें अँग अँग तरंग अनंग मजा के करै ॥ ७१३ ॥

कानन तान तरंगन में रम होय गए सब भांति अयाने । जा उर पै हग बानन के न लगे रुचि राखन हेत निसाने ॥ औ सरदार सुनै सिसिकी रति में विन मोल न आप बिकाने । क्यों

करतार किये तिन को जिन वारवधू के बिचार न जाने ॥ ७१४ ॥

साँझ गए उठि आवत भोरहो जानति हौं तुम्हैं भए भान हौ । जाहि व्यथा सो कह्योई चहै तुम देत नहीं इन बातन कान हौ ॥ रूठि के पीठि दै बैठि रहे हिय वाके जगावत कोप क्रिसान हौ। चाहिये वाहि की मान करै उलटे तुमहीं अब ठानत मान हौ ॥ ७१५ ॥

दीजिये दोस कहा कहि के वह जाय परी पहिले कर चीठी । ही जो लिखी उन लोयन की मसि लागति लाल तुम्हे वह सीठी ॥ औ उलटे तुमही पुनि रूठत कान करैं कहिं भाँति बसीठी जा उर पित्तप्रकोप भयो मुख लागत दाख दिनै ना मीठी ॥ ७१६ ॥

रोप रच्यो तिय दोप सिहारेई प्यारे करो रस राखि परेखो । पाँयनहूं परि प्यारी मनाइये प्रीति की रीति है बंक बिसेखो ॥ नेक तिहारे निहारे बेना कलपे जिय क्यों पल धीरज लेखो । नीरज नैनी के नीर भरे किन नीरद से दृग नीरज रखो ॥ ७१७ ॥

बाल बिहाल परी कब की दवकी यह प्रीति की रीति निहारो । त्यौं पदमाकर है न तुम्हे सुधि बैरी बसंत जो कीन्ह बगारो ॥ तातें मिलो मन भाँवती सों चलि ह्यांतें हहा वच मान हमारो । कोकिल की कलबानि सुने पुनि मान रहैगो न कान्ह तिहारो ॥ ७१८ ॥

बातहि बात दै पीठि पिया पटिया लगि मान जनावन लाग्यो । ज्यौं ज्यौं करै मनुहारि तिया रुख तोख सु त्यौं त्यौं रुखावन लाग्यो ॥ चूकपरी सो परी बकसो यह प्रान है रावरे पांयन लाग्यो । लीजिये मोहि उठाय हिये बिच भांवन जोर जडावन लाग्यो ॥ ७१९ ॥

कोमल कंजन की कलिका अलि काहे न चित तहां तू लगायो । मंजरी मंजु रसालन की तिनको रस क्यों नाहिं तो मन भायो ॥ फूली सु औरै अनेक लता हरिदास जू पायो बसंत सुहायो । छोड गुलाबन के बन तू कटसैरुवा पै किहि कारन आयो ॥ ७२० ॥

केवरो केतकी औ करना नव कंज पराग के रस की है। खूझो गुलाब नेवारी जुही अरु बेला

सुवास दिना दस की है ॥ चंदन चूर मृगम
धूर कपूर की पांडरी के खस की है। माथुर प
सुगंधन में सब तें खूसबू ये सिरे जस की है॥७२१

सोर मचे अति मोरन के सब ओरन झींगु
झांपत झांजें। झूकन सीर समीरन की ततवी
रन कामकला कल काजें॥ यों सरदार-स
सरिता सुख सिंधु सम्हारन हेतु समाजें।
घनस्याम घटान के ऊपर देखो न छूटी छ
छवि छाजें ॥ ७२२ ॥

दाऊ न नंदबबा न जसोमति न्योते गए कहूं ल
संग भारी। हौंहूं इतै पदमाकर पौरि में सूनीपरी
वखरी निसिकारी॥ देखे न क्यों कढि तेरे सुखेत
मे धाय गई छुटि गाय हमारी । ग्वाल सों
बोलि गुपाल कह्यौ सो गुवालिनि पैं मनो मूठि
सी डारी ॥ ७२३ ॥

आए न आज लो नंदबबा बल वीरन जानत
जो कसरी है। गायन गोठ गये सिगरे सु निहार
सुजान भई रसरी है॥ तोहि गुआलिन साथ
लेए सरदार बोलावत जो जसरी है। हेर हमा-
ई मंडफ ऊपर बेलि परोसिन की पसरी है॥७२४॥

उठि भोरहीं आवती हौ तित है जित धौसहू मैं तमछाय रह्यो । संग काहू तो लेहु लगाय अहो कहिये कहा मानती हौ न कह्यो ॥ कहौ को सुनि लैहै पुकारिबो काहू अचानक जो ठग आय गह्यो । तुम सूने तमाल की कुंज की गैल अकेलिही बेचन जात दह्यो ॥ ७२५ ॥

देखे विना वृषभानदुलारि कों भावै हरी कों घरीकु घरौना । काम चढे कबिराज कछू व्रजराज समाज मे आए डरौना ॥ राधे बिलोकि सखीन मैं स्याम सुमौंहनि मैं कहि ऐसी करौना । प्यारे गही बनमाल गरें तर प्यारी गह्यौ कर कान तर्‍योंना ॥ ७२६ ॥

एक समै दिन माझ अलीन मैं सुन्दर बैठी ही राधिका रानी । आए तहां पिय सैन दई चलि प्यारी चितौनि मैं चातुरी ठानी ॥ तेह असेत कटाच्छ करे तिन मैं सम जोन्ह की भांति है आनी । जानि गए हरि औंधि बताई है नैननहीं मैं निसा की निसानी ॥ ७२७ ॥

बैठीहुती गुरु लोगनि मैं तहां संग सखी लिये स्याम सिधार्‍यो । अंगही अंग अनंग तरंग तरंग

ही मे एक रंग विचार्‌यौ ॥ तोरि लयो करतें फ
श्रीफल या मृगलोचनी आगे उछार्‌यो । फूल
सरोज सरोजमुखी मलिका करकै कलिका कौ
डार्‌यो ॥ ७२८ ॥

नँदलाल गए तितहीं चलिकै जित खेलति
बाल सखी गन मै । तहां आपुही मूँदे सलोनी के
लोचन चोर मिहींचनी खेलन मै ॥ दुरिबे कौ
गई सिगरी सखियां मतिराम कहै इतने छनमै।
मुसुकाय के राधिकै कंठ लगाय छप्यो कहूं जाय
निकुंजन मै ॥ ७२९ ॥

इत नाइन की घरहाइन ह्वै के लोगाइन मे चलि
जायो करें । उबटें कसि अंग अनंग सों सेवक
तेल फुलेल लगायो करें ॥ कहूं औसर पाय लजी
लिन कों रतिरंग के संग सतायो करें । हरि ऐसे
अनोखे नए रसिया मन भायो करें बचि आयो
करें ॥ ७३० ॥

होरी के औसर गोरी सबै मिलि दौरीं लगी
सब कान्हर आयो । ह्यां इन में निज भावती देख
भावन को मन भायो ॥ हाथ पसारि न
तहं यों कछु लाल गुलालउड़ायो । बाहन

उडायो । वाहन वांधि हिये लगि के हरि राधिका के मुख सो मुख छायो ॥ ७३१ ॥

केसरिया पट केसर खोर हिये वन्यो गुंज को हार ढुरारो । ठाढे अहो कवके हरिकेस खरे अंगना तुम डींठि न ढारो ॥ आपुन को हों जू जा छवि सों वनि ठाढे विकाउ से रोकि दुवारो । होंतो विकाउं जो लेते वने हंसि वोल तिहारोई मोल हमारो ॥ ७३२ ॥

नवला को विलोकि रहे मुख चंद वन्यो जो त्रिभूपन सों भलहे । कर कंज कमाल सनाल दोऊ सों चप्यो भुजमूलन को तल हे ॥ कुच तुंग सों वेध सहे उर को सुने माधुरे वैननि को छल हे । नविराम गहे पल सेवकराम इतो जगजीवन को फलहे ॥ ७३३ ॥

गुरुलोगन की लगी त्रास घनी सैंगहीमें चवाइन को गनहे । इत मैन सों चैन मिले न घरी वलसेन के प्रान गहे तन हे ॥ कछु सेवक कासों कहा कहिये कहा कीजिये भो जुग ज्यों छन हे । मिलिवे की नहीं वनि आवति रामभयो चहे वावरो सो मन हे ॥ ७३४ ॥

जुरि दीठि चले तो यही सों रमै हमैं इठ कें तो यही हिय सों। कहि सेवक बोल्यो चहें तो यही हम बोलें कछू तो नहीं त्रिय सों ॥ जिय जेयो जोपे तो यही मैं रह्यो विधि द्रयो जोपे तो यही जिय सों। मम अंक लगे तो यही तिय राम कलंक लगे तो यही तिय सों ॥ ७३५ ॥

हम को कित कैसे कहाँ न लखें नित ऐसी व्यथा जिय जागती हैं। न गनाय गुनाय मनाय जनाय बनाय वही रँग रागती हैं। कस कें न सकें कढि कैसेहूं सेवक सौंहँन पें दिल दागती हैं। परतीन की सेन सुधा सों भरी बरछीन तें सौगुनी लागती हैं ॥ ७३६ ॥

छपि के छपा माँहि सहेट में जा अधरा रस लोनो लयो जो नहीं। जिनके लखि हावन भावन कों न लखें बिरहा सों छयो जो नहीं ॥ रिसि में लखि के हनुमान कहे परिपाँवँन पें बिनयो जो नहीं। पन तीन मैं कौन कियो सुख सो परतीत मै लीन भयो जो नहीं ॥ ७३७ ॥

जिनके मुख इंदु विलोकन कों दिन रैन गलीन फेरो कियो। जिन के लिये पावन पें परि

सखी दूतिन को रुख हेरो कियो ॥ हनुमान दियो सुख तौ सिगरो परकीयन को जुपै चेरो कियो। बिधि की बिपरीत कहौं मै कहा अपनो दिन हाय न मेरो कियो ॥ ७३८ ॥

बानी मे बीन की बान सबै पगपान मनो मंति बारिज मोती। ऐसी लगी सविलासन में रतिहूँ मे न रूप की रासन ओती ॥ आइ करी दिन मे जेहि जो न कहे हरिनाम अरी वह कोंती। वारे बड़े बडे नैननि राजत राजत नाक बडे बडे मोती ॥ ७३९ ॥

पूख की ऊख हि दूखन सो लगो सोतो पयूष के सिंधु भरी सी। लोइन सोइन होंडा किरी सुतो खंजन की छबि छीन लई सी ॥ झाँकी में झाँकी किवारी को खोलि चतुर्भुज है रतिजाकी सखी सी। चित्त बसी मनमोहनी सी निकसी करसी सरसीरुह कैसी ॥ ७४० ॥

चूनरि चारु चुई सी परै चटकीली नई अँगिया छवि छावै। जोवन भार सों जात नई उनई खिरकी मे नई छवि छावै ॥ ऊंचे अटा चढि चंद-मुखी कवि संभु कहे इम पीक चलावै। दे बिधि

सो विध वीच मनो विधना रँगरेज कुसु
चुवावै ॥ ७४१ ॥

वैनन सैनन मैन भई अति कोककला र
सो दरसी सी । लोयन लोल अमोल अडो
बसी रहे भौंह कपोल कसी सी ॥ केहर जोहत
मन मोहत सोहत हेमलता विकसी सी । झाँ
झरोखा रही जो अटा सु घटा फट चंद छ
निकसी सी ॥ ७४२ ॥

आछे किये कुच कंचुकी मे घट मे नट कै
बटा करिबे कों । मो दृग दूपें किये पदुमाकर त
दृग छूटि छटा करिबे कों ॥ कीजे कहा विधि की
बिधि कों दियो दाव न लोट पटा करिबे कों ।
मेरो हियो कटिबे कों कियो तिय तेरे कटाछ
कटा करिबे कों ॥ ७४३ ॥

जाइ न जंत्र तें मंत्र तें मूरि तें जाति क
नहीं होत तथा है । सूख्यो करे तन भूल्यो फि
मन देखि कहें जन बौरो जथा है ॥ हाय द
जनि काहू के होय कहे रघुनाथ भयेंही मथा है ।
बूझ कहा अनबूझी भली यह प्रेम व्यथा की
कथा अकथा है ॥ ७४४ ॥

गति मेरी यही निसिवासर है नित तेरी गलीन को गाहिबो है। चित कीन्हो कठोर कहा इतनो अब तोहि नहीं यह चाहिबो है ॥ कवि ठाकुर नेकु नहीं दरसे कपटीन कों काह सराहिबो है। मन भावे तिहारे सोई करिये हमे नेह को नातो निबाहिबो है ॥ ७४५ ॥

यह प्रेम कथा कहिबे की नहीं कहिबेई करो कोउ मानत है। पुनि उपरी धीर धरायो चहै तन रोग नहीं पहिचानत है ॥ कवि ठाकुर जाहि लगी कसकै नहीं सो कसकै उर आनत है। विन आपने पाँय बेवाई गए कोउ पीर पराई का जानत है ॥ ७४६ ॥

वा निरमोहिनी रूप की रासि जो ऊपर के उर आनति ह्वैहे। बारहूँ बार बिलोकि घरी घरी सूरति तो पहिचानति ह्वैहे ॥ ठाकुर या मन की परतीति है जोपै सनेह न मानति ह्वैहे। आवत हैं नित मेरे लिए इतनो तो बिसेखहू जानति ह्वैहे ॥ ७४७ ॥

लगी अंदर की करै बाहिर को बिन जाहिर का कोउ मानत है। सुख औ दुख हानि औ

लाभ जिती घर की कोउ बाहिर भानत है। कवि ठाकुर आपनी चातुरी सों सबही सब भाँति बखानत है। पर बीर मिले बिछुरे की व्यथा मिलि के बिछुरे सोई जानत है ॥ ७४८ ॥

कौन से केलि के मंदिर तें उसनींदे भरे उठि जात प्रभाते। हैं अदले बदले पट भूषन दोऊ सराहत सोंहँ सिहाते ॥ ठाकुर तें हती ताखिन ता थल मोहि बताव भटू चरचाते। गोकुल गैल ? आँनद फैल में गोपी गोपाल बतात कहाते ॥७४९

एकही सों चित चाहिये ओर लों बीच दा को परे नहीं डाँको। मानिक सो मन बेंचि द अब फेरि कहा परखाइबो ताको ॥ ठाकुर काम नहीं उनको यहाँ लाखन में परबीन है जाको। प्रीति किए में कछू न लगे करि के एक ओर निबाहिबो वाँको ॥ ७५० ॥

बिन आदर पाय के बैठि ढिगाँ अपनो रुख दै रुख लीजतु हैं। अपमान औ मान परेखो कहा अपनी मति में चित दीजतु हैं॥ कवि ठाकुर काम निकारिबे के लिएँ कोटि उपाय करीजतु हैं। अपने उरझे सुरझाइबे कों सबही की खुसामद ~ जतु हैं ॥ ७५१ ॥

पिय मोहन को वह मोहनी रूप निहारे बिना नहिं जीजतु है । तिहितें जु लटी भली या जग में सिख मानि सबै सुनि लीजतु है ॥ कहि ठाकुर लाल के देखिबे के लिये ज्यावन काहु पै दीजतु है। सखि कां कहिये अपने अरुझें सबही की खुसामद कीजतु है ॥ ७५२ ॥

दिल साँचो लगै जिहि को जिहिं सों तिहिं कों तितकों पहुंचावतु है। बलि हंस चुनै मुकताहल कों अरु चातक स्वाति कों पावतु है ॥ कवि ठाकुर यों निज भेद सुनो अरुझावत सो सरुझावतु है । परमेश्वर की परतीति यही मिलो चाहिये ताहिं मिलावतु है ॥ ७५३ ॥

सुनि कै धुनि चाह भई हिय में तहां जैये कछू सुख पावने री । ढिग जाय सबै समुझी उन की कहूं ताल कहूं सुर गावने री ॥ कवि ठाकुर कूर समाज जहाँ तिनतें कहा नेह लगावने री। चलि देखि भटू हों वृथा अटकी सुने दूर के ढोल सोहावने री ॥ ७५४ ॥

इते सखी चहैं कुल की कुलकानि उतै नँदनंदने ध्यावती हैं । निज गैल मे आनि कढे जो

कहूँ न झरोखन झाँकन पावती हैं ॥ कवि ठाकुर
है न बनाव कछू दुविधा मिलि साँच सचावती
हैं । चहैं आसिकी औ डरमामन को कहो द्वै है
कहाँ बनि आवती हैं ॥ ७५५ ॥

कैसे सुचित्त भए निकसो दै हँसो विलस
सब सों गलबाँहीं । वे छल छिद्रम के छल
छलि ताकती हैं सब की परछाँहीं ॥ ठाकुर
मिलि एक भई रचिहैं परपंच कछू ब्रजमाँह
हाल चवाइन को दहचाल सो लाल तुम्हैं
दिखात की नाहीं ॥ ७५६ ॥

कहिबे सुनिबे की कछू न इहाँ न लटी भला
को दुख पावनो है । उनकी तो सबै मरजी पर
के अपने मन कों समुझावनो है ॥ कवि ठाकुर
काम निकासिबे कों अब मंत्र यही ठहरावनो है ।
इन चौचँद हाँइन मे परिके समयो यह बीर बग
वनो है ॥ ७५७ ॥

कहिबे की वृथा सुनिबे की हँसी को दर
कर्कि उर आनत है । उर पीर बड़ी तजि धी
सखी कहि को नहि कासों बखानत है ॥ क
कहे मे मर्याद कहा को हमारी पही दु

मानत है । हमै पूरी लगी की अधूरी लगी यह जीव हमारोई जानत है ॥ ७५८ ॥

अवहीं मिलिवो अवहीं मिलिवो यह धीरजही मे धिरैवो करै । उर तें उठि आवै गरें तें फिरै चित की चितही मे थिरैवो करै ॥ कवि बोधा न चाँड सन्यो कतहूं नितहीं हर वासी हरैवो करै । सहतेही बनै कहते न बनै मनहीं मन पीर पिरैवो करै ॥ ७५९ ॥

आवत है इतै बोलें विना सो तज्यो हम कौं उतै जैवे परो । गुन रावरे के वलदेव जिते प्रन कै अब सो सब गैवे परो ॥ गति देखि कै हाल न जानो कछू तजि लाज समाज बसैवे परो । सहजै न प्रतीति परैगी तुम्हे अब काढि करेजो दिखैवे परो ॥ ७६० ॥

तन तें मन तें रमिकै अनतै हमै बातन हीं वहराइये जू । तरसैं अखियाँ दरसे विन ए इन्हे रूप सुधारस प्याइये जू ॥ कवि नोनिधि कीवे जो ऐसिही तौ कहा लोन जरे पे लगाइये जू । कवहूँ तौ हमारे गरे लगि कै यह ताप हियें की बुझाइये जू ॥ ७६१ ॥

यह प्रीति की बेलि लगाई जुहै तेंहि सींचि भले सरसाइये जू। नित साँझ सकारे कृपा करि कै पग धारि सुधा बरसाइये जू॥ कवि कालिका यों करजोरि कहै मति देखिबे कों तरसाइये जू। इन आँखें हमारी कुमोदिनी कों मुख इंदु लला दरसाइये जू॥ ७६२॥

पहिले सुखदैन करी बतियाँ बहकाय कै मन मेरो ठगा। करजोरि कहौं नहिं जोर कछू चित चोरि कै प्यारे न दीजे दगा॥ तुलसी निज बोल की याद करो सुनु लाल मनोज की दाह भगा। अपनो करिकै कर छोरिये ना जनि तोरिये नेह को काँचो तगा॥ ७६३॥

पठवाय संदेस हमेस हमैं सु लियो अपने रँग मे उमगा। बिसवास दै कीजे निरास कहा चरचा यह पाई सगा असगा॥ कुलटा कुल लोग ल... कहिबे नहीं अंक लगी औ कलंक लगा। तुल... तुमहीं चित चेत करो जनि तोरिये नेह को काँ... तगा॥ ७६४॥

गुन रूप कहा हम माँहि रह्यो जिहिं के बस ह्वै हठि प्रीति पगा। अब नून कहा सु कहो

सकुंप। किमि चित्त कों लीन्हीं उदासी लगा॥ तुलसी जू प्रवीन कहावत हो। मम प्यारे तो ज्वाव कौ राखो जगा। मनभाँवते भाँवती चाल चलो जनि तोरियें नेह को काँचो तगा॥७८५॥ मो जुग नैन चकोरन कों यह रावरो रूप सुधाही को नैबो। कीजै कहा कुलकानि तें आनि पऱ्यो अब आपनो प्रेम छिपैबो॥ कुंजन में मतिराम कहूं निसद्यौस हूँ घात परें मिलि जैबो। लाल सयानी अलीन के बीच निवारिए ह्यां कीगलीन को ऐबो॥ ७८६॥

अजू नंद के नंदन सोंह किए कहौं नैनन रांवरी हौंस रहें। सँग छाँहीं ज्यों सासु फिरै अनखाँनि जिठानी ढुकाढुकी सौसर है॥ कवि नाथ जू जानत हो हिय में वय बीति गए कहा मौस रहे। पर कीजे कहा यह गाँव के लोग गुहें चरचांन को चौसर है॥ ७८७॥

हौंहूं सँमें लिखि कै उत आय कह्यो करिहौं सब रावरे जीको। बारहींबार न ऐये इते यह मेरो कछू है परोस न नीको॥ चाह भरे घसि चंदन लावत हार बनावत मोलसिरी को। कोऊ

कहूँ यह जानि जो जाय तो होय लला मो
लील को टीको ॥ ७६८ ॥

सिव ठौर कुठोर कछू न गनो जितहीं तितहं
हँसि बोलत हो। हम घात परे मिलिजैवो कहं
यह प्रेम दुरो कत खोलत हो ॥ चरचोई करं
चहुंओरन तें न चवाँइन के चित तोलत हौ।
हरि नाहीं भली यह बात करो परछाहीं भए
संग डोलत हो ॥ ७६९ ॥

मोलिये मोहन जेठ की धूप में आए उवाने
परे पग छाले। वेनी खरे मगद्वार त्रिलोकत वैठे
न सोए चलेऊ न हाले ॥ कीजे कहा हरि हार
वलायल्यों जारिवे जोग हमारेई ताले। देखतं
घर कौन बचे घर को न गए घरहाइँनि घाले ॥७७

ताकि त्रिपारत मो मन को नवनेह पयोनिधि
कै लसिबे है। चाह भरे चख चंचल ये इनसों
नित दीनदसा नसिबे है। सेखर लोग चवैयन
की चरचा चित दै न कहूं फँसिबे है ॥ मीत
न जाहिर प्रीति करो ब्रज गाँव गँवारन मैं
बसिबे है ॥ ७७१ ॥

आय अगीत पछीत कै जो नित टेरत मोहि

सनेह की कूकन । जानत हैं की न जानत कोऊ जरैं नर नारि सरोस भभूकन । ठाकुर की बिनती इतनी अरी तू कहियो यह बात अचूकन । देखिं उन्हें न दिखात कछू ब्रज पूरि, रह्यो चहुं ओर चहूंकन ॥ ७७२ ॥

चौचँदहाँई लगी चहूंओर लख्यो करैं नैननि ओर तुम्हारे । ऐसे सुभायन सों निरखो कि उन्हे लगो रूखे हमें रसवारे ॥ कीजिये कैसी दई निदई न दई है दई कर मौत हमारे । देखें बिनाहू रह्यो नहीं जात कह्यो नहीं जात न आइ-ये प्यारे ॥ ७७३ ॥

मंदिर मंदिर चोजनवारी सरोजमुखी लसैं रूप नवीनो । गावती ताननि कामि विधाननि पानन दै रिझवै परवीनो ॥ हासविलास हुलास हरैं चितवास निवास सुगंध नवीनो । जानो न प्रीतम प्यारे ने काहे तें आपनो हीरा री मों कर दीनो ॥ ७७४ ॥

आपुही पान खवावति आय सहेली न आवन पावति नेरे । भूषन अंबर ल्यावत आप रहैं पहिरावन कों मुख हेरे ॥ तापिय सों रिस कैसे

कहूँ यह जानि जौ जाय तौ होय लला मोति
लील को टीको ॥ ७६८ ॥

सिव ठौर कुठौर कछू न गनो जितहीं तितहीं
हँसि बोलत हौ। हम घात परें मिलिजैवो कहूँ
यह प्रेम दुरो कत खोलत हौ ॥ चरचोई करें
चहुंओरन तें न चवाँइन के चित तौलत हौ।
हरि नाहीं भली यह बात करो परछाहीं भए
संग डोलत हौ ॥ ७६९ ॥

मोलिये मोहन जेठ की धूप मैं आए उवाने
रे पग छाले। वेनी खरे मगद्वार विलोकत बैठे
न सोए चलेऊ न हाले ॥ कीजै कहा हरि हाय
वलाय्ल्यों जारिबे जोग हमारेई ताले। देखतहौ
घर कौन बचे घर को न गए घरहाइँनि घाले ॥७७०

ताकि त्रिपारत मो मन कों नवनेह पयोनिधि
कै लसिवे है। चाह भरे चख चंचल ये इनकी
नित दीनदसा नसिवे है। सेखर लोग चवैयन
की चरचा चित दै न कहूं फँसिवे हैं ॥ मीत
न जाहिर प्रीति करो ब्रज गाँव गँवारन में
बसिवे हैं ॥ ७७१ ॥

आय अगीत पछीत है जो ...

नेह की कूकन । जानत हैं की न जानत कोऊ
रैं नर नारि सरोस भभूकन । ठाकुर की बिनती
ितनी अरी तू कहियो यह बात अचूकन । देखि
उन्हें न दिखात कछू ब्रज पूरि रह्यो चहुं ओर
बहूकन ॥ ७७२ ॥

चौचँदहाँई लगी चहूंओर लख्यो करें नैननि
ओर तुम्हारे । ऐसे सुभायन सों निरखो कि
उन्हें लगो रूखे हमें रसवारे ॥ कीजिये कैसी
दई निदई न दई है दई कर मौत हमारे । देखें
बिनाहूं रह्यो नहीं जात कह्यो नहीं जात न आइ-
ये प्यारे ॥ ७७३ ॥

मंदिर मंदिर चोजनवारी सरोजमुखी लसैं
रूप नवीनो । गावतीताननि काम बिधाननि
पानन दै रिझवै परवीनो ॥ हासविलास हुलास
हरैं चितवास निवास सुगंध नवीनो । जानों न
प्रीतम प्यारे ने काहे तें आपनो हीरा री मोंकर
दीनो ॥ ७७४ ॥

आपुही पान खवावति आय सहेली न आवन
पावति नेरे । भूषन अंबर ल्यावत आप रहैं
पहिरावन को मुख हेरे ॥ तापिय सों रिस कैसे

करूं मतिराम कहै सिखए सखि तेरे । पूरि मनभावन के गुन मान कों ठौर नहीं मेरे ॥ ७७५ ॥

चुनि चीर सुगंधित कै कै नये अपने कर पहिरावतु हैं । नित मेरे लिये पिय सोनन के गहने हूं नवीन गढावतु हैं ॥ पिक केकीन कोकिल वैन दिवाकर नेकु नहीं जिय ल्यावतु हैं । जिनके चख चारु चकोर सखी मुख मेरो मयंक हि भावतु हैं ॥ ७७६ ॥

सीचत है रस सो रुचि देखि अलेखन भांति सुभाव सिहारे । जो वली आन कहू परसै तेहि दाव दवानलही विन जारे ॥ ओ दिन रैनन चैन कहू सरदार विचारन ही बुधि धारे । हाद इते पर हेल विसासिन ना इतनी तन बेलि विचारे ॥ ७७७ ॥

मन में नित मोहनी मंत्र जपै तपतें तन कं तरसोई करे । चित चाहन के तरु पै चढ कं फल बुद्धिन के बरसोई करे ॥ सरदार दुरे खुले के परसंग सबै धरसोई करे । रूप भावरी प्रानप्रिया परसोई करे

तरुनी तन ताक तकै न कहूं जक जानत जा तरुनी न टरै । नित नूतन नेह निवाहन कों अनचाहन तें चितरी न चरै ॥ सरदार सदा चुन चाहन तें चप आपन हीं चुमकी न भरै । गुनरास प्रकास बिलास कबूतर की करनी बरनी न परै ॥ ७७९ ॥

नाम सुनैं सुचि सारिका को संनमान बिचार रहे धर माथें । हौं अपने हिय हारि रही सरदार कहां कितने गुन गाथें ॥ माधव संगिनि कों नित पूज प्रमोद रखे भर भावन साथे । लाल सिखा न लखे कबहूं रहे लाल के पिंजर लाल के हाथें ॥ ७८० ॥

सोवत प्रात जगाई तिया पहिली रतिया पति के सुख ख्यालहि । बाँधि दई अंगिया की तनी चुनि नीबी दई चुनि आंचे न चालहि ॥ या नित आन अरे अब ए करें आरुन टार नई नवटा लहि । बाँधे बनें अंगिया की तनी नितहीं नित नीवी चुने बनें बालहि ॥ ७८१ ॥

घुरि घाघरो घेर घिरो उघरो पुनि नीवी चुनावत के मध गो । उरझो सुरझो त्रिवली की वली पुनि नाभि की सुंदरता धसगो ॥ कवि

ठाकुर छूटि चलो उनते कुच की गिरि कंद
फँदिगो। छतिया मे छप्पो मन छौंड दे री औं
या बंदवांधत मे बँधगो ॥ ७८२ ॥

सुधि तेरी लगी निसि वासरहू जिनकीने खं
हिय हाइल से। इत तूं मुसिक्यात लखेउ तवे
मनो वान हने करसाइल से ॥ सुनि के कहूं काहू
पै आइवो तेरो चले उतही वे उताइल से।
झुक झूम के भूमि पै घूमे घने घनस्याम घरी
घरी घाइल से ॥ ७८३ ॥

अंगुरीन लो जाइ भुलाइ तहीं फिरि आइ
लुभाइ रहो तरवा। चप चाइन चाइ हो एडिन
छ्वै धपधाय छको छवि छाइ छवा ॥ घनआँनद
यों रस झीनि भिजो कवहूं विसरा मन लो कन-
वा। अलवेली सुजान के पाइन पाइ परो न टरो
मन मेरो झवा ॥ ७८४ ॥

रति सांचे ढरी अछिवाइ भरी परवीन गुराई
पै पेखि पगै। छवि घूम घरै न मुरै मुरवान सों
लोभी खरै रस झूम उगै ॥ घनआनँद एडिन
आन मडे तरवान तरेते भगै न उगै। मन मेरो
ँरवा. नचे तुव पाइन लागन[illegible]

पलके कलपै कलपै पलकै सम होत संजोग
वियोग दुहूं। विपरीत भई हित रीत खरीतखरी
समुझी न परै किछहूं ॥ घनआनँद जान सजी-
वन सों कहिए तो समे लहिए न सहूं । तिन
घेरे अधेरे ही दीसै सबै विन सूझें ते पूने अबूझे
कहूं ॥ ७८६ ॥

तीछिन ईछन वानन पान सों पैनें दसान सौं
सानि चढावत । प्रानन प्यासे भरे अति पानिप
माइल घाइल चोंप चढावत ॥ यों घनआनँद
छावत भाइ न जान सजीवन ओर न आवत ।
लोग कहैं ए कवित्त वनावत मोहि तो मेरे कवित्त
वनावत ॥ ७८७ ॥

मीत सुजान मिले को महा सुख अंगन भाइ
समोइ रह्यो है । स्वाद जगे रस रंग पगे अति
जानत वेई न जाति कह्यो है । दो उर एक भए
घुरके घनआनँद सुख्य समीप लह्यो है ॥ रूप
अनूप तरंगिन चाह तउ चित चाह प्रवाह बह्यो
है ॥ ७८८ ॥

अंजन तोरही ताको करे नित पान लखे सुख
त्यों रग चायन । और सिंगार सदा घनआनँद

चाहे उमाहे सो आपन दायन ॥ तू अलबेल
संरूप की रासि सुजान विराजत सुद्ध सुभायन।
आपन नाच कै साइ कछू जो लटू भयो लागो
फिरैं तुव पायन ॥ ७८९ ॥

जिनही बरुनीन सों बांधी हियो तिनही
हाथ सिचावत है । विस वोये कटाच्छन सों
के जो सुजान सुधाहू पिवावत है ॥ अनवोले
जो अनोखे अज्यौं रस मे अवरोस दिवावत है
घनआनँद चूको न दाउ कहू फिरि मारत चा
दिवावत हैं ॥ ७९० ॥

लै परजंक धरे भरभंक निसंक हो स्यावते
प्रेम उपाइन । चोंक परे ते परें उर लाग हिये
सो हियो अनुराग सुभाइन ॥ लाजन हीं लर-
जो गहि री बरजो गहि री कहरी कह दाइन ।
जागत जानि कहानी कहें अरु सोवत जानि
पलोटत पाइन ॥ ७९१ ॥

छाक छकी छतिया धरकै दरकै अँगिया उचकै
कुच नीके । त्यों पदमाकर छूटत बारह टूटत हार
जे ही के ॥ संग निहारे न छूटहुँगी फिर
सुजीवन जीके

न हहा लचिके करि हा मचके मचकीके ॥७९२॥

प्यारो मनावत प्यारी न मानत बैठि रही करि प्रीत की टूटन । कारी घटा घहरान लगी सु उठी तब चौंकि चितै चहुंखूटन ॥ धाइ डराइ लगी पिय के हिय सो कवि देव सुनो सुख लूटन । मान तो छूटो मरू करि के मन ते नहीं छूटत मान की छूटन ॥ ७९३ ॥

मन पारद कूप लों रूप चहै उमहै सु महै नहीं जेतो गहै । गुन गाढ न जाइ परै अकुलाइ मनोज के ओज न सूल सहै ॥ घनआनँद घाँघरे बैठक धूम मे प्रान छुटे गत कासो कहै । उर आवत यों छवि छाजत ज्यो ब्रज छैल की गैल सदा हो रहै ॥ ७९४ ॥

गुन बाँधि लियो हिय हेरतही फिरि खेल कियो अतिही उरझै । गहि गो सक प्रीत के फंदन मे घनआनँद छंदन क्यों सरुझै ॥ सुधि लेतहू भूलि न ताकी सुजान सुजान परै न कितै गरझै । अब याही परेखो उदेग भरो दुख जाल परै दुरझै उरझै ॥ ७९५ ॥

चाह बढो चित चाक च्रढो सु फिरै तितही

त नेक न धीजे। नैन थके छवि पा जु छके
नआनँद लाज ते रीझत भीजे ॥ मोहू मे आव
है वुधि वा नरी सीख सुनेवइसा दुख दीजे।
ह दहे न रहै सुधि देह की भूलहू नेह को नाम
लीजे ॥ ७९६ ॥

साँच के सान धरे सुर वान पे छूटें विनाही कमान
ी जोटें। दीसे जहीं के तहीं सव लै अति घूमत
मति पावक ओटें ॥ घाउ को चाउ वढे घनआ-
ंद चाइन लै उर आइन ओटें। प्रान सुजान के
ान विधे पट लोटे परे ळग तान की चोटें ॥७९७॥

देखि सुजान छये घनआनँद दीठ भये सुनि
ीठ सकोचत। चाह के दाह भरे कित ते नित
ार अधीर ह्वै नीरद मोचत ॥ लोभी तऊ अकु-
ाइ के पासन रूप के पानिप लै सके लोचत।
न असोसन की गनि हेरत वीतत री निसिवा-
र स्रोचत ॥ ७९८ ॥

तेरे विनाही वनावत वानिक जीते सची रति
प नलाइन। को कर सों छवि कों वरने रचि
खत अंग सिंगार कलाइन ॥ कान हो दान के
प दिखावत जान कछू जव लागे अलाइन।

नाचत भाव के भेद बतावत ए घनआनँद भौर चलाइन ॥ ७९९ ॥

जान सजीवन प्रान लखे बिन आतुर आँखिन आवत आधे । लोग चवाइ भरे निदरे अति बान सो बैन अपान सों साधे ॥ को समुझै मन की गति आनँद ओरई वेद सु चोरई नाधे । पीर मरें नहि धीर धरें कहु कैसें रहें जल जाल के बाँधे ॥ ८०० ॥

कौन बडाई करै जिन की सु बिकास भयें छबि होति है दून की । जाहिर जोर प्रभा दरसै सरसै जिन ते छबि काम की तून की ॥ हे बडभागिनी एक महा हम देखी सुनी नहीं एती कहून की । तापन मे इक बात परी जु करी विधने जग रीत प्रसून की ॥ ८०१ ॥

पाले भले दिन के हित सो पिंजरान ते कोकिल कीर उडावत । जो मन रंजन खंजन और कपोत के खोत नहीं मन लावत ॥ जो बरजो तो न माने कहू मन आपन लाजत मोहि लजावत । कौन सुभाव परो पिय को नित मोरन छोड चकोर चुनावत ॥ ८०२ ॥

कबहूं फिरि पावन देहों इहां भजि जैहों तहां जहां सूधी सहो। पदमाकर देहरी द्वार किवार लगे ललचैहों न ऐसी चहो॥ बहियां की कहा छहियां न कहूं छुवै पावहुगे लटू लाज लहो। चित चाही कहूं न कहो बतियां उतहीं रहो हाहा हमें न गहो॥ ८०३॥

सतरैबो करो बतरैबो करो इतरैबो करो करो जोई चहो। पदमाकर आनँद दीबो करो रस लीबो करो सुख सों उमहो॥ कछू अंतर राखो न राखो चहो पर या बिनती एक मेरी गहो। अब ज्यों हिय मे नित बैठी रहो त्यों दया करि के ढिग बैठी रहो॥ ८०४॥

सोवत लेति करोट नवोढ की नीचे लटे पलिका तें परी हैं। देखि तहां हरि सुन्दर दौरि के जाइ कै नागिन सी पकरी हैं॥ लै दुपटा अपनो अपने कर पोंछि के सेजहि माल धरी हैं। प्यारे को प्यार निहारि यों गोरि भई चकचूर सर्गी सिगरी हैं॥ ८०५॥

ना कटि छीन प्रवीन ना बान न पीन कठोर नहीं कुच मेरे। चांकी बटाई बरी ओगिपान

घनी बरुनी कर नीति निबेरे ॥ नागन की गति रूप की संपति राजै नहीं रति कीरति नेरे। जानो नहीं सखि कारन एरी पै काहे तें पीतम है रहे चेरे ॥ ८०६ ॥

आपने हाथ सों देत महावर आपुही वार सिंगारत नीके। आपुनहीं पहिरावत आनि कै हार सँवारि कै मौलसिरी के ॥ हौं सखी लाजनि जाति गडी मतिराम सुभाइ कहा कहौं पीके। लोग मिले घर घैर करैं अबहीं ते ए चेरे भए दुलही के ॥ ८०७ ॥

मुसक्यान भरे अखरान मै बेनी या डारी ठगोरी है मोहन मै। छिनकौ बिछुरै न छमे छकि छैल छपाय रह्यो छवि छोहन मै ॥ पिय प्यारे के प्यार को चौंचंद यों सकुची सुनी सुन्दरि गोहन मै। मुख मोरि अली पै नई सरमाय गई अठिलाय सी भौंहनि मै ॥ ८०८ ॥

तेरियै कीरति कान सुनै [illegible] रूप
[illegible]दा दृग देखैं। तेरि[illegible] करि
[illegible]लिहूं और [illegible] हिय
[illegible]ने। [illegible] लेखैं।

जानि दिनेस किये बस तें को भए हरि आपुहि हाथ की रेखें ॥ ८०९ ॥

ताछिन तें रहे औरनि भूलि सु भूली कदंबन की परछाँही । त्यों पदमाकर संग सखान को भूल भूलाय कला अवगाही ॥ जाछिन तें तू वसीकर मंत्र सी मेली सु कान के कानन माहीं । द्वै गल बांही जु नाहीं करी वह नाहीं गोपाल कों भूलति नाहीं ॥ ८१० ॥

सीधी विलोकनि सीधियै चाल कहा लखि लाल भयो बस लोनो । लोग कहैं यह आए अपूरब पूरुब को पढि आगम कोनो ॥ काहे लजात नहीं तुम तो मोहि लाये रहौ हिय सूम ज्यों सोनो हौं पिय लाजनि जाति गडी सिगरो ब्रज मोहि लगावत टोनो ॥ ८११ ॥

चोवा मिलै मृग मेद घसैं घनसार सौं केसर गारत डोलैं । देव जू फूल फुलेलन की घर बाहिर बास लगावत डोलैं ॥ भूपन भेख बनाय नए पहिराय पुराने उतारत डोलैं । राधे के अंगन हीं सिगरे दिन संगहीं संग सिगारत डोलैं ॥ ८१२ ॥

सीस सुधारि धरै सिर फूल सुतो सरसै रं

जात लजात न जात कै गेह के मानुख ओखे
चंदमुखी तन सोनो सो सौंपि करे मनमोह
सेवक चोखे ॥ ८१६ ॥

पाँव झँवावतिही नदनंद पै ऐंठति ओठन
रीझ भरीसी । चारु महा कवि की कविता सी
लसै दुलही रस मैं उलहीसी ॥ सीवी करे तर-
वान के झाँवत देह दिपै भरी नेह ज्यौं सीसी ।
दंतन की दुति बाहिर ह्वैकरं जाहिर होति जवा-
हिर कीसी ॥ ८१७ ॥

जाल की चूनरी चीकनो गात चकोर थके मुख-
चन्द के धोखे। लामी लटैं लटकैं कटि खीन पयोधर
ह्वै मनमोहन षोखे॥ वेधे मुबारक के उर में सर एको
परे ना कटाच्छ के ओखे । बाकी न राखी कजाकी
कछू जब बांकी चितौन तें झांकी झरोखे ॥८१८॥

जाति हुती निज गोकुल कौं हरि आयो तहाँ
लखि कै मग सूना । तासों कह्यो पदमाकर हाँ
अरे साँवरे बावरे तैं हमें छूना ॥ आजु धौं कैसी
भई सजनी उत वा विधि बोल कढोई कहूं ना ।
आनि लगायो हिये सों हियो भरि आयो गरो
कहि आयो कछूना ॥ ८१९ ॥

जात कहूं तें कहूं कों चल्यो सुरटीपन लागति तान धरे की । आखर सो समुझे न परें मिलि ग्राम रहे जति जील परे की ॥ जागी हो के रस पागी हो मादक हेरि कहो रघुनाथ हरे की । गाइन आवति बूझति हैं यह आजु भई गति कैसी गरे की ॥ ८२० ॥

कोन सो मंत्र पढे हो हहा वह बाल तो हाल अचानक चाही । ता छिन तें कछु ऐसी दसा भई गोकुलनाथ न जाति सराही ॥ आए कहा करि सो कहिये घरी एक लों तो तुम्हे देखि कराही । बोल कढे न गरो गहिगो कहो रावरी दीठि मे मूठी कहाही ॥ ८२१ ॥

ताहि लै आई अली रति मंदिर जाकी लगे रतिहू परछाँहीं । आइ गयो मतिराम तहीं जेहि कोटिक कामकला अवगाही ॥ देखतहीं सगरी डगरी पकरी हँसिकै तिय की पिय वाँहीं । लाज नई सुर भंग भई सु कढी मुख मंद मरूं करि नाहीं ॥ ८२२ ॥

वैठे अकेले रहें रंग रावटी प्यारी पठाई गई तहां नाइन । देखत हीं रहे [illegible] भाँति

वाके सरूप सु सील निकाइन ॥ के विनती उलटो हीं भई सुगही उन वांह परी तव पाइन । एजू अजू अजू ऐसी न कीजिये हाहा हमैं खिझि हैं ठकुराइन ॥ ८२३ ॥

गेहके लोग गए कढि बाहेर सूने सकेत वे भांवती पाई । वेनी पिछौंहे ह्वै आनि गह्यो तिर छौंहें चिते रद आंगुरी नाई ॥ हाहा तजो को आनि परेगो जू छोडि दई करिके मनभाई चंचल अंचल सों मुख पोंछि अंगोछति अंग आंगँन आई ॥ ८२४ ॥

हेरि इतै मुसुकाय चितै करि चोप सों भ को सेज विछैवो । लाज वडी गुरुलोगन की चांपि के केलि के मंदिर जैवो ॥ वा सुख समै मतिराम हरें रसना घुँघुरू को वजैवो । म मे मनभावन को मिलिवो सखी सांच को अँचवो ॥ ८२५ ॥

सोग अकेले रहें दिन मे ससुरारि में ... नाहि सकात हैं । भोजन काज जगाए नवाज उठ रैनि केलि थके अलसात हैं ॥ सारी निसा के जाग टिग सासु के ज्यों ज्यों टला आंगिगन जम्हान

हैं। त्यों त्यों इतै लखि लाडिली के बडे लोचन लाजन हीं गडे जात हैं ॥ ८२६॥

खारकखार खरो कहि खीर खुवानियो खात न खूब खिसावै। आम अनार अमोल अंजीर अँगूर सरे सरदार वनावै ॥ आज कहा गति देवर की संजनी कहिके किन मोहि जतावै। वानी जिठानी की जान विजच्छन देवररानी न द्वारपै आवै ॥८२७॥

बैठी सलोनी सोहाग भरी सुकुमारि सखीन समाज मढी सी। देवजू सेज सों आये लला मुख पैं सुखमा ऊमडी घुमडी सी ॥ प्यारी की पीकें कपोलन पीके विलोकि सखीन हँसी उमडी सी। सोचन सोंहैं न लोचन होत सकोचन लाडिली जाति गडी सी ॥ ८२८ ॥

अलसात जम्हात अटा पर तें उतरे निसि मे करि केलि वडी। इहिं भांति हिं रावरो रूप लखे उर आनँद रासि हिए उमडी ॥ नृपसंभु जू केसरिया दुपटा सो तौ मागति हे अंगना मे अडी। इतै हांसी जेठानी लला सों करै उतै लाडिली लाजन जाति गडी ॥ ८२९ ॥

छाप छला नवला को गिरे तो उठाय लला

धरि राखत जीके । धोखेहूं पाय धरापै धरे अज-
वेस सरोखें सहेलिन ठीकें ॥ कानन हूँ न सुनी
अब लों सो सखी लखी नैनन ऐसी अलीकें ।
लागे धुवां अलबेली के आंखिन धोवें लला के
ललाई की लीकें ॥ ८३० ॥

कोउ कहै जपा जावक रंग की कोउ कहै
अरुनाई सहाव की । कोऊ कहै गुललाला गुलाल
की कोऊ कहै रँग रोरी के आब की ॥ प्यारी के
के पायन की उपमा द्विज कों सब जान परी
जिमि खाब की । पंकज पात की बात कहा जिन
कोमलता लई जीति गुलाब की ॥ ८३१ ॥

ए उन की उन मै अनुहान्यो न हान्यो न मा
हिये सरमात हैं । पंक के बीच परे सर मे वं
वेसरमे ए फुलावत गात हैं ॥ भेंट नहीं क
या छवि सों रवि सों करजोरे खरे हहा खात
राधे जु धोवत पाँव तिहारे हों कोल घों काहे का
ऐंठे से जात हैं ॥ ८३२ ॥

सीसजटा धरि नन्दन मे मुनि बृन्दन में बहु
काल विताए । वल्कल चीर लपेटि सरीर महा
सुर तीरथ नीर नहाए ॥ आठहूं जाम सही हिम

धाम पुरंदर धामहूं काम वढाए। यों कलपद्रुम कोटि उपाय किये तुव पाँय से पातन पाए ॥८३३॥

जिन सोहैं कहा चली पंकज की जो सकै समझै कहूं खाब में है। जब चन्द नखावली देखि चप्यौ तब जोति किती महताब में है ॥ कमलापति प्यारि के पायन की समता कों नहीं कछु ज्वाब में है। तहँ आब गुलाब की कौन कहे न रही लखि ताब सहाब में है ॥ ८३४ ॥

चम्पकली दलहू तें भली पद अंगुली बाल की रूप रसे हैं। सुभ्र सुबेस लसें नख यों जनु पीतम के दृग देव बसे हैं ॥ बाँके अनौट बनी बिछियान बिभूषित जोति जराव गसे हैं। केसव सौंम सरोजनि ऊपर कोपि मनोतन बान कसे हैं ॥ ८३५ ॥

राधे के पायन की अंगुरी मेहँदी सों रँगी सो मए नवरात हैं। कै नृपसंभु जू इंदबधू जुरि बैठी मिहीं जे सरोज के पात हैं॥ कै बट के टटके वर पान पैं आरे के फारे प्रवाल सुहात हैं। कैधौं चकोरन चौंच चप्यो चिनगारी के धोखे चुनीन चबात हैं ॥ ८३६ ॥

॥ कैसी सुढार। गढी है सुनार सु कोर दवाय दई
चहुंघाँ की॥ प्यारी के कोमल पाँयन की अँगुरी
न रही ढरि रंचक बाँकी ॥ कंजन की पँखुरी न
बढी जुही फूलि रही है मनो सुखमा की। सान
नयान सबै चुटकीन उडावति है चुटकी ललनाँ
की॥ ८३७॥

गोरी गुलारी सुढार सी साँचे की देखत देहिन
कोमल काकी। रंभ कुसुँभ किधौं है किधौं छवि
गिनत कंचन के कलिका की॥ काम गढ्यो बडही
किधौं रति के रति कीबे कों पापलिका की। तोष
लोकि विलोचन मैन वस्यो वलि पींडुरी या
लिका की ॥ ८३८॥

बर गोल सुडौल चने हैं अमोल ढरे मनो साँचे
भायन मे। अस को जग है जिन कों लखिकै
है होत मनोज के चायन मे॥ कमलापति काम
तिरहू तो न सकै लिखि केहूं उपायन मे। अस
रत प्यारी के गुल्फन कों लगै कुल्फन कौन
पायन मे॥ ८३९॥

जान किधौं है रती गनिनाथ को सोन के त्रोन
तो पचवान है। बानु है फावत आन के मान

हैं की कदली विपरीत उठानु है ॥ ठानु है । ऐसे नहीं करि केकर तोंप्र चित जोंहि कान्ह बिकानु है । कानु करैं यह सौतिन के पर प्रान से प्यारी सुजान की जानु है ॥ ८४० ॥

कै विधि कंचन गार सिंगार के दीन्हे बनाय अनूपम रंग के । कै कदली उलटे ह्वै बिराजत कै करि सुंड दिखात उमंग के ॥ ऐसी लसे उपमा तिन की द्विज भाखत है इमि पाय प्रसंग के । प्रानप्रिया के सु राजत ए दोउ जंघ किधौं हैं निखंग अनंग के ॥ ८४१ ॥

लाडिली के बरनै को नितंबन हारि रही रसना कवि जेत के । कै नृपसंभु जू मेरु की भूमि में रेत के कूरा भये नदी सेत के ॥ कैधों तमूरन के तबला रँगि औंधे धरे करि रंभा के लेत के । कंचन कीच के पाथे मनोहर कै भरनी ह्वै मनोज के खेत के ॥ ८४२ ॥

मे । सुघराई सुकाम विरंचि की है, तिय तेरे नितंबनि की छवि मे ॥८४३॥

रंचक दीठि के भार लहे वहु वार विलोकनि ईठि अनैसी । टूटि है लागि है लोक अलोकत वे हठ छूटि है जूटि है केसी ॥ पौन वहे व्रज देह मे लागति देखि परे नहीं आँखिन जैसी। तैसी है सूच्छम छामोदरी कटि केहरि की हरि लंक ना ऐसी ॥ ८४४ ॥

सिंह भ्रमे वन भाँवरी देत औ साँवरी भृङ्गी भई करि खेदै । संभु भने चसमा चख दे के त्रिरंची रची विसराइ के वेदै ॥ राधिका लंक की संक करौ जनि संकर हो नहीं जानत भेदै जो मन है परिमान समान निगोडी तऊ तिहि मे करै छेदै ॥ ८४५ ॥

है तनहीं मे लखाति नहीं वर बूझिये जाय तौ हैं सब साखी । मानि लई सबही अनुमान कै पेखी न काहू पसारि कै आँखी ॥ जानत साँची कै यातें जहाँन जो आगे तें वेद पुराननि भाखी। ब्रह्म लौं सूच्छम है कटि राधे कि देखी न काहू सुनी सुन राखी ॥ ८४६ ॥

जो कहिये बिधिनाहीं रची सिख तें धरक्यौं पग को सँग लीन्हो। जो कहिये कि विरंचि रची है तो देखी न जाति कितो दृग दीन्हो ॥ कीन्हें विचार न आवै मनै नृपसंभु भनै तव मो मति चीन्हो । जो चित चोर को चित्त चुरावत राधे के लंक लो कंजन कीन्हो ॥ ८४७ ॥

प्यारी के गात बनाइबे कों बिधि माँगि लई दुति देवन अंग की । आनन मैं ससि राखि दियो हरि वास कियो रचि भौंहनि भंग की ॥ आपने आसन नैन रचे नृपसंभु जू बैन सुधा सब संग की । भाग सुरेस उरोज महेस बलाहक केसनि लंक अनंग की ॥ ८४८ ॥

रूप धरे धुनि लौ घनआनँद सूझत बूझ की दीठ सुतानौ। लोयन लेत लगाय कै संग अनंग अचंभे की मूरति मानौ ॥ है किधौं नाहीं लगी अंलगी सी लखी न परै कहि क्यों हो प्रमानो । तो कटिभेदहिं किंकिनी जानत तेरी सौं एरी सुजान हौं जानौ ॥ ८४९ ॥

दास प्रदीप सिखा उलटी की पतंग भई अवलोकति दीठि है । मंगल मूरति कंचन पत्र की

मैन रची मैन आवत नीठि है ॥ काटि किधें
कदली दल गोभ कों दीन्हो जमाय निहारि अगीठि
है। काँधतें चाकरी पातरी लंकलौं सोभित माने
सलोनी कि पीठी है ॥ ८५० ॥

सोभा सुमेरु की संधितटी किधों मैन मवास
गढीस की घाटी । कै रसराज प्रवाह को मारग
बेनी प्रवाह सी यों दग ठाटी ॥ कामकला धरि
ओप दई किधों पीतम प्यारे मढावन पाटी ।
जानकी पीठि लखें घनआँनद आनन आन के
होति उचाटी ॥ ८५१ ॥

मानो मनोज की पाटी लिखी हित मंत्रन की
परिपाटी वसीठि है । जाति उनै उनै कौति के
भारनि जाति दुनै दुनै जो परै दीठि है ॥ गोकुल
बाल के अंग विलोकिहो ओरन की तव प्रीति
उचीठि है । कंचन के कदली दल ऊपर सोवति
साँपिनि वेनी न पीठि है ॥ ८५२ ॥

प्यारी कि नाभि हीं सो वरनै जो लडायो है
...री के लाडिले लाड कै । रूप को कूप सरोवर
...ी उपमा कवि लोग पुकारत हाड कै ॥ रोमलता
...ा कहै दहलो नृपसंभु पढ़ो घरमी नहीं चाड कै।

धूरि को कीट मनो भो अनंग रह्यौ गडि कंचन रेत मैं गाड कै ॥ ८५३ ॥

रूप को कूप बखानत हैं कवि कोऊ तलाव सुधाही के संग को । कोऊ तुफंग मो हारि कहै दहला कलपद्रुम भाखत अंग को ॥ वारही वार विचार कियो नृपसंभु न या मत मो मति संग को । सीसी उरोजन तें मदधार रूमावली नाभीन प्याला अनंग को ॥ ८५४ ॥

क्यों मन मूढ छबीली के अंगनि जाय पर्‍यो रे ससा जिमि भीर मैं । ठानी अठान अयान जो आपु तो ताही कों आनि सकै पुनि नीर मैं ॥ जोवन पूर विलास तरंग उठै मनमोद उमंग सरीर मैं । सैल उरोज ह्वै कूदि पर्‍यो मन नाभी प्रभानद भौंर गँभीर मैं ॥ ८५५ ॥

प्यारी के अंग बनावतही नृपसंभु जू देव भये अनमेखे । कंज के कंटक साल जम्यो भयो चंद मलीन अजौं लगि देखे ॥ लाजमई सुरवाम भई पछितान्यौ स्वंभू महामन सेखे । दूसरी और बताइबे कों त्रिबली खैंची तीन तिलोक की रेखें ॥ ८५६ ॥

एकै कहैं सुखमा लहरैं मन के चढिबे की सिढी
एक पेखैं । कान्ह को टोनो कह्यो कछु काम कवी-
स्वर एक यहे अवरेखैं ॥ राधिका के त्रिवली को
वनाव विचारि विचारि यहै हम लेखैं । ऐसी न
औरन औरन और है तीन खैंचाय दई विधि
रेखैं ॥ ८५७ ॥

उसरैं पट देखि परैं त्रिवली गुनै सेवक स्याम
हुलास धरैं । तिय की सम दूजो नहीं सुखसोई
त्रिरेख लिख्यो विधि वास धरैं ॥ तिरैं वीचिवे
रूप नदी की सु जोर सबै सबई को विलास धरैं।
हरनैन सौं भीत मनोज मनो सर तीनि सुगेह
के पास धरैं ॥ ८५८ ॥

नैन विसासिन के सँग गो सुखमा लखि
तिय के अँग अँग मे । ताही समै पट नाभि तरे
को गयो उडि सेवक पौन प्रसंग मे ॥ हौस रही
मन की मन मै तित जाइ पर्यो मद के उतमंग
मै । बूडि गयो मन मेरो भटू त्रिवली वलि रूप
नदी की तरंग मे ॥ ८५९ ॥

जोवन बाहर आयो नहीं तन भीतरही वडी
भा अपार सी । ज्यों नृपसंभु जू क के

धरी कछु चीज लखी परै वार सी ॥ आमिल मानो उरोज कढ्यो चहै सायत काम धरे सुभसार सी। ऐसी रूमावली देखी परै ज्यों धरी परै अंजन रेत की धार सी ॥ ८६० ॥

के निधि छीर के बीच मे जाय कलिंदी को नीर नयो झरको। नृपसंभु जू कैधौं मराल की माल के बीच भुजंग लग्यो सरको ॥ बडे मोती को हार लसै कुच दूपें रुमावली तें तरकों लरको। किधौं गंग के संग सुमेरु सिला वहि पातरो लाग्यो जटा हर को ॥ ८६१ ॥

कनकाचल कंदर अंदर तें निरवात सिंगार लता लटकी। तिय रुमावली किधौं संकर ह्वै लखि बाल भुजंगिनी है ठठकी ॥ चकवा तकि कैं कवि लाल मुकुंद जू मीर सिकार दई फटकी। किधौं मैन मलंग चढ्यो थलि तुंग जँजीर अरीन परे झटकी ॥ ८६२ ॥

पारसी पाँति की पीपर पत्र लिख्यौं किधौं मोहिनी मंत्र सुहावली। तोख किधौं अधरारस कौं चली नाभी थली तें पिपीलिका आवली ॥ कौउक काम किसान वई सो जमी किधौं बेलि

सिंगार की साँवली । हावली बावली सौतें भई लखि री लटवावली तेरी रुमावली ॥ ८६३ ॥

जो रतिनायक कोह भरे हठि नैन हुतासन जोति जरायो । सो तुव नाभी सुधासर में निज अंग अँगारन आय बुझायो ॥ ता मधि तें मृग-लोचनि मेचक धूम समूह उठ्यो मन भायो । सोई रुमावली को छलपाय दुवो कुच कुंभन के विच आयो ॥ ८६४ ॥

रूप के रासि की रूप रूमावली जंत्र के मं के तंत्र के तारसी । प्रेमज प्रान तें प्यारी लग अँधियारी लगी अँखियान कों आरसी ॥ माल यनी नवली अवली पिक वेनी त्रिवेनीं के वेनी के वारसी । कंचन के गिरि कंचन भूमि पैं धूमरी धूमरी धूम की वार सी ॥ ८६५ ॥

जोवन फूल्यो बसन्त लसै तेहिं अंग लता लपटी अलि सेनी । नाभी विलोकत जात सुधा कों थकी मुख देखत नागिनी वेनी ॥ राजत रोमन की तन राजिव है रस बीज नदी सुख देनी । आगे भई प्रतिविम्बित पाछे विलम्बित जो मृग-नैनी कि वेनी ॥ ८६६ ॥

सोने के चूरन मैं चमकै किरचैं सी उठै छबि पुंज झवा के। हाथन लेत बिरी लटकै मखतूल के फूलन जोर जवा के॥ गंग बडे बडे मोतिन के सँग सोहत थोरे थोरे कुच वाके। अंडनि के मनो मंडल मध्य तें द्वै निकसे चकुला चकवाके॥ ८६७॥

उर मे उलहे मुलहे द्वै उरोज सरोज करैं गुनदा सत्र के। नृपसंभु जू कुंभी के कुंभ कहा सम कीजे बँधे रहें पालव के॥ फल श्रीफल के कहें आवति लाज कहा गिरि सृंग हैं वासव के। सुमनो छबि अंग अनङ्ग धरे उलटाय पियाले द्वै आसव के॥ ८६८॥

कंचुकी माह कसे उकसे परैं कामिनी ऊँचे उरोज तिहारे। दत्त कहै जनु बिश्वबिजै करि मैन धरे उलटे कै नगारे ॥ जोवन जोर कढे हिय फोर कै औरही तें एक ठोर निहारे। गेंद कै गुंमज कै गिरि कै गज कुंभ के गर्व गिरायनहारे॥ ८६९॥

श्रीफल कंजकली से बिराजत कै बिबि मोनी बसै ढिग गंग के। कै गिरि हेम के संपुट सोने

के राजत संभु मनों रस रंग के ॥ कै जुग कं
कै सोक बिमोचन कैधों सिलीमुख मैन निर
के । कैधों रसाल के ताल फले कुच दोऊ महा
जगीर अनंग के ॥ ८७० ॥

कंज के संपुट हैं पै खरे हिय मैं गडिजात ज्यं
कुंतल कोर हैं । मेरु हैं पै हरि हाथ ना आव
चक्रवती पै बडेई कठोर हैं ॥ भाँवती तेरे उरो
जन मैं गुन दास लखे सब और ही और हैं
संभु हैं पै उपजावैं मनोज सुब्रत्त हैं पै पर चित
के चोर हैं ॥ ८७१ ॥

वे धरें अंग भुजंग के भूखन येहू भुजंग रहैं
हिय धारे । वे धरें चंद लिला रि के भाल मैं येऊ
नखच्छत चंद सँवारे ॥ संभु कीओ कुच की समता
कवि कोविद भेद इनोई बिचारे । संभु सकोप है
जार्यो मनोज उरोज मनोज जगावनहारे ॥८७२॥

जोवन छत्रपती के मनो गर कंचन छत्र गौं
आनि छए हैं । काम के ग्रास मनो सिव के सिर
सुंदर बुंद दए हैं ॥ श्रीफल मैं मनो कोऊ
म फालन के दल तोरि गए हैं । त्यारी अली
अमन की लखि नूर मु लालन चूर भए हैं ॥८७३॥

लाडिली के कुच देखतही सिर नाय सरोज लजाय बिसूरत। दाडिम को हियरो फटिजात जबै कहूं कंचुकी ओर कों घूरत ॥ संभु सतावत हैं जग कों हैं कठोर महा सब को मद तूरत। कूह कैके कर मारैं मही लखि कुंभन वारन छारन पूरत ॥८७४॥

रूप अनूप बनी सखी आज सुताव्रपभान की पान सी भूपर। पूरनभाग महामनि कंठ सो बारी कहा इन मोहनी जू पर ॥ रीझि रंग्यो अंचरा कुसुभीं इमि डोलत वातलगें कुच ऊपर। लाल धुजामकरध्वज की फहराति मनो गजराज के ऊपर ॥ ८७५ ॥

मधु राका कि राति सखी जुरि राधिके उज्जल-भूखित नूपुर लौं। अवली सवरी चक फेरी फिरैं न परै डिग पाइतसूपरलौं ॥ अंगिया झुनकारी खरी सितजारी की सेदकनी कुच दूपर लौं। मनो सिंधु मथे सुधा फेन वढ्यौ सो चढ्यौ गिरिस्रंगनि ऊपर लौं ॥ ८७६ ॥

जीतिवे कों रति केलि हरौल से आए मनोज महीपति के है। देखत वाढे कठोर महा जिन्हे कातरताई कहूं न गई छ्वै ॥ वीच हरामनि की

किरनै न हथ्यारन की सनि जोति रही चुवै । जा
कि आंगी कसी यों उरोजनि मानो सिपाह
सिलाह कियें ह्वै ॥ ८७७ ॥

लोचन नीरज देखि नए छवि दन्तन दामिनि
को दफनी । वेनी वनी सो मनो मनिकाज प्यों
ससि पैं फनफाट फनी ॥ पीनपयोधर उपर ह्वै दर-
की अंगिया उपमा उफनी । राज सो लूटिकै मन
नरेस महेस कों मानो दई कफनी ॥ ८७८ ॥

असराफ असील खुमानी खरे जिनकों परदे
की सदां सरमैं । उबटे चुपरे रंग केसरि के
जिनकी समता न चमीकर मैं ॥ उर पैं अति खासी
खुली अंगिया कवि साहबराम लगे भरमैं । मिर-
जादे मनो खुवसूरत से सिर टोपी दै वैठि रहे
घरमैं ॥ ८७९ ॥

रजनी मधि प्यारी ने गौन कियो निरखी
अँखियाँ पिय रंग भरी । कवि आलम रंभन कों
ललक्यो रति लालच ह्वै हिय लाय हरी ॥ खरी
खीन हरे रंग की अंगिया दरकी प्रगटी कुच कोर
सिरी । अरुझे जुग जार सिवारन मैं चकवान
की चोंचें मनौं निकरी ॥ ८८० ॥

बाढत हैं नितहींनित नूतन अंगन ओप भरें तरुनाई। उन्नत पीन उरोज भये मुख कंज विकास महाछवि छाई॥ लेत थकी सी रुकी तिय स्वास यही रसिकेस सु भेद लखाई। बोझन जोवन सो तिनके हिये आवत रूंधी उसास सदाई॥८८१॥

आननचन्द विलोकि इतें उत पंकजनैनि रहैं सकुचाई। बाढत नैन नितंब उरोज प्रकास विकास भरी तरुनाई॥ कौतुक है रसिकेस अनूप तिया तन जोवन की अधिकाई। बोझन सों तिनके हिय में अति आवत रूंधी उसास सदाई॥ ८८२॥

पहले पियराई ललाई भई वहुरो मन लाल की जोति जंगे। फिर मंजुल बेलि सुपारिय से पकी नारंगी से नव रंग रंगे॥ जिय रंझत देख जंभीरिय से निरखे रसरास किसोर पगे। अब कंज की कोरन की छवि छार के श्रीफल से सरसान लगे॥ ८८३॥

सजनी मिलि द्वै अवलोकि कहैं अतिही हरि राधिका के बसरी। कहि कैसे धौं कुंज विराजत हैं कवि आलम और कहा रसरी॥ उर झीनी सी आंगी फुलेल भरी कसकी सब ठौर कसे कसरी।

किरनै न हथ्यारन की सनि जोति रही चुवै । ज
कि आंगी कसी यों उरोजनि मानो सिपा
सिलाह किये ह्वै ॥ ८७७ ॥

लोचन नीरज देखि नए छवि दन्तन दामिनि
को दफनी । वेनी वनी सो मनो मनिकाज पर्यो
ससि पैं फनफाट फनी ॥ पीनपयोधर उपर ह्वै दर-
की अंगिया उपमा उफनी । राज सो लूटिकै मैन
नरेस महेस कों मानो दई कफनी ॥ ८७८ ॥

असराफ असील खुमानी खरे जिनकों पर
की सदां सरमें । उवटे चुपरे रंग केसरि वे
जिनकी समता न चमीकर मे ॥ उर पें अति खासी
खुली अंगिया कवि साहवराम लगे भरमे । मिर-
जादे मनो खुवसूरत से सिर टोपी दै वैठि रहे
घरमे ॥ ८७९ ॥

रजनी मधि प्यारी ने गौन कियो निरखे
ऊँखियाँ पिय रंग भरी । कवि आलम रंभन कों
टलक्यो रति लालच ह्वै हिय लाय हरी ॥ खरी
खीन हरे रंग की अंगिया दरकी प्रगटी कुच कोर
सिरी । अरुझे जुग जार सिवारन में चकवान
की चोंचें मनों निकरी ॥ ८८० ॥

बाढत है नितहींनित नूतन अंगन ओप भरै
रुनाई । उन्नत पीन उरोज भये मुख कंज विकास
हाछवि छाई ॥ लेत थकी सी रुकी तिय स्वास
ही रसिकेस सु भेद लखाई । बोझन जोबन सो
निके हिये आवत रूंधी उसास सदाई ॥८८१॥

आननचन्द विलोकि इतै उत पंकजनैनि रहैं
कुचाई । बाढत नैन नितंब उरोज प्रकास विकास
री तरुनाई ॥ कौतुक है रसिकेस अनूप तियां
न जोबन की अधिकाई । बोझन सों तिनके हिय
अति आवत रूंधी उसास सदाई ॥ ८८२ ॥

पहले पियराई ललाई भंई बहुरो मन लाल
ी जोति जगे । फिर मंजुल येलि सुपारिय से
की नारंगी से नव रंग रंगे ॥ जिय रंझत देख
भीरिय से निरखे रसरास किसोर पगे । अब
ज की कोरन की छवि छार के श्रीफल से सर-
ान लगे ॥ ८८३ ॥

सजनी मिलि द्वै अवलोकि
राधिका के बसरी ।
हैं कवि आलम
आंगी फुलेल

छवि प्रात सुमेर के देस मनो जितही तित अं
पर्‍यौ पसरी ॥ ८८४ ॥

सोई हुती पलँगा पर बाल खुले अंचरा नां
जानत कोऊ। ऊँचे उरोजन कंचुकी ऊपर लाल
के चरचे दृग दोऊ ॥ सो छवि पीतम देखि
छके कवि तोख कहै उपमा यह होऊ। मानो
मढे सुलतानी वनात में साह मनोज के गुं
दोऊ ॥ ८८५ ॥

प्रात समै वह गोपलली चली आवति
जमुना जल न्हायें। नीर सों चीर लग्यो सब
देह मे दूनी दिपै छवि ओप चढायें ॥ दरियाई
कि कंचुकी मै कुच की छवि यों छलकै कवि देत
वतायें। वाज के वास मनो चकवा जलज
के पात मे गात छिपायें ॥ ८८६ ॥

जग जीवन को फल जानि पर्‍यौ धनि नैन
कों ठहरैयत है। पदुमाकर ह्यौ हुलसै पुलकै तन
सिंधु सुधा के अन्हैयत है ॥ मन पैरत सो रसके
नद मे अति आनँद मे मिळि जैयत है। अब ऊँचे
उरोज लखें तियके सुरराज के राज सो पैयत
है ॥ ८८७ ॥

कोऊ कहै कुच कंचन कुंभ सुधारस सों भरि राखे है ओऊ। श्रीफल संभु सुमेर समान मनोज के गेंद कहै कवि कोऊ ॥ मो मन में उपमा असि आवति भाखत हो पुनि होउ ना होऊ । जीति सबै जग औंधि धरे है मनोज महीप के दुंदुभी दोऊ ॥ ८८८ ॥

ठाढे रहैं दृग आसन कै कुटी कंचुकी के पट खोलत ना। माल सुगंगप्रवाह बहै तिहिं मे उठि नेकु कलोलत ना ॥ कारे भये करि कृष्ण को ध्यान डुलाये तें काहूके डोलत ना । ए तपसी है गरुर भरे दुनियां तें दयानिधि बोलत ना ॥८८९॥

कानन लौं अंखियाँ हैं तिहारी हथेली हमारी कहां लगि फैलिहैं । मूँदेहुतें तुम देखती हो यह कोर तिहारी कहां लौं सकेलि हैं ॥ कान्हर हूं कहं ख्याल यहै तिन कों हम हाथन ही पर झेलि हैं। राधे जू मानो भलो की बुरो अंखमूंदनो संग तिहारे न खेलि हैं ॥ ८९० ॥

आई हों देखि सराहे न जातहूं या विधि घूंघुट मे फरके है। मै तो
पीछे ह्वै कान

तें रुचितें रघुनाथ ये चारु करे करता करके हैं। अंजनवारे सही दृग प्यारी के खंजन प्यारे विना परके हैं ॥ ८९१ ॥

कंज सकोचे गड़े रहें कीचन मीनन बोरि दयो दह नीरन। दास कहै मृग हूं कों उदास कै वास दियो है अरन्य गँभीरन ॥ आपुस में उपमा उपमेय ह्वै नैन ये नींदत हैं कवि धीरन। खंजन हूं कों उडाय दये हलके कर दीन्हे अनंग के तीरन ॥ ८९२ ॥

अंग पराये सबही अब तो न बनें उन सों मुख मोड़े। केसहु मान में ठानों हिये दहैं सामुहें होत न रञ्चहु ओड़े॥ चेत अचेत रहै न कछू रसि केस कोऊ निज बानि न छोड़े। हौं कसकैं रिसकै करों नैन दुहूं निसखे हंसि देत निगोड़े ॥८९३॥

पीर हिये की हिये में पिराय लखाय न रञ्चहु जानैं न कोऊ। हाय विहाय सुहाय न और उपाय करोर तें जाय न सोऊ ॥ हौं तो कहौं रसिकेस अली यह काहुहिं भूलि व्यथा जानि होऊ। लोचन बानानि को विष ऐसी लगै इक घायल होत हैं दोऊ ॥ ८९४ ॥

ज्यों वित होत घनी ढिग त्यों अतिहीं जिय लालच लागत है । रसिकेस उमंग बढ़ें रति ज्यों तहं दूनी अनंग सु जागत है ॥ नख ते सिख रूप भरे हैं खरे वहुत्यों मुसकानि की मांगत हैं । लख लोचन लालची ये अजहूं ललचोहीं सुवानि न त्यागत हैं ॥ ८९५ ॥

दुहूं नैन न मानहिं नेकहु सीख किती समु झाय कहों इन सों । टुक हेरत धाय के आर मिलैं पुनि क्योंहुं न धीर धरें छिन सों ॥ अपनं दिसि ते हम प्रान औ अंग निछावरि कीने घने दिन सों । तन औ मन हारेहु रूसे रहें रसिकेस वसाय कहा तिन सों ॥ ८९६ ॥

जवहीं जब वे सुधि कीजत हैं तवहीं सवही सुधि जाति सही । गति और भई मति और भई सवही अंग औरही वानि गही ॥ यह रीत अनीत नई है छई निरखेही वने सो परे न कही । रसिकेस लगी रहें आंखिन्ह आंखि सु आंखि सु अगति रंच नहीं ॥ ८९७ ॥

रीत नई सब

री

देखे विना अकुलाति हैं न्यारी ॥ काह कहौं रसि
केस विधातही धौं किहि हेत कठोरता धारी।
रंचकहूं सिरज्योई नहीं सुख ये अंखियां दुखियानि
विचारी ॥ ८९८ ॥

हौं अति हारी सिखाय सखी सिख रंचहु मान
न मान न मान री । ये रिझवार वडी अंखियां
रसिकेस सुजान न जान न जान री ॥ और कछु
चरचा दुखिहाइन है नहिं आनन आन न आन
री । लागी रहैं नित ढूंका दिये उतहीं किये कानन
कानन कान री ॥ ८९९ ॥

मो वस को न रह्यो सजनी मनमोहन के वस
है मन मेरो । प्रानहू छूटे न छूटहि प्रीत कहै
रसिकेस कहा वहुतेरो ॥ नैन लगे जिहि प्रीत
सों तिहि पै तन प्रान निछावरि फेरो । सो
सयान सिखावै वृथा सखि काम न आवत एक
तेरो ॥ ९०० ॥

मैन महामुनि नैननि कों दृढ कै यह जोग कै
जुक्ति सिखाई । द्वैत विसिष्ट विहाय दुहू रसिकेस
अनन्य सु एक लखाई ॥ नाक निवास कछू न
मलो संग मुक्तिनि के अति है कठिनाई । पीय

अद्वैतता चाहिये हेत मनौं द्रग कानन सेवत जाई ॥ ९०१ ॥

विधिहू मिलै वारक पूछियो तौ अतिही तन सो सिर राखि बिसेखी । लोक तिहूं विच हेरि चहूं नर नारि अनूप अपार अलेखी ॥ या रस रीत नई छवि है कबहूं कितहूं न सुखी नहिं पेखी । सांची कहो रसिकेस अजौं तुम आंखिन्ह आंखि कहूं अस देखी ॥ ९०२ ॥

जानि परै न निरंजन से मनरंजन दोउ रचे कहूं को ने । दीने लुकंजनहू न दुरै दरसैं रसिकेस भले सरसोने ॥ कंजन के मद भंजन देन किये रसराज सुमंजन लोने । सोहत अंजन रंजनहूं बिन खंजन गंजन नैन सलोने ॥ ९०३ ॥

को गुरु ऐसो प्रवीन मिलो जिन तोहि दई सिगरी निपुनाई। वरी विना धनु तीर अधीर करै इहि वैस इती बरिआई ॥ बेधति है चल चित्त न चूकति धंक बिलोकनि वान चलाई । सांची कहे रसिकेस तिया यह तू कमनैती कहा पढिआई ॥ ९०४॥

कंजन खंजन गंजन हैं अलि ... मन-

भंजनवारे । ए ...

जात बिसारे बिसारे ।" अंचल ओट अखारे ।
खेलत तारे निहारे हैं चंचल तारे । सोम सुधास
के मधि डोलत मानहुं मीन भए मतवारे ॥१०५॥
लसैं धीरैं चकासी चलैं श्रुति मैं भ्रुकुटी जुत
रूप रही छवि छ्वै । अलकावलि डोरी कसी नृप
संभु जू सूत अनंग दई छरी छ्वै ॥ तम साँवरे
रंगहि जानत हैं हठि पीछू परे हैं चलें जित ई ।
कर छालत आवत नैन किधौं ए सुधाकर के रथ
के मृग द्वै ॥ १०६ ॥

चंचल चोखे से चीकने से चटकारे से चौगुने
रूपभिराम के । सान सगे से बिखान लगे से
सयाने पगे से रँगे से ललाम के ॥ माजे ममारख
द्वै बिष अंजन सीधे से बीधे ह्वदै घनस्याम के ।
बान चितैं दृग तेरे पियारी रहे सर काम के एकौ
न काम के ॥ १०७ ॥

प्रानपियारी सिंगार सँवारि लिये कर आरसी रू
निहारे । चंद से आनन की द्युति देखति पूर्ि
रह्यो उर आनँद भारे ॥ अंजन लै नख सों रमनी
दृग अंजित यों उपमा न बिचारे । चीर के चोंच
चकोरन की मनो चोप नें चंद चुगावत चारे ॥१०८

रूप सने बहु रूप दिखावत देखे बने दृग सील सचो है । जोति धरे मुकता से ढरेखे सुरंग सरोज से रंग रचो है ॥ खंजन मीन मधुव्रत से सो कुरंगनु रंग से मान मचो है । स्याम सुधानिधि पानन चाहत होत है चार चकोरन निचो है ॥ ९१६ ॥

कान्ह को बांकी चितौन चुभी चित काल्हरी झांकीं तूं ग्वारि गवाछिन । देखी मैं नोखी सो चोखी सी कोरन बोखी परे उबरे चित जाछिन ॥ मोरे है जारि निहारे मबारख है सहजें कजरारी मृगाछिन । काजर दैनरी मेरी सुहागल आँगुरी तेरी कटैगी कटाछिन ॥ ९१७ ॥

कोरन लौं दृग काजर देत है कारी घटा उमडी घन घोरन । घोरन आलीचढी मनो सुंदरि बाग नहीं कहूं देत है मोरन ॥ मोरन की धुनि बाढति है अरु यों बरजों बरजों बरजोरन । जोरन देव सखी पलकें अंगुरी कटि जैहै कटाच्छ की कोरन ॥ ९१८ ॥

बेनी फुलेल चुचात खरी पट भीजत सीस तें रूप अन्हैयत । आनन बीर गरे छर पोत सो या

गुनमाल गरेई रहे । खून करे सव आलम को फिरि लाज के आंदू परेई रहे ॥ ९१२ ॥

भौंर सरोज तें रोज जुरे न चकोरन हूं मदमोद परी हे । प्यो मनरंजन अंजन हूं विन खंजन कों तको खीन करी हे ॥ काहू कहा के हिये केहि मांतन येति अनूपम ओप भरी हे। जानत हों विधि लै सब देस की आंखन हीं छवि आनि धरी हे ॥ ९१३ ॥

चख चंचल यों चमके तिय के दृग अंचल मैं न रहे हटके । पुनि सैननि चित्त चुरावत स्याम को वाम को ये टुटिकावट के॥ अति लोल कपोल न डोलत है ढपना पट घूंघट मैं सटके। चट यों पट भेद दिखावत हे जैसे भाव चले गुटका नटके ॥ ९१४ ॥

रैन जगी रति प्रेम पगी उरही सों लगी विंधि की अवरेखी । लाज लजीली कटाच्छ कटीली एसाल रसीली विसाल विसेखी ॥ खंजन मीन मृगीन लजावन पीत सरोज समान कलेखी। कान्हर की सों री तेरी सों राधिके तेरी सी आंखिन आंखन देखी ॥ ९१५ ॥

रूप सने बहु रूप दिखावत देखे बने दृग सील सचो है । जोति धरे मुकता से ढरेखे सुरंग सरोज से रंग रचो है ॥ खंजन मीन मधुव्रत से सो कुरंगनु रंग से मान मचो है। स्याम सुधानिधि पानन चाहत होत है चार चकोरन निचो है ॥ ९१६ ॥

कान्ह को बांकी चितौन चुभी चित काल्हरी झांकी तूं ग्वारि गवाछिन । देखी मैं नोखी सो चोखी सी कोरन वोखी परे उवरै चित जाछिन ॥ मोरे हैं जारि निहारे मवारख है सहजैं कजरारी म्रगाछिन । काजर देनरी मेरी सुहागल आँगुरी तेरी कटैगी कटाछिन ॥ ९१७ ॥

कोरन लौं दृग काजर देत है कारी घटा उमडी घन घोरन।घोरन आलीचढी मनो सुंदरि वाग नही कहूं देत हे मोरन ॥ मोरन की धुनि वाढति है अरु यों वरजों वरजों वरजोरन जोरन देव सखी पलकें अंगुरी कटि जैहै ५- की कोरन ॥ ९१८ ॥

वेनी फुलेल

गुनमाल गरेई रहैं । खून करै सव आलम को फिरि लाज के आंदू परेई रहै ॥ ९१२ ॥

भौंर सरोज तें रोज जुरे न चकोरन हूं मद-मोद परी है । प्यो मनरंजन अंजन हूं विन खंजन कों तको खीन करी है ॥ काहू कहा के हिये केहि मांतन येति अनूपम ओप भरी है। जानत हौं विधि लै सव देस की आंखन हीं छवि आनि धरी है ॥ ९१३ ॥

चख चंचल यों चमकै तिय के दृग अंचल में न रहै हटके । पुनि सैननि चित्त चुरावत स्याम को वाम को ये टुटिकावट के॥ अति लोल कपोल न डोलत है ढपना पट घूंघट में सटके। घट यों पट भेद दिखावत है जैसे भाव घले गुटका नटके ॥ ९१४ ॥

रैन जगी रति प्रेम पगी उरही सों लगी विधि की अवरेखी । लाज लजीली कटाच्छ कटीली रसाल रसीली विसाल विसेखी ॥ खंजन मीन मृगीन लजावन पीत सरोज समान कलेखी। कान्हर की सों री तेरी सों राधिके तेरी सी आंखिन आंखन देखी ॥ ९१५ ॥

ये वृषभानुसुता भृकुटी तव ताकि तिहूंपुर तें करि न्यारी। का छितिपाल कमान कृपान कहै उर बाँक बिलोकि बिचारी ॥ वै जगजीवन मारन जोग सु ये जगराखन साखन धारी। सोहन मोहन जोहन में मनमोहन को मनमोहन प्यारी ॥ ९२३ ॥

का रसना जुग सेस असेस सदाँ बिष की राज संगिनि जाने। काम किसान रचे रुचि बीज सिंगार के अंकुर बंकुर बाने ॥ जे छितिपालक के रु पल्लव ते जड जंगल जीवन ठाने। हे तरुनी कि तो बरुनी बरजे बरने बरने बरमाने ॥९२४॥

बाँके बिचित्र बने धरि अंजन गंजन मीन हा मृगनाके। जोट बरौनिन के करि कोट खडे र चोट चुटैल चलाँके ॥ ओ छितिपालक जे तरी सुथरी उपमा करिकै कवि थाके। नैन पाहित ने सिर पैं मनों टोप दिये मनि मेचक कि ॥ ९२५ ॥

बेधनहार जहाँ जितने तितने सब त्रासनहार ाये। काम कमान चले पर बान नहीं छितिपाल मान गनाये ॥ रच्छनहार नहीं जग में जनमे

छवि की ललसों ललचैयत ॥ ब्रह्म कहे सब छोडि के काहे न प्यारे के रूप को देखन जैयत । कानन से तो कटाच्छ लगे कलधौत कटोरन दूध अचैयत ॥ ९१९ ॥

ओप अनूप है आनन की अँखियाँ बिन काजर कजरारी । रैन दिना बिसरै सी रहै बिसरो करिये बिसरै न बिसारी ॥ नैनन जो निरखै अबला निकसै उर बेधि अनी अनयारी । भागिनी की भरनींद भरी बरनी न परै बरुनी झपकारी ॥९२०॥

मीन कमीन करै छिन मे सुकुरंगनि के उर बान सो खोह्यो । चंचलता की कमी न रहे कछु खंजन तै अखियाँ जुग सोह्यो ॥ रूप इते पर क्यों इतराइ न कौतुक सों अपने चित टोह्यो । खंजन गंज बिचारे कहा भटू अंजन देख निरंजन मोह्यो ॥ ९२१ ॥

रात रची रतिरंग पिया संग अंग लसै अतिही अलसानों । सोहत आनन यों श्रमबिं ज्यों इन्दु अमीकन सों सरसानों ॥ लाल कछू खुली अँखियान मे तारन की छबि कैसे बखानें साँझ समै के समीप सरोज के मांझ रहे थिर अलि मानों ॥ ९२२ ॥

. वंसी बजावत आनि कढ्यो री गली मैं छली
छु जादू सों डारे । नेकु चितै तिरछी करि दीठि
ल्यो गयो मोहन मूठ सी मारे ॥ ता घरी तें
री सी परी सेज पैं प्यारी न बोलति प्रान के
रे । जागिहै जीहै तौ जीहैं सबै न तौ पीहैं
लाहल नंद के द्वारे ॥ १३० ॥

नैन के बान चलाय कै स्याम गिरावत हौ
जवाम घनीन कों । आजु कलंक लग्यो तिहिं
अरु नंदहु कों नँद की घरनीन कों ॥ चेतै न
वृषभानुसुता दुख ह्वैहै बडो इहिं की सजनीन
। जाय के खाय परेंगी सबै वा अहीर के द्वार
हीरकनीन कों ॥ १३१ ॥

आज गुपाल लखी वह बाल प्रभा की मसाल
काम गढी है । अंचल खोलै न कंचुकी अंग
संभु कहे दुति दूनी चढी है ॥ मोती के हार
कुच बीच रोमावली ते मिलि जोति बढी
मानो सुमेरहि भंग कै गंग लै भानुतनूजा
संग कढी है ॥ १३२ ॥

दाने मनोहर सान धरे वहु दीपति ताकी कहा
वारिकी । संभु जू मंजु गुहे गुन सों उर

सब दच्छ सुस्वच्छ उपाये । चूकत लच्छन गच्छत आपु कहो किन अच्छन अच्छ सिखाये ॥१२६॥

गोरी किसोरी सुहोरी सी देह तें दामिनी की दुति देति बिदारें । नारि नवे सब नारिनि की जब प्यारी को रूप अनूप निहारें ॥ भौंर सी भौंहन सोहि रही मुरकी उर तें न टरें पल टारें । भीजे मनो मुख अंबुज के रस भौंर सुखावत पंख पसारे ॥ १२७ ॥

नासिका ऊपर भौंहन के मधि कुंकुमाबिंदु मृगंमद को कनु । पूछ तें पंख पसारि उड्यो मुख ओर खगा लखि मोतिन को गनु ॥ देव्र के नैन तुलान पला धरि भाग सुहाग के ताल तटी तनु । नारि हियें त्रिपुरारि बँध्यो लखि हारि कै मन उतारि धर्‍यो धनु ॥ १२८ ॥

लाल लखे तें सिरोमन आप लखाय फिरी जस जान न पावै । पाछे परे तब वाही घरी चित चोरि चली फिरि कौन छुडावै ॥ लागे कटाच्छ गिरे हरि घायल घूमत नेक सँभार न आवे । ऐसे दई मुरि कै दृग कोर ज्यों चोर चपे पर चोट चलावें ॥ १२९ ॥

बंसी बजावत आनि कढ्यो री गली में छली कछु जादू सों डारे। नेकु चितै तिरछी करि दीठि चल्यो गयो मोहन मूठ सी मारे॥ ता घरी तें धरी सी परी सेज पैं प्यारी न बोलति प्रान के वारे। जागिहै जीहै तौ जीहैं सबै न तौ पीहैं हलाहल नंद के द्वारे॥ ९३०॥

नैन के बान चलाय कै स्याम गिरावत हौ व्रजबाम घनीन कों। आजु कलंक लग्यो तिहिं कों अरु नंदहु कों नँद की घरनीन कों॥ चेतै न जो वृषभानुसुता दुख ह्वैहै बडो इहिं की सजनीन कों। जाय के खाय परैंगी सबै वा अहीर के द्वार पैं हीरकनीन कों॥ ९३१॥

आज गुपाल लखी वह बाल प्रभा की मसाल सी काम गढी है। अंचल खोलै न कंचुकी अंग तौं संभु कहै दुति दूनी चढी है॥ मोती के हार लसैं कुच बीच रोमावली ते मिलि जोति बढी है। मानो सुमेरहि भंग कै गंग लै भानुतनूजा कों संग कढी है॥ ९३२॥

दाने मनोहर सान धरे वहु दीपति ताकी कहा कहै वारिकी। संभु जू मंजु गुहे गुन सों उर

सब दच्छ सुस्वच्छ उपाये। चूकत लच्छन गच्छत आपु कहो किन अच्छन अच्छ सिखाये ॥१२६॥

गोरी किसोरी सुहोरी सी देह तें दामिनी की दुति देति विदारैं। नारि नवे सब नारिनि की जब प्यारी को रूप अनूप निहारैं॥ भौंर सी भौंहन सोहि रही मुरकी डर तें न टरे पल टारें। भीजे मनो मुख अंबुज के रस भौंर सुखावत पंख पसारे ॥ १२७ ॥

नासिका ऊपर भौंहन के मधि कुंकुमाबिंदु मृगंमद को कनु। पूछ तें पंख पसारि उड्यो मुख ओर खगा लखि मोतिन को गनु ॥ देव के नैन तुलान पला धरि भाग सुहाग के ताल तटी तनु। नारि हियें त्रिपुरारि बँध्यो लखि हारि कैं मन उतारि धर्यो धनु ॥ १२८ ॥

लाल लखे तें सिरोमन आप लखाय फिरै जस जान न पावे। पाछे परे तब वाही धरै चित चोरि चलौ फिरि कौन छुड़ावे॥ लागे कटाच्छ गिरे हरि घायल घूमत नेक सँभार न आवे। ऐसे दई मुरि कै दृग कोर ज्यों चोर पै पर चोट चलावे ॥ १२९ ॥

वंसी वजावत आनि कढ्यो री गली में छली कछु जादू सों डारे । नेकु चितै तिरछी करि दीठि चल्यो गयो मोहन मूठ सी मारे ॥ ता घरी तें धरी सी परी सेज पैं प्यारी न बोलति प्रान के वारे । जागिहै जीहै तौ जीहैं सबै न तौ पींहैं हलाहल नंद के द्वारे ॥ ९३० ॥

नैन के बान चलाय कै स्याम गिरावत हौ व्रजवाम घनीन कौं । आजु कलंक लग्यो तिहिं कौं अरु नंदहु कौं नँद की घरनीन कौं ॥ चेतै न जो वृषभानुसुता दुख ह्वैहै वडो इहिं की सजनीन कौं । जाय के खाय परैंगी सबै या अहीर के द्वार पैं हीरकनीन कौं ॥ ९३१ ॥

आज गुपाल लखी वह बाल प्रभा की मसाल सी काम गढी है । अंचल खोलै न कंचुकी अंग सों संभु कहै दुति दूनी चढी है ॥ मोती के हार लसैं कुच वीच रोमावली ते मिलि जोति वढी है । मानो सुमेरहि भंग कै गंग लै भानुतनूजा कौं संग कढी है ॥ ९३२ ॥

दाने मनोहर सान धरे वहु दीपति ताकी कहा कहै वारिकी । संभु जू मंजु गुहे गुन सों उर

सब दच्छ सुस्वच्छ उपाये। चूकत लच्छन गच्छत आपु कहो किन अच्छन अच्छ सिखाये ॥१२६॥

गोरी किसोरी सुहोरी सी देह तें दामिनी की दुति देति बिदारैं। नारि नवे सब नारिनि की जब प्यारी को रूप अनूप निहारैं ॥ भौंर सी भौंहन सोहि रही मुरकी उर तें न टरै पल टारें। भीजे मनो मुख अंबुज के रस भौंर सुखावत पंख पसारे ॥ १२७ ॥

नासिका ऊपर भौंहन के मधि कुंकुमाबिंदु मृगंमद को कनु। पूछ तें पंख पसारि उड्यो मुख ओर खगा लखि मोतिन को गनु ॥ देव के नैन तुलान पला धरि भाग सुहाग के ताल तटी तनु। नारि हियें त्रिपुरारि बँध्यो लखि हारि के मैन उतारि धन्यो धनु ॥ १२८ ॥

लाल लखे तें सिरोमन आप लखाय फिरी जस जान न पावै। पाछे परे तब वाही घरी चित चोरि चली फिरि गौन छुड़ावै ॥ लौं कटाच्छ गिरे हरि पागल पूरत नेक सँभार न आवै। फिरि गई [illegible] कै हग फेर ज्यों चोर [illegible]

बंसी बजावत आनि कढ्यो री गली में छली कछु जादू सों डारे । नेकु चितै तिरछी करि दीठि चल्यो गयो मोहन मूठ सी मारे ॥ ता घरी तें घरी सी परी सेज पैं प्यारी न बोलति प्रान के ग्रारे । जागिहै जीहै तौ जीहैं सबै न तौ पीहैं हलाहल नंद के द्वारे ॥ ९३० ॥

नैन के बान चलाय कै स्याम गिरावत हौ ाजवाम घनीन कों । आजु कलंक लग्यो तिहि ों अरु नंदहु कों नँद की घरनीन कों ॥ चेतै न ा वृषभानुसुता दुख ह्वैहै बडो इहिं की सजनीन ों । जाय के खाय परैंगी सबै वा अहीर के द्वार हीरकनीन कों ॥ ९३१ ॥

आज गुपाल लखी वह बाल प्रभा की मसाल ा काम गढी है । अंचल खोलै न कंचुकी अंग ा संभु कहै दुति दूनी चढी है ॥ मोती के हार सें कुच बीच रोमावली ते मिलि जोति बढी । मानो सुमेरहि भंग कै गंग लै भानुतनूजा संग कढी है ॥ ९३२ ॥

दाने मनोहर सान धरे बहु दीपति ताकी कहा ः चारिकी । संभु जू मंजु गुहे गुन सों उर

सब दच्छ सुस्वच्छ उपाये। चूकत लच्छन गच्छत आपु कहो किन अच्छन अच्छ सिखाये ॥१२६॥

गोरी किसोरी सुहोरी सी देह तें दामिनी की दुति देति विदारें। नारि नवे सब नारिनि की जब प्यारी को रूप अनूप निहारें॥ भौंर सी भौंहन सोहि रही मुरकी उर तें न टरे पल टारें। भीजे मनो मुख अंबुज के रस भौंर सुखावत पंख पसारे ॥ १२७ ॥

नासिका ऊपर भौंहन के मधि कुंकुमाबिंदु मृगंमद को कनु। पूछ तें पंख पसारि उड्यो मुख ओर खगा लखि मोतिन को गनु॥ देव के नै तुलान पला धरि भाग सुहाग के ताल तटी तनु नारि हियें त्रिपुरारि बँध्यो लखि हारि कै म उतारि धन्यो धनु ॥ १२८ ॥

लाल लखे तें सिरोमन आप लखाय फिरी जस जान न पावै। पाछे परे तब वाही घरी चित चोरि चली फिरि कौन छुडावै॥ लागे कटाच्छ गिरे हरि घायल घूमत नेक सँभार न आवै। ऐसे दई मुरि के दृग कोर ज्यों चोर चपे पर चोट चलावै ॥ १२९ ॥

बंसी बजावत आनि कढ्यो री गली मैं छली कछु जादू सों डारे । नेकु चितै तिरछी करि दीठि चल्यो गयो मोहन मूठ सी मारे ॥ ता घरी तें धरी सी परी सेज पैं प्यारी न बोलति प्रान के वारे । जागिहै जीहै तौ जीहैं सबै न तौ पीहैं हलाहल नंद के द्वारे ॥ ९३० ॥

नैन के बान चलाय कै स्याम गिरावत हौ ब्रजबाम घनीन कों । आजु कलंक लग्यो तिहिं कों अरु नंदहु कों नँद की घरनीन कों ॥ चैतै न जो वृषभानुसुता दुख ह्वैहै बडो इहिं की सजनीन कों । जाय के खाय परैंगी सबै वा अहीर के द्वार पैं हीरकनीन कों ॥ ९३१ ॥

आज गुपाल लखी वह बाल प्रभा की मसाल सी काम गढी है । अंचल खोलै न कंचुकी अंग सों संभु कहै दुति दूनी चढी है ॥ मोती के हार लसैं कुच बीच रोमावली ते मिलि जोति बढी है । मानो सुमेरहि भंग कै गंग लै भानुतनूजा कों संग कढी है ॥ ९३२ ॥

दाने मनोहर [illegible] ताकी कहा [illegible] सों उर

डारत और वढी दुति नारि की ॥ लाल के हा
लसैं उर यों के रूमावली वेलि लखी है उर्जा
की । मानो सुमेर के सृंगन तें उतरी दरी आवलि
पाँति दवारि की ॥ ९३३ ॥

कंवु विलोकतही जिहिं कों दुर्‍यो जाय के दू
कहूं को उताल है । सौतें विलोकि भई हैं विहाल
कपोतन के को कहै जस हाल है ॥ जानि परी
द्विज कों उपमा तिहिं भाखतही मन होत निहाल
है । पान की पीक लसै तियकंठ मनो पोखराज
सिसी रँगलाल है ॥ ९३४ ॥

लखि कै वहि प्रानपियारी के कंठ कों कंवु लई
सुधि तालन की । तिहुंलोक की सुन्दरता ले
त्रिरेख दई विधि जोति के जालन की ॥ कमला-
पति कौन वखानि सकै छवि छीनत मानिकमा-
लन की । इमि गोरे गरे लसै पीक मनो दुति
लाल गुलूवंद लालन की ॥ ९३५ ॥

किधौं रूप सरोवर मे तें कढ्यो लसै कंवु भर्‍यो
सात को है । किधौं सांवरे जू गुन रावरे के
कपोत फंद्यो वडी जात को हैं ॥ सुमेरसजू
सु कोकिला को सुर साधि धर्‍यो विधि हात

को है। वर कंठ मे गोरी के कंठा लसै सु कतारन तारन कांति को है ॥ ९३६ ॥

राधिका रूप निधान के पाननि आनि सबै छिति की छवि छाई । दीह अदीहनि सूछम थूल गहे दग गोरी की दौरि गोराई ॥ मेंहँदी लसैं बुंद घने तिन मै मोहन के मन मोहनी लाई। इन्दवधू अरविंद के मंदिर इंदिरा कों मनो पूजन आई ॥ ९३७ ॥

बैठी मथै दधि राधा उतै कहुं डोलत नंदलला चित चायकै । वंकबिलोकनि झांकति त्यों कोउ जानत नावँ धरै ना बनायकै ॥ काढत माखन माखन मे मेहँदी कर बुन्द रही छवि छाय कै । छीरसमुद्र में डोलै ममारख इन्दवधू ज्यों सुधा तों अन्हाय कै ॥ ९३८ ॥

करतार करे इहिं कामिनी के कर कोमलता कलतालुनि के। लघु दीरघ पातरी थूली तहीं तुसमाधि टरे सुनि के मुनि कै ॥ तिनमें मेहँदीन के बुन्द घने यह तोख कहै उपमा गुनिकै। सखि मानो सरोज के पात मनोज बिसाती बिछाई चुनी चुनिके ॥ ९३९ ॥

लाडिली के कर की मेहँदी छवि जात कही नहीं संभुहू जू पर । भूलिहूं जाहि विलोकतही गडि गाढे रहे अतिही दृग दूपर ॥ इन्द्रवधू वट के टटके दल वेठी बिछाइ ज्यों कंचन भूपर । वांधे मनो रंगरेज मनोज सु चूनरी नीरजपात के ऊपर ॥ ९४० ॥

चुरियानहूं मे चपि चूर भयो दवि छंद पछेलिन घांई कहूं । मनु मैन कुंभार सु कंचन की मृतिका लै सुमंत्रि वनाई कहूं ॥ हरिसेवकेज्यायो चहे तौ सुने जदि सोंधी सुधा जिय ज्याई कहूं । लखि पाई कलाई तेरी जब तें तब तें उन कों न कलाई कहूं ॥ ९४१ ॥

दीठि परी नँदलालै कहूं व्रपभानलली की एक कलाई । ता छिन तें तजि खान औ पा सुहाय री हाय यहे जकिलाई ॥ ऐसी दसा लखि के उन्ह की समुझायो रसीले तबो ना कलाई घूमत हैं व्रजवीथिन मे रट लाय रहे हैं कल कलाई ॥ ९४२ ॥

सुन्दर सूधी सुगोल रची विधि कोमलता अति ही सरसात है । त्यों हरिऔध जराव जरे खरे

कंकन कंचन के दरसात हैं ॥ चूरी हरी बिलसैं जिहि मैं तिहि देखिं हियो सब को हुलसात है। ऐसी कलाइ लखें बिकलाई भई कल आइ नहीं दिन रात है ॥ ९४३ ॥

गिरिराज उरोजन की सरहद्द बिराजंत कंचन की भुवभासी । हार हमेल तरंगन संग सुमेल सुधारस की सरितासी ॥ गोरी सुभाय ही भाय उतारी सरूप महाठग की जुग फांसी । काम महीप धुजा की भुजा तुव कोमल बाल मृनाल-लतासी ॥ ९४४ ॥

दूरि ते दीपति देखत ही प्रतिपच्छ बधून के होत रुजा है । बार पयोधि घटान के बीच जुरी बिजुरी की मनो तनुजा है ॥ या छबि सों सर-सात मनोहर राधिका की अंगिराति भुजा है । कान्ह के कान अलंकित अंकित मैन की मानो बिजै की धुजा है ॥ ९४५ ॥

भोर हि भोर हि श्रीवृषभान के आय अकेलहिं केलि भुलानो । देव जू सोवत ही उत भावती झीनो महा झलि के पटतानो ॥ आरस ले उघरी इक बांह सो या छबि देखि हरी अकुलानो ।

मीडत हाथ फिरै उमह्यो सो मञ्यो उहि बीच फिरै मड़रानो ॥ ९४६ ॥

दृग भौंर से ह्वैकै चकोर भए जेहिं ठौर पै पायो बडो सुख है। लहरैं उठै सौरभ की सुखदा मच्यौ पून्यो प्रकास चहूं रुख है ॥ ठगि से रहे सेवक स्याम लखे सपनो है किधौं यह सौंतुख हैं। वन अंवर मे अरविंद किधौं सुचि इंदु कै राधिका को मुख है ॥ ९४७ ॥

दिन रैनि मे भावन के रचे गोत उदोत मई नित जान्यो परे। हर के ढिग अंग अनंग मढे सुख संग पै कोक मे सान्यो परे ॥ हरिसेवक भांवती को मुख यों श्रुतिवंत ह्वै चोर पिछान्यो परे। भो सुधा छवि सिंधु तें सो अरविंद सो इंदु सो कैसे वखान्यो परे ॥ ९४८ ॥

सूर सों मांगि प्रभा प्रति पून्यो कि छीरसमुद्र मे जाइ अन्हात है। उज्जल कै करनी अपनी रघुनाथ किये रंगलाल बिभात है ॥ रौज री हारि चितैं ससि प्यारी सों जीतिबे कों कितनो ललचात है। कौन कथा कहिये मुख देखत त्यास सों चंद मृगेंद ह्वै जात है ॥ ९४९ ॥

फूले इ फूलन कों तुम मोहि पठावती फूले जिते सतपात हैं। फूल सी जाति है हौंहूं तिते कर तोरत फूलन मेरे अघात हैं॥ राधे जू ताको कहा हौं करों इन सोचन मेरो तो कांपत गात हैं। फूले इ फूल हौं लावती हौं मुख रावरो देखि कली भये जात हैं॥ ९५० ॥

पन प्रेम की फांसी सी हांसी हंसी सी दुरी दुरी दौर दृगंचला सी। मनमोहनी सी मन को कछू कीनी है कीने हैं अंचल अंचला सी॥ वन वीनि की बानिक बानक सी मन मानक ही से हिमंचला सी। चलि चन्दन सी अरविन्दन में मनो चन्द में चंचल चंचला सी॥ ९५१ ॥

मीठी अनूठी कढें बतियां सुनि सौतिन की छतियां दरकी परे। कोकिल कूकनि की कुचली कलहंसन हू के हियें धरकी परे॥ प्यारी के आनन तेरी कढे तिहिं की उपमा द्विज कों फरकी परे। धार सुधार सुधाधर तें सु मनो वसुधा में सुधा ढरकी परे॥ ९५२ ॥

फूलन सी झरि सूल हरे हरिजीवन मूल है श्रौन के ईठी। दूरि लौं दौरत दंतन की दुति

ज्यों अधरा उघरे अति नीठी । तोख भरी मुसका
हृट मोद सुहोत है सौति सबै लखि सीठी
ऊख पियूख मयूख की भूख मिटे वा तिया बति
सुनी मीठी ॥ ९५३ ॥

आजु लखी ललना पढिबे मे कहा कहों मै
भयो अनुरागी । बारक तो पहिले सुन लेति
सुंदर बोल गुरू तें सभागी ॥ अच्छर है मुंह
सुनिये उचरे फिरि बोल सुधारस पागी । से...
यों सु पढावन हार कों आपु ही मानो पढावन
लागी ॥ ९५४ ॥

दाडिम देखि तपोवन सेवत मानिक सिंधु
समाय गए हैं । मंगल के कुल के मनो बालक नूर
कहे ए अकास छए हैं ॥ तू तरूनी रँग दंतन तें
सु मुनीनहूं के मन मोल लए हैं । लाल कहा उपमा
बरनो रद लाल लखें रदलाल भए हैं ॥९५५॥

पाँयँ धुवावतही नँदलाल सों ऐंठि अमेठन
रँग भरी सी । चारू महा कवि की कविता सी
लसे रस मे दुलही उमही सी ॥ सीवी करे सं
झबान के झांवत देहँ दिपे दिन नेह ज्यों सीसी
दंतन की दुति बाहिर ह्वै कर जाहिर होति जब
...हिर की सी ॥ ९५६ ॥

घुंघुट झीने दुकूल की झूलैं झूकैं दृग बंकित कानन द्वै । जुग भौंहन बीच थक्यो मन गोहन ओठन लाल रह्यो रंग चै॥ मंद हँसै रुख नागरि को मुख चोपन की उपमा तब द्वै । तिमिरावली सांवरे दंतन के हित मैन धरे मनो दीपक द्वै ॥ ९५७ ॥

को बरनै उपमा कवि गंग सु तोहीं मे हैं गुन ऊरबसी के। जा दिन तें दरसे मुसुकानि सों कान्ह भए बस तेरी हँसी के ॥ चंद से आनन में छवि राजत ऐसे विराजत दंत मिसी के । फूलन की फुलवारिन मे मनो खेलत हैं लरिका हबसी के ॥ ९५८ ॥

बारिज मे विलसै अलिपांत किधौं अलि अच्छर मंत्र वसी के । मैन महीप सिंगारपुरी निज चांह वसाई है मध्य ससी के ॥ आनँद सों दरसी दसनावलि स्याम मिसी मिलि ऐसी लसी के । फूलन की फुलवारिन में मनु खेलत हैं लरिका हबसी के ॥ ९५९ ॥

अलि कामकला करि काहू के संग तें कामिनि भोर उठी भल कै । छवि सों अरसाय ऐंडोय

ग्यान भयो जब तें तब तें तिय एक लखी
मनि आप अतूल मे । दामिनि ज्यों जमुना प्रति
बिंबित यों झलके तन नील दुकूल मे ॥ देखत
ही सुख देखे बिना दुख जाय परी कित तें उ
भूल मे । ठोडी पें स्यामल बिंदु गुपाल मे
अलि बाल गुलाब के फूल मे ॥ ९६७ ॥

प्यारी कि ठोढी को बिंदु दिनेस किधों बिसराम
गुबिंद के जी को । चारु चुभ्यो कनिकामनि
नील को कैधों जमाव जम्यो रजनी को ॥ कैधों
अनंग सिंगार को रंग लिख्यो वर मंत्र वसीक
पी को। फूले सरोज मे भौंरी वसी किधों फूल स
में लग्यो अरसी को ॥ ९६८ ॥

नहिं नेकु तुनीर लहे समता जग जाकहँ रा
पीठि धरे। केहि भांति कहों सरि कीरन की
सील बिहीन सुभाव करे॥ तिल फूल लखे ति
न लहे बिछुवान रहें तिय पायँ परे । छिति
मनोहर नासिका तें सुखमा सर काम तरं
तरे ॥ ९६९ ॥

बनबासी किये सुक पीठि निवासी तुनीर
बरि बिलासिका हे । तिल सून प्रसून हू खेत

गुहा सेवक सिद्ध निवासिका है ॥ भुवत्तेग सुनैन के वान लिये मति वेसरि की सँग पासिका है। बहुभावनि की परकासिका है तुव नासिका धीर विनासिका है ॥ ९७० ॥

मदमाती मनोज के आसव सों अँग जासु मनो रंग केसरि को। सहजे नथ नाक तें खोलि धरी कन्यो कौनधौं फंद या सेसरि को॥ कमलापति हेरि हेराय रहे लख्यो और नहीं इहिं की सरि को। करि कौन उपाय वचौं हे दई मोहि वेधत वेध या वेसरि को ॥ ९७१ ॥

कुंडल रूप अनूप विराजत ता विच मोती की जोति प्रकासी । सो जगदीस विलोकत आनि गडी हिय में नहीं जाति निकासी ॥ जाहि लखे तें फंसे मुनि कौसिक एक वच्यो जो रह्यो अविनासी। राजति प्यारी की नासिका में यह नथ्थ किधौं मनमथ्थ की फांसी ॥ ९७२ ॥

नहिं जानिये कौने विरंचि रचे समता कहां माखन गोलन की। किमि काम के दर्पन की हौं कहौं सुखमा इनके संग तोलन की ॥ कमलापति देखि छके से रहे सुधि नेकु रही नहिं बोलन की।

रूप की रासि में के रसराज को अंकुर आनि कढ्यो सुभ होना। के ससि नै तमग्रास कियो तिहिं को रह्यो सेस दिखात सो कोना॥ प्यारी के गोल कपोलन पैं द्विज राजि रह्यो तिल स्याम-सलोना। कै मधुपान पर्‌यो अलमस्त किधौं अरविंद मलिंद को छोना॥ ९७७॥

लखी आज अचानक इंदुमुखी चली सामुहें आवतही कढिकै। उघर्‌यो पट घूंघुट पौन प्रसंग गे नैन चकोर तहां मढिकै॥ कमलापतिसौं तिलसोभित होत हैं गोल कपोल हि पैं चढिकै। जनु सुन्दरि को मुख इंदु लसै तिल एक मयंक हू तें चढि कै॥ ९७८॥

तीय नदी जल सुंदरता कुच कोक सुबार सिवार लसै। दृग कंज तरंगवली रसरोस करारे लखें सुधि सातौं नसै॥ लटकी लटबेसरि के बनसी मुकुता मनि कंठ सुचारो फँसै। मनमोहन को मन मीन विधाय कै रीझि कै मानो मनोज हँसै॥ ९७९॥

है कचस्याम सोई तनयारबि तेज कढी एक सौति नवीन है। कै मधुपावली मंजु मनोहर

बैठि रही ढिग कंज अधीन है ॥ बंक परी लट एक दृगंतर सो छवि देखत प्यारे प्रवीन है। रूप प्रवाह नदी तट खेलत मैन सिकारी वझा-वत मीन है ॥ ९८० ॥

कन ऐन सुरा विद्रुली दिये भाल सो नेकन मो मन तें टहलै। मनु इंदु के बीच में कीच अमी आलि बालक आय पर्‍यो चहलै ॥ कवि ब्रह्म भनै घुंघुरी अलकै अपने वल काढन कों कहलै। जुरि बैठे मयंक के कूल दुहूं दिसि कोउ न पैठी सकै पहलै ॥ ९८१ ॥

रैनि उनींदी प्रिया पलिका पर सोभा समृ इकैठ रही है। सो छवि प्यारे प्रवीन बिलोक आनँद सों हिय पैठि रही है ॥ गोल कपोल परा लट एक सनेह सनी कछू ऐंठि रही है । हेतु अमी निसिपाल के ऊपर व्यालवधू मनो बैठि रही है ॥ ९८२ ॥

श्रीनंदलाल गोपाल के कारन कीन्हो सिंगार जु राधे बनाई। कुंकुम आड सु कंचन देह दिपै मुकताहल की झलकाई ॥ सीस तें एक छूटी लट सुंदर आनि के यों कुच पै लपटाई । ग

कहे मनो चंद के बीच है संभु कों पूजन नागिनि आई ॥ ९८३ ॥

रीत रची विपरीत दुहू सु अनङ्ग उमङ्ग भरे सुख पैया। ढीली छबीली की वेनी परी सब अंग छके रति की सरसैया ॥ छूटतहीं मुख पै लटके दुति चाढी इत्ती मिलि कै कुटिलैया। येकहि वंक वकारी दिये रसिकेस ज्यों होत हैं दाम रुपया ॥९८४॥

पंकज चंपक वेलि गुलाब की माल बनावत आनँद पावे। आछे अंगोछे से अंग अंगोछि गुलाब फुलेलरु सोंधो लगावे ॥ भूषन वास सम्हारि दमोदर आछे से केस में फूल भरावे। मेसही पिय को मग जोवति है हठि द्वार त्यों चेत्र अली को दिखावे ॥ ९८५ ॥

कीधौं सुधाधर जू दुहुं ओर सुधार धरे सुसुमा के द्विदोन हैं। कीधौं निसान ए लोचन बान के भौंह कमान के काम के त्रोन हैं ॥ कोन है जो नहि मोहही देखि किधौं सर्वज्ञ हैं तो नहीं मोन हैं। भौन हैं ज्ञान के मान के दोन हैं श्रौन तीय के जीय के रोन हैं ॥ ९८६ ॥

दास मनोहर आनन बाल को दीपति जाकी

दिपै सब दीपं। ग्रान सुहाये त्रिराजि रहं मुकता-
हल संजुत ताहि समीपं ॥ सारी महीन सो लीन
त्रिलोकि विचारत हैं कवि के अवनीपं। सो दर-
जानि ससी ही मिली मुन संग लिये मनो सिंधु
मै सीपं ॥ १८७ ॥

हेम सो अंग हियो हुलसे हरिनाछी सुनेह नये
मन बंधे। ठोरही ठोर जगी मदनदुति ताहिर प्रे
के सायक संधे ॥ बीरी न होइ विराजत कान
जानन को मन लावत धंधे। लैकर झांझ बजाव..
कों सु चल्यो मनो चंद सुमेर के कंधे ॥ १८८ ॥

वसि वर्ष हजार पयोनिधि मे वहुभांति न
सीत की भीत सही । कवि देव जू त्यों चित
चाह घनी सुचि संगति मुक्तनहूं की गही ॥ झं
भांतिन कीनो सबै तपजाल सुरीत कछूक
बाकी रही । अजहूं न इते पर सीप सबै
कानन की समता न लही ॥ १८९ ॥

वहुकाल पयोनिधि में करि वास हुतासन
बाडव तेज तई । अरु स्वाति के बुंदन घाउ घने
वहु भाँतिन सों तन छाप छई ॥ छितिपाल किया
तप भाँति अनेक सु संगति बारिजहूँ की लई

हिय सीप न सोच गयौ न तऊ समता इन कानन की न भई ॥ ९९० ॥

कीधों सिंगार के वारिज को दल नूतन रूपवती सरसी को । कीधों अनंग को आसन ले दमके छवि कंचन जोति लसी को ॥ पारस नेक बिलोकत ही बस के मन लेत है कान्ह रसी को । बाल को भाल बन्यो अति सुंदर भाग भर्‌यो मनो भाग ससी को ॥ ९९१ ॥

भाग को भौन सुहाग को चौंतरो सुंदरता को सिंघासन सोई । सागर है रस को पुल प्रेम को लोचन पंथिन को सुख होई ॥ नूर कहे न सुने लडबावरी चंदहि दोख कछू न भलोई । होत नहीं सरि तेरे लिलाट की तौ ससि चौथ को देखे न कोई ॥ ९९२ ॥

सोहत अंग सुभाय के भूखन भौंर के भाय लसैं लटछूटी । लोचन लोल अमोल बिलोकत तीय तिहूंपुर की छवि लूटी ॥ नाथ लटू भये लालन जू लखि भामिनी भाल की बंदन बूटी । चोप सों चारु सुधारस लोभ बिधी बिधु में मनो चंद बधूटी ॥ ९९३ ॥

एके समै वृखभानुसुता परभातही काम कै केलि बनाई । नैनन की लखि आरति कीरति कीरति मोतिन लाल सुहाई ॥ बेंदी जराव लिलाट दिये गहि डोरी दोऊ पटिया पहिराई । ब्रह्म भने रिपु जानि गह्यो रवि की मुसकें जनु राहु चढाई ॥ ९९४ ॥

बाल के भाल में लाल अनूपम रोरी की बेंदी बिसाल लसी है । ता बिच आखत सोहत है अति आनन की सुखमा सरसी है ॥ सो छवि हेरतहीं रसिकेस भली नव उक्ति हिये हुलसी है। राहु की भीति मनो भजि के यह इन्दुकला कुज माँहि बसी है ॥ ९९५ ॥

भाखत हैं सब कोऊ सही एक बिंदु ते होत है अंक दहाई । आवै नहीं हिय में सु प्रतीत कहूँ कछु रीत अनूप लखाई ॥ नोलवधू मुख देखतहीं रसिकेस सुदेस सुबेस सुहाई । बेंदी लिलार दिये तिय की छवि छाय अपार उदोत बढाई ॥ ९९६ ॥

तिय की मुख चन्द भलो सजनी लखि कै अति बाढे बिनोद हिये । रसिकेस सबै सुखमा

सहजै पुनि दूनी भई है सिंगार किये ॥ छवि छाय रही बहु हीरा जरी वर वेंदा विसाल जु भाल दिये । यह मानों सनेह सन्यों सुत कै विधु पूरन है बुध गोद लिये ॥ ९९७ ॥

चीकनी चारू सनेह सनी चिलकै दुति मेचकताई अपार सों । जतिलिये मखतूल के तार तमी तम तार छिरेफकुमार सों ॥ पाटी दुहूं विच मांग की लाली विराजि रहो यों प्रभा विसतार सों । मानो सिंगार की टाटी मनोभव सींचत है अनुराग की धार सों ॥ ९९८ ॥

मंजन कै तिय बैठी अवास मे पास खवासिनि हैं सब ठाढी । सारी सुगंध सचिक्कन कै सुभ वेनी बनाय गुही अति गाढी ॥ पाटिन विच सिंदूर की रेख पुखी लखि यों उपमा अति बाढी । चंद के लीलन कों झुकि राहु मनो रसना मुख बाहिर काढी ॥ ९९९ ॥

सोवत बाल गोपाल लखी मुख अंचर टारि कै मोद भरे उर । को कवि जू छवि भाखि सके भ्रम भूरि रहे मन पूरि सुरासुर ॥ मांग मे सेंदुर सोहि रह्यो गिरधारन है उ

मनोज की लागी कृपान पर्यो कटि बीच तें राहु वहादुर ॥ १००० ॥

बैठी सिगार सिगार कै बाल दयो मृगबिंदु अनूपम भाल पें । का कहिये उपमा तिहिं की घुंघुवारी लुरें अलकें दोऊ गाल पें ॥ पाटिन बीच सिंदूर की लीक विराजति है द्विज ऐसे सुहाल पें। मैन महीप मनो जग जीति के खून भरी बरछी धरी ढाल पें ॥ १००१ ॥

मृगनैनी की पीठ पे बेनी लसै अति सौंधे सुगंध समोयरही । कच चिक्कन स्याम चुभै चित मैं सु सुकेसी सुकेसन जोय रही ॥ उपमा कविंदर कहा कहिये रवि की तनया तन तोय रही । मनो कंचन के कदली दल ऊपर सांवरी सांपिनि सोय रही ॥ १००२ ॥

रास्यो मयंक के पाछे फनी फन रूप वखानत याको हितू पर । नेह सनी वनी बेनी गुलाब निसेनी कोऊ सुख की नहीं दूपर ॥ पीठि मैं राहु कि दीठि धसै न उपाय बिलोकिये या व्रज भूपर। अमृत पीवत पूंछ डुलै मनौ कंचन के कदली दल ऊपर ॥ १००३ ॥

कै मधुपावली मंजु लसे अरविंद लगी मकरंद हि पोहै । कै रजनी मनि कंठ रिसाय कै पाछे कों गौन कियो अरि सोहै ॥ वेनी किधौं या कलंक चुवै किधौं रूप मसाल को धूम करो है । कंचन खंभ के कंध चढी थकि चंद गहे मुख सांपिनी सो है ॥ १००४ ॥

सेज तें ठाढी भई उठि वाल लई उलटी अंगिराय जह्माई । रोम की राजी बिराजी विसाल मिटी त्रिवली अरु पीठि खिलाई ॥ वेनी परी पग ऊपर पाछे तें ब्रह्म यहे उपमा उर आई । लोक त्रिलोक के जीतिवे कारन सोने किं काम कमान चढाई ॥ १००५ ॥

वाल चलै अलवेली सी चाल कछू कवि ब्रह्म कहे ना कहावे । लाज भरे ब्रजराजकुमार की भाजि चली भजि जान न पावै ॥ दौरि गही मृगनैनी की वेनी सुप्यारी को यो लचक्यो तन आवै । भौंरन की परतंच किये तमक्यो मनो काम कमान चढावे ॥ १००६ ॥

हठि मांगत वाट किधौं लछिमी की सरोज सों आनि सिवार अरे । किधौं आरसी के घर तें

उत संभु समूह फनी छवि सों बगरे॥ इमि राधिका के मुख के चहुंओर विराजत वार महा सुथरे। भजि चंद चल्यो विचल्यो रन तें तम वृंद मनो जुरि पाछे परे॥ १००७॥

कैसी छवीली की छाय रही छवि छूटि रहे कच कुंचित कारे। कौन कुहूघन कौन कितै करै तिन सों तमक्यों समतारे॥ सोहत आन ऊपर यों अलि वारिज वीच महा मतवारे। ... विधु ऊपर हेतु अवै अहि के मिस के सव सीस सुधारे॥ १००८॥

जनु इन्द उयो अवनीतल तें चहुंओर छटा छवि की छहरी। तहां देखत संभु गोपाल खरे तिय के मुख की सुखमा सिगरी॥ चढि एडिन लौं उमडे वडे वार भई तट राधिका न्हाय खरी। जनु सोत समेत धरे तन दिव्य मनो जल तें जमुना निकरी॥ १००९॥

मंजन के तिय वैठी अगार वगार दये जनु मार कुमार हैं। कोउ कहै तमतोम की धार कोउ मखतूल के तार सिवार हैं॥ कौन कहै उपमा तिन की हिज केस सु केसी के टारत छार हैं

सार हैं पीतम के दृग के बिथुरे सुथरे अलबेली की वार हैं ॥ १०१० ॥

हैं अविवेक अनेक भरे करिकै कविता छिति में छहरैहैं। दादुर कीच से नीच तहां उपमा वह बेनि तृबेनी की देहैं ॥ भोई समोई सुगंधन सों समता बिख भीनी भुअंगिनि कैहैं। ऐसे कुतर्कन तें छितिपाल कवीसन के उपहांस करे हैं ॥ १०११ ॥

राधिका रूप निधान की मांग संभारिकै सेंदुर रेख भराई। ताहि निहारतहीं छितिपाल गोपाल गये बिनु मोल बिकाई ॥ देन लगे उपमा बहु भांति समात न एकजमाति जगाई। मानहुँ श्रीजमुनाजलरंजन माहँ निरंजन जोति जगाई ॥१०१२॥

भाग सोहाग भरी तिय मांग सो बूझि बिचारि बिरंचि संवारी। भारती भांति अनेकन सों जग में समता टकटोरत हारी ॥ जद्यपि हैं लघुता छितिपाल परंतु कहौं कछु बुद्ध बिचारी। सूछम सातुकी गैल किधौं सुखमा बर बारिप्रवाह पनारी ॥ १०१३ ॥

आज गई सिगरी मुदि वे जे रहीं गूंथि मोतिन

उत संभु समूह फनी छवि सों बगरे॥ इमि राधिका के मुख के चहुंओर विराजत वार महा सुथरे। भजि चंद चल्यो बिचल्यो रन तें तम वृंद मनो जुरि पाछे परे॥ १००७॥

केसी छबीली की छाय रही छवि छूटि रहे कच कुंचित कारे। कौन कुहूघन कौन कितेक करे तिन सों तमक्यों समतारे॥ सोहत आनन ऊपर यों अलि वारिज बीच महा मतवारे। कै विधु ऊपर हेतु अनै अहि के मिस के सब संसि सुधारे॥ १००८॥

जनु इन्द उयो अवनीतल तें चहुंओर छटा छवि की छहरी। तहां देखत संभु गोपाल खरे तिय के मुख की सुखमा सिगरी॥ बढि एडिन लौं उमडे बडे वार भई तट राधिका न्हाय खरी। जनु सोत समेत धरे तन दिव्य मनो जल तें जमुना निकरी॥ १००९॥

मंजन के तिय बैठी अगार वगार दये ततु मार कुमार हैं। कोऊ कहै तमतोम की धार कोऊ मखतूल के तार सिवार हैं॥ कौन कहै उपमा तिन की द्विज केस सु केसी के डारत छार हैं।

हि वार, किती वलि हौं उत तू जनि लेइ करौट
। पाखुरी ते रसिकेस गुलाब की जैहैं कहुं
रि गात खरौट री ॥ १०१७ ॥

रंच हरें हँसि बोलतहीं श्रमबिंदु घने मुख
ऊपर छावत । लंक लचै न कहूं सुकुमारि की
।। भय बीजन मन्द डुलावत ॥ छाले परैं न
कहूं सु यही डर ते पग में नहिं हाथ छुआवत ।
दीनो गुलाब को फूल झमां झझकी है तऊ
तेय पांय झवांवत ॥ १०१८ ॥

लै कर में कच कारे समेटि खये उलटी करि
दोऊ भुजा को । टारि दये पट सीस ते सुंदरि
दर्पन बंक चितौनि ते ताको ॥ अञ्चल ऊंचो
भयो उर ते रसिकेस विलोकत ही छवि छाको ।
जूरो सु बांधनिहारि भली यह नारि, नई मन
बांधे न काको ॥ १०१९ ॥

पति ने रति की बतियां जु कहीं सुनि कै सकु
चाय रही सिर नै कै । मुख फेरि कनेखिन तें जु
लखी मुसकाय सखी दिसि अंचल दै कै ॥ रसि-
केस प्रचीन तिया सिगरी उर की गति दम्पति
की लखि पै कै मुख पाय अली जु चली ढिग

जोतिन जाल में । कंकन किंकिनि छाप छ
हरा हेम हमेल परे मते चाल में ॥ टोनो पढ़
कछू वेनीप्रवीन सलोनो सरूप लखे किते वा
में । इन्दु जित्यो अरविन्द जित्यो तू गोविन्
जित्यो इक विन्दु दे भाल में ॥ १०१४ ॥

बाल के भाल विसाल दये मृग के मद के
लसे विन्दु सलौना । लागि न जाय कुदीठ कहूं
यह हेत दियो मनो नील दिठौना ॥ भाखत है
विजयानन्द जू अपने मन की चहें होत वा होना
कंज से नैन खिले दुहूं देखिये लालची बीच
अऱ्यो अलि छौना ॥ १०१५ ॥

कौतुक एक अपूरव है सजनी लख वा घर के
चहुंपासा । जानि परे न सितासित पच्छ सदा
परिपूरित स्वच्छ प्रकासा ॥ पत्रहि में तिथि
पेयत है बिलगात न मावस दूज सुपासा ॥
पूरन पून्यो रहे नितहीं रसिकेस सु आनन ओप
उजासा ॥ १०१६ ॥

वा दिन रंच उरोज परी जू गयो नहिं सो
अजहू लो छरोंट री । है सुकुमार घनी नवला
तिन दीय मुहायन सारी सरोंट री ॥ में बरजी

मान मरोरहि । पै अविलोकत हीं ढंग रावरे औरहु नौलवधू मुख मोरहि ॥ मानहु मेरी कही घनस्याम लहो जिहिते अतिहीं सुख सोरहि । देखौंहगी टुक दूर करौ हो लला है छला यह छीगुनी छोरहि ॥ १०२४ ॥

आपने ओर की चाहे लिखी लिखि जाति कथा उत मोहन ओर की । प्यारी दयाकरि वेगि मिलौ सहि जाति व्यथा नहीं मैन मरोर की ॥ आपुही बांचि लगावति अंग अहो किन आनी चिठी चित चोर की । राधिके राधे रही जकि भोर लौं ह्वैगई मूरति नंदकिसोर की ॥१०२५॥

बातें बनाय बनाय कहो कहिये रघुनाथ की सौंह लरैगी । और न कोऊ बची ब्रज मे एक तूहीं है नेम निवाह करैगी ॥ आये भये दिन चार इतै अब हीं सबही कों कुनांव धरैगी । तान भटू मनमोहन की वह कान परैगी तो जान परैगी ॥ १०२८ ॥

वहि चौहटे की चपरोट मे आजु अचानक आनि दोऊ भिरिगे । कवि वेनी दुहूंन के लालची लोचन छोडि सकोचन कों घिरिगे ॥ समुहाने

तें सब ही मिस तें जु टलाटली के कै ॥१०२०
सुनि कै सखियान पै सांई सवार चले इत पू
की मास जु लाग्यो । रसिकेस रहे सुख हो
महा अब कीजे कहा सु मनोभव जाग्यो ॥ कछु
ठानी उपाय दई को मनाय पसारि कै अञ्चल सं
वर माँग्यो । गहि कै कर वीन प्रवीन तिया तब
हीं तहं राग मलार सुराग्यो ॥ १०२१ ॥
भेदि कै भीर इती कित ह्वै कै सु आवत जात
न रञ्च लखावै । आंख ये आंखन से मिलि कै
जन लाखन की चहुं आंख दुरावै ॥ ह्वै है कहा
चतुराई घनी रसिकेस दुहूं मनमोद बढावै ।
डीठि सों डीठि जुरीही फिरै सब ही की बसीठि
लों डीठि बचावै ॥ १०२२ ॥
तो मिलिबे की सुचाह लगी रसिकेसहि हैं
अति छैल अनोखे । आज मिलायहौं वाहि तुमैं
इमि धीरज दे तिनमें परितोखे ॥ गोप गये उठि
वीर अथाइन गोरज गैल छई विन धोखे । तू
चल री वलि आली भली यह है अभिसार की
सैल संझोखे ॥ १०२३ ॥
आये जु आप भली ही करी रसिकेस सुमेटन

मान मरोरहि । पै अविलोकत हीं ढंग रावरे औंरहु नीलवधू मुख मोरहि ॥ मानहु मेरी कही घनस्याम लहो जिहिते अतिहीं सुख सोरहि । देखहिंगी टुक दूर करौ हो लला है छला यह छीगुनी छोरहि ॥ १०२४ ॥

आपने ओर की चाहे लिखी लिखि जाति कथा उत मोहन ओर की । प्यारी दयाकरि वेगि मिलौ सहि जाति व्यथा नहीं मैन मरोर की ॥ आपुही बांचि लगावति अंग अहो किन आनी चिठी चित चोर की । राधिके राधे रही जकि भोर लौं ह्वैगई मूरति नंदकिसोर की ॥१०२५॥

बातें बनाय बनाय कहो कहिये रघुनाथ की सौंह लरैगी । और न कोऊ बची व्रज मैं एक तूहीं है नेम निवाह करैगी ॥ आये भये दिन चार इते अब हीं सबही कों कुनांव धरैगी । तान भटू मनमोहन की वह कान परैगी तो जान परैगी ॥ १०२६ ॥

वहि चौहटे की चपरोट मैं आजु अचानक आनि दोऊ भिरिगे । कवि वेनी दुहूंन के लालची लोचन छोडि सकोचन कों घिरिगे ॥

तें सब ही मिस तें जु टलाटली कै कै ॥१०२

सुनि कै सखियान पै सांई सवार चले इत
की मास जु लाग्यो । रसिकेस रहे सुख ह
महा अब कीजे कहा सु मनोभव जाग्यो ॥ क
ठानी उपाय दई को मनाय पसारि कै अञ्चल
वर माँग्यो । गहि कै कर बीन प्रवीन तिया त
हीं तहं राग मलार सुराग्यो ॥ १०२१ ॥

भेदि कै भीर इती कित ह्वै कै सु आवत जा
न रञ्च लखावे । आंख ये आंखन से मिलि
जन लाखन की चहुं आंख दुरावे ॥ ह्वै कह
चतुराई घनी रसिकेस दुहूं मनमोद बढावे
डीठि सों डीठि जुरीही फिरे सब ही की बसीठि
लों डीठि बचावे ॥ १०२२ ॥

तो मिलिबे की सुचाह लगी रसिकेसहि है
अति छैल अनोखे । आज मिलायहौं वाहि तुमें
इमि धीरज दे तिनमें परितोखे ॥ गोप गये उठि
वीर अथाइन गोरज गैल छई बिन धोखे । तू
चल री बलि आली भली यह है अभिसार की
सैल संझोखे ॥ १०२३ ॥

आये जु आप भली ही करी रसिकेस सुमेटन

मान मरोरहि । पै अविलोकत हीं ढंग रावरे औरहु नीलवधू मुख मोरहि ॥ मानहु मेरी कही घनस्याम लहो जिहिते अतिहीं सुख सोरहि । देखहिंगी टुक दूर करौ हो लला है छला यह छीगुनी छोरहि ॥ १०२४ ॥

आपने ओर की चाहे लिखी लिखि जाति कथा उत मोहन ओर की । प्यारी दयाकरि वेगि मेलौ सहि जाति व्यथा नहीं मैन मरोर की ॥ आपुही बांधि लगावति अंग अहो किन आनी चेठी चित चोर की । राधिके राधे रही जकि गोर लौं ह्वैगई मूरति नंदकिसोर की ॥१०२५॥

बातें बनाय बनाय कहो कहिये रघुनाथ की गौंह लरैगी । और न कोऊ बची ब्रज मैं एक हीं है नेम निवाह करैगी ॥ आये भये दिन चार ते अब हीं सबही कों कुनांव धरैगी । तान भटू मनमोहन की वह कान परैगी तो जान रैगी ॥ १०२६ ॥

वहि चौहटे की चपरोट मे आजु अचानक आनि दोऊ भिरिगे । कवि बेनी दुहूंन के लालची लोचन छोडि सकोचन कों घिरिगे ॥

हिये भरि भेटिबे कों त्यों चबैयन के चरचे जिरिगे। फिरिगे कर सों कर हेरत हीं करके मनो मानिक से गिरिगे ॥ १०२७ ॥

गोरे से भाँयें भुजान खुली कुसुँभी अँगिया की रही गडि गोटैं। लंक नई सी परै कच भार मनोहर हार परी त्यों वरोटैं ॥ वेनी रँगे मेंहदी पग पानि करै अँखियाँन कटाच्छनि चोटें। लोटे न हेरी भटू घर तें कब के लटू कान्ह परे मग लोटैं ॥१०२८ ॥

तीर कलिंदी के हौं उत संभु सुखावत हीं पट धोय वगार्यो । तूँ बतरात हुती सखियान सौं आन कहूं तें उहाँ पगु धार्यो ॥ औंचक तूँ हँसि आनन फेरी वडे वडे नैननि तानि निहार्यो। कान्ह अचेत पर्यो कहरै सखि वा दिन की मुसुकानिं को मार्यो ॥ १०२९ ॥

को हमे रोकि सकै धरती में जहाँ चहौं जाय तहाँ छल घोरों। में बहुरूपिनी सेवक स्याम सुमोहिनी मंत्रन के सर छोरों ॥ राधिका कों कछु तें कछु के एहि कुंज के केलि [illegible] ।गवरे

के अनुसासन प्रीति अकासनहूं की तिया सन जोरों ॥ १०३० ॥

गोधन साथ बजावत बांसुरी गोरज सों घन सो तन भारो । चंद सो आनन चाव चढो वडेड चख चाहि परे चितहारो ॥ गोकुल या कुल-कानि की आनि को हेरत हेरिबी राखिबो गारो । लोवन के सँग आवत भोर धरे सिरमोर पखौवन वारो ॥ १०३१ ॥

भाग भरी सब भाँतिन सों करो आज की रैन महा सुख सानी । गोकुलनाथ हों बैठे कहा गुनों सांची कही सब मेरी कहानी ॥ लाल निहाल करौं तुम कों चलो कुंज लों तो हरि आनँद दानी । चंदमुखी चपला लों चितोति तुम्हे घन स्याम सों राधिका रानी ॥ १०३२ ॥

जोतिखवंत जने नख तें उवटी वसी पारस कंचन खानी । दासी महा छवि मोहिनी आदि सुगंध भयो है प्रसेद के पानी ॥ को बरनै जेहि सेवक स्याम नें मोह भरी गुनि बुद्धि औ बानी । वार ने जापे सबै अमरी सो लुटी कमरी पर राधिया रानी ॥ १०३३

एक तो मान को मेर रह्यो चढि दूजे तुम्हे बिनु साथ निहारें। तीजे हितू इहि ओर की बूझि कै झूंठी महामन बीच बिचारें ॥ रावरे को रघुनाथ बलाय ल्यों या डर सों हम सासन टारें। प्यारी के ईछन तीछन बान हैं घायल देखत ही करि डारें ॥ १०३४ ॥

काहु के बंक चितैबे कि संक न लागो कलंक बिसे किन बीसों । वा ठकुराइन की अब देव बिरंचि रची रुचि रावरे जीसों ॥ देहों मिलाय तुमै हौं तिहारिये आन करों वृषभानलली सों ब्राह्मन की सौं बबा कि सौं मोहन मोहि गऊ कि सों गोरस की सौं ॥१०३५॥

मुख चांदनी चारु प्रकासन सों घरमा उजास मछ्योई रहै। तन की मृदु मंजुलता लखि कै भरि भौन बिलास कछ्योई रहै ।। घनस्याम निकुंजहि ल्यावन कों हिय माहं उछाह बछ्योई रहै । वलि वा अंगना पगना रंग सों अंगना रंग वामै चछ्योई रहै ॥ १०३६ ॥

ज्यों घन से तुम हो घनस्याम बनी वह बेनीप्रबीन त्यों संपा। ऐसी तनीक सी बातन को

मन मेरो नहीं कबहूं हरि कंपा ॥ क्यों कर जोरौं निहरौं हहा करौं धीर की सौं जबहीं रवि झंपा । आजुही लै पहिरावन चाहत कंठ मैं माल मनोहर चंपा ॥ १०३७ ॥

पन्नग मीन कपोत चकाचकी बालमराल हू केते गहे हैं । विद्रुम औ मुकता पोखराज बिसाहिबे कों अति नेह नहे हैं ॥ देख्यो तुम्हे जब सों तब सों उन के ढँग ये रघुनाथ लहे हैं । रोज तमासे कों जात तितै जितै ओज सों फूलि सरोज रहे हैं ॥ १०३८ ॥

दासी हौं मैं बलि रावरे की यह मेरी कही है सही मति लूनो । पेखिये आजु कलानिधि कों केहिं भाँति कलाधरि कै भयो दूनो ॥ गोकुल कैसी सुधाबरसै सरसै सुखमा लहि सारदी पूनो । देखिये तो चलि भाँवती के मुख तें ससि आज को होत ना ऊनो ॥ १०३९ ॥

केसरि रंग के अंग की बास बसी रहै पाय से पास घनेरी । चित्र मई छिति भीति सबै रघुनाथ लसै प्रतिबिंबनि घेरी ॥ प्यारी के रूप अनूप की ओर कहालौं कहौं महिमा बहुतेरी । आनन

चंद की फैली अमंद रहै घर में दिन राति उँजेरी ॥ १०४० ॥

जा छन तें मुसुक्याय दई चख चंचल कोर छबीली तिया में। छोही छरी सी परी तब तें निब-री सी मनोज खरी कतिया में ॥ वेनी जो जाइबे जैये जरूर तो जानि जनाई हितू बतिया में। कान्ह मरैगी न जौलों बनी मुसुक्यान अमी की नमी छतिया में ॥ १०४१ ॥

भूमि पै पाँव धरे कबहूं नहिं सूरज देखि सकै नहीं जाकों। मानस की चरचा का चलाइये चंद चितै न सकै पुनिया कों ॥ औंचक झाँकि झरोखन मैं जसवंत बिलोकत ताकी प्रभा कों। लाऊँ कहो केहिं भाँति कन्हाई हवाल हवा लौं न जानत जाकों ॥ १०४२ ॥

अबही वृषभान को मान बढ्यो अनुमानहुं सों नहीं जाँचहुँगी। कढि लाडिली देति देखाई नहीं सेवकाई बिना किमि राचहुँगी ॥ वरसान है धीर धरो उरबा पुरवा को सरूप सवाचहुँगी। घनस्याम तुम्हे बिजुरी सों मिलाय मयूरिनि ह्वै करि नाचहुँगी ॥ १०४३ ॥

घेरिही लाई सखीन लै संग पै भूली मनो मृगुलीन में हंसी। ता दिन तो कछू घात चली न सु बातन वेनीप्रबीन प्रसंसी ॥ धीर धरो जू गँभीर वडे तुम हो जदुवंसिन में कोऊ अंसी। लागिये चाहत मीन सी चंचल रावरे की हों भई हरि वंसी ॥ १०४४ ॥

कर पाँयन की छवि जाकी लखें छवि जाति है कंज अदागन तें। कहि जाति कछू न कलाधर तें मुख पै दुति दूनी सुहागन तें ॥ हंसि मोहै हियो हनुमान लला सुठि सोहै भरी अनुरागन तें। कलना बिधि की सवियां हैं मनो ललना तुम कों मिली भागन तें ॥ १०४५ ॥

आँखिन की पुतरी करे राखति माय चहो अति लाज लपेटी। वैस नवेली है वेनीप्रवीन न आजु लों मैं कहूं पौरि पै भेटी ॥ पैज करूंगी तिहारे लिये सुनो नौलकिसोर हों रावरी चेटी। है कुल की वडे भूप अनूप वडे तें वडे वृषभान की वेटी ॥ १०४६ ॥

चार वडे औ वडी अँखियाँ मुख चंद अमी मुसक्यान सों भारो। पीन उरोज सरोज से पाँय

हैं पातरो लंक नितंब घनारो॥ गोकुलनाथ
बिलोकि हठे मिलिबे कों सुनो यह काम हमारो
जाति हों मे समुझाय कहोंगी न आय है तौ
कछू मेरो न चारो॥ १०४७॥

ऐंठी सि जाति तू रूप गरूर में मूर में हानि
तो है नहीं तेरे। बेऊ हैं सुंदर साँवरे लाल रहैं
व्रजबाल चहुं दिसि घेरे॥ बेनी सबे बनि आवति
या समे तो मन आवति है यह मेरे। दूनी बढेगी
दुदा की सों दीपति देह में नेसुकही हरि हेरे॥१०४

को कहि बाल गुपालहि बोधहि तो दृग बान
अमान लगे री। तो हित प्यारी भये बदनाम अराम
बिसार दिये घर के री॥ ठाकुर तूं न तऊ पिघली
इतने पर लालन वार घनेरी। प्रीतम की सु भई
गतिया छतिया कस कीन कसाइन तेरी॥१०४९॥

मार मरोर सी डारी खरी तेंहिं क्यों लगि क्यों
न जियावत आनि हौ। वाको तो ज्यों तुमहीं तें
बँध्यो तुम पै नहीं छोडत आपनी बानि हौ॥
मे तो कहोई चहों समुझाय कहा करिहौ जो कहें
धो मानि हौ। जानो कहा तुम पीर अहीर बड़े
घनी चतुराई की खानि हौ॥ १०५०॥

सेज परी है घरी सी भरे तनताप सों जात छुवो न दई है। डोलति बोलति है न कछू दृग खोलिबे की सुधि भूलि गई है॥ गोकुल जाति घुरी अँसुवानि सों लीक लिखी सी बिलोकि लई है। बाल की लाल दसा सुनिये वह वारि विहीन की मीन भई है॥ १०५१॥

अजू दीजे न क्यों रति दान उन्हें तुम दानी सुने बहु दातन मैं। वह मानैगी क्यों रजनी-समुखी करो बीस बहाने जो बातनि मैं॥ बिन देखे दिनेस तुम्हें हरि वाके वढी बिरहानल गातनि में। भई आतप रेत की मीन मनो दिन नै पुरैनि के पातन मै॥ १०५२॥

प्रथमै बिकसे बन बैरी बसंत के बातन तें रझाई हुती। द्विजदेव जू ताहू पैं देह सबै बिर-हानल ज्वाल जराई हुती॥ यह सांवरे रावरे हन सों अँग प्यारीन जो सरसाई हुती। तोपै पि सिखासी नई दुलही अबलौं कब कौन झाई हुती॥ १०५३॥

दूबरो होबो सो दोस महा जग मै परसिद्ध ो बात रची है। मोहि तो जानि परै है महा-

गुन मानो हिये यह जानो सची है ॥ रावे
बिछुरे रघुनाथ वढे विरहा सों जो देह पची
हेरेन पावति घेरे हैं आज लौं काल के हाथ
वाल वची है ॥ १०५४ ॥

काहे कों काहू कों आपने स्याम सनेह
ज्वालन मैं जरिवे है। पै यह प्रेम को पंथ अ
परें पन्यो मीच विना मरिवे है ॥ सो भजू मोह
मोहन मोहनी मोहि है कान्ह कहा करिवे है
केहूं कृपा के कटाच्छन सों विरहातुर ताकी व्य
हरिवे है ॥ १०५५ ॥

आए कहा कहि कै कहिये वृषभानलली
लला दृग जोरत। ताछिन तें अंसुवान के धारनि
तोरत जद्यपि लोक निहोरत ॥ वेगि चलौ रस
खान वलाय ल्यों क्यों अभिमान तें भौंह मरो
रत। प्यारे पुरंदर होहि न प्यारी अवे पल आधिक
में व्रज वोरत ॥ १०५६ ॥

प्रानप्रिया अँसुवान के नीर पनारे भए वहि
भए नारे। नारे भए ते भई नदियाँ नदियाँ नद
काटि करारे ॥ वेगि चलौ जू चलौ व्रज
नँदनंदन चाहत चेत हमारे। वे नद चाहत

सिंधु भए अब सिंधु तें ह्वैहैं जलाहल सारे ॥१०५७॥

आपुन के बिछुरे मनमोहन बीती अबै घरी एक की ह्वैहै । ऐसी दसा इतने में भई रघुनाथ सुने भय तें मन भ्वैहै ॥ लाडिली के अँसुवानि को सागर बाढत जात मनो नभ छ्वैहै । बात कहा कहिये ब्रज की अब बूडोई ह्वैहै कि बूडत ह्वैहै ॥ १०५८ ॥

मेघ जहाँ तहाँ दामिनी है अरु दीप जहाँ तहाँ जोति है भातें । केस जहाँ तहाँ मांग सुबेस है है गिरि गेरु तहाँ रँग रातें ॥ मोहन सों मिलिबे कों बलाय ल्यों मैं रघुनाथ कहों हठ यातें । होत नयो नहीं आयो चल्यो रँग साँवरे गोरे को संग सदाँ तें ॥ १०५९ ॥

वे उत नागर नंदकुमार औ तूहूं इतै वृष-भानलली है । जोरी बनी है दुहूं की अपूरब पूरब पुन्य की वेलि फली है ॥ जोवत हैं कब के मग ठाढे अकेले जहाँ वह कुंज थली है । वेगि [illegible] जात [illegible] नात कहा यह जाति जोन्हाई की ॥ १०६० ॥

[illegible] सुगेह तिहारे परे जहाँ नेह

सनेह खरे मैं। भेटो भुजा भरि मेटो व्यथानि समेटो जु तो सुभ साध भरे मैं।! संभु ज्यों आधेही अंग लगाओ बसाओ कि श्रीपति ज्यों हियरे मैं। दास भरी रस केलि सकेलि ये आनँद बेलि सी मेलि गरे मैं ॥ १०६१ ॥

लेहु लली उठि लाई हौं लालन लोक की लाजहुँ सों लरि राखो। फेरि इन्हें सपनेहूं न पैयत लै अपने उर मै धरि राखो ॥ देव लला नवला अवला यह चंद्रकला कठुला करि राखो। आठहूं सिद्ध नवो निधि लै घर बाहिर भीतरहू भरि राखो ॥ १०६२ ॥

ताही सों राखत प्यार बडे कछु रावरीयै चरचा जो चलावै। काँपति देहँ कटीली कै आवति कोऊ तिहारो जो नाम सुनावै ॥ रैन दिना हुलसी सी रहै ठकुराइन कों कछू और ना भावै। सोई कथा कहवावति जामैं कछू मजकूर तिहारोई आवै ॥ १०६३ ॥

तोहि धौं देखि गये कित ह्वै तब तें उन्ह कों कछू और ना भावत। मो घर आय लटू ह्वै लला ... बैठि के रँग बनावत ॥ चित्र विचित्र

वनाय हौं देति हौं पै उन के मन एको न भावत। हाथ दै लेखनी खाय हहा हरि तेरिही सूरत मो पैं लिखावत ॥ १०६४ ॥

मोहि लगो तुम प्यारे महा मैं तुमै रघुनाथ लखैं सुख पाऊँ। मेरे पैं कीजै कृपा कछू आज तो आप को मैंहूँ हितून मैं गाऊँ ॥ नांव सुन्यो जिहि को कहिये पहिले तिहिं को लिखि चित्र लै आऊँ। देखि कै रीझो तौ औसर पाय कै लाल तुम्हें वह वाल मिलाऊँ ॥ १०६५ ॥

हार सँवारि अनेक न फूल के आई लै मालिन भौन भरे मैं। काहू कों स्वेत दियो उहिं काहू कों पीरो दियो रघुनाथ अरे मैं ॥ नीरज नील को लै कर मैं कह्यो राधे सों यों चतुराई धरे मैं। लीजिये हेत तिहारे मैं ल्याई हौं या रंग को लगै प्यारो गरे मैं ॥ १०६६ ॥

केसरि सों पहिले उवट्यो अँग रंग लस्यो जिमि चंपकली है। फेर गुलाब के नीर न्हवाय पिन्हाई तो सारी सुगंध रली है ॥ नाइन या चतुराइन सों रघुनाथ करी वस गोपलली है। पारत पाटी कह्यो फेर यों व्रजराज सों आज मिलो तो भली है ॥१०६७

वे अंगरी के छुए सिसकै कर वार सी पातरी जो मैं चढाँऊँ। दंतन दावती जौमें उतै इत प्यारे के नैन रुखाई वचाँऊँ॥ देवकीनंदन मोहि वडो दुख कौतुक होय सो काह लखाऊँ। छोडि हौं गांव वचा कि सों मैं पर चूरीन ह्यां पहिरावन आँऊँ ॥ १०६८ ॥

कारे महा अनियारे अमोल हैं कौल जिन्हे लखि लागत फीके। वादिही वाके कहो तुम जाय हमारे तो राखनहार हैं जीके॥ आरसी लै तुम दोऊ एकंत ह्वै देखत क्यों न धों कौन के नीके ऐसे कहा वडे नैन तिहारे हैं जैसे वडे हैं हमा सखी के॥ १०६९ ॥

एक घरी न जुदी ह्वै सकै रघुनाथ घिरी गुए लोग के फंद सों। आई सो आपने गेह लिवाय तिहारे लिये वस कै वहु छंद सों ॥ वैठे कहा इत कीजै वलाय ल्यों वेगि उतै चलि भीजो अनंद सों। प्यारी को आनन पून्यो को चंद विराजत दोऊ प्रकास अमंद सों॥ १०७०॥

वैठी हुती वृखभानलली घर धाय के छाय रही तरुनाई। गोकुलनाथ अचानक आय गए

अंखियांन के आंनददाई ॥ चाहि रहे ललचाय दोऊ लखि बोलि उठी यों लए निठुराई । सूनो न छोडिके जाइयो धाम हों न्हाइ के आवत तेरी दोहाई ॥ १०७१ ॥

नैन के कोरन हू मे रुखाई सु भौंह मरोरनि कों लहिवो करे । पांय अंगूठन कों गुल चाइवो ऊंचे उरोजन मे सहिवो करे ॥ आइ के फेर हहा करि के कर पंकज सों तरवा गहिवो करे । कोटिन काम कथा जसवंत सुपांयं पलोटन मे कहिवो करे ॥ १०७२ ॥

तो गुन देव सुने जब तें तब तें सुधि यों न न उन्हें उर की है । पीर नहीं पहिचानत लोग बखानत वेद विथा जुर की है ॥ लोम चढी प्रति सोहन की मति मोह महागिरि तें दुरकी है । थोरिये वैस विथोरी भटू व्रज भोरी सी वातन तें भुरकी है ॥ १०७३ ॥

सोनजुही की है जाति है लाल बनाइ कै माल किती पहिराइये । मोती के भूखन भूखिये जे पोखराज के तो सिगरे कहि गाइये ॥ जोवन आवत लाली सरीर मे है रघुनाथ कहां लों

वताइये। खौरि लगाइये चंदन की अंग के सं
केसरि कों रंग पाइये ॥ १०७४ ॥

कातिकी पून्यो कों देखी कालिंदी पै पैन्हि
कों जब मैं पट दीन्हे। घूंघट के उघरे तब चा
प्रकास कलानिधि सो मुख कीन्हे ॥ ता दिन तें
कछु ऐसी दसा मग मे रघुनाथ मिलें मोहि
चीन्हे। नावं तिहारो लै सोंह दिवाय कहें फिरि
ल्याय अन्हवे के लीन्हे ॥ १०७५ ॥

धीरज नेकू धरो उर मैं करिहौं मैं सोई मिलिहैं
वह जातें। हौं तो सदां संगही मै रहौं कहि
देहौं वुझाय सबै कछु तातें ॥ सोय है सेज जवै
हरिचंद जू चांपिहौं पांयं लगाय कै घातें। आजु
हों राति कहानिन के मिसि भाखिहौं रावरे प्रेम
की वातें ॥ १०७६ ॥

आदित सोम कहो कवहूं कवहूं कहो मंगल औ बुध
हीते। औ गुरु सुक्र सनीचर को कहिवो कवहूं
मुख सों नहीं रीते ॥ मोहि न जानि परे रघुनाथ
हि भेट को है दिन कौन सो वीते। आवत जात मैं
हारि परी तुम्हें वार वतावत वासर वीते १०७७॥

तुम सों लै चली महकें मग मैं हटि वृंद्यां

सुगंध के कारन कों। सु कह्यो उर अंचल राधिका के लिये ज़ाति हौं धोय सुधारन कौं ॥ सेव- काने बिकाने सकाने सुने लपटाने लगे निरवारन कों। पट रावरे स्वेद के भीजे भजे हरि लै गे गुलाब उतारन कों ॥ १०७८ ॥

लाई हौं धोय मरूं कै तिहारी सों मोहि मनो तम छाइ गयो है। बाट तें घाट लों कालिंदी के भँवरान को पुंज समाइ गयो है ॥ हौं डरपों कँपों बेनीप्रबीन बिलोकत मो ढिग आइ गयो है। प्यारी दुकूलन को फल रावरे साँवरो एक बताइ गयो है ॥ १०७९ ॥

सिद्धिनि को धरि भेख गई ब्रपभान के भौन जहाँ सब गाती। काहू के हाथ दयो तुलसीदल काहू के माथ बिभूति लगाती ॥ पीतम राधिकै नीरें बुलाइ कै गोद में राखि करी निज घाती। गोसे कछू कहि बाँधि गई गर जंतर के मिस कान्ह की पाती ॥ १०८० ॥

लोचन लाल किये मृगछाल बिभूति बिसाल लसें जटा भूरे। पूछन लागी तपस्विनि जानि गहे पग आनि तिया गन रूरे ॥ बेनीप्रबीन जू

राधका सों कहो आवै कुटी में जु तूंग ऊपूरे। छैहै कलेस सवै तन के मन के चहे ह्वैहैं मनोरथ पूरे ॥ १०८१ ॥

मेरी है फेरी गली वरसाने में दूसरे द्यौस कों नेम गह्यो है। तातें हों चाहति जान उतै सुमलो यह औसर आजु लह्यो है ॥ ठाढे ह्वै नेकु सुनै मनमोहन वोझ हमै रघुनाथ रह्यो है। जावें कियो तन छाम चितै पल सो वहि वाम प्रना कह्यो है॥ १०८२ ॥

चोप्य तिहारी हों जानती हों रघुनाथ जु चित वीच सुनी जो। तातें हों देति मिला५ तुम्हें पर मेरी कही में सही मन दीजो ॥ वास परोस वडे विसवास को जातें कुनाँव कढे सो न कीजो। नारि नवेली है वातन सों वसकै पहिले उनको रस लीजो ॥ १०८३ ॥

न्योते गई जब तें नदगाँउँ सुनाउँ भयो सव कं रुचती हो। रूप सुसीलता वेनीप्रवीन सराहि मिली सव सों उचिती हो॥ मोहिनी सी तुम डारि परोसिनि आपुन मोहि रही सुचिती हो। आवति गेह विदेह भई मनो ऐसी कछू जू कहा दुचिती हो ॥१०८४॥

आई इतै मुसुक्याय चितै घर मेरो सुधा के समूह समोवति । रावरी बातें जो कोऊ कहै तौ लगाय टकी मुह वाही को जोवति ॥ देखी चहौ तौ रहौ कहूं वैठि सुजागत ही सिगरी निसि खोवति । रोस परोसिनी कै पिय सों दिन द्वैक तें संग हमारेई सोवति ॥ १०८५ ॥

रंभा सुकेसी की मैनका की रति की अति रूप धरी रही आगे । वेनीप्रवीन तिलोत्तमा की न रमा की विलोकि छला अनुरागे ॥ देखत राधिके तो तसवीरहि वीर की सों जनु सोवत जागे । वारहि बार निछावरि ह्वै हरि मेरे दोऊ कर चूमन लागे ॥ १०८६ ॥

पांइ झंवावति फूलन सों रची नासिका मैं सिसिकीन की वोजैं । सेवक भौंर झुके चहुं ओर चके चकऊ मुदी कंज की फौजैं ॥ राधिके सूरति रावरी की लिखि ल्याई स्वरंग भर
तोसों न
दई

चांसर चारु चमेली के फूल को मैं बहु भाँति सँवारि के आनो । सो पहिर्यो गुन गोरि धुरंधर कंचन से तन में मन मानो ॥ ह्वै गयो सोन-जुही को सो हार सुअंग के रंग में भेद ना जानो। दंतन की दुति के परते वह फेरि चमेलिये के ठहरानो ॥ १०९५ ॥

बेलि हरी भई फूलनि सों चुरे चारु चमेलिन की छवि वारी । बावरे खंजन कीर कपोत मयू मलीन ते पंख पसारी ॥ मालिनि की या बि गुनि के लछिराम करो किन आनंद भारी। सींच वारे सुनो घनस्याम सनेह भई मुरझाति है वारी ॥ १०९६ ॥

एड़िन मीडि पखारि दोऊ पग जावक रंग रंगे मनमाने । वेनीप्रवीन रचे सुचि केस सुगंध कपोलन लौं करआने॥ बावरी सी भई रीझि सखी लखि ऐसे कछू चतुरापन ठाने । मेरोई रूप धरो मनमोहन तेरी सों राधिके तूं नहीं जाने ॥ १०९७ ॥

गेल वहे उनहीं की चली वडी बेर लौं बात हीं विरमावत । तू धनि है धनि यों कहि

गहि के कर मेरे हिये मै लगावत ॥ मेरियै कांगही मोहि पै लै सिर मेरे ही केतिकौ ब्यौंत बतावत । आयो चहों जवही इतहों लव वेनी वनावन मोहि सिखावत ॥ १०९८ ॥

मोहन की छवि चातुरी चोप सु नायक री बस वेनी वनावति । गोकुलनाथ के अंग के रंग सों नील निचोल कह्यो पहिरावति ॥ लाल को भाल भरें तो भली रंग ऐसो कछू अंगुरीन पैं छावति। चोप चढी ठकुराइनि सों कही नाइनि पाइन जावक लावति ॥ १०९९ ॥

वारहू तें है मिहीं जसवन्त मिलावटहू पै परे छवि छूटी । मोहि है मोहन कों कर मै परिपूरन के करिहै रस लूटी ॥ ऐसिही लागि है नीकी बधू वलि जेहं सवै व्रज की ये वधूटी । जैसी सुहावन लागत हेरि हरी चुरियान मै हेम की चूटी ॥ ११०० ॥

तैसिही लाई हरे रंग की अंग की दुति पन्नन की जु हँसैहै । तैसिही ऊदी उदै ह्वै रही वंद बैंगनी मे कहौ कैसे लसै है ॥ वेनीप्रवीन जू तैसी सबै पहिरावत मे कहिं चैन रसै है ।

सम है दुति सुंदर रंग विसाल है ॥ पुंज प्रभा नख तें सिख लों मन लाय गुहे ओहिं वार रसाल है । पाय हों लाल वही परवाल कों जो मन भावति मंजुल माल है ॥ ११०८ ॥

चुनि जोरि वटोरि धरे सिगरे झिगरे किये भेद वतावती हैं । तुटि तंतु ए भूखन के इन सों वहु सेवक जीव जियावती हैं ॥ चिरुजीजियो राधे इतै उत वै पटहारी जहां सुख पावती हैं । तुव मैल के भीजे सनेह सने हरि कों दे घने धन छावती हैं ॥ ११०९ ॥

सखियां लडवावरी रावरी हैं तिनकी मति मै अति दौरती क्यों । छिन मे कहि वेनीप्रवीन मलीन के नाहक भौंह मरोरती क्यों ॥ हम जोरती वीर मरूं करिकै फिरि हार कहो झकझोरती क्यों । अति कोमल लाल अमोल अनूप लरी तुमरेसम तोरती क्यों ॥ १११० ॥

पाग है आई अनेक इहां मन मैलो करो कछु ना हम काँधें । साहज है नहीं वेनीप्रवीन लला यह रंग रसाइन नाधे ॥ सांझ समे वा रहे रफ की ता समये की सुखाइवो साधे । आतुर

हूजिये ना बलिजाँउं तिहारे लिये हरि बांधनू बांधे ॥ १११९ ॥

देखे अदेखिन के दिल कों तिलवेर विना घरियारी करौं । मुख सेवक लाली बढे तुमरे रुचवाइनि के करिगारी करौं ॥ कहूं और कहूं रंग औरे करै इतनी बल की बरियारी करौं । रुख रावरे को लखि पाऊं कहूं चुनरी मे चुनी हरिआरी करौं ॥ १११२ ॥

मो सों कही ही कृपा करि कै यह सूही बनाय कै ल्याइये प्यारी । आइ गए कित सों कहि कौन की मै सहजेहीं दई कहि थारी ॥ गोकुलनाथ न मानी कही रंग नील सों आपने हाथ संवारी। बिज्जु से आँग पै रीझि करैगी अरी घन की घटा सी यह सारी ॥ १११३ ॥

कारीगरी मै करी बहुतै नजरी गई तौ कछुवै न भलाई । जानत हौ तुम मोहनलाल सुनारि अनारिनि क्यों ठहराई ॥ रीझि की बेनीप्रवीन भई मन खीझ की बात गई न कन्हाई । लाइये हीरा अमोलिकलाल अबै पहुंची तुरतै बनिआई ॥ १११४ ॥

कंठ लगी हरि के तुम यौं कहि मे जब कंठ-सिरी पहिराई। देहँ कंपी सिगरी तबही अरु है जरदी मुख ऊपर आई॥ नीके मे ह्वै गयो आनि कहा धौं यहे सबही के भई दुचिताई। नोक गड़ी कहुं मैं हूं यहे कहि प्यारी तिहारी की बात छिपाई॥ १११५॥

जाइ कहे न हमारी दसा, कबहूं तो अरी करि दे मन भायो। यौं कहि प्यारे पठाई उतै अरु ब्यौंत कछू गहने को बतायो॥ कान तन्योंना लगी पहिरावन त्यौं ढिग जंबे को औंसरु पायो। हांसी की बात कछू कहि नारि सुनारि सनेसो पिया को सुनायो॥ १११६॥

दारि गली है भली विधि सों बहु चाउरहै गो सुगंध भरो जू। देखि बराबरी रीझि रहोगे सुपापरि पूरी करी न डरो जू॥ है तरकारी सवाद भरी बनि गोरस सेवक भूख हरो जू। सौंधी सलोनी सुधासी रसीली सुकंत एकंत मे भोग करो जू॥ १११७॥

बेसनी गवरे सुद्ध सनेह की पूरी पकाय बनाय ...ां। रीझ रहोगे बराबरी देखि भली ...

वारी तुमै परसाइहों ॥ धीर धरो न उतावले होउ सुमेरहरी मै नहीं कनखाइहों । चाहत जोई रसोई मै सोई रसोइन मै रस राखि चखाइहों ॥ १११८ ॥

पातरी बात नहीं दुनियाँ की सनेहनि दीप दसा सी जरावति । खीलनहीं से चुभे उरबैन रंगीलन की सुनते बनि आवति ॥ सेवक स्याम सों राधिके तूं सिकवौ सुनि ऊतर क्यों न बतावति । बावरे बावरी मोहि कहैं की मसाल कों काहे मसाल दिखावति ॥ १११९ ॥

जानती हौं कि अवार भई तम पुंज को कुंज मै फैल्यो प्रभाऊ । रावरे कारजही मै रही द्विज आई बनाय कै जाय अगाऊ ॥ भूखित है पर भाँति अनेक सनेह मई तुम कों दरसाऊ । धीरज नेंक गहो जो लला तो अबै वह बाल मसाल मै लाऊ ॥ ११२० ॥

देखिये सूधे चुनौतिय मे सुभ रास्यो है मै केहिं भाँति सँवारे । चारु सुगंध की खानि कथ कहिये रघुनाथ महा गुन धारे ॥ चाहत जैसिये तैसिये लाइहों स्वच्छ सुप्यारी जु हेत तिहारे

कीजिये लाल कृपा इतहीं नित लीजिये आय के पान हमारे ॥ ११२१ ॥

केसी कहो मुख मे लगी माधुरी एला लवंग सुवास वसी हे । कोने रची रची वेनीप्रवीन यों मोहि वतावत होत हँसी हें ॥ जानि न लीजे सुजान वडी गरें केसी कुसुंभित पीक धँसी हे आजु की वीरी वलाय ल्यों वार लखो अधरान मे केसी वसी हे ॥ ११२२ ॥

नैन वचाइ चवाइन के छन रेन मे ह्वे निकसो यह टोली । लोटि मिलेंगे जवे घर के नहिं भूलिहे सेवक भाँवरी भोली ॥ देखि तुम्हे छतिया फरकी त्यों तनो तरकी दरकी कछु चोली । आपने पी की नुहारि निहारि विचारि के तो सों मरूं करि वेली ॥ ११२३ ॥

माय गई उपनंद के भौन न धाय इहाँ सजनी अपने घर । लेसे को दीप दिनेस न दूसरो सूनो निहारि महा मन मे डर ॥ द्वार मे अंध पर्यो दरवान सुने नहीं कान मन्यो जनु भूपर । आइ इतो न पुकारिये कान्ह हे आन इहाँ कोउ देन को उतर ॥ ११२४ ॥

हार हिये प्रफुल्ल को लसे बनी बेंदी दिये सन की सुकुमारी । पीन पयोधर पातरी लंक करे बडडी अँखियाँ कजरारी ॥ गोकुलनाथ बिलोकि कह्यो अजू राखती हौ कहा ध्यान की क्यारी । बाल कही मुसकाय घनी घन की घटा सी यह ज्वारी हमारी ॥ ११२५ ॥

ता दिन तें कछू और सोहात न ऐसे लट्टू ह्वै रहे मनभावन । बूझो करैं नित तेरियै बातें न देत कहूँ कबहूँ इत आवन ॥ मो तन दीठि कियें रिसि की तूँ लगी सिसकीन के सोर मचावन । कान्ह कहूँ दुरे देखत हे हौं लगी जब तोहि चुरी पहिरावन ॥ ११२६ ॥

जाके मिलाप को सोचत हौ करि मोचत हौ जू अनेक उपावन । ताही के धाम सों हे रघुनाथ हमें एक आई है बाम बुलावन ॥ भेष धरो तिय को हिय साध जो चाहत रूप लख्यो ललचावन । साथ चलो वहि बाल के लाल हौं कालिह चलौंगी चुरी पहिरावन ॥ ११२७ ॥

मे जब तें गोदना गई गोदि अहो ठकुराइन बाँह मे तेरी । ऐसी दसा तब तें यहि गाँव मे

देन न पाँवों गलीन मे फेरी ॥ भेट भई जितहीं रघुनाथ सों सोंह दै के तितहीं उन घेरी । हाथ सों हाथ गहैं पल द्वै रहैं आँखि सों लाय के आँगुरी मेरी ॥ ११२८ ॥

जैसो कछू उन को है सरूप सो तैसो कछू तबहीं जू पतीजो । सूने कहेतें नहोत कहा तब हीं कछू भावै तौ रीझि कै दीजो ॥ आज ही मोहि मिले रघुनाथ कह्यो है कि रंग तयार तूँ कीजो । तातें रँगावन आवेंगे पाग तूँ झाकि झरोखें उन्हें लखि लीजो ॥ ११२९ ॥

जैसेंहीं पोहि धरे ठकुराइन मोती के ये गजरा चटकीले । तैसेंहीं आय गये रघुनाथ कह्यो हँसि कौन के हैं ये फबीले ॥ नावँ तिहारो दियो कहि मैं तौ उठाय लिये सुख पाय कै ढीले । आँखि सों लाय रहे पल एक रहे पल छाती सों छा छबीले ॥ ११३० ॥

कान्ह हीं चेरी बनाय कै संभु गई वृषभान के भौन गोसाइन । या सुनि कै जुरि आईं सबै अरु डारीं सहेलिन राधिका पाँइन ॥ लाय लिलार बिभूति कही क्षमि हाँ रचिबे कछु ऐसी

उपाइन । याहि इकंत लै मंत्र जपै यह होय सबै व्रज की ठकुराइन ॥ ११३१ ॥

आवतहीं उठि आदर कै सिगरीं मिलीं दौरि की सिद्धिनि आई । काहू के गात मे हाथ दियो पढि काहू के माथ विभूति लगाई । बैठि गई मृग-छाला बिछाय के राधिकै आपने पास बुलाई । श्रौन समीप ह्वै गोद मै राखि गोसाँइन गोसे की बात सुनाई ॥ ११३२ ॥

देती हौं धोइबे कों तबहीं फिरि माँगती हौं करि भौंहँ तनैनी । ह्याँ तौ वे बीचहीं लेहिं छुडाय सुगंधन रीझि रहैं मृगनैनी ॥ धोय तौ देहुँ जो धोवन पाऊँ लखी उनकी मै बिलोकनि पैनी । राखत लै लै लगाय हियें कबहूँ अँगिया कबहूँ उपरैनी ॥ ११३३ ॥

मइलो करि डारत पीट पटै घर जान ना पैये बुलावनो धावत । लाल हू मैलो है जात सदा भरी बारही बार सनेह लगावत ॥ औरन सों चरु ठीजे धोवाय हमैं नृपसंभु जू धोय ना आवत । ई कलपावति साँवरे रंगन साँवरो रंग नहीं कलपावत ॥ ११३४ ॥

आज हौं राखौंगी स्याय उन्हें रघुनाथ कृपा निसि मेरे करोगे । मे उठि जाउँगी छोडि के पास जगाय के सेज पें पाँय धरोगे ॥ धायहां देति सुभाय कहे कछू भौंह चढाय लखें न डरोगे । लाज भरी हे सकेगी न वोलि निसंक नवेली कों अंक भरोगे ॥ ११३५ ॥

एकही सेज पे राधिका माधवे धाइ ले सोई सुभाय सलोने । पारे महा कवि कान्ह कों मध्य में प्यारी कह्यो यह वात न होने ॥ क्हैहों न सॉवरी सॉवरे के संग वावरी तोहि सिखाई कोने । सोने को रंग कसौटी लगे पे कसौटी को रंग लगे नहिं सोने ॥ ११३६ ॥

आई हे साँझी कों तोरन फूल तोरावति ठाढी सखी छवि रास तें । वेगि उतै चलि देखो वलाय ल्यौं हें रघुनाथ लग्यो मन जास तें ॥ भौंरन की लगि भीर रही अरु भीर चकोरन की जिहिं आस तें । भीतर वाग के सोभित होति हे मालती तें प्यारी प्रकास तें ॥ ११३७ ॥

फैलो सुगंध रहे चहुँघाँ अलि पुंज घिरी मा माल जुही सी । फूल भरी अंग पूरो पराग

रस रूप की चारु फुही सी ॥ गोकुल ऐसी करी है तयार मै के चतुरापन चाव छुही सी। देखिये तो चलि बाग मे लालन कैसी लसै यह सोनजुही सी ॥ ११३८॥

आधिक सिद्धि करीही किए ते मे आय गये धौं कहाँ तें कन्हाई। कौन की आंगी है मो तें कही मैं उन्है सहजें हीं तिहारी बताई ॥ छीन लई कर तें रघुनाथ मै सोर कियो कितनी अनखाई। छाती सों लाय वे ले गये वा दिन दे गये आजु तौं सीके लै आई॥ ११३९॥

आपु दई तनी टाँकिवे कों हरि भोरहीं आये धौं कहाँ तें। कौन की आंगी है मोतें कही सुनि रावरे की हठि लीन्ही हहा तें॥ गोकुल लि पसीजि उठे बडी बार लौं लाल रहे हियलें। भीजि गईही सुखावत मोहि अवार भई कुराइनि यातें ॥ ११४०॥

आजु कहूँ खिरकी सों सुनो हरि की मुख जोति लीन मे बाढी। गोकुलनाथ त्रिलोकि लई छवि। दिन तें विरहागिन डाढी॥ दासी विचारि के विरे की यह मोसों विनै की परंपरा काढी।

वाही झरोखे के पास कृपा करि के कबहूँ फिर होंहिंगी ठाढी ॥ ११४१ ॥

इत फूलन को विनिबो ठहराय लेवाय ले दूती मिलाय दई । नँदलाल निहारि निहाल भये वर चंपक माल सी वाल नई ॥ कर तें छुटि भागी दुरी पग द्वै वलि पै न चली कछु चातुरई हरि हेरे न पावत भाँवती संभु कुसुंभ के खे हेराय गई ॥ ११४२ ॥

राधिका के परवाल से हाथन लाल रही घिरा लाल लुनाई । देखतहीं वनि आवत कान्ह कहा करिये कवि संभु वडाई ॥ लाली लसै अंगुरीन के वीच तहाँ नख चंदन की छवि छाई । कोपन की अरुनाई मे आनि मिली मनो वीचिन वीच जुन्हाई ॥ ११४३ ॥

वायु वहारि वहार रहे छिति वीथी सुगंधन जाती सिंचाई । त्यों मधु माते मलिंद सवे जय के करखान रहे कछु गाई ॥ मंगल पाठ पढें द्विज देव सवे विधि सों सुखमा उपजाई । साजि रहे सव साज घने वन मे रितुराज की जानि अवाई ॥ ११४४ ॥

जानतही न वसंत को आगम बैठीही ध्यान धरें निज पीको । एते मे कानन ओर सों आय के कानन मे पन्यो बोल पिकी को ॥ हे रघुनाथ कहा कहिये कहि आयो हा आयो गरो भरि ती को । लोचन वारिज सों अँसुवा को अथाह वह्यो पर-वाह नदी को ॥ ११४५ ॥

केसे हैं कुंज के सुंदर फूल विराजत पात जराव जन्यो सो । यामे तो आवत पावत हो पति की तिकेलि को रंग धन्यो सो ॥ आयो वसंत बयारि हे अब तो यह देखिये गो उमन्यो सो । सोचत ॥ पुनि पात गिन्यो मुख है गयो प्यारी को पात न्यो सो ॥ ११४६ ॥

कहुँ चैत की चाँदनी मे सतभामा के स्याम धारे निहोरन मे । गई आधिक जामिनी वीत ऊ तईमानी न मान मरोरन मे ॥ कवि सोभ जू नन नीर वहे कहे बैन मनोरस चोरन में । वधों वन घोरि हैं ए मुरली वरसाने की साँकरी रिन मे ॥ ११४७ ॥

मिलि माधवी आदिक फूल के व्याज विनोद या बरसायो करें । रचि नाच लता गन तानि

वितान सवै विधि चित्त चुरायो करें ॥ द्विजदेव जू देखि अनोखी प्रभा अलि चारन कीरति गायो करें। चिरजीवो वसन्त सदा द्विजदेव प्रसूननकी झरि लायो करें ॥ ११४८ ॥

फूले घने घने कुंजन माहँ नए छवि पुंज वे वीज वए हैं । त्यों तरु जूहन मे द्विजदेव प्रसूनन एई नए उनए हैं ॥ साँचो किधौं सपनो करतार विचारत हू नहीं ठीक ठए हैं। संग नए त्यों समाज नए सव साज नए रितुराज नए हैं ॥ ११४९ ॥

सोंधे समीरन को सरदार मलिंदन की मनसा फल दायक। किंसुक जालन को कलपद्रुम मानिनी वालन को मनायक ॥ कंत अनंत अनंत कलीन को दीन के मन को सुख दायक । साँचो मनोभवराज को साज सु आवत आज इतै रितुनायक ॥११५०॥

फूलि रहे वन वाग सवै लखि फूलनि फूलि गयो मन मेरो । फूलनिही को विछावनो के गहनो किय़ो फूलनिही को घनेरो ॥ लाल पलास नए चहुँओर तें मैन प्रताप कियो घन घेरो । यों फूलैं फैलाय फैलाय कियो रितुराज ने मान डेरो ॥ ११५१ ॥

सुंदर सोहे सुगंधित अंग अभंग अनंग कला
ललिता है । तैसी किसोर सुहात सुजोगिनी
भोगिनीहू कों मनोहरता है ॥ संग अली अवली
छवि राजत अंग रसीली बसीकरता है । कोम-
लता जुत वीर बसन्त की वेहर की वनिता की
लता है ॥ ११५२ ॥

सेवती सोनजुही थल पुंज पैं कंजकली अलि
गुंज सी माँचे । बैठी कहा भृकुटीन कों ऐंठि कै
जोर सुन्यो रितुराज को साँचे ॥ फूलन फौज
भ्रमार धुकार हकारत कोकिल कीर कुलाँचे ।
नाँचैं न वीर मवासे कहूँ अब नाचे बनैगी वसन्त
की पाँचे ॥ ११५३ ॥

फूले अनारनि पाँडर डारनि देखत देव महा
र माँचे । पाखुरी झौंरनि आम के बौरनि भौंरन
गन मंत्र से बाँचे ॥ लाय उठे विरहागिनी
कि कचनारन बीच अचानक आँचे । साँचे
पुकार पुकारि पिकी कहें नाचे बनैगी वसन्त की
पाँचे ॥ ११५४ ॥

फूले रसाल की डारनि बैठि अली कुल झूमि
झुकै मेडरात हैं । वेनी जू कोकिल कूक कपोतन

ए उलहे लतिकान मे पात हैं ॥ सीतल मंद सुगंध समीरऊ पी मधु चंद अनंद मे गात हैं। याम हिमन्त वसन्त के ए गुन मान किला लल ते छुटि जात हैं ॥ ११५५ ॥

देखतही वन फूले पलास विलोकतहीं कलु भौंर की भीरन । वावरी सी मति मेरी भई लखि वावरी कंज खिले घटे नीरन ॥ भाजि गयो कौ ग्यान हिये तें न जानि पऱ्यो कव छोडि के धीर अंधन कौन के लोचन होंहिं पराग सने सरस समीरन ॥ ११५६ ॥

अति लाल गुलाल दुकूल ते फूल अली कुन्तल राजत है । मुकता के कदंव सु अंव क मोर सुने सुर कोकिल लाजत है ॥ मखतूल समान के गुंज छरान मे किंसुक की छवि छाजत है। यह आवन प्यारी जु की रसखान वसंत सी आज विराजत है ॥ ११५७ ॥

वारन भौंर कुमार भजैं पुहुपावली हास विलासहि पूजत। पाठ कियो करें आठहू जाम बोलनि सीखन कोकिल कूजत ॥ वे घनआनँ न छए तकि यों छवि आन क्यों आँखि

छूजत । एरी बसन्त नवावत कंत सु जानि कै मान मई कत हूजत ॥ ११५८ ॥

सेवती गंध छके अलि गुंजत कुंजन मे रस पुंज भरेगो । फूलि उठे जक नाहीं परे, कल कोकिल को गन कूक करेगो ॥ कोऊ न वीर सहे तन पीर मनोज के तीर सों धीर धरेगो । तोहि बसन्त हसन्त भटू उठि अंतहू कंत बिनान सरेगो ॥ ११५९ ॥

बन्दनवार बंधे सब के सब फूल की माल न छाजि रहे हैं । मैनका गाइ रहीं सब के सुर संकुल ह्वै सब राजि रहे हैं ॥ फूल सबै बरसें द्विज-देव सबै सुख साज को साजि रहे हैं । यों रितु-राज के आगम मे अमरावती को तरु लाजि रहे हैं ॥ ११६० ॥

नागर से हैं खडे तरु कोऊ लिये कर पल्लव में फल फूलन । पावडे साजि [illegible] ऊ कोऊ बीथिनि बीच पराग [illegible] द्विज-देव को [illegible] फूलन ।

[illegible]

डोलि रहे विकसे तरु एके सु एके रहे हैं नवाइ के सीसहिं। त्यों द्विजदेव मरन्द के व्याज सो एके अनन्द के आसू वरीसहिं ॥ कौन कहै उपमा तिनकी जे लहैई सबै विधि सम्पति दीसहिं। तैसई ह्वै अनुराग भरे कर पल्लव जोरि के एके असीसहिं ॥ ११६२ ॥

गूंजैंगे भौंर पराग भरे पर गूंजैंगी कोकिल वेसुर गाय के। फूलैंगे केसू कुसुंभ जहाँ लगि दौरैगो काम कमान चढाय कै। पौन वहैंगी सुगंध समारख लागैगी हीमै सलाक सी आय के। मेरो मनायो न मानैगी भाँवती ऐहै वसन्त लै जैहै मनाय के ॥ ११६३ ॥

आयो वसन्त तमालन तें नव पल्लव की इमि जोति जगी है। फूलि पलास रहे जितहीं तित पाटल रातेहि रंग रँगी है ॥ मौरि के आँमन सार मई तिहिं ऊपर कोकिल आनि लगी है। भागन भाग वचो विरही जन वागन वागन आगि लगी है ॥ ११६४ ॥

आम के मोर धरे तुररा रितु किंसुक की अल फीन सुहायो। धूम परागन की कफनी अलवेलिन

सोलिन सों छवि छायो ॥ कंज सखा करि किस्ति लिये अरु कोकिलैं कूक अवाज़ सुनायो । प्रान की भीख वियोगिनि पैं रितुराज फकीर ह्वै माँगन आयो ॥ ११६५ ॥

आयो वसन्त दहन्त सखी घर आए न नाह न पाए सँदेसे । कोकिल कूकि उठी चहुं ओर तें हूकि उठी हिय लूक सो लेसे ॥ याही तें जीय डरै मधुसूदन जाति नहीं वन वाही अँदेसे । फूलि पलास रहे जितहीं तित लोहू भरे नख नाहर कैसे ॥ ११६६ ॥

कछु और उपाव करें जनि री इतने दुख सों सुख है मरिवो । फिरि अंतक सो विन कंत वसंत सु आवत जीवतही जरिवो ॥ वन बौरत बौरी हो जाउँगी देव सुने धुनि कोकिल की डरिवो । जब डोलिहैं औरे अबीर भरी सु हहा कहि वीर कहा करिवो ॥ ११६७ ॥

फूले गुलाव कियारिन कोरन लोनी लवंग लता उरझाई । वैसे चकोर चहूँ दिसि कोकिल भौंर समूहन गुंज सुनाई ॥ वंदनवार वँधे तरु पुंजन कुंजन फूलन सेज सोहाई । आनँद आन भई सब

के सुनि कै रितुराज की आज अवाई ॥११६८॥

डोलैं सुगंधित वाय चहूँ वन ये तरु पुंज कुसुम विछावत। वैसे विहंग उमंग भरे जयपत्र पिका वलि कूकि जतावत ॥ हे सरदार मनोभव फौ को साज नये छितिपाल सजावत। वौर रसाल को मौरधरे यह ठाट ठटे रितु ठाकुर आवत ॥११६९॥

कोकिल वोलि उठी एक वारही भौंर समूह लगे मिलि गावन। धीर समीर सुगंध सं विकसीं लतिका उर मोद वढावन ॥ कीर चकोर सोर करो छितिपाल अनंग दसा दरसावन कंज रसाल विसाल खिले सुनि कै हुलसे रि राज को आवन ॥ ११७० ॥

मन्द दुचन्द भए वुध वैनहिं भाखि सकै कविहूँ कवितानन। आइ लजाइ चलेई गए गुरु आपनो सो लिए आपनो आनन ॥ कौन प्रभा करतार वखानिहै मंगल खानि विलोकि कै कानन। सीस हजार हजार करैं पै न पार लहैंगे हजार जु आनन ॥ ११७१ ॥

अति फूले विसाल रसाल घने तक डार आगि लगी। अलि गुंजें उमंग भरे र

ाते लता चहुँघा बिगसाइ जगी ॥ अरविंदन
ं मकरंद चुवै छितिपाल अनंग अनी उमगीं ।
अनुसासन पाइ महीपति को मधु लै व्रजमंडल
ान ठगी ॥ ११७२ ॥

सीतल मंद सुगंध सदाँ सरदार सशहन जोग
नवीनौं । चैत निसा चित चेतन चंद चढो चख
चारु चकोर नवीनों ॥ ठान सयान नहीं सजनी यह
ान अयान पनों रँग हीनों । बैठि कहा पछितात
ारी जब खेत चिरैयन नैं चुनि लीनो ॥११७३॥

चीर चुनो चुरियाँ चटकील चलैं चुप चातुर चाल
ाकें । ऊँचे उरोजन पै अँगिया सरदार हिया
छिया चमकाकें ॥ हार निवारि निवारन काज
साज सबै सुखमा सरसाकें । पूजन आज कहै
न गौरि को नंद की पौरि घरी घरी आकें॥११७४॥

संग सखी के गई अलबेली महासुख सों
न बाग बिहारन । वाढे बियोग बिलास गए सब
खत ही वे पलास की डारन ॥ जानि वसंत औ
त बिदेस सखी लगी बावरी सी कै पुकारन ।
ं चलिहे चुरियाँ चलि आवरी आँगुरियाँ जन
व अँगारन ॥ ११७५ ॥

किंसुक झार कुसुमित डारि दे झार बयार बहै जो गवारन। आग लगी है कहू बिन काज न मेहूँ सुनी समुझी रितुराजन ॥ तेरी सों तोहि डरों मै मवारक सीरी करों सखी दे जलधारन। च्वे चलिहै चुरियाँ चलि आवरी आँगुरियाँ जन लाव अँगारन ॥ ११७६ ॥

आयो वसंत अली वन तें अलि के गन डोल डंक पगारन। कामधुजा किसले उमगी व कोकिल के गन लागे पुकारन ॥ ऐसे मे के बचेगी ममारक आज किये हैं सती के सिंगार दौरि पलास की डार चिंता चढी झूमि पड़े निर धूम अँगारन ॥ ११७७ ॥

भावे भरी रस आवे छकी सु छकावे री नैन सो नैन हिलावे। गावे हिंडोल बजावे मृदंग हँसावे हँसै सुर ताल मिलावे ॥ छावे गुला रचावहि रंग सखी सुख वीच सुगंधनि लावे रीझ रिझावे अनंग जगावे बिहारी को प्या वसंत खिलावे ॥ ११७८ ॥

गुंजत भृंगनि कुंज के पुंज सरोजन सौं की सरसाई। गंगहि प्रानपती को पयान

केहि भाँति वियोग दसाई ॥ बोलत कोकिल बाद बसंत बसंत के बासर सो न बसाई। चैत की चाँदनी के चितये कहु कैसे के छोडेगो काम कसाई ॥ ११७९ ॥

बीतन लागे बसंत के बासर औध की आस अजौं अभिलाखो। मंडन ए इतने सगराम पियारे की सीखन तीखन नाखो ॥ छीन भई तन भौं तन अंतर दाह निरंतर को न सभाखों। दाहन भार अंगार की आगि रुई मे लपेट कहाँ लग राखों ॥ ११८० ॥

फूले घने तरु जाल बिलोकि हुते कछु सूने सुभाय ससेरी। आगि सी लागी पलासन देखि तऊ भय सों कहूं भागि बचेरी ॥ छूटे सचान से ये अब तो द्विजदेव चहूंदिसि कोकिल बैरी ॥ कै है कहा सजनी अब धौं बचिहै किहि भांति सों प्रान पखेरी ॥ ११८१ ॥

आहि के कांपि कराहि उठी दृग आसुन मोचि सकोचि घरी है। लै कर कागद कोरी लला लिखिबे कहं बैठी वियोग कथा स्वै ॥ ऐसे में आनि कहूं द्विजदेव बसंत बयारि कढी तितही

ह्वै। बात की बात में बौरी तिया अरु पीत ह्वै पाती परी कर तें चुवै ॥ ११८२ ॥

बौरे रसालन की चढि डारन कूकति कोलिय मौन गहैं ना। ठाकुर कुजन पुंजन गुंजत भौंर को चे चुपैवो चहै ना ॥ सीतल मंद सुगंधि.. वीर समीर लगे तन धीर रहै ना। व्याकुल कीन्हो बसंत बनायकै जायकै कंत सों कोऊ कहै ना ॥ ११८३ ॥

आयो बसंत दहंत सखी घर आये न कंत न पाये सँदेसन। संभु कहै पथिकाये सबै अब कोऊ विदेसी रहै न विदेसन ॥ चंदमुखी दृग तें अंसुवा ढुरि आनि परे कुच याही अंदेसन। मानो मयंक सरोजन तें मुकताहल लै लै चढावे महे- सन ॥ ११८४ ॥

ज्यों त्यों रह्यो अब लौं जियतूं अब आयो वसंत कछू न बसैहै। संभु सुगंधित सीतल मंद समीरनि पीर गंभीर उठैहै ॥ क्यों ठहरैगो करंगो कहा जब कोकिला कूकि कै कूकि कूक सुनैहै। औरन तेरो फबैगो कछू बलि संग कुहूके तुहूं जैहै ॥ ११८५ ॥

बैरी वसंतके आवत हीं वनबीच दवागिन सीप जरेंगी । जोगिन सी वनिहै वनमाल वियोगिन कैसे के धीर धरेंगी ॥ गुंजन वै अलि पुंजन की सुनि कुंजन कैलिया कूक करेंगी । सूल से फूले पलासन की डरियाँ डरपावनी दीठि परेंगी ॥ ११८६ ॥

आली सुनो वनमाली वियोग पलास के पुंजन को सुख भागो । पात सुखाय गिरे महि आनि लतान मे स्यामता को रँग रागो ॥ धीर धरे ठहरात न माधव मैन को जालिम जोर है जागो । भामिनी भौंन मे भागि चलो फिरि आगि उठैगी धुँवाँ उठे लागो ॥ ११८७ ॥

झूरि से कौने लये वन वाग ये कौने जु आँवन की हरि आई । कोइल काहें कराहति है वन कौने चहूँ दिसि धूरि उडाई ॥ कैसी नरेस वयारि वहै यह कौन धौं कोन सो माहुर नाई । हाय न कोऊ तलास करे ए पलासन कौने दवारि लगाई ॥ ११८८ ॥

जब तें रितुराज समाज रच्यो तब तें अवली अलि की चहकी । सरसाय के सोर रसाल की डारिन कोकिल कूकें फिरें बहकी ॥ रसिया वन फूले पलास करील गुलाब की वास महा महकी ।

विरहीजन के दिल दागिबे कों यह आगि दसौं
दिसि तें दहकी ॥ ११८९ ॥

ये व्रजचंद चलो किन वा व्रज लूकें वसंत
की ऊकन लागी । त्यों पदमाकर पेखो पलासन
पावक सी मनो फूँकन लागी ॥ वे व्रजवारी
विचारि वधू वन वावरी लौं हियें हूकन लागी ।
कारी कुरूप कसाइने ए सु कुहू कुहू कैलिया
कूकन लागीं ॥ ११९० ॥

दे कहि मीरसिकारन कों इहिं वाग न कोइल
आवन पावे । मूदि झरोखन मंदिर के मलया-
निल आय न छाँवन पावे ॥ आये विना रघुनाथ
वसंत कों ऐवो न कोऊ सुनावन पावै । प्यारी
कों चाहे, जिआयो धमार तो गाँव मे कोऊ न
गावन पावे ॥ ११९१ ॥

धूँधुर सी वन धूँम सी गावन गावन तान
लगे नर वोरी । वौरीं लता वनिता भई वौरी सु
औधि अध्याय रही अव थोरी ॥ वेनी वसंत के
आवतहीं विन कंत अनंत सहे दुख कोरी । औ
घरं हरि आये न जो पहिलें हां जरां जरिहै फि
नोरी ॥ ११९२ ॥

मद माती रसाल की डारनि पैं चढीं आनद सौं यों विराजती हैं। कुल आनि की कानि करैं न कछू मन हाथ परायेहि पारती हैं॥ कोउ कैसी करे द्विज तूँहीं कहै नाँहि नेकौ दया उरधारती हैं। अरी कैलिया कूकि करेजन की किरचैं किरचैं किये डारती हैं॥ ११९३॥

को बचिहै यह बैरी वसंत पैं आवत जो वन आगि लगावत। बौरतही करि डारत बौरी भरे बिष बैरी रसाल कहावत॥ होत करेजन की किरचैं कवि देव जू कोकिल बैन सुनावत! वीर की सौं बलबीर विना उडि जायँगे प्रान अबीर उडावत॥ ११९४॥

ऐसे विचारत हीं मति मेरी प्रबोधि कहै अखरा मन भाए। कैहै कहा द्विजदेव जु लाहु इतो उर अंतर सोच बढाए॥ राधिका जू के बिहार के काज सबै विधि सो सुखमा उपजाए। नितही नितही केए सघाती वसंत अपूरब बेख बनाय कै आए॥ ११९५॥

चाहि है चित्त चकोर दया श्रुति आपनो दोष परोसिनि लैहै। ए दृग अंबुज से अकुलाय कला

विपि वन्धु की हाय अचै है ॥ ऐसी कसाकसी मे द्विजदेव अली अलि के गन गाइ सुने है। ह्वैहै सु कौन दसा तन की जु पै भौन वसंत लौं कंत न ऐहै ॥ ११९६ ॥

आहि कै कांपि कराहि उठी दृग आँसुन मोचि सकोचि घरी ह्वै। लै कर कागद कोरो लला लिखिवे कहं वैठी वियोग कथा स्वै ॥ ऐसे मे आनि कहूं द्विजदेव वसंत वयारि कढी तितही ह्वै। वात की वात मे वोरी तिया अरु पीत ह्वै पाती परी कर ते च्वै ॥ ११९७ ॥

आवतही हहराय हियो सुख अन्त कियोइ हिमंत कुचाली। त्यों द्विजदेव या पांचे वसन्त की पीत करो सिगरो तन साली ॥ जारती ज्वालन होरी न क्यों लखि सूनो निकेत विना वन-माली। सीत के अन्त वसन्त के आगम भावतो जोपै न आवतो आली ॥ ११९८ ॥

खेलत फागु सखीन के संग सों एक वडी फगुवा सुख पागी। मूठी गुलाल लिये रघुनाथ गई हरि पैं हिय मे अनुरागी ॥ प्यारे के हाथन सों छुटि कै पिचकारी की धार त्यों छाती सों लागी। नैन

नचाय चितै तिरछे मुसक्याय पिछौंडी ह्वै पीछे कों भागी ॥ ११९९ ॥

बरजोरी तिया इहि गोरी सबै गहि लाई गोविं- दही दोचन सों । वह खेलन फाग चली हँसि- कै सुख सों नवेला दुख मोचन सों ॥ भरि अंजन आँगुरी वेनीप्रवीन किये समलोचन लोचन सों । तकि सी रही सो तकि सोचन सों कर ऊँचो न होत सकोचन सों ॥ १२०० ॥

या अनुराग की फागु लखौ जहँ रागती राग किसोर किसोरी । त्यौं पदमाकर घालि घली फिरि लाल ही लाल गुलाल की झोरी ॥ जैसी की तैसी रही पिचकी कर काहू न केसरि रंग मैं बोरी । गोरिन के रँग भीजिगो साँवरो साँवरे के रँग भीजिगो गोरी ॥ १२०१ ॥

कल कंजन त्यौं पग ऊपर नूपुर हंसन की धुनि रूदन की । रँग दत्त अबीर की भीर मची भई छवि यों मुख मूदन की ॥ छकि होरी के खेलन खेलि थकी झलकै उपमा श्रमबुंदन की । लसै मनो रूप सिंगार भरी मुकतान फरी छरी कुंदन की ॥ १२०२ ॥

प्रात झुकाझुकी भेख छपाय के ले गगरी जल कों डगरी ती। जानी गई न किते कउवार तें आनि जुरे जहां होरी धरी ती॥ ठाकुर द्वारि पै मोहि देखत मागि बची सु कछू सुघरी ती। बीर जो द्वार किवार न देउंरी तो हुरि हारन हाथ परी ती॥ १२०३॥

ताक छकी छवि सों री चली कहि होरी है पै नसगोरी गोपाल पै। सांवरो छैल छबीलो किसोर रह्यो रुचि सो भुनुनाइ के जाल पै॥ आली समी उरे मूठ गुलाल की घाली लगी सो जगी पिय भाल पै। कंचन बेल की लौंद पै लाल सो बैठो मनो उडि मंजु तमाल पै॥ १२०४॥

लिये कर कंजन कंचन थार सजे तिन में नव मंगल साज। उडावहिं वीर अवीर गुलाल विसाल रहे बहु बाजन वाज॥ जमायो किसोर मनोहर राग भरी अनुराग सवांरि समाज। अली अल बेली नवेली चली ब्रजराजे वसंत वधावन आज॥ १२०५॥

फाग के फूल भरे मनमोहन खेलत गोपिन रंग रागे। श्री वृषभानकुमारि के सांवरे गारी

दई मुरली सुर पागे ॥ दौरि उठीं बनिता सिगरी
तबलों न मृदंगन के गन जागे । वे लकुटी लै लता
सी मुरी बहुरो फिर वे डफ बाजन लागे ॥ १२०६ ॥

सजसाज समाज सुहाये किये रही राजि
मनोहर तामे भली । निकसी निज मंदिर मंदिर
तें विकसी जनु कंचन कंजकली ॥ कलगावें
केसोर बहावें सुरंग रमावती गोकुल हू की गली ।
ब्रज वामें घनी रचना मैं सनी घनस्यामें बसंत
खिलावे चली ॥ १२०७ ॥

खेलिये फाग निसंक कै आज मयंकमुखी
कहै भाग हमारो । लेहु गुलाल दुहूं कर मैं पिच-
कारिन रंग हिये महं मारो ॥ भावे तुमैं सो करो
मोहि लाल पै पांय परों जिन घूंघट टारो ।
[illegible]र की सौं हम देखि हैं कैसे अबीर तो आखें
[illegible]चाय कै डारो ॥ १२०८ ॥

कैसी है ठीठि लखो यह गोप की ओप भरी
सिगरी ब्रज बाल सों । काहू की कानि न मानति
हठि ठानति है चपला पन [illegible] मारि
[illegible]ई तब की बाढ़ि कै [illegible] की
[illegible]ाल सों । लाल [illegible] ॥ १२०९
[illegible]ई अब [illegible]

खेलत होरी किसोरी जहां जिन पै रति रंभा
रति गई वारि के। सोधों तहां सजिए हरि जाय
जहां जनिए कोऊ ग्वारि गंवारि के॥ संमु सरोज
से पानि सुजान गहे पिचकारी गुलाल जो गारि
के। सो न खराब करैगी लला कमरी पर केसर
को रंग डारि के॥ १२१० ॥

केसर रंग महावर से सरसे रस रंग अनंग
चमूके। धूम धमारन को पदमाकर छायो अकास
अबीर के मूके॥ फागु या लाडिलो को तिहि मैं
तुहो लाज न लागत गोप कहूं के। छल भए
छतिया छिरके फिरो कामरी ओढ़े गुलाल के
ढूके॥ १२११ ॥

ठाढ़ी रहो न डगो न भगो अब देखिहौं
कछु खेलति ख्यालहिं। गावन दे री बजावन दे
सजि आवन दे इतै नन्द के लालहिं॥ ठाकुर हौं
रंगि हौं रंग सों अंग ओडिहौं वीर अबीर गुला-
लहिं। धूंधर मे धधकी मे धमार मे हौं धसि कै
धरि लैहौं गुपालहिं॥ १२१२ ॥

ऐसे कढे गन गोपिन के तन मानो मनोभ
भाय से काढे। त्यों पदमाकर ग्वालन के ड

बाजि उठे गल गाजत गाढे ॥ छाक छके छल हाइन मे छिक पावे न छैल छिनौ छवि बाढे । केसर लै मुख भीजवे को रस भीजत से कर मीजत ठाढे ॥ १२१३ ॥

आई है खेलन फाग यहां वृषभानपुरा तें सखी संग लीने । त्यों पदमाकर गावती गीत रिझावती भाव बताय नवीने ॥ कंचन की पिचकी कर मे लिये केसर के रंग सों अंग भीने । छोटी सी छाती छुटी अलकें अति वैस की छोटी वडी परवीनें ॥ १२१४ ॥

केसर रंग रंगी सिर ओढ़नी कानन कीने गुलाब फली हो । भाल गुलाल भन्यो पदमाकर अंगन भूखित भांति भली हो ॥ औरन को छलती छिन में तुम जाति न औरन सों जु छली हो । फागु में मोहन की मन लै फगुआ में कहा अब लेन चली हो ॥ १२१५ ॥

फाग के त्योस गोपालन ग्वालिनी के एक ठानि कियो मिसि काऊ । त्यों पदमाकर झोरी झुमाइ सु दौरी सबै हरि पै इक आऊ ॥ ऐसें समै वह मीत विनोदी सुनै सुक नैन किये डर

पाऊ। लै हर मूसर ऊसर ह्वै कहूं आयो तहां वनि के वल दाऊ ॥१२१६॥

चन्दकला चुनि चूनरी चारु दई पहिराय सुनाय सुहोरी। वेंदी विसाखा रची पदमाकर अंजन आंजि समाज करोरी॥ लागी जवै ललिता पहिरावन स्याम को कंचुकी केसर वोरी। हेरे हरे मुसक्याइ रही अंचरा मुख दे वृषभान-किसोरी॥ १२१७॥

फाग मची वरसाने के वाग सखीं समता कहि जाय न जाकी। रीझि रही लखि हौं रघुनाथ जु देख रही वहुधा चहुंघा की॥ वाल गुपाल पै दौरी गुलाल लै ऐसी लसी भरी रंग प्रभा की। चारु तमाल को संगम कों भई जंम वोलि मनो कल ताकी॥ १२१८॥

फागु मची वरसाने के वाग में पूर रह्यौ थल तान तरंग सों। गोपवधू इत ठाढी गोपाल उतै रघुनाथ वढे सव संग सों॥ घूंघट टारि सखीन की ओट ह्वै प्यारी चलाई जो प्रेम उमंग सों। लागी तो मूठ अबीर की आय पै प्यारो अन्हाय गयो वहि रंग सों॥ १२१९॥

मूठी गुलाल भरे चली लाल के मारिबे कों मुख पै सुख कों चहि। गोकुलनाथ खेलार लई तब लोइन हूं भरि केसरि सों लहि॥ जाय दई पहिले कुच पै पिचकारी की धार निहारि के हो कहि। आँचर ओडि चितै सतराय लजाय सखीन की ओट लई गहि॥ १२२०॥

फाग रच्यो नदनंद प्रवीन बजैं बहु बीन मृदंग रबावैं। खेलतीं वे सुकुमार तिया जेन भूखन हूं की सकें सहि तावैं॥ सेत गुलाल की धूंधुर मैं झलकैं इमि बालन के मुख आवैं। चाँदनी मै कवि संभु मनो चहुँ ओर बिराजि रहीं महतावैं॥१२२१॥

फाग रची वृषभान के भौन दै गारिन ग्वारि चहूं दिसि कूकें। आय जुरी उपजावति जे मन-मोहन के मन मैन की हूकैं॥ चातुर संभु कहावत वे व्रज सुंदरी सोहि रही ज्यौं भभूकैं। जानी न जाति मसाल औ बाल गोपाल गुलाल चलावत चूकें॥ १२२२॥

खेलति फाग भरी अनुराग सुहाग सनी सुख की रमकें। कंजमुखी कर कुंकुम लै पिय के मुख मीडन कों झमकें॥ भारी गुलाल की धूंधुर मे

ब्रजबालन के मुख यों दमकें। साँवन साँझ लला के माझ मनो चहुँघा चपला चमकें ॥ १२२३॥

दुहुँ ओर सों फाग मडी उमडी जहाँ श्री ब्रढी भीर तें भीर मिरी। धधकी दै गुलाल की धूँधुर में धरी गोरी लला मुख मीडि सिरी ॥ कुच कंचुकी कोर छुवें छरकें पजनेस फँदी फरकें ज्यों चिरी। झरपे झपे कौंधे कढे तरिता तरपै मनो लाल घटा मे घिरी ॥ १२२४ ॥

विधु कैसी कला बधू गैलनि मे गसी ठाढी गुपाल जहाँ जुरिगो। पजनेस प्रभा भरी भामिन पैं घने फागु के फैलनि सों फुरिगो ॥ मुरकी रुकी वंक बिलोकत लाल गुलाल में बेंदा सबै पुरिगो। दिग मे दरस्यो है दिनेस मनो दिग दाह की दीपति मै दुरिगो ॥ १२२५ ॥

बाल झरोखा उघारि निहारि गुलाल लै लालन ऊपर डारैं। एक उरोज लख्यो उघर्यो पिय तामे दई पिचकारी की धारैं ॥ रीझ थकी सब री सजनी उपमा कवि राम गुपाल बिचारें। मानहुं मैन उछार दियो निबुवा थिरके अनुर फुहारें ॥ १२२६ ॥

केसरि के पिचका परिपूरन पूर कपूर गुलाब के दोना । आई सबै ललना ललितादिक खेलन फाग निकुंज के कोना ॥ केसरिया पट में दृग दाबे गुलाल के बासन स्याम सलोना । मानो कहूं बिछुर्यो निज साथ तें सोनजुही में छिप्यो मृगछोना ॥ १२२७ ॥

बैस नई अनुराग मई सु भई फिरै फागुन की मतवारी । कोंवरे पानि रची मेंहँदी डफ नीके बजाय हरे हियरारी ॥ साँवरे भाँर के भाय भरी घनआनंद सो न में दीसत न्यारी । कान्हव पोपंत प्रान पियें मुख अंबुज च्वै मकरंद सी गारी ॥१२२८॥

खेलत फाग गुलाल भरे इत ग्वालि उतै घनस्याम उमंग सों । कंचन की पिचकारिन धार खुली अलकैं मुकतावलि अंग सों ॥ भीजि कपोलनि गो लगि अंचल कंचुकी चारु उरोज उतंग सों । केसरि रंग सों अंग रँग्यो की रही रँगि केसरि अंग के रंग सों ॥ १२२९

फागुन के दिन बावरे ए ... औहलत
निबहे है। काम ... कोऊ
... रा भरि

डरि है नहीं नागर साँची कहै है। चोरी नहीं बरजोरी नहीं इहि होरी में कोनधौं कोरिरहे हे ॥१२३०॥

फागुन में एक प्रेम को राज हे काहे बेकाज करो हो चराबर। रूप उपासक थारेहि हैं हम कोउ कितेको करो ना सराबर॥ नागर नें कछु वेतें कहा जु गिन्यो छुटिके छिति माँहि छराबर। क्यों सतराति हो गोरी किसोरी जु होरी में राजा औ रंक बराबर ॥१२३१॥

घेरि लिये घनस्याम चहूंदिसि दामिनि सं मिलि चेटक कै गई। पीत पिछोरी रही क खेंचि के बाँसुरिया हँसि छीनि के ले गई॥ प्रेम के रंगन सों भरि कै अरु फाग के रंगन मोहनी दे गई। केसरि सों मुख मिडि गोपाल को खंजन से दृग अंजन दे गई॥ १२३२॥

खेलति फाग सुहाग भरी वृषभानलली भली भाँति उमंग सों। घुंघुट ओट किये रघुनाथ गई हरि पे छकि छूटि के संग सों॥ चौंकि तिरीछी चिते मुसकाय फिरी पिचकारी लगाय के अंग सों। रीझि रहे वह भाव चिते अरु भीजि रहे या रँगीली के रंग सों॥ १२३३॥

होरी को रूप लख्यो ब्रजपौरि किसोरी को चित्त विछोहन छीज्यो। दोरी फिरै दुरि देखिबे कों न दुरै मनओज मनोज को भीज्यो॥ केसरिया चूक चौंधत चीर त्यों केसर नीर सरीर पसीज्यो। लाल के रंग में भीजि रही सुगुलाल के रंग में चाहति भीज्यो॥ १२३४॥

खेलत होरी किसोरी सबै पकरोरी धरोरी है सोर मचायो। मारपरे पिचकारिन की जहाँ लाल गुलाल सों अंबर छायो॥ केसर के घट कों कर ले गिरिधारन कों ललिता नहवायो। मानो महा मनि मर्कत कों पुखराज के संपुट बीच छपायो॥ १२३५॥

सखि होरी के ख्याल में गोरी किसोरी कि आज अनूपम रीति लही। पहिले पिय कों रँग बोन्यो तबै छवि साँवरी सूरति आरे गही॥ पुनि अंग गुलाल सों छाय गुपाल कों प्यारी जबै हँसि बातें कही। पहिले तुम लाल हुते कहिबे पै लाल भए अबहीं हो सही॥ १२३६॥

फागु में फेरहू फेले फिरो हो कछू जिय जानत लाज को आयबो। हाहा खवाय नचाय कीजो

है धन्य तिहारी ये बातें बनाइबो॥ गावत गारी ठठोली मिलावत नागर क्यों जुबती न दबाइबो। रावरे खेल की जानीं कला सब एती लला नाँहि जीभ चलाइबो ॥ १२३७ ॥

आवत हे नदगाँव गावते संग सखा डफ लीन्हे नवीने। रंगन सों भरिडारे सबै हम हाथ मरोरि के चंगही छीने॥ आपहु के कर बाँधि के हार सों प्यारी के पाँयन पारे अधीने। कालिह की बात न भूलि के नागर आजहू वेई भले ढंग लीन्हे ॥१२३८॥

धूम धमारि मची व्रज में मिलि फेंकत रंग उडावत रोरी। आनि धन्यो बलबीर गुपालहि भामिनि भेख रच्यो बरजोरी॥ मो बिनती बिधि पूरी करो सुतवारी करौ जसुदा जु की छोरी। छोडि दियो छितिपाल ललाजु कों भोरही आइये खेलन होरी ॥ १२३९ ॥

घेरे रहें घरहाँई घनी फिर बीते न फागु कछू ... जायगी। लाल गुलाल की धूँधुर में मुख ... जोति कहूँ लहि जायगी॥ प्रेम पगी ... याँ न तें री छतियाँ न की लाज सबै बहि

जायगी । जो न मिलौ मनमोहनै तौ मन की मनहीं मन मैं रहि जायगी ॥ १२४० ॥

बडभाग सुहाग भरी पति सों लहि फागु मैं राग न छायो करै । कवि लाल गुलाल की धूँधुर मैं चख चंचल चारु चलायो करै ॥ उझकै झिझिकै झहराय झुकै सखि मंडल को मन भायो करै । छतियाँ पर रंग परे तें तिया रतिरंग तें रंग सवायो करै ॥ १२४१ ॥

खेलत फागु लख्यो पिय प्यारी को ता मुख की उपमा केहि दीजै । देखत हीं बनिआवै भलें रघुनाथ कहाहे जो वारिने कीजै ॥ ज्यों ज्यों छबीली कहे पिचकारी लै एक लई यह दूसरी लीजै । त्यों त्यों छबीले छकै छवि छाक सों हेरैं हँसै न टरै खरो भीजै ॥ १२४२ ॥

खेलि के फागु फिरीं जब सों सब सों दृग देखिये मेर मढ्यो सो । आवत है मुख जो सों थकें कछू खाहि न पीवहिं भूत चढ्यो सो ॥ ऐसी दसा सब की रघुनाथ रह्यो तपि कै अंग आगि दढ्यो सो । डारि गयो नंदलाल सखी ब्रजबाल पैं मानो गुलाल पढ्यो सो ॥ १२४३ ॥

लै बलबीर अबीर की मूँठि दई अलबेली दृग दूपर। त्यों बनमाली पें आली चलाव लाली गुलाल की छ्वै रही भूपर॥ लै पिचक बिहारी तहाँ अधिकारी करी ब्रजगोपवधू पर पीन पयोधर तें उचटी सो परी सब केसर ला के ऊपर॥ १२४४॥

फागु री आयो सखी हम कों बिन पीतम मे सलाक सी लागु री। लागु री मेरी गुहारि ति कछु कीजिये बेग उपाय उजागु री॥ जागुरी रा चहूँ दिसि होत हैं काम हियें अति देत है दा री। दागुरी मेरो तबै मिटिहै जब पीतम के सं खेलिहौं फागु री॥ १२४५॥

लाल गुलाल बलाहक तें बरसैं झरी झोक केसरि रंग की। त्यौंहीं अनंत छटा छवि चमके चपला त्यों मनोहर अंग की॥ लै गलबाँही अनंद कियो बरनों का दसा वह मैन उमंग की। भूलै नहीं हम कों सजनी वह फागु की खेलन साँवरे संग की॥ १२४६॥

गाय हैं लोग लोगाई सबै जबै आनँद कोटि हिये उपजाइहैं। जाइ हैं खेलन फागु सुहागन

ाग भरी अनुरागन छाइहैं ॥ छाइहैं बीर अबीर
ुलालन दंपति अंगन रंगन नाइहैं ॥ नाइहैं
ान्ह जो बेनीप्रवीन तौ जात न प्रान बिलंब
गाइहैं ॥ १२४७ ॥

खेलति फागु सोहाग भरी सुथरी सुरअंगना
सुकुमारि है । जैये चले अठिलैये उतै इतै
ान्ह खड़ी वृषभानकुमारि है ॥ संभु समूह गुलाब
सीसन ढारि को केसर गारि बिगारि है । पामरी
ाँवड़े होति जहाँ तहाँ को लला कामरी पै रँग
ारि है ॥ १२४८ ॥

ए नँदगाव तें आये इहाँ उत आई सुता वह
निहूँ ग्वाल की । त्यों पदमाकर होत जुराजुरी
उन फागु रची इहिं ख्याल की ॥ दीठि चली
न की इन पै इनकी उन पैं चली मूठी उताल
। दीठि सी दीठि लगी इनके उनके लगी मूठि
मूठि गुलाल की ॥ १२४९ ॥

भाल मे लाल गुलाल गुलाल सों गेरि गरे
जरा अलबेलो । यों बनि बानक सों पदमाकर
ए जु खेलन फागु तो खेलो ॥ पै एक या छवि
खिबे के लिए मो बिनती करि झोरिन झेलो ॥

रावरे रंग रँगी अँखियान में ए वलवीर अवीर
ना मेलो ॥ १२५० ॥

फागु के भीर अभीरन तें गहि गोविंद लै गई
भीतर गोरी । भाई करी मन की पदमाकर ऊप
नाई गुलाल की झोरी ॥ छीनि पितंवर कंमर
सुविदा दई मीडि कपोलन रोरी । नैन नचाय कह्यो
मुसुकाय लला फिरि आइयो खेलन होरी ॥१२५१

वातें लगाय सखान तें न्यारो कै आजु गह
वृषभानकिसोरी । केसरि सों तन मंजन कै दि
अंजन आँखिन में वरजोरी ॥ हे रघुनाथ क
कहों कौतुक प्यारे गोपाले वनाय कै गोरी ।
छोडि दियो इतनो कहि कै वहुरौं इत आइयो
खेलन होरी ॥ १२५२ ॥

फागुन मास वडो उतपात रहै निस वासर नींद
न आवै । आपस माँझ सवै नर नारि निरंतर चौगुन
फाग रचावैं ॥ जो कुलनारि कहूँ सरमाय दु
तवहूँ गुरुनारि वतावैं । या व्रज में यह रीति बु
घर में घसि लोग लुगाइन लावैं ॥ १२५३ ॥

ग्वाल छके मंद तें सिगरे अगरी डग दे
ढोल वजावैं । आन तिया पति आन लगा

गावत आनन आन लगावैं ॥ ताँ सरदार गुविंद
के ऊपर इंदुमुखी रँग की झरलावैं । हेरत इंदु
अनूपम पै अरविंद मनो मकरंद चुवावैं ॥१२५४॥
गोरी चलीं कहि होरी सबै तकि स्याम सखान
लयो रँग मांगो। दोऊ दुहुँघाँ दवावत गावत नाचत
राचत रूप सभागो ॥ ताँ सरदार लएँ वलवीर
अवीर चलावत हैं अनुरागो । लालन तें जनुजाल
विसाल प्रवालन तें ससि पूजन लागो ॥१२५५॥
ले पिचिकार सजे सरदार चलावत गावत दौर
रेरत । कीरतिजा नँदनंदन संग सजे अँग अंगन
रँग गेरत ॥ छूटत लालन के कर तें लगि कंठ
लाल महा छवि घेरत । मानहु सीय सवासिन
मुख छोड हुतासन कों हरि हेरत ॥१२५६॥
कर ले करवाल गुपाल निहार चलावत चोट
देसन तें । मुरकी दुरकी लुरकी न गनैं उर की
रकी न अँदेसन तें ॥ सरदार परे रँगधार घनीं
च ऊपर आवत केसन तें । परिछे ससि सुच्छ
हेस ससी जनु आप असेस फनेसन तें ॥१२५७॥
ग्वालिनि ग्वाल रहैं रँग ठान न जान परे इत
उत वारी। ताँ सरदार विहारत कान्ह सुआन

जुरी वृषभानदुलारी ॥ दोऊ दुहूँघाँ रहे मुख हेर सक़ेर महा अति आँनद भारी ॥ मूंठ चलै उन कै इन पै न चलै इनकी उन पै पिचिकारी ॥१२५८॥

थोरी सी वैस किसोरी सबै भरि झोरी अबीर उडाउती हैं । करताल दै ढोलन की धँधकी धुनि बांध धमार बजाउती हैं ॥ सरदार लिए मिथिलेस कुमारि उदार ह्वै भाग सराउती हैं । मुसिक्याइ कै नैन नचाइ सबै रघुनाथै बसंत बँधाउती हैं ॥१२५९

फागुन में मधुपान समै पदमाकर आइगे स्याम संघाती । अंचल ऐंचो उचाए भुजा भरे मूठी गुलाल की स्याल सुहाती ॥ झूठिहू दे झझकाइ तहां तिय झांकी झुकी झझकी मद माती । हसि रही घरी अधिक लों तिय झारत अंग निहारत छाती ॥ १२६० ॥

कैसी है ढीठी लखो व्रज की रघुनाथ कछु गुन जात न गायो । खेलत फाग गली मे अचानक आज गुपालै कहूं गहि पायो ॥ कै सुधि गारी की औ पिचकारी की बैर लियो यहि भांति सोहायो । जो कछु भायो सो भेष बनायो औ जो मन आयो सो नाच नचायो ॥ १२६१ ॥

ाति चली एक गोपलली लखि मोहन ओर
त के होली । केसर सों भरि के रघुनाथ छिप
पिचकारी अमोली ॥ पाय दबे बढ़ि पीछे तें अ
लाय दई एती भांति तें भोली । ऊंचे उरोजन
पर धार सराक दै लागी छराक दै बोली॥१२६२॥
वह सांवरि गोरी सी आपुस मैं होरी होरी कहै
तरावत हैं । वह कोऊ अबीर की झोरी भरें कोऊ
केसर घोरि मंगावत हैं ॥ वह रोरी के लाल कमोरी
भरे छिरकै हरि पै छिरकावत हैं । वह स्याम हसंत
हसंत रमै नंदलाल गुलाल उडावत हैं ॥१२६३॥
जुरि खेलैं तिया हरि होरी भले वहु बीन मृदंग
बजें रम कें । कर कुंकुम लै रंग कंजमुखी पिय
के मुख लावन को झमकें ॥ तहं लाल गुलाल के
धूंधर मे वहु बालन की दुति यों दमकें । जनु
सावन सांझ ललाई के माझ चहूं दिसि तें चपला
चमकें ॥ १२६४ ॥
पिय देखन कैधों रमा उझकी मुख कुंकुम मंडित
राजत है । निसि ती उर को अनुराग सोहाग
छपा वधू को किधों भ्राजत है ॥ किधों पूरनचंद
सु छन्द उदोत मुकुन्द सबै सुख किधों

प्राची दिसा नव वाल के भाल गुलाल के ति
विराजत है ॥ १२६५ ॥

गोरी किसोरी सु होरी सी देह में दामिनी
द्युति देति विदारै । नारि नवै सबनारिन की त
के नभ रूप अनूप निहारै ॥ भौंर सी मोहन सों
रही सुर के उर तें न टरै पल टारै । भीजे मनो मु
अंबुज के रस भौंर सुखावत पंख पसारै ॥१२६६

फाग मची सिगरे व्रज मे नभ बादर लाल गुला
के छाये । नागरि औ मनमोहन नागर सामुहें हो
चिते मुसुकाए ॥ मान गयो छुटि मोद भयो म
दोऊ सनेह भरे वतराए । मूठी अबीर भरी म
सुगन्ध लगावन के मिसि सों लपटाए ॥१२६७

कुंज गलीन अलीगन में चली आवती ती
वृषभानदुलारी । ताहि विलोकि के रंग भरे छल
सों छिपके रहे कुंजविहारी ॥ कुंकुमा घाल्यो उरो
जनि को तकि पानि सरोज सो ताहि निवारी ।
जानिहे वीर दसा उर आनि वजी वह एकही
हाथ की तारी ॥ १२६८ ॥

खेलति फागु जो मेरी भटू इन सों बडे चाय
तें चावरी तें है । केसर के रंग की भरि सुन्दरि

डारति कामरी पे पिचकै है ॥ त्यों व्रजचंद जू सांवरे गातनि नावै सुगन्धन की लपटे है । ए मगुआ दधि माखन के ते कहो कहां तें फगुआ तोहि देहे ॥ १२६९ ॥

लालहि घेरि रहीं ललना मनो हेम लता लपटानी तमालहि । मालहि टूटत जात न जानत लूटत है रस रास रसालहि ॥ सालहि सौतिन के उर में चलरी उठि वेगि दे ताल उतालहि । तालहि देति उठि ततकाल लगाय गुपाल के गाल गुलालहि ॥ १२७० ॥

तालरी वाजत भूरि मृदंग छुटे बहु रंग भयो नभ लालरी । लालरी गुंजन की उर माल अबीर भरो भरि झोरिन सालरी ॥ सालरी होत विलोके बिना नंदनन्दन आज रच्यो व्रज ख्याल री । ख्यालरी लोने कहा बरने मनमोहन नाचत दे कर तालरी ॥ १२७१ ॥

गांस गसीली ये वातें छिपाइये इस्क ना गाइये गाइये होलियां । गेंद वहाने न वीर चलाइये सूधे गुलाल उड़ाइये झोलियां ॥ लोग बुरे चतुरे लखि पाय हैं दाबे रहो दिल प्रीति की लोलियां ।

पाय परों जी डरो टुक नागर हाय करो जिन बोलियां ठोलियां ॥ १२७२ ॥

नीर सों भीजि रहे रंग राय पुरी गली आए गुलाल उलीच में । जाय सके ना इते ना उते सुरही घिरि कान्हरे वाल नगीच में ॥ ठाकुर केतो वनाव कियो पर दाव चले ना सखीन के वीच में रंग भरी रस माती गुआलि गुपालहि लै गिरं केसर कीच में ॥ १२७३ ॥

केसर रंग तिहारो भटू लखि लालची ला अबीर लिये पर । कोस गुलाल लसे यहि आ छाई सुबाल गुलावन के झर ॥ हाय गहे पिच चकि तोहि सो कासी के राज गहो तुमहूं व गावत ताल सुराग सखी सब तान तरंगन सो रस को भर ॥ १२७४ ॥

गैल में गाय के गारी दई फिरि तारी दई औ दई पिचकारी । त्यों पदमाकर मेलि उठी इत पाय अकेली करी अधिकारी ॥ सौंहें बबा की करेहूं कहों यहि फागु को लेहुंगी दाव विहारी । का कबहूं मझि आइहो ना तुम नन्दकिसोर व खोर हमारी ॥ १२७५ ॥

सारी सुही सुथरी सजि सुन्दरि भूषन अंगन पाछे पेन्हे हौं । चूरी जंगाली सुलाली औ काली हरी दुत्रिया रंग बन्द लगे हौं ॥ चादला वांक़ ज़तूनी गुलाली की डाली भरी बगलै ले चलै हौं । होरी की मांगवे को तिहवारी बिहारी तुमें चुरि-हारी बने हौं ॥ १२७६ ॥

कारी किनारी की सारी सजाय के नौरंगिया अंगिया हू पेन्हे हौं । के कच कांगही काजर दै सजि भूषन बेंदी औ बिन्दी लगे हौं ॥ सीस पै गेंडुरी गागर पै लघु गागरी दै नगरी में नचैहौं । देखि हैं गोरी सुहोरी मे आज बिहारी तुमें पनि-हारी बने हौं ॥ १२७७ ॥

बाजू बरेखी सु हेकल कंठा सुचंपा कली जुगु-नूहूं जुरे हौं । चंदरहार गुही दुलरी तिलरी मुगा मोतिन माल गुन्हे हौं ॥ पूरित सूत सुरंग सुता ले रेसम की फिरिकी सी फिरैहौं । पाटी संवारि वे पाट पिन्हे पटहारी तुमें पटहारी बने हौं ॥१२७८

हिन्द बिलायत की सब चीजें पेटारी सोहाग भरी सजवे हौं । कंगही दर्पन प्याली सलाई-स गोली सुई डिबियाहू बिचे हौं ॥ मंजन के मु

माहं गिसि मिलि सुमन २ दे के लोभै हौं। हे हरि होरी में आज देहातिन की सी बिसातिनि तोहि बनै हौं ॥ १२७९ ॥

चादर चूंदरी चोली चढ़ाय चहूं चव फेर फिरि सी फिरै हौं। सुन्दरताई सयानी सुखी सी मैं सींवै की वस्तु नफी सी भरै हौं ॥ दीठि सडोर सुई सु अंगूठी हू कांति की कैंची सों काट करैं हौं। लै गज लाज हरी अलगर्जिन दर्जिन के तोहि सीने लगै हौं ॥ १२८० ॥

गरजै डफ झांझ सुझिल्लिन के गन बादर लाल गुलाल की झोरी। बहु बुन्दन की पिचकारिन सों भिजवैं हठि केहरि पीत पिछोरी ॥ कल कूजित कोकिल चातक के गुन गाय रिझावत फाग गनोरी। सजि कुंजन में मनमोहन सो जनु पावस पीतम खेलत होरी ॥ १२८१ ॥

होरी अहीर को सांवरो छैल सुगन्ध लिये वृष-भानुकिसोरी। सो री गयो यहि मारग ह्वै दये झांझ पखावज की घनघोरी ॥ घोरी गुलाल अबीर गुलाब मे बांह गहे औ करे बरजोरी। जोरी निहारत वारत प्रानन डारत रंग पुकारत होरी ॥१२८२॥

दई चूनरी रंग भिजाय सबै फिरि तापै गुलाल की झोरी करै। न करै गुर लोग की लाज कहूं झझकारेऊ आनि निहोरी करै॥ कहि धीरज भोरी सी जानि हमैं मग में अरिबे की न थोरी करै। इन बंकरी मोरी मरोरी सखी हरि देखिरी होरी में जोरी करै॥ १२८३॥

होरी रची ब्रजलाल लली घट कोटिन रंग अबीर भरोरी। रोरी मली हरि के मुख में धरिके पिचकी मुख वे झकझोरी॥ झोरी अबीर की घोरी गुपाल सुबाल गही झुकि पीत पिछोरी। छोरि तबैं हंसि दीन कही तुम जीति लियो हम हारि सहोरी॥ १२८४॥

फाग मची मे नचावत कान्हरै आपनहूं गति मन्द चलै लगी। नाचती गावती दै चिटुकी चहुं ओर कपोत सी ग्रीव हलै लगी॥ भाव के भेदन हीं सो भुलाय कै आय के कोऊ गुपाल गरै लगी। हाल दै और निहाल ह्वै ग्वालिनी लाल के गालै गुलाल मलै लगी॥ १२८५॥

दृग मूंदि के अंचल सो कहती पिचकारी हमारी लला चहि हों। अब घालि हो तो पछतैहो अजू

फिर रीझ कुरीझ कछू कहि हो ॥ कहि ठाकुर उ
पै सयान सुजान सु दादि हमारी इती लहि हो
भरि आंखिन बीच गुलाल गयो अब लाल हह
रहि खेलहि हो ॥ १२८६ ॥

होरी के औसर गोरी सबै मिलि दौरि लख्यो
जब कान्हर आयो । ह्यां इन में निज भावती देखि
रह्यो मनभावन को मनभायो ॥ हाथ पसारे न
सूझि परै तहं यों कछु लाल गुलाल उड़ायो ।
बाहन बांधि हिये लगि के हरि राधिका के मुख
सों मुख छ्वायो ॥ १२८७ ॥

फागु रची बलबीर के द्वार खरे फगुआर दोउ
दल वारें । साज सखी नट वा नटनागर बाजे
मृदंग रबाब सितारें ॥ रंग सहाब अबीर भरे छुटे
कुंकुमा केसरि की पिचकारें । केसरियां सरियां पहिरें
पर छोहरियां छरियां गहि मारें ॥ १२८८ ॥

ऐसी न देखी सुनी सजनी घनि बाढ़ति जाति
वियोग की बाधा । त्यों पदमाकर मोहन को तब
तें कल है ना कछू पल आधा ॥ लाल गुलाल घला-
घल मे दृग ठोकर दै गई रूप अगाधा । केगई २
चेटक सी मन लैगई २ लै गई राधा ॥१२८९॥

चोरिन गोरिन में मिलि के इत आई ही हाल गुवालि कहां की। को न बिलोकि रह्यो पदमाकर वा तिय की अवलोकनि बांकी॥ धीर अबीर की धुंधुरि में कछु फेर सो के मुख फेर सो झांकी। के गई काट करेजन को कतरे २ पतरे करि हांकी॥१२९०।

बीर अबीर अभीरन को दुख भाखै बने न बने बिन भाखें। त्यों पदमाकर मोहन मीत के पाये संदेसन आठये पाखें॥ आये न आपनी पाती लिखी मन की मनहीं मे रही अभिलाखें। सीत के अंत बसंत लग्यो अब कौन के आगे बसंत लै राखें॥ १२९१॥

जानति हैं कि गए मथुरा चढ़ि मारन कंस छड़ावन ओले। फाग के आवत जैसी दसा भई सो रघुनाथ सुनो मन जोलै॥ के सुधि होरी के खेलन की भुलए सिगरी सुधि नन्द के टोले। फेट गुलाल भरे पिचकारी लै बाल गुपालहि ढूंढ़त डोलै॥ १२९२॥

केतिको २ बार सिखापन में दियो पै न हिए धरती हैं। हे वह नायक श्रीरघुनाथ वृथा तिनसों भ्रम कै लरती हैं॥ देखो मनेथे को नेरहू तेरहू

आय के पांयन पै परती हैं। कौन कथा कहि इनकी गए फाग को ढाढ़स ए करती हैं ॥१२९३

मम प्रान प्रमान करो उरमें पुरमें सरसे सु सालतहीं। सरदार चले न चले तब तो अब हाल का डफ हालतहीं ॥ हुरहारन हारन हार फिरैं पनि हारिन रोकत वालतहीं। पनपाल रहो दिन चा हहा चलि जैयो गुलाल के चालतहीं ॥१२९४॥

फाग बिलोकिबे को रघुनाथ गुपाल की जो दुचिती बहुतैहौ। चाहो चल्यो तौ चलौ चलै संग चले बिनु जानति हौं पछतैहौ ॥ पै इतनी कहे राखति हौं मन मै न अकेलोई मोद बसैहौ। के सुख के दुख पैही वलाई ल्यों चेत कै आज अचेत ह्वै ऐहौ ॥ १२९५ ॥

फागुन आयो सुहायो सबै रस कौतुक या ब्रज मे सरसै है। गोपिन के गन मैं चलिहौं तुम गोपिन मे मनमोहन ऐहै ॥ केसर सों रंगिहो उनके अंग लाल रंगीलो तुमै रंगि देहै। होरी के खेल मे मेरे मिलाप को आप से आप भले वनि जैहै ॥१२९६॥

वैठी हुती एक ठौर कठोर वे कोप की ओपन की अधिकाई। आय गये नँदनन्द तहां मिलि

फाग के रंग सों रंग सोहाई ॥ एक की आंखन डार्‌यो गुलाल निहार्‌यो न वा फिरि जौलौं तु गोई। दूसरी को अरविन्द से आनन चूमि लयो तब लौं रसिकाई ॥ १२९७ ॥

खेलि के होरी गये जमुनातट सोहत बाग तहां सुखकारी । धाम जहां अभिराम बने तिन ओर तें दीठि टरे नहिं टारी ॥ रंग भरे अनुराग भरे छवि दंपति की मनमोहन वारी । वासर रैनि विहार करैं नित कुंजन में वसि कुंजबिहारी ॥ १२९८ ॥

अनुराग गुलाल उड़ाय सबै नँदलाल हिए हरखावती हैं । गिरिधारन चोवा बन्यो रसराज समाज महा छवि छावती हैं ॥ भरि रंग सुढंग उमंग सनी पिचकारी दृगें बरसावती हैं । व्रजराज कुमार के साथ धमार में मार की मार मचावती हैं ॥१२९९॥

खेलन में रस मेलन में गिरिधारन आजु घने रंग राते । ता छन आय गयो अवला दल सेस प्रभा कहते सकुचाते ॥ आनन गोपतियान के मंडित चन्दन तें तहं यों दरसाते । केसर केसर के सरसीरुह बेस बने सब नैन सुहाते ॥१३००॥

रस खेल में रेल में रंगन की पिचकारिन कों कर

लै बरसें । गिरिधारन चन्दन कीच के बीच खेला फंसे सुखमा सरसें ॥ नँदनन्दन लै कर बन्दन बं अंग लाये हिये अतिहीं हरसें । तब चारु अहीं बधूटिन के तन बीर बधूटिन से दरसें ॥१३०१॥

लाल गुलाल समेत अरी जब सो यह अंबर ओर उठी है । देखत हैं तब सों तितही लखि चंद चकोर की चाह झुठी है ॥ डारत ही गिरिधारन दीठि अबीरन के कन साथ लुठी है । मोहन के मन-मोहन कों भटू मोहन मूठ सी तेरी मुठी है ॥१३०२॥

केसर सों रंग चोवा से केस गुलाल सी है अधरान ललाई । कुंकुम से कर कुंकुमा से कुच नैन की सैन बनी पिचकाई ॥ बुक्का सी सारी लसैं गिरिधारन टेसू सी चोली चुभी अधिकाई । गोरी गोपाल सों खेलत होरी सरूप धरे मनो होरी सुहाई ॥ १३०३ ॥

चोवा के मेघ गुलाल की दामिनी बुक्का बलाका लसै अधिकाई । केसर सक्रसरासन चारु सुरंगन की बरसा बरसाई ॥ बाजनि बाजन की गिरिधारन गाजनि सो अति लागै सुहाई । आजु गोपाल ने होरी के बीच में पावस की परमा प्रगटाई ॥१३०४॥

खेलत खेल झमेलन मैं रस खेलन खेल वढ्यो अन-मोला । सोहत है गिरिधारन मार हजारन वारन रूप अतोला ॥ एक सखी तहं रामहि देखि कै सीस तें चन्दन को घट ढोला । मानहु सुद्ध सतोगुन ने पहिर्यो धरि चाह रजोगुन चोला ॥ १३०५॥

फागुन की उजियारी एकादसी देति विनोद सुमोद के पुंजें । गावतीं गीत बजावतीं नागरी ताल पखावज आवज रुंजें ॥ तैसे फिरै अलि मैं गिरिधारन त्यों अलि वृन्द चहूं दिसि गुंजें । काम कलोलन मैं कलता करैं कालिंदी कूल कदंब की कुंजें ॥ १३०६ ॥

गोप सबै मिलि गोकुल के करतारिन देत उड़ा-वत रोरी । चाले अनूप सिंगार किये गिरिधारन गारी सुनावैं अथोरी ॥ चारहु ओर अबीर उड़ै ढर-कावत केसर बोरि कमोरी । दारु बटोरि कै जोरि कै चारु लगावत होरी औ गावत होरी ॥१३०७॥

ग्वाल अनेक सवांग किये संग गारी कहैं रस ढंग लपेटी । कोऊ लिये पिचकारिन कों कोउ केसर बुक्का अबीर अखेटी ॥ वीथिन में व्रज की गिरिधारन तैसी बनी उत गोप की बेटी । धाइ

के होरी की धूंधर वीच धमारन की करें धृ
घुरेटी ॥ १३०८ ॥

जहं लालन की महि लाली परी हरी वृन्द
पन्नन ही की वटी । चपला सी गुलाल घटा में दिं
जहं दासी अनेक जराय जटी ॥ द्विजदेव घनागम
भेरे तहां भरि फाग में गाइन कुंज तटी । सखि
राधिका संग चले वनि भीजत ये कपटी लिये ये
कपटी ॥ १३०९ ॥

ढोल वजावती गावती गीत मचावती धूंधुरि
धूरि के धारन । फेट फते की कसे द्विजदेव जू
चंचलता वस अंचल तारन ॥ औचक हीं विजुरी
सी जुरी दृग देखत मूँदि लये देखरावन । दामिनि
सी घनस्यामहिं भेंटि गई गहि गोरी गुपाल के
हारन ॥ १३१० ॥

इत ते वनि आई नई अवला उत ते मनमो-
हनऊ उमहे । लखि सांकरी खोरि विथोरि गुलाल
विसाल दुहूं भुज जोरि रहे ॥ द्विजदेव अभूत भई
यह ता छिन देखे वने पै वने न कहे । कासि वोरि
जो लों लला रस की सरिता मह आपे

१ ॥

तन सूधे सुभाय सिरीख सों कोमल मीजत मंजु भयोई चहै। श्रुति लाल गुलाल घटा ते मलीन सो आनन चन्द भयोई चहै ॥ द्विजदेव जू ऊक औ वीक हिये में गुपाल के फन्द परोई चहै। दृग वीर अबीर की चांदनी मे अरविन्द लो मन्द भयोई चहै ॥ १३१२ ॥

लोल करे दृग गोल गुवालिनि दै करताल सुढोल बजावति। चूनरि चारु चुरी जु नरायन पायन पैजनियां झमकावति ॥ अंग उमंग अनंग भई रंग छूटि छटा छिति पै छवि छावति। धावति धूम मचावति गावति लाल गुलाल उडावति आवति ॥ १३१३ ॥

लाल लये पिचका कर में भए आप खरे सिय सामुहें आय के। तैसी बनी मुख की सुखमा विधु पूरन सीत निसा जनु पाय के ॥ पीत दुकूल कसे कटि में जिहि तें बिजुरी दवि जाति लजाय के। प्रेम सखी हिय में यह माधुरी राखत ज्यों निधि रंक चोराय के ॥ १३१४ ॥

भूखन भूखित संग सखा इत संग सखी सब कीने सिंगार है। को बरनै तिन की छवि को अह

कै होरी की धूंधर वीच धमारन की करैं घुरेटी ॥ १३०८ ॥

जहं लालन की महि लाली परी हरी कु पन्नन ही की वटी। चपला सी गुलाल घटा में जहं दासी अनेक जराय जटी ॥ द्विजदेव घना भोरे तहां भरि फाग में गाइन कुंज तटी। स राधिका संग चले बनि भीजत ये कपटी लिये कपटी ॥ १३०९ ॥

ढोल बजावती गावती गीत मचावती धूंधु धूरि के धारन। फेट फते की कसे द्विजदेव चंचलता बस अंचल तारन ॥ औचक हीं बिजु सी जुरी दग देखत मूँदि लये देखरावन। दामिनि सी घनस्यामहिं भेंटि गई गहि गोरी गुपाल के हारन ॥ १३१० ॥

इत ते बनि आई नई अबला उत ते मनमोहनऊ उमहे। लखि सांकरी खोरि बिथोरि गुलाल विसाल दुहूं भुज जोरि रहे ॥ द्विजदेव अभूत भई यह ता छिन देखे बने पै बने न कहे। कसि बांरि के चाहत जो लों लला रस की सरिता मह आँ रहे ॥ १३११ ॥

खेलत खेल झमेलन में रस खेलन खेल वढ्यो अन-मोला। सोहत है गिरिधारन मार हजारन वारन रूप अतोला॥ एक सखी तहं रामहि देखि के सीस तें चन्दन को घट ढोला। मानहुं सुद्ध सतोगुन नें पहिर्यो धरि चाह रजोगुन चोला॥ १३०५॥

फागुन की उजियारी एकादसी देति विनोद सुमोद के पुंजें। गावतीं गीत वजावतीं नागरी ताल पखावज आवज रुंजें॥ तैसे फिरै अलि में गिरिधारन ज्यों अलि वृन्द चहूं दिसि गुंजें। कान्ह कलोलन में कलता करें कालिंदी कूल कदंब की कुंजें॥ १३०६॥

गोप सबै मिलि गोकुल के करतारिन [illegible]
वत रोरी। चाले अनूप सिंगार [illegible]
गारी सुनावें अथोग [illegible]

के होरी की धूंधर वीच धमारन की करें धू
घुरेटी ॥ १३०८ ॥

जहं लालन की महि लाली परी हरी वुन्द
पन्नन ही की वटी । चपला सी गुलाल घटा में दिप
जहं दासी अनेक जराय जटी ॥ द्विजदेव घनागम
भोरे तहां भरि फाग में गाइन कुंज तटी । सखि
राधिका संग चले वनि भीजत ये कपटी लिये ये
कपटी ॥ १३०९ ॥

ढोल वजावती गावती गीत मचावती धूंधुरि
धूरि के धारन । फेट फते की कसे द्विजदेव जू
चंचलता वस अंचल तारन ॥ ओचक हीं विजुरी
सी जुरी दृग देखत मूँदि लये देखरावन । दामिनि
सी घनस्यामहिं भेंटि गई गहि गोरी गुपाल के
हारन ॥ १३१० ॥

इत ते वनि आई नई अवला उत ते मनमो-
हनऊ उमहे । लखि सांकरी खोरि विथोरि गुलाल
विसाल दुहूं भुज जोरि रहे ॥ द्विजदेव अभूत भई
यह ता छिन देखे वने पे वने न कहे । कसि वोरि
के चाहत जो लों लला रस की सरिता मह आपे
बहे ॥ १३११ ॥

तन सूधे सुभाय सिरीख सों कोमल मींजत मंजु भयोई चहै। श्रुति लाल गुलाल घटा ते मलीन सो आनन चन्द भयोई चहै ॥ द्विजदेव जू ऊक औ वीक हिये में गुपाल के फन्द परोई चहै। दृग वीर अवीर की चांदनी मे अरविन्द लों मन्द भयोई चहै ॥ १३१२ ॥

लोल करे दृग गोल गुवालिनि दै करताल सुढोल बजावति। चूनरि चारु चुरी जु नरायन पायन पैजनियां झमकावति ॥ अंग उमंग अनंग भई रंग छूटि छटा छिति पै छवि छावति। धावति धूम मचावति गावति लाल गुलाल उडावति आवति ॥ १३१३ ॥

लाल लये पिचका कर में भए आप खरे सिय सामुहें आय के। तैसी वनी मुख की सुखमा विधु पूरन सीत निसा जनु पाय के ॥ पीत दुकूल कसे कटि में जिहि तें [illegible] कै।
प्रेम सखी [illegible]
ंक [illegible]

रूप धरे विलसे रतिमार है ॥ लीने उतें पिचक कर में इत तें बहु फूल की गेंद अपार है । प्रेम सखी सिय के पिय के ढिग ठाढे भए सब खेलन हार है ॥ १३१५ ॥

चोवन के चुरुवा इत तें अलि डारे गुलाल की मूठि अपार है । केसर रंग भरे सिगरे पिचकान की मानो रही जुरि धार है ॥ प्रेम पयोधि में जाय परे वहि के सिगरे सुख देखनहार है । प्रेम सखी न टरे रस मत्त इतै नृपजा उत राजकुमार है ॥१३१६॥

फूल छरी तरवार चली उत तें पिचका भरि मारत तीर हैं । भीजि गईं रंग तें सिगरी बिथुरी अलकें न संभारत चीर हैं ॥ सस्त्रप्रहार सहैं सिगरी भट रोस भरे न गने तनपीर हैं । प्रेमसखी प्रमदागन मत्त खरे मनो घायल घूमत वीर हैं ॥ १३१७ ॥

गावत बालन राग सखी गति भेद तें बाजन लागी मृदंग है । को बरने तिहि औसर को सुख छाय रह्यो स्वर ताल तरंग है ॥ राम सिया छवि ऊपर में बलिहारी करों रति कोटि अनंग है । प्रेम सखी छवि दंपति की हिय में छहराय रह्यो यह रंग है ॥ १३१८ ॥

गोकुल गाँउ के गोपन गोल सो आगू गोविंद कहूँ कढि आये। त्यों बरसाने की प्यारी लली इत जे निकसी सुख सिंधु नहाये॥ होत जुरा जुरी श्री रघुराज चलावन को चले मूठि उठाये। दोऊ रहे छवि में छकि के व्रजबाल गोपाल गुलाल बहाये॥ १३२६॥

लैके अबीर की झोरिन को कर फूटि सखानि सों राम कन्हाई। धाय धसे व्रजग्वालिन गोल में चारिहूँ ओर अबीर उडाई॥ धाईं सबै गहिबे को अली जुरि केसरि की पिचकारी चलाई। चंचल तो चपला सो चमंकिगो गोपिका घेरि रह्यो बलराई॥ १३२७॥

कोई सखी तहँ बोली निसँकन संक करो हो तिहाँरई बोरिहौं। गाय धमारि को धाय धरा पर ग्वालन गोलन हों हठि फोरिहौं॥ तेरियै सौंह करों रघुराज लगे पिचकारीन में मुख मोरिहौं। गोपिन भीर लै मेटि अबीर रंगे बलबीर के बीर को बोरिहौं॥ १३२८॥

धीर धरो न टरो न टगो मन के मिलाँ आज जो खेलिहौ ख्याल। गाइये गीत ... आज

विराजि रही अमली रघुराज मनों वहु चांपकली। इमि गोपलली प्रनरोपि चलीं रचि जेहे हली नहिं छेल छली ॥ १३२२ ॥

बाजे तहां डफ ढोल उभे दिसि राग बहार में गाय धमारी। छैगो झिलाझिली दोहुंन की चलीं मूठी गुलाल की औ पिचकारी॥ सांवन सांझ सो सोह्यो अकास अबीर की छाय गई अंधियारी। केसरि कीच के बीच में भूले भ्रमें बलिराम औ कुंजविहारी ॥ १३२३ ॥

खेलतीं फाग फवीं अवला कमला सी अनेक कलानि दिखावैं। लै पिचकी कहुं औचक आय विहारी के अंगनि रंग चलावैं॥ जौलौं गुलाल की मूठि भरैं रघुराज चलावन को हरि धावें। तौ लगि वै ब्रज की नवला चमकैं चपला सी लला नहिं पावैं ॥ १३२४ ॥

बादले की छैगई वसुधा तिमि गाठी गुलाल की भै अंधियारी। बाजि रहे बहु बाजे सुहावन छैरही किंकिनि की झनकारी॥ देखो परे नहिं नैनन सो रघुराज भयो तहं यों भ्रम भारी। लालन धाय गहें लतिकान तमालन धाय गहें ब्रजनारी १३२५॥

गोकुल गाँउ के गोपन गोल सो आगू गोविंद कहूँ कढि आये। त्यों वरसाने की प्यारी लली इत जे निकसी सुख सिंधु नहाये॥ होत जुरा जुरी श्री रघुराज चलावन को चले मूठि उठाये। दोऊ रहे छवि मैं छकि कै व्रजवाल गोपाल गुलाल बहाये ॥ १३२६ ॥

लैके अवीर की झोरिन को कर फूटि सखानि सों रास कन्हाई। धाय धसे व्रजग्वालिन गोल में चारिहूँ ओर अबीर उडाई॥ धाई सबै गहिवे कों अली जुरि केसरि की पिचकारी चलाई। चंचल तो चपला सो चमंकिगो गोपिका घेरि रह्यो बलराई ॥ १३२७ ॥

कोई सखी तहँ बोली निसँकन संक करो हौं तिहाँरई बोरिहौं। गाय धमारि को धाय धरा पर ग्वालन गोलन हौं हठि फोरिहौं ॥ तेरिये सौंह करौं रघुराज लगे पिचकारीन मैं मुख मोरिहौं। गोपिन भीर लै मेलि अवीर रंगे [illegible] के बीर को बोरिहौं ॥ १३२८ ॥

धीर धरै [illegible] आजु

जो [illegible] बाज

बलाइये और संहाँमन वाले ॥ आवन दे रघुराज इते साजि ल्यावन दे संग ग्वालन लालै। गोपिन गोल गुलाल की गेरि कै घेरि के हों गहि लेहौं गोपालै ॥ १३२९ ॥

रोरी कि झोरी भरे व्रजगोरी सुखेलतीं होरी जहां छवि छाई । आयो तहां सुख सों सनि कै वर बानक सों वनि कै व्रजराई ॥ जौलौं चलायो चहैं लखि के उन पे भरि मूठि चहूँ कित धाई। तौलौं कियो सब को मुख लाल गोपाल गुलाल बिना मुसकाई ॥ १३३० ॥

मूठि गुलाल लै आलिन ते कढि साँवरे पे चलि गोपकिसोरी। त्यों नँदनँदनहूँ उत धाय महा सुख छाय लइ कर रोरी ॥ होत जुराजुरीहीं उमठे दोउ खेले अनूपम प्रेम की होरी । हाथ दुहूँ के उठाये न उठे न रहे लिखे चित्र से नैनन जोरी ॥१३३१॥

गहि केसरि रंग भरीं पिचकी सब बाल रसाल गुलाल लई। रघुराज बजावत बीन धमारि कै गावत कान्ह पै जात मई ॥ अति आनंद सों उतको खड़े जु डीठि भई अनुराग मई। जकि कै भयो गाम... ...सो वृज डावरी बावरी सी ह्वै गई ॥१३३...

आजु सखी है कहा ब्रज मैं घरही घर आनँद साजत हैं। वन्दनवार लगे लहरें कदलीन के खंभ विराजत हैं॥ अम्बिकादत्त जू चाह भरे पिचकारि लिये छवि छाजत हैं। धूम धमारन की धमके धधकान भरे डफ वाजत हैं॥ १३३३॥

धरती धरती डरती पद कों घुघुरु नहिं नेकु बजावती हो। झुकी झांकती भौंह चलावती हो नकबेसर झूमि झुमावती हो॥ कबिअम्बिकादत्तहि हेरि चितै छिपती सी हहा मुसकावती हो। कर मैं पिचकारी लिये किन कों तुम रंग भिगांवन आवती हो॥ १३३४॥

गई आजु हुती ब्रजवाट सखी सुकहा कहूं साध धरी की धरी रही। हरि आय अचानक धों कित सों मोहि अंक भरी मैं खरी की खरी रही॥ कवि अम्बिकादत्तकेहाथ परी भरीझोरी अबीर परी की परी रही। लरकी लरीहार चुरी करकी कर की पिचकारी भरी की भरी रही॥ १३३५॥

आजु की वात कहा कहि हों मुख सों कछुहू कहि जात न प्यारी। साध सबै मन की मनहीं रही ऐसी कछू विधि बात विगारी॥ अम्बिकादत्त

जू जादू कन्यो जनु में अपनी सुधि हाय बिस
देखत ही मनमोहन को मुख हाथ सो छूटि
पिचकारी ॥ १३३६ ॥

क्यों अठिलान लगे अबही तें सु आमन में
दिखावन दीजिये । कोकिल कों कल पंचम ता
के कामिन कों ललचावन दीजिये ॥ अम्बिकादत्त
कों कबिता करि के फगुआ कछु गावन दीजिये
आजुही तें हरि होरी मचावत फागुन तो भल
आवन दीजिये ॥ १३३७ ॥

लाये हो चोआ कहा एहि सों सुख बास है सौ
गुनो मेरो रसीलो। रंग दिखावत हो कहा मो पै
यासों अहै छगुनो सो छबीलो ॥ अम्बिकादत्त जू
मूठी भरे का दिखावत आनन हो गरबीलो । तेरी
गुपाल गुपालन सों मम अंग है चौगुनो सो चट-
कीलो ॥ १३३८ ॥

गारी जुपै मुख एकहू काढिहो तो सगरे ब्रज
सोर परैगो। नन्द जसोदहु कों नहिं छाडिहों मो तन
जो दृग कोर परैगो॥ अम्बिकादत्त जू सूधी सुनो
सुनिबे में कहा कछु जोर परैगो। छींटहू चूनर पै
जो परी तो घरै घर मे लला घोर परैगो॥१३३९॥

ो होरी की बातनि के चलते तुअ बोलनि क्यों लरजाय गई। अंग लता तुअ कंचन सी किमि हाय रोमञ्चन छाय गई ॥ अम्बिकादत्त कों देखत ही झुकि झांकती क्यों सरमाय गई। धूम धमारन की सुनते अली सेद के बिन्दु नहाय गई ॥१३४०॥

फेटे कसे कटि में चटकीले मजीले महीप लला हैं अनोखे। चौलड़े त्यों मुकुताहल माल सुतारावली छवि छीने अदोखे ॥ खेलन फाग सजे रघुराज सुराज कुमार महा चितचोखे। अंगनि अंग उमंग भये जिन जोहत होत अनंग के धोखे॥१३४१॥

देखि सखी सब राजकिसोरन चित्त के चोरन सो अनुरागी। बाजे बजावन लागी अनेकन गावन लागी धमार सुरागी॥ आये लला अब आये लला अब जात न पावें सखान ले भागी। श्रीरघुराज को धाय धरो झुकि झारि के झोरिन संगहि लागी ॥१३४२॥

कोइ गोरी कही [illegible] के न[illegible] [illegible]ने लगि आप को [illegible]

सो सखि नागरि की सुन घात दियो हरि हो
हरे मुसकाई। कोई सुजान सखा कह्यो नर्म क
रघुबंसिनै हार न पाई ॥ तूं कहे कैसे वृथा अरी ब
इतै पिचकारिन की झरि लाई। हे रघुराज सख
बिजई बिजै पाय के जहँ निसान बजाई ॥१३४४॥

धाकर कंचन की पिचकी मुख मारत श्याम
मनोहर आकर। आकर गाल गुलाल मलै नंदलाल
नचे अरु मोहि नचाकर ॥ चाकिर जान लियो हम
को सरबोर करे रंग सों घर जाकर। जाकर क्यों
न लख्यो सजनी रंग को उमह्यो वसुधा पै सुधा-
कर ॥ १३४५ ॥

जाति चली वृषभानलली हरि आय गए दुपटी
मैं छपाय के। दै कुच पै पिचकारी छराक दै हाँ
कहि जात रहे हिय लाय के ॥ गोकुल लीजि कै
रीझि रही कछु चाह्यो कह्यो मुह तें सतराय कै।
बोल कढ्यो न गरो गरुओ करि हारि सी हेरी न
फेरि लजाय के ॥ १३४६ ॥

होरी को औसर हेरि लला हरषै ढिग आय
गली मैं लई गहि। हौं छरकायल छूटि गई रघु-
नाथ छबीले न फेरि सकेलहि ॥ रीत औ गीत

दाऊ प्रगटी वृषभानलली इमि दूरि खरी रहि । नैन नचाए कछू कहिबे कों पै चाह्यो कह्यो नहिं आयो कछू कहि ॥ १३४७ ॥

ग्रीषम में तपै भीषम भान गई बन कुंज सखीन की भूल सों । घाम तें कामलता मुरझानी बयारि करैं घनस्याम दुकूल सों ॥ कंपित यों प्रगटे पर-सेद उरोजनि दत्त जू ठोढ़ी के मूल सों । द्वै अर-विंद कलीन पै मानो झरै मकरंद गुलाब के फूल सों ॥ १३४८ ॥

है जलजंत्र के मोहनी मंत्र, वसीकर सी करसी अवली सों । कै ससि के हित मोद भरो जलजात अकास है भूमि थली सों ॥ कै मुकताफल को विरवा विरच्यो यह फूल जले सरली सों । कंज सनाल तें कै मकरंद चल्यो तरराय कै भाँति अली सों ॥ १३४९ ॥

चंदन के चहला मैं परी परी पंकज की पँखुरी नरमी मे । धाय धसी खसखान नहाय निकुंजन पुंज फिरी भरमी मे ॥ त्यों कवि दत्त उपाय अनेक किये सिगरी सहि बेसरमी मे । सीतल कौन करै छतियाँ विन पीतम ग्रीषम की गरमी मे ॥ १३५० ॥

ऊँची अटा पै लखैं घटा दोऊ दुहूँन की केरा रूप कला सी। वेनी बड़े बड़े बुँदन तें एक बार वारिध कीन हलासी ॥ चौंकि चली त्रिचली ग पै लचकी करिहां कुच भार छलासी। त्यों घन स्याम गही अबला फिर के गरे लागि गई चपल सी ॥ १३५१ ॥

कवि वेनी नई उनई है घटा मुरवा वन बोलत कूकन री। छहरै विजुरि छिति मंडल छ्वै लहरै मन मैन भभूकन री ॥ पहिरो चुनरी चुनि कै दुलही सँग लाल के झूलिये झूकन री। रितु पावस यों ही वितावती हौ मरिहौ फिर बावरी हूकन री ॥ १३५२ ॥

चमकैं चपला झमकैं जुगुनूँ रव भेकिन को मय छावत है। पिक झिल्लिन को गन मोरन सों मिलि कै अति सोर सुनावत है ॥ कवि गोकुल प्यारी बिना गिरधारी कहौ अब कौन बचावत है। इहि ओर लखो छिति छोर हि तें घन घोरत सो चलो आवत है ॥ १३५३ ॥

नई नोखी भई हौ कहा तुमहीं उमहीं रहती मति दीन्हीं दई। दई काहू की वीरी न लेति भटू तुम्हे या बतियाँ कहौ को सिखई ॥ खई में न बड़ो

भयो कोऊ कहूँ छिन हीं अति हीं रिसि पूरी गई। गई भार मे नाहीं न नाहीं करो लखो कैसी घनेरी घटा उनई॥ १३५४॥

उरितु पावस स्याम घटा उनई लखि कै मन धीर धिरातो नहीं। धुनि दादुर मोर पपीहन की सुनि कै छिन चित्त थिरातो नहीं॥ जब तें बिछुरे कवि बोधा हितू तब तें उर दाह बुझातो नहीं। हम कौन तें पीर कहें जिय की दिलदार तो कोऊ दिखातो नहीं॥ १३५५॥

भूमि हरी भँई गैलें गई मिटि नीर प्रवाह बहाव बहा है। कारी घटान अँधेरो कियो दिन रैन को भेद कछू न रहा है॥ ठाकुर भोन तें दूसरे भौन लों जात बनै न बिचार महा है। कैसे के आवैं कहा करैं बीर बिदेसी बिचारन दोष कहा है॥ १३५६॥

घूमि घटा घन की गरजें चमकें चपला छिति छ्वै करें फेरी। सोर करें चहुं ओर तें मोर जुरीं करें कोलिया कूक घनेरी॥ गोकुल सीरो समीर लगें केहि भाँति सों धीर रहेंगी धरेरी। मोहि बिना यह सावन की निसि भाँवन कैसे बितायहैं येरी॥ १३५७॥

। घेरि घटा उनई चहुँघाँ छिन एक मे विज्जु छटा छवि छायँहं । श्रीपति राय कहा करबी अरवी करिके पिक चातक गाय हैं ॥ कारो पिछौरा उतारि हहा अब चूनरी लाल अनूप सोहाय हैं। हौं जो सुनि घरी चारिक मे तिया आजु विहारे पिया घर आय हैं ॥ १३५८ ॥

। घहरात घमंड केकी वलकें लहरात सुहात ब बनए । उलहे महि अंकुर मंजु हरे बगरे त इन्द्रबधू गन ए ॥ अस जानि किसोर समै रस मे कस होहिँ न मैन मई मन ए। चित चेन चए नम आनि छए अब देखु नए उनए घन ए ॥१३५९॥

देखि तमासो दिसा विदिसा विरही उर अंतर काँपति सी है। केकी पपीहन की बरवानि झिली झनकार कों झांपति सी है ॥ ठाकुर ठाढ़ी मनोहर पास कहै बर बाल निसापति सी है। काम कृसानु की डोंरी चली चपला फिरैं मेघन मापत सी है॥१३६

दिन रैनि की संधिन बूझिबे की मति कोंर तमीं चुरवान लगी । नदिया नद लौं उमर्ग लतिका तरु तेसे न पं गुरवान लगी॥ कहु सेव मेमे केसे जिये जेहिँ कांम तिया उरवा

लगी। मति मोरिनी की मुरवान लगी। गति बीजुरी की थुरवान लगी ॥ १३६१ ॥

सावन की रितु आई सखी पतिया न लिखी अजहूं मनभावन। सावन राग मलार में भूपति रंग उमंग सों लागे हैं गावन ॥ गावन में हरखें सबही बरखैं बरबुंद घटान की आवन ॥ आवन आज भयो नहीं पीव को जीव कों मैन लग्यो तरसावन ॥ १३६२ ॥

उठि देखरी बीर अटान अटा चढ़ि बिज्जु छटा छहरान लगी। अति सीरी बयार सुगन्ध सनी द्रुम बेलिन पै फहरान लगी ॥ सखि औधि की आस धरीये रही लखि के छतियाँ थहरान लगी। यह कैसी अचानक आनि बनी री घटा घन की घहरान लगी ॥ १३६३ ॥

झर लाग्यो झरी उघरै न घरी नदियाँ उमगी जलधारन सों। यह भूमि हरी मन लेत हरी धुरवा धुकि जात बयारन सों ॥ लखि बादर दादुर सोर करें मिलि कूकत मोर मलारन सों। हँसि दोऊ मिले गरबाँह गरें झुकि झूमें कदंब की डारन सों ॥ १३६४ ॥

सदाँ चातिक चाय सों बोल्यो करो मुरवान को सोर सुहावन है ॥ चमकै चपला चहुँ चाव चढी घनघोर घटा वरसावन है ॥ पलको पपिहा न रहो चुप ह्वै अरु पौन चहूंदिसि आवन है। मिलि प्यारी पिया लपटे छतियाँ सुख को सरसावन सावन है ॥ १३६५ ॥

घन घोर घटा उमडी चहुँओर सों मेह कहे न रहीं वरसौं। हरि राधिका दौरि दुरे दोउ कुंज में लागि रहे तेहि ठाँवर सों॥ अति सींरी वयारि वहै सजनी मुसुकाय तियां जु कहे वर सों। अजू आज को द्यौस न भूलिवे को यह याद रहे वरसों वरसों ॥ १३६६ ॥

नीर झलान को पोखत पीरन वीरन वृंद विसारे हैं वानये । धूम वियोगिनि के घट को घुटि भूमि पै झूमि रहे धुरवान ये॥ जो झरते न रहेंगे सो नैन नदी नद सिंधु भरेंगे निदान ये। पी कहि पी कहि पापी पपीहरा पी गये जानि कै पी गये प्रान ये ॥ १३६७ ॥

आयो असाढ हहा अवहीं तें चढी चपला अति चापि कै नृ दं । हे हूँ कहा सजनी रजनी

दिन पापी कलापी मचाय हैं दूंदे ॥ स्याम बिना कल नाहीं परे अँसुवा न रहै भरि आंखिन मूंदें। ग्रीषम भान सी सोहत सान सी लागतीं बान सी बारि की बूंदें ॥ १३६८ ॥

चहुंओरन ज्योति मगावें किसोर जगी प्रभा जेवन जूटी परे । तेहिं तें झरि मानो अँगार अनी अवनी घनी इन्द्रवधूटी परे ॥ चहुं नाचे नटी सी जराव जटी सी प्रभा सों पटीसी ना खूटी परे। अरी येरी हटा पटी बिज्जु छटा छटी छूटी घटान ते टूटी परे ॥ १३६९ ॥

अंगन अंगन माहिं अनंग के तुंग तुरंग उमाहत आवें । त्यों पदमाकर आसहू पास जवासन के वन दाहत आवें ॥ मानवतीन के प्रानन में जु गुमान के गुंमज ढाहत आवें । बान सी बुंदन के चदरा बदरा बिरहीन पै बाहत आवें ॥१३७०॥

आयो असाढ भई अति गाढ गई सब रैनि ग्हारी सी ठाढें। कौन सुने अरु कासों कहों चहुँओर तें दामिनी नाखति बाढें॥ भोरहीं तें करें कोकिल कूक सिरोमनि लेत करेजोई काढें। कामिनी के हनिबे कों मनो चमकी झमकी जमकी जम दाढें॥१३७१॥

निसि नील नए उनए घन देखि फटी छति
गजवालन की। कवि गंगजू ये छवि छीन
सुथरी द्रुति देखि तमालन की ॥ दसहूं दि
जोति जगामगी होति अनूपम जींगन जालन
मनो काम चमकी चढ़ी किरचें उचटें कल
के नालन की ॥ १३७२ ॥

कूकें कलापी न चूकें कहूं झुकि झूकें समीर
आन झकोरत। त्यों पपिहा पपिहा गपिहा
पीव को नाव लै हीय हिलोरत ॥ पावस
अधीर नथ्यावस घूंटें घटा घटें त्यों घन घोर
बूंदें वदावदी वारिध लौं बढि बैरिनि आज
गिनि बोरत ॥ १३७३ ॥

गरजी घनघोर घटा चहुंओर भयो वि
तब ही सरजी। सरजी जु भए पिक दादुर
लिये रतिनायक की मरजी ॥ मरजीजु उठी
की सुधि लै चपला चमके न रहे बरजी। व
अब कौन रहे सजनी भयो पावस मो जिय
गरजी ॥ १३७४ ॥

घेरि घटान तें आयो उनै धुरवान की
लागी कगारन। मोरन के गन सोर करें चहुंओ

तें चातिक लागे चिकारन ॥ ऐसी समै छवि देखिबे कों द्विज तुहूं चलै कित दौरि अगारन। झूलत हेम हिंडोरन में दोऊ कालिंदीकूल कदंब की डारन ॥ १३७५ ॥

झूलत दंपति नेह रंगे रस पुंज निकुंजनि हौं बलिहारी। रंग भरे पिय दीनी सखी कल झूल झकोर कै रंचक भारी॥ढीली भई मोतियान की डोर सुकोर ह्वै हेर्‍यो लला तन प्यारी। आलीरी लाज भरी बिच घूंघुट कैसी लसी अँखियाँ अनियारी ॥ १३७६ ॥

चित चाय सों चारु हिंडोरे चढी सुख सावन गावन को सचरा। झझकी झुकि हूकन लेत परे कच ऊपर व्यालिन के बचरा॥लटके लखि वेनी प्रवीन कहे मनु मैन महीपति को कचरा। कुच कंचुकी मंदिर माहँ महेस ध्वजा फहरात मनो अँचरा ॥ १३७७ ॥

कंचन खंभ कदंब तरें करि कोउ गई तिय तीज तयारी। हौंहूं गई पदमाकर त्यों चलि आंचकाँ आइगो कुंजविहारी॥हेरि हिंडोरे चढाय लियो किया कौतुक सो न कह्यो परे भारी।

फूलनवारी पियारी निकुंज की झूलन है न वा भूल न वारी ॥ १३७८ ॥

रितु चाप न चाप लसै कर में जलधारन जार लसै सर कौ । कुहकार न मोर गुलाव करें भय कार कुलाहल भै भर कौ ॥ जुगनूं गन इंदवधून फिरैं छिति जात परै भट के घर कौं । हिय हारिन री वरखा न भटू यह संगर मैंन पुरंदर को ॥१३७९॥

घूमि घने घुमरैं घनघोर चहूं चढ़ि नाचत मोर अटारी। त्यों द्विजदेव नई उनई दरसात कदंवन की छवि न्यारी ॥ चूनरी सी छिति मानो बिछी इमि सोहत इन्दवधू की पत्यारी। काहि न भावति ऐसी हंसी ठकुराइनियां हरियारी तिहारी ॥१३८०॥

होते रहे नव अंकुर की छवि छाह कछारन में अनियारी । त्यों द्विजदेव कदम्वन गुच्छन एई नए उनए सुखकारी ॥ कीजिये वेग सनाथ इन्हे चलिये नव कुंजन कुंजविहारी । पावस काल के मेघ नये नव नेह नई वृषभानकुमारी ॥ १३८१ ॥

उत कारी घटा इत में अलकें वकपंक्ति उतै इत मोति लरी। उत दामिनि त्यों तिय दंत इतै उत चाप इतै भौंह वंक धरी ॥ उत चातक तौ

पिय पीय रटैं त्रिसरै न इतै पिय एक घरी । उत बूंदें अगाध इतै अंसुआ विरही घन होड़ाहोड़ परी ॥ १३८२ ॥

आज अटा चढिआई घटान मैं विज्जुछटा सी वधू वनि कोऊ । देव तिया कवि देवन केती पैं एते विलास हुलास न ओऊ ॥ पूरव पूरन पुन्यन तें वडभाग विरंचि रच्यो जन सोऊ । जाहि लखें लहु अंजन दै दुखभंजन ए दृगखंजन दोऊ ॥ १३८३ ॥

प्रान प्रिया मिलिहै मन तू न तरस न तरस न तरस न तरस । छिन एक छिमा कर मैंन हियें न सरस न सरस न सरस न सरस ॥ हसिसेक अरे विरहा अव तौ न दरस न दरस न दरस न दरस । इत आवहि प्यारी घटा तव लौं न वरस वरस न वरस न वरस ॥ १३८४ ॥

न्यारे भये जव ते हम ते तुम हैं तव ते अतिही दुख भारे । सारे दिना उकलात खरे निस नींद न आतप लौं पचिहारे ॥ कारे भमान विलोकि ये वादर दादुर लौं दिलजान पुकारे । प्यारे तिहारे निहारे विना दिन रैन चुचावत नैन हमारे ॥ १३८५ ॥

मारे मनोज के बान हिये सु दियें दुख तेंने वियोग के भारे। भारे भये निसि वासर मोय चुचावत हैं अखियां जल धारे॥ धारें बिलोकि पयोद भमान सु आवत याद अनंद तिहारे। हारे हियो हहरात अबै दिलजान लगों गरें आन हमारे॥ १३८६॥

झिल्लिन की झनकार बढी मदमाते मयूर महा धुनि टेरत। देत दोहाई मनोज वहादुर दादुर दूंद दिसान दरेरत॥ ऐसे में कैसी भई है नरायन नेक इतै न चितै हंसि हेरत। विज्जु छटा उछटै री पटा सम देखि अटा तें घटा घन घेरत॥ १३८७॥

केकी की कूक पिकी की पुकार चहूं दिसि दादुर दुंद मचायौ। भूमि हरी चमकै चपला अरु श्याम घटा जुरि अम्बर छायौ॥ ऐसे में आमन होय लछू अबला लिखि लालै संदेस पठायौ। बामन कौ पग भौ बिरहा सु अहो मन भामन सामन आयौ॥ १३८८॥

धामन कोऊ पठाऊं उतै उन तौ इहिं औसर में कह्यो आमन। गामन एरी लगे मुरवा धुरवा नभमंडल में लगे धामन॥ छामन जोगी लगे शिवलाल सु भोगी लगे हैं दसा दरसामन।

तामन लाग्यो वियोगिन को तन सामन बीर लगे बरसामन ॥ १३८९ ॥

श्रावन पूरन मास भए यह कौन लला चित में अविलाखी। छोडत प्रानप्रिया अपनी परभूमि तकावन कों मति माखी॥ ए सरदार विचार करो किनका सुध सोध सबै सुचि नाखी। साखी दै देवन को कर में घर राखत हैं पर की बरराखी ॥१३९०॥

हैं धुरवा मुरवान कहूं पुरवान कहूं वर बीज न लागी। छत्र लगाए महूं सँग मे यहि कौतुक में मति छीजन लागी॥ री बलिजाति न जाति कही सुनि सेवकहूं न पतीजन लागी। ये घनस्याम अनोखे नए वृषभानसुता लखि भींजन लागी ॥१३९१॥

दोऊ अनंद सों आँगन माझ विराजे असाढ की साँझ सुहाई। प्यारी के बूझत और तिया को अचानक नाम लयो रसिकाई॥ आयो उनै मुह मेह सों कोहनि त्यों सुर- [illegible] गहि चढाई। आँखिन तें गिरे आँस [illegible] गयो उडि हंस क [illegible]

[illegible] यन गी
[illegible] गै आग

के छाय दिसान अंधेरी लई चुँ। पायवे कों प
ऐसी समै रघुनाथ की सोंह सुनो सुख सों भू
अंग के संग अभूपन जाल सों आपुही वालमसाल
गई ह्वै ॥ १३९३ ॥

सॉंमरी सारी सखी सँग सॉंमरी सॉंमरे धारि
विभूपन धूके। त्यों पदमाकर सॉंमरेई अँग रागनि
आँगी रची कुच ढ्कै ॥ सॉंमरी रैनि मे सॉंवरिये
घहरे घनघोर घटा छिति छ्वैके। सामरी पामरी
की देखुही वलि सामरे पै चली सामरी ह्वैके॥१३९४॥

छाय रह्यो तम कारी घटान यों आपनो हाथ
पसारि लखे को। अंग रचे मृग के मद सों मनि
मर्कत भूपन साजि अँके को ॥ नील निचोलन
की छवि छाजति त्यौं भ्रमरावली सों मग छेको।
सावन की निसि साहस कै निकसी मनभावन
मिलिवे को ॥ १३९५ ॥

सामन आमन हेरि सखी मनभामन आमन चोप
विसेखी। छाये कहूं घनआनंद जानि सम्भार की ठौर
लै भूल विसेखी ॥ बूंदे लगें सब अंग उदो उलटी
गति आपने पापन पेखी। पौन सों जागति अग्नि
सुनीही पै पानी सों लागति आगि न देखी॥१३९६॥

चहुंओर उठीं घनघोर घटा बन मोर करैं सखि सोरे खरे । ब्रज ओर निहारि निहारि तिया कहि बैन इतै दोउ नैन भरे ॥ आवत नांहिन लाज तुम्हैं फटि जाहु न पापि हो प्रान अरे । जिन बीच न हार परे कबहूं तिन बीचन आज पहार परे ॥ १३९७ ॥

लाग्यो असाढ सबै सुख साजन मों जिय में बिरहा दुख बोई । सामन में सब केलि करैं मैं अकेली परी सँग साथ न कोई ॥ कैसे जियों अब ए सजनी [illegible] पावस में घनस्याम बिगोई । कौन [illegible] चूक परी बिधना बरसात गई बर साथ न सोई ॥ १३९८ ॥

लागे असाढ सबै घर आवत देस बिदेस रहे नहिं कोई । मानस की कहियै जु कहा पसु पंछी सबै बस काम के होई ॥ कोरी सखी मुखमोरी हँसे यह पावस देखि तिया रति जोई । कैसें ये प्रान रहें घट में बरसात गई बर साथ न सोई ॥ १३९९ ॥

पीतम गौन किधौं जिय भौंन कि भारुक भौंन भयानक भारो । पावस फूल की पावक सूल पुरंदरचाप कि सुन्दर आरो ॥ सीरी बयारि किधौं तरवारि है बारिद बारि के बान बिसारो । चातक

चोल की चोट चुभै चित इंद्रबधू के चकं
चारों ॥ १४०० ॥

वरस्योंई करौ हित प्रीतम कौ उर आलि
हरस्योंई करौ । हरस्योंई करौ घन देखि
धुनि दादुर की सरस्योंई करौ ॥ सरस्योंई
सरस्रोत भमान भलें विरही तरस्योंई करौ।
स्योंई करौ जिय सौतिन कौ नित ये बदरा
स्योंई करौ ॥ १४०१ ॥

कूंजन दे केल कोकिल कू... सोर म
मन देरी । गामन दे मुरवान अरी धुरवा
मंडल छामन देरी ॥ आलिन के गन को वर
जिन पावस रश्क सुनामन देरी । अंक में जो म
भामन तौ घन सामन के बरसामन देरी॥१४०२

धुरवा न धुको तिहि भांति गुलाब जथा दुख
दानिहु ते तबरी । झुरवाय गये जुगनूं गनहूं धुर
वाय गये कबहू कबरी ॥ दुरवाय गये दुर दादु
बांवर बादरवा बरसे तबरी । उर बालम सोहति
हौं पिय के मुरवान करें मुरवा अबरी ॥१४०३॥

दादुर चातक मोर करौ किन सोर सुहागन
को भर है । नाह नहीं सोई पायो सखी मोहि माग

सुहागहु को बर है ॥ जानि सिरोमनि साह जहाँ ढिग बैठ्यौ महा बिरहा हर है। चपला चमको गरजो बरसो घन पास पिया तो कहा डर है ॥१४०४॥

चौंक उठी चपला छन मै घनघेरि चहूँदिस तें घुमरे है। छोर दुहू भरि के सलिता बनिता सुरँगी चुनरी पहिरे है ॥ दादुर मोर चकोर सदा गति कोकिल छेद हिये में करे है। प्यारे सुजान बिना कवि राम सु कैसे असाढ के द्योस परे है ॥१४०५॥

बैठी अटा तर ग्रीव बिसूरत पाये सँदेस न ... पीके। देखत छाती फटे निपटे उछटे जब बिज्जु छटा छबि नीके ॥ कोकिल कूकें लगे मन लूकें उठे हिय हूकें बियोगिनि तीके। बारि के बाहक देह के दाहक आये बलाहक गाहक जीके ॥१४०६॥

पपिहा की पुकार परी है चहूँ बन में गन मोरन गावन के। कहि श्रीपति सागर से उमगे तरु तोरत तीर सुहावन के ॥ बिरहानल ज्वाल दहै तन को छिन होत सखी पग बावन के। दिन गे मनभावन आवन के घहरान लगे घन सावन के ॥ १४०७ ॥

पारथ को धनु घूमि गयो बरष्यो घनघोर चहूँ

दिसि ते ज्यों। लंकपतीहूँ उतारि धरी धनु टारि धर
रघुवीर बली त्यों ॥ एकईहे रस बात नई ये
सालत प्रान अचंभ एही यों । वैरी मनोज के हाथ
रही वरपारितु ये री कमान चढी क्यों ॥१४०८॥

बरसें जुरि के अति कारी घटा लखि बातन आवत
है गरसें । गरसें अब चाहत है बिजुरी बन के खग
देखि सभै हरसें ॥ हरि सें कोउ जाय कहे बतियाँ
बुंदियाँ जब लागत है सरसें । सरसें छवि साँवरो
की कविराम घटा आर के जुरि के बरसें ॥१४०९॥

पानिय मोती मिलाय पुही गुन पा० उर मो
जुही अभिलाखी । नीके सुभायक रंग भरी हित
जोति खरी न परै कछु भाखी ॥ चाह ले बांधी है
प्रीति की गाँठ सो है घनआनँद जीवन साखी ।
नैनन पान बिराजत जान जो रावरे रूप अनूप
की राखी ॥ १४१० ॥

है घनघोर घने घहरात सो मोर सुने हहरात
हिया है । कौन करै मनसा धर को रस भीजवे की
भईभीत भिया है ॥ काम के काज इलाज इहे विन
काज की ओर सबै बतिया है । पावस में सुख सोइ
लहै जेहि की रतिया छतिया छतिया है ॥१४११॥

...झरु है झहरान झकोरन है दुरु है कहि दादुर दूदन को। बरही करही मिलि सोर महा भय नेकन दामिनी कूदन को॥ ब्रजराज विचारत भीजेगी राधिका कुंजन कोनन मूँदन को। अपने कर तानत कामरी कान्ह जिते भर ज़ानत बूँदन को॥१४१२॥

...बरसे घन औ चमके चपला सुख दंपति के हिय में सरसे। सरसै पिक चातक सब्द प्रवीन ...काम बियोगिन कों दरसे॥ ...बरसै सब ओर घटा गज सी ... पिया सु प्रिया बरसै। ...बिरहानल एक घरी बिरहीन को एक घरी बरसे॥ १४१३॥

चढ़ि चारु अटा पै घटान बिलोकत साथ ...नवीन के गाय रही। दिजदेव जू औचक दीठि ...हूं मनभावन ऊपर जाइ रही॥ लखि लालन के ...र चंपकली गहि चंपकली सकुचाय रही। धरि ...ओर ई की जनु देह धरीक दरीचिका में मुरझाय ...ही॥ १४१४॥

...के धुरवा धुरवारे अली दिजदेव चहूं दिसि दौरत ...हे। त्यों मनमथ सखा पै सिखी मनमोहनऊ ...ो बिलोरत ह्वै है॥ पावस काल कराल हहा छिन

एकहू संग न छोडत क्हें ॥ फूल से वे अंग पीऊ के हाय घनी घन चोटन ओडत क्हें ॥१४१५॥

कालिंदी कूल कदंब की डारन कूजत केकिन के गन एखें । तुंग तरंगित त्यों जमुना तहं तामहं सोर करे बहु भेकं ॥ मंदहि मंद सुगाजत है घन राजत बूंद महीन अलेखें । वल्लभ राधिका स्याम तहां सुभ स्याम घटान अटा चढि देखें ॥१४१६॥

[illegible]नीर निरंतर नारिन माँझ गुलाब कहे रसिके सुख पावे । पीव पुकारत है [illegible] जीव अजीमन को गन सोर मचावे ॥ बूढन के अँग में र[illegible] सिखंडिन को मन मैंन जगावे । वालन वालम सों करि मान कहाँ यह काल गयो फिरि आवे ॥१४१७॥

[illegible] खग जात उडे विदिसो दिस में मग पावत ना जहँ कूक जगी । सब आकजवास झुराय गये जरि नारि पुकारत पीव पगी ॥ धर माँझ गुलाब अँगार परे भरि अंबर में चिनगी उमगी । अब धीर धरे उर का विधिरी जलधारन भीतर लाय लगी ॥ १४१८ ॥

[illegible] वन बागन में गन जं गन है घन आँगन में [illegible] करे । बस मोर मवासन माँझ गुलाब

अंकास वकावलि कोपि लरै ॥ धसि आवत हैं धुरवा घर में लखि वीरवधू अति जीव जरै । विष धार भरी दसहों दिसरी अब क्यों करि कै उर धीर धरै ॥ १४१९ ॥

धुरवा धुकि आवत भूमि तऊ झुरसायन जीतन हू तरकैं । मुरवा सुरवा सुनि श्रौन रहैं चुप चाप न चोट कछू खरकै ॥ नहिं वीरवधू वकजाल गुलाल जरा जुग नैनन मैं करकै । [illegible] करिये उपचार भर [illegible] रन तैं उर ना दरकै ॥१४२०॥

झरनाहिं वराबर वान जुरे वक नाहिं लगी पर ऊपर है । जुगुनू गन बूढन एकन आगि परैं भिरि भालन को भर है ॥ मुरवा अरु चातक दादुर सोरन जंतु कुलाहल को गर है । विरही वनजीवन के वध कौं वरखा न सखी सर पंजर है ॥१४२१॥

घनघोरन घोर निसान वजैं वगुलान धुजा गन खेचर को । चपलान गुलाब कृपान कटी जलधारन ही झर है सर को ॥ धुनि दादुर चातक मोरन की न कुलाहल है अरि के घर को । धरि धीर हिये वरखान भटू गिरि ऊपर कोप पुरंदर को ॥१४२२॥

वक मारनही दग वारि परे धुरवान रुमावलि

ाकर की । यह मोरन को नहिं सोर गुलाब अभै
हर यानि दया कर की ॥ नहि बूढ प्रजा अनुराग
गी जलधारन पाल चराचर की । जनि सोच करे
रखान भटू धर ऊपर प्रीति दिवाकर की ॥१४२३॥
वंक वीरवधू जुगनू सुरचाँप सबै सुख के सर-
गाँवन भे । मुरवा गन दादुर चातक सोर गुलाब कहे
हेत जावैन भे ॥ वर वापि तड़ागनि वान नदी
द नारन क... गाँवन भे । घर आवत ही मन-
गाँवन के घन सावन के मन... ॥१४२४॥

देखैं अटा चढि दोऊ घटा द्रग लागे ...
गों प्रीति लही है । दै पटयो कुसुमी रंग की पटयो
र प्रीतम प्रीति कही है ॥ चूनो मिले हरदी रंग
चन प्यारे कुमार पढायो सही है । वाढत रंग है
क्रतें संगही संग भये बिन रंग नहीं है ॥१४२५॥
वरसैं वन कुंजन पुंज लता सिक मंजु मयूरन को
रसैं । मधु घोर किसोर करें घन ये चपला चल
ारु कला दरसै ॥ अलि हो वलं तूं चल वेगि हहा
त तो विन प्रानपिया तरसे । उमडे द्रुमड़े घुमडे
न आज मिहीं वुदियान मडो वरसे ॥१४२६॥
घोर घटा घहरे नभमंडल तैसिय दामिनि की

दुति जागत । धावत धूर भरो धुरवा मुरवा गिरि शृङ्गन पै अनुरागत। फैली नई हरियारी निहारि संजोगिन कै हियरा अनुरागत। रीति नई रितु पावस में व्रजराज लखे रितुराज सों लागत॥१४२७॥ झूमि रहे घन घूमि घने तलि वीरत भूमि मनो चहुँधा घिरि। है अपसोस न रोस न धारो वितहोस लता रहि रूखन सों। भिरि ॥ त्रिवेनी पपीहन मोरन हूँ हहरानन दूँदि करें न्रहुते नफिरि ज्यों डरपै तड़पै बिजुरी परे काहू वियोगिनि भिनि कहूँ गिरि॥१४२८॥

भावती जो पिय की वतियां सखि सालति हैं उर सूल सी बोई। घोरघटा बिजुरी चमकै तिसरे पपिहा पिय पीय रटोई॥ भौन भ्रमें भ्रम भामिनि को लरजै छतियां तन काम बिगोई। स्वासन स्वांसि उसांसत हे वरसात गई वर सात न सोई॥१४२९॥ कुकाहि को रूसति पावस में इन बातनि तोहि न कोऊ सराहै। पौन लगे लहरातीं लता तरु कुंज कदंब में केकी कराहै॥ बोल सुहावन चातक के लगैं इंद्रवधू गन धाइ घेरा है। वोलि पठाई उतै उत ये उनये नये देखि नये बदरा हैं॥१४३०॥

मो नेहु फूले कदंबनि कुंजन में अरु भावतो पीत महै नितमें। वरजै जनि कोऊ मयूरन कौं गरजैं घने आपने ही मतमें॥ सिवलाल भयो मनभायो जितो अब और करौंगी तितो नितमें। वरसाइत घर आइ गये बड़े भाग भटू वरसाइत में॥१४३१

मुख चंद मनोहर हांस छटा छवि पुंज मिले छिति पै छहरैं। द्रिग खंजन खेलैं सरोज कलीन उरोजन ओप लखें लहरैं॥ गति हेरि मरालन की मनसा हठि मानसरोवर में हहरैं। छिति पाल बिकास बनो पट में घट सारद थान थबी अहरैं॥१४३२॥

प्रिय देखत मानो रमा उझकी मुख कुंकुम रंजित भ्राजत है। रजनी उर को अनुराग यहै किधौं मूरतिवंत बिराजत है॥ किधौं पूरनचंद सु छंद उदोत मुकुंद सबै सुख साजत है। किधौं प्राची दिसा नव बाल के भाल गुलाल को बिंदु बिराजत है॥१४३३॥

सिगरे दिन बारि पहार समेत तची अति दुस्सह पूषन सों। भई मैली महा रघुनाथ कहै वहु छारि पल डीठि लगाइन जाइ

लखी इमि भूरि रही भरि दूषन सों। सोई लीपत्त सों सासि आवतु है दिसि भीजो पियूषमयूषन सों॥ १४३४॥

छाई छपा दिन ज्यों दरसी मिलि कै चकवान वियोग बिसार्‍यो। सौगुनो बाढ्यो प्रकास दिसान मे चौगुनो चाव न जात उचार्‍यो॥ कैसी खिली है अलौकिक चाँदनी नागर ताको बिचार बिचार्‍यो। राधे जु ऊंचे अटा चढि के कहूं आज निलांबर घूंघट टार्‍यो॥ १४३५॥

फैलि रही घर अंबर पूर मरीचि न बीच न संग हिलोरत। भौर भरी उफनात खरी सु उपाय की नाव तरेरन तोरत॥ क्यों बचिये अजिहूं घन आनँद बैठि रहें घर पैठि ढिढोरत। जोन्ह प्रलै के पयोनिधि लौं बढि बैरिनि आज वियोगिनि बोरत॥ १४३६॥

सेत पहार अगार भए अवनी जनु पारद माहिं पखारी। होतहीं इंदु उदोत लसै चहुँ ओर तें सोर चकोर को भारी॥ फूली कुमोद कली निकली अवली अलि की बलि मे निरधारी। कोपि के चंद तियान के मान पे मानो मियान तें तेग निकारी॥ १४३७॥

श्रीरामचरितमानस

अर्थात्

श्री तुलसी दास कृत रामायण।

यह ग्रन्थ बड़े परिश्रम और यत्न से श्रीतुलसीदास जी की लिखी हुई ग्राम
ति से शोध कर ज्यों का त्यों छापा गया है। इस भय से कि कदाचित् और
:से असंभव समझें, गोसाईं जी के हाथ की लिखी हुई प्रति के १० पृष्ठ का
फ़ोटोग्राफ़ भी पुस्तक में लगादिया है, और हम को दृढ़ पुष्टि के लिये गोसाईं
जी के हाथ के लिखे हुए पञ्चनामा का फ़ोटोग्राफ़ भी इसी के संग है, जि
में लोगों को यह भी न कहना पड़े कि गोसाईं जी के हाथ के लिखे हुए ग्र
प्रमाण भी क्या है? और लोगों की भांति मैं नहीं चाहता कि इस ग्रन्थ
नीचे से ऊपर तक प्रशंसा ही भर दूं क्योंकि जो इस के गुण ग्राहक हैं ए
के लिये इतना ही बहुत है। इस ग्रन्थ में तुलसीदास जी का जीवनचरित्र
दिया गया है और अक्षर बड़ा व काग़ज़ अच्छा है। तीन सौ वर्ष का ग्र
अलभ्य पदार्थ हाथ लगा है, जिन को रामायण का अपूर्व सार लेना हो वे
चूकें और नीचे लिखे हुए पते से मंगा लेवें। नहीं तो पश्चात् [illegible]
पञ्चनामा होगा।

ग्रन्थ फ़ोटोग्रा[illegible] सहित ६) ग्रन्थ बिना फ़ोटो को ४) डाक महसूल